कुलश्रेष्ठ एवं शर्मा

आदर्श निबन्ध

[माध्यमिक एवं हिन्दी परीक्षाओं के नवीन पाठ्यक्रमानुसार]

लेखक

रमेशचन्द्र कुलश्रेष्ठ, एम० ए०

विद्याराम शर्मा, एम० ए०

विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

नवीन संस्करण की भूमिका

●

'आदर्श निबन्ध' का संशोधित संस्करण प्रस्तुत है। इस संस्करण में प्रत्येक निबन्ध को परिमार्जित करके आधुनिकतम बनाने की चेष्टा की गई है। साथ ही इस बात की भरसक चेष्टा की गई है कि समसामयिक एवं नवीनतम निबन्ध इस पुस्तक के कलेवर से बाहर न हो ताकि पाठक व्यर्थ ही भटक कर अपने समय, शक्ति तथा धन का दुरुपयोग न करें। आशा ही नहीं, अपितु पूर्ण रूपेण विश्वास है कि 'आदर्श निबन्ध' का प्रस्तुत नवीन संस्करण माध्यमिक कक्षाओं के छात्रों एवं विभिन्न हिन्दी परीक्षाओं के हेतु परीक्षोपयोगी तो होगा ही साथ ही भविष्य की आशालता पाठकों के ज्ञान में वृद्धि करता हुआ लोक-प्रिय सिद्ध होगा।

—प्रकाशक

अपनी बात

●

वैसे तो हिन्दी में निबन्ध की अनेक पुस्तकें पाई जाती हैं। किन्तु अभी तक ऐसी निबन्ध-पुस्तकों का अभाव ही रहा है जिनमे विद्यार्थियों के लिए उनकी परीक्षाओं के दृष्टिकोण से निबन्ध लिखे गये हों। प्रस्तुत पुस्तक इसी अभाव की पूर्ति का प्रयत्न मात्र है। इसमें निबन्धों का चयन प्रायः भिन्न-भिन्न भारतीय शिक्षा बोर्डों की हाई स्कूल परीक्षाओ में आये हुए निबन्धो से किया गया है। साथ-साथ इस बात का भी ध्यान रखा गया है कि प्रथमा विशारद तथा अन्य हिन्दी परीक्षाओ के छात्र भी इससे लाभ उठा सकें। इसमें आधुनिकतम विषयों पर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है। इसके अतिरिक्त नवीनतम समसामयिक निबन्धों को इस संस्करण में जोड़कर पुस्तक को अधिकतम परीक्षोपयोगी बना दिया गया है।

विषयों के प्रतिपादन में हमने अपने व्यक्तिगत विचारों तथा मान्यताओं को स्थान-स्थान पर निःसंकोच प्रकट किया है। लेखक उन सभी विद्वानों के प्रति हृदय से आभारी हैं जिनके ग्रन्थों से किसी-न-किसी रूप में सहायता ली गई है। वास्तव में वे ही लेखकों की मूल प्रेरणा स्रोत हैं।

रमेशचन्द्र कुलश्रेष्ठ
विद्याराम शर्मा

सामाजिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक, वैज्ञानिक तथा समस्या-प्रधान आदि। फिर भी विद्वानों ने निबन्धों को चार प्रकार का माना है—

1. वर्णनात्मक निबन्ध,
2. व्याख्यात्मक निबन्ध,
3. भावात्मक निबन्ध,
4. विचारात्मक निबन्ध।

(1) **वर्णनात्मक निबन्ध**—वे निबन्ध हैं जिनमें वर्णन की प्रधानता होती है। जहाँ किसी विशेष सजीव या निर्जीव वस्तु का वर्णन किया जाता है। गाय, घोड़ा, दीपावली, रेडियो, ग्राम्य जीवन तथा वार्षिकोत्सव आदि पर लिखे गये निबन्ध वर्णनात्मक निबन्ध हैं। इस प्रकार के निबन्धों की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि इनमें वस्तु का वर्णन इस ढङ्ग से किया जाय कि उसका चित्र-सा उपस्थित हो जाये। पाठक को ऐसा प्रतीत हो मानो वह स्वयं उस वस्तु का साक्षात्कार कर रहा है।

(2) **व्याख्यात्मक निबन्ध**—वे निबन्ध हैं जिनमें कहानी तथा कथाओं का वर्णन होता है। ये गाथायें काल्पनिक भी हो सकती हैं। साधारणतया धार्मिक कहानियाँ, जीवन-चरित्र, ऐतिहासिक घटनाएँ और यात्राएँ इसी प्रकार के निबन्धों के अन्तर्गत आती हैं। वर्णनात्मक निबन्धों की प्रवृत्ति अधिकतर सत्य की ओर होती है। किन्तु जैसा कि ऊपर कह दिया गया है, व्याख्यात्मक निबन्धों में कल्पना का भी पर्याप्त सहारा लिया जा सकता है। इन निबन्धों की विशेषता तो घटनाओं का क्रमबद्ध निरूपण ही है। ये घटनाएँ काल-क्रम के अनुकूल ही होनी चाहिए। किसी महापुरुष की जीवनी लिखते समय उसके जन्म से लेकर मृत्यु तक क्रमानुसार घटनाओं का वर्णन अनिवार्य है। एक घटना के पश्चात् क्रमशः दूसरी घटना का उल्लेख होना चाहिए और इसी प्रकार दूसरी के पश्चात् क्रमशः तीसरी का। व्याख्यात्मक निबन्धों में क्रम की शृङ्खला कभी भी नष्ट नहीं होनी चाहिए। इन्हें विवरणात्मक निबन्ध भी कहते हैं।

(3) **भावात्मक निबन्ध**—वे निबन्ध हैं जिन्हें पढ़कर पाठक किसी भाव में तिरोहित हो जाय। इन निबन्धों का सम्बन्ध भावना अर्थात् हृदय से अधिक होता है। इस प्रकार के निबन्धों में रागात्मकता होने के कारण शैली स्वतः

ही कवित्व-पूर्ण हो जाती है जिससे निबन्ध में एक विशेष सौन्दर्य और सजीवता आ जाती है।

(4) **विचारात्मक निबन्ध**—वे निबन्ध हैं जिनमें बौद्धिक विवेचन की प्रधानता रहती है। इनमें विषय के विवेचन के साथ वैज्ञानिक विश्लेषण किया जाता है। शुक्लजी के अनुसार विचारात्मक निबन्धों का चरम उत्कर्ष वहीं कहा जा सकता है जहाँ प्रत्येक पैराग्राफ में विचार दबा-दबाकर ठूँसे गये हों।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वर्णनात्मक निबन्ध का सम्बन्ध अधिकतर देश से, व्याख्यात्मक का काल से, भावात्मक का हृदय से तथा विचारात्मक का मस्तिष्क से होता है।

निबन्ध किस प्रकार लिखना चाहिए ?

वैसे तो निबन्ध लिखने की कुशलता प्राप्त करने के लिए निरन्तर अभ्यास की आवश्यकता होती है फिर भी विद्यार्थियों को सर्वप्रथम ऐसे विषयों पर निबन्ध लिखने चाहिए जिनके बारे में वे अधिक से अधिक जानकारी रखते हों, चाहे वे विषय कितने ही साधारण हों। साधारणतः विद्यार्थी को वर्णनात्मक निबन्धों से ही अपना कार्य प्रारम्भ करना चाहिए। जब साधारण विषयों पर विद्यार्थी निबन्ध लिखते-लिखते अपनी एक विशेष शैली अर्जित कर सकेगा तो स्वतः ही उनकी रुचि अन्य कठिनतर निबन्धों की ओर अग्रसर हो जायेगी।

निबन्ध-लेखन एक कला है। कुशल कलाकार मनोवृत्तियों के अनुसार ही अपनी कला का प्रदर्शन करते हैं। उत्तम निबन्ध भावावेश में ही लिखे जाते हैं। विषय के बारे में जो भाव और विचार जिस प्रकार मस्तिष्क में आएँ उन्हीं को समुचित शब्दों में लिख देना ही निबन्ध में क्रमबद्धता कहलाती है। क्रमबद्धता निबन्ध का सर्वश्रेष्ठ गुण है। किसी भी विषय पर निबन्ध लिखने से पूर्व उस विषय से सम्बन्धित सामग्री जुटाने के लिए उस पर गहराई से चिन्तन और मनन करना चाहिए। कौन-कौन से भाव तथा विचार इसमें खप सकते हैं। विषय की गम्भीरता से कभी भी घबड़ाना नहीं चाहिए। जो-जो विचार आवें, उसे लिखते चले जाओ, फिर उन पर एक बार दृष्टि डालो। उन्हीं विचारों को क्रमबद्धता देकर एक सुन्दर निबन्ध तैयार करो। इस प्रकार के परिश्रम से थोड़े से लिखे गये निबन्धों के पश्चात् ही आपको प्रतीत होगा कि जो कठिनता आपको पहिले निबन्ध के लिखने में हुई थी, वह अब समाप्त हो गई। जितना निबन्ध-

लेखन आपको कठिन प्रतीत होता था वह उतना ही अब सरल बन जाता है। निरन्तर अभ्यास ही सफलता की कुञ्जी है। यही तथ्य निबन्ध लेखन के बारे में भी कहा जा सकता है।

निबन्धों की भाषा जितनी सरल, सादी और सुबोध होगी, उतना ही निबन्ध भी उच्चकोटि का होगा। क्लिष्टता निवन्ध का दूषण है, भूषण कदापि नहीं। हमें सादगी में ही सुन्दरता का प्रदर्शन करना चाहिए।

कभी-कभी ऐसा होता है कि भावावेश में निबन्ध-विषयक आवश्यक बातें छूट जाया करती हैं और प्रायः विद्यार्थी उन छूटी हुई बातों को ही अन्त में लिखने की चेष्टा करते हैं। अतः यह अत्यन्त आवश्यक है कि निश्चित सामग्री को ध्यान में रखकर ही निबन्ध लिखना चाहिए। विषय के बारे में सर्वप्रथम एक तालिका बना ली जाय और विचारों को क्रमानुसार लिखने का प्रयत्न किया जाय। यह आदर्श निबन्ध लिखने की आदर्श प्रणाली है।

निबन्ध का कलेवर अनावश्यक बातें लिखकर बढ़ाने से लाभ नहीं। जहाँ तक हो सके, विषय को छोड़कर दूर जाना ठीक नहीं है। निबन्ध जितना बड़ा लिखने के लिए कहा जाय उतना ही बड़ा लिखना चाहिए। अनावश्यक बातों की भर्ती करने से क्या लाभ, क्योंकि परीक्षक के पास अनावश्यक बातों को देखने का अवकाश ही कहाँ होता है। अतः प्रासंगिक तथा आवश्यक बातों का ही निबन्ध में प्रदर्शन होना चाहिए।

प्रायः देखा जाता है कि सुन्दर विचार होने पर भी सुन्दर सुलेख के अभाव में विद्यार्थियों को कम अंक प्राप्त हो पाते हैं अतः निबन्ध में स्पष्टता तथा स्वच्छता का होना अपेक्षित है।

निबन्ध के प्रारम्भ व अन्त का प्रभावपूर्ण तथा आकर्षक होना आवश्यक है। निबन्ध के प्रारम्भ के विषय को इस प्रकार उपस्थित करना चाहिए कि वह एक आकर्षक वस्तु बन जाय और पाठक में उत्सुकता को जाग्रत करे। इसी प्रकार निबन्ध के अन्त में सम्पूर्ण विवेचन का सार-निर्देशित करना चाहिए। निबन्ध का अन्त ही उसकी सफलता है। निबन्ध का अन्त भी आकर्षक होना चाहिए।

निबन्ध के अन्तिम शब्द पाठक के हृदय में ऐसी गहरी छाप छोड़ सकें जो

कि पाठक के मस्तिष्क में कुतूहल वृत्ति जाग्रत करके विषय के प्रति एक स्थायी दृढ़ आस्था की मुहर लगा सके ।

लिखने के पश्चात् निबन्ध को दुहराना चाहिए । इससे बहुत-सी अशुद्धियाँ ठीक हो जाती हैं ।

उपर्युक्त सुझावों के अनुसार विद्यार्थियों को अपने अवकाश के क्षणों में विचार पूर्ण पुस्तकें, दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्रों को अवलोकन करने में थोड़ा-बहुत समय अवश्य देना चाहिए । ऐसा करते हुए जब उन्हें कोई आकर्षक वाक्य या सूचना मिले तो उसे वे नोट करते रहें और उसका उपयोग अपने निबन्धों में उचित स्थान पर करें । निबन्ध लिखने का कार्य निरन्तर होते रहना चाहिए । हो सकता है एक निबन्ध को पूरा होने में पर्याप्त समय लगाना पड़े किन्तु निबन्ध प्रतिदिन लिखना चाहिए । उसी विषय के बारे में अन्य क्षणों में मस्तिष्क में सोचते-विचारते रहना चाहिए । ऐसा करने से उच्च-कोटि के निबन्ध बड़ी सरलता से लिखे जा सकते हैं ।

आशा है, विद्यार्थीगण अपने लिखने के ढंग में उपयुक्त सुझावों के अनुसार कुछ परिवर्तन करेंगे और अपने लक्ष्य में सफलता प्राप्त करेंगे ।

निबन्ध-सूची

विषय	पृष्ठ

1
रेल-यात्रा

विचार-तालिका

- यात्रा का अवसर
- यात्रा की तैयारी
- टिकट लेने में परेशानी
- प्लेटफॉर्म का दृश्य
- यात्रा का वर्णन
- यात्रा से अनुभव तथा लाभ
- उपसंहार

परीक्षाएं समाप्त हो चुकी थीं। एक दिन प्रातःकाल अपने छोटे भाई रजनीकान्त के साथ ऊपर वाले कमरे में बैठा हुआ मैं रामचरितमानस का आनन्द ले रहा था तभी द्वार पर किसी व्यक्ति ने आवाज दी और नीचे आकर मैंने देखा मेरा मित्र चंचल खड़ा है। उसके हाथ में एक पत्र है और वह बहुत ही प्रसन्न है। उस पत्र को मेरे हाथ में थमाता हुआ बोला—"देहरादून से भाई साहब का बुलावा आया है, चलोगे ?" और उसकी इस बात को सुनकर मैं आनन्दित हो उठा। पत्र को पढ़कर मैंने देखा, उसमें लिखा था ...'अब तुम्हारी छुट्टियाँ हैं, तुम मित्र को अपने साथ लेकर मेरे पास देहरादून चले आओ।

और पत्र की इन पंक्तियों को पढ़कर मेरा आनन्द द्विगुणित हो उठा, स्वीकृति स्वरूप 'हाँ' मेरे मुख से सहसा ही निकल गया। मेरी इस 'हाँ' को सुनकर मेरा मित्र अपने घर को लौटा और मैं ऊपर अपने कमरे में। चंचल के भाई देहरादून में एक उच्च सरकारी पद पर थे। सोचा, देहरादून की यात्रा

सुखदायक रहेगी । इससे पूर्व देहरादून मैंने कभी देखा भी न था । वास्तव में, उस समय मेरी खुशी का कोई ठिकाना न था । इसलिए दूसरे दिन सायंकाल 'देहरादून एक्सप्रेस' से यात्रा करने का मैंने निश्चय किया और रजनीकान्त को चंचल के घर भेज अपने इस निर्णय से उसे भी अवगत करा दिया ।

रजनीकान्त के द्वारा अपने मित्र की स्वीकृति पाकर अपने लिए आवश्यक सामान मैंने एक बक्स में सजाया । देहरादून जाने की खुशी में फूला नहीं समा रहा था । उस दिन की रात मैंने यात्रा के स्वप्न देखते ही व्यतीत की और दूसरे दिन की संध्या तक का समय शहर में इधर-उधर चहलकदमी करके बिताया । ठीक छः बजे मैं और चंचल स्टेशन जा पहुँचे । वहाँ पहुँचकर हमने देखा, टिकट खरीदने वालों की एक लम्बी कतार—और हम दोनों ठगे से रह गये । हमारे मन में निराशा के बादल उमड़ने लगे । उस समय हम यह सोच रहे थे, शायद हम लोगों को टिकट न मिल सकेगा; मगर किसी प्रकार जब हमें टिकट मिल गया तो हमारा मन-मयूर नाच उठा । उस समय प्लेटफॉर्म पर अपार भीड़ थी । चारों ओर रंग-बिरंगे कपड़ों में सुसज्जित यात्री दृष्टि-गोचर हो रहे थे । वृद्ध-बालक, स्त्री-पुरुष सभी गाड़ी की प्रतीक्षा में थे । वास्तव में उस समय प्लेटफार्म का दृश्य बहुत रोचक था । लोग प्रतिपल गाड़ी के विषय में सोच रहे थे । स्टेशन, फल, अखबार, पान, बीड़ी बेचने वालों तथा यात्रियों की तरह-तरह की आवाजों से गूँज रहा था । विविध फैशन वाले स्त्री-पुरुषों की वहाँ पर भीड़ थी । ऊँची ऐड़ी की सैण्डिल पहने अनेक स्त्रियाँ अपने-अपने पतियों के साथ इधर-उधर घूम रही थीं । ग्रामीण स्त्रियाँ हाथ भर का घूँघट निकाले चुपचाप बैठी थीं । कुछ लोग सिगरेट का धुआँ उड़ा रहे थे, कुछ ग्रामीण अपना चिलम में ही दम ले रहे थे, कोई अखबार पढ़ रहा था, कोई पान खा रहा था । कोई बिस्तर पर लेटा हुआ था ।

कुछ ही देर पश्चात् गाड़ी आने की घण्टी बजी । सब लोग एकदम चौकन्ने हो गये । दो तीन मिनट बाद ही गाड़ी भक्-भक् करती हुई प्लेटफार्म पर आ गई । गाड़ी के आते ही सब लोगों में भगदड़-सी मच गई । यात्रियों का गाड़ी में घुसना और उससे बाहर निकलना आरम्भ हुआ । उतरने वाले यात्री अभी उतर भी नहीं पाये थे कि लोग उन्हें पीछे ढकेलते हुए डिब्बों में प्रवेश करने

लगे। शक्तिशाली लोग निर्बलों को ढकेलते हुए अधिक स्थान प्राप्त करने के प्रयास में लगे थे। कुछ बेचारे गठरी बने हुए थोड़ी जगह में बैठ गये थे। हमको यह देखकर अत्यन्त ही दुःख हुआ। हमने सोचा क्या समाज गरीबों और कमजोरों को इसी प्रकार अत्याचार की चक्की में पीसता रहेगा। क्या समाज में इन लोगों को कोई भी स्थान प्राप्त नहीं है? प्रभु की इच्छा और अत्यधिक संघर्ष से हमें भी डिब्बे में खड़े होने भर को जगह मिल गई।

गाड़ी जब चलने लगी तो लोग खिड़कियों से झाँक-झाँक कर बाहर का दृश्य देखने लगे। हम कभी बाहर की छटा का आनन्द लेते थे और कभी मनुष्यों के समूह को निहारते थे। उनमें कुछ प्रसन्न थे और कुछ उदास। कोई अपने प्रियजनों से मिलने जा रहा था तथा कोई उनसे बिछुड़ रहा था। इस समय सभी यात्रियों के मन में से ऊँच-नीच का भाव निकल कर उनसे बहुत दूर जाकर खड़ा हो गया था।

गाड़ी सभी बड़े स्टेशनों पर रुकती हुई जा रही थी और इन स्टेशनों पर बिकने वाली विविध वस्तुओं का रसास्वादन करते हुए हम भी गाड़ी में बैठे प्रतिपल देहरादून की ओर अग्रसर हो रहे थे। हम उन स्टेशनों एवं नगरों की भौगोलिक स्थिति से भी परिचित होते जा रहे थे। उनमें से कुछ नगर अधिक प्रसिद्ध थे, और कुछ कम प्रसिद्ध।

गाड़ी बरेली, मुरादाबाद, हरिद्वार आदि अनेक प्रसिद्ध नगरों एवं तीर्थों को पार करती हुई अपने लक्ष्य देहरादून की ओर बढ़ रही थी। मार्ग में पहाड़ों की अनेक गुफायें भी हमने देखीं। इन प्राकृतिक दृश्यों को देखकर हम बहुत प्रसन्न थे, और अन्त में देहरादून के स्टेशन पर पहुँचकर तो हमारी प्रसन्नता का पारावार न रहा। यहीं पर हमारी यात्रा का अन्त था। जब हम गाड़ी से उतरे तो हमारे आनन्द की कोई सीमा न थी। वहाँ की मनोहारिणी प्राकृतिक छटा के दर्शन हमें स्टेशन पर ही हो रहे थे और घर की ओर चलते जाते हम सोच रहे थे -प्रकृति के सौन्दर्य के सम्बन्ध में, जो देहरादून में सर्वत्र ही बिखरा पड़ा है। आज भी इस यात्रा के मधुर संस्मरण मुझे आनन्द विभोर कर देते हैं तथा सहसा ही निम्न ध्वनि मुख से निकल पड़ती है--

"सैर कर दुनियाँ की गाफिल जिन्दगानी फिर कहाँ।"

यथार्थ में सुख दुःख से समन्वित यात्रा मानव जीवन के विकास तथा उत्थान के लिए अपेक्षित है।

ताजमहल

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—संसार की अद्‌भुत वस्तुओं में ताजमहल की गणना
- ताजमहल की स्थिति, निर्माता एवं निर्माण काल
- ताजमहल के बनाने का समय, परिश्रम एवं व्यय
- ताजमहल का वर्णन
- शरद् पूर्णिमा की रात्रि को ताज की मनोरम छटा
- उपसंहार

ताजमहल संसार की सात अद्‌भुत वस्तुओं में से एक है। इस भवन ने संसार में जो ख्याति प्राप्त की है, उतनी ख्याति कदाचित् ही किसी अन्य भवन ने प्राप्त की हो। यह ताजमहल शाहजहाँ और मुमताज के प्रगाढ़ प्रेम का जीता-जागता उदाहरण है। हिमालय की भाँति अटल खड़ा हुआ विशाल भवन अमर प्रेम का सन्देश दे रहा है। इसकी ख्याति संसार में इतनी अधिक है कि संसार के कोने-कोने से लोग इसे देखने आते हैं और देखकर दंग रह जाते हैं। वे इसे देखकर तृप्त नहीं होते। वास्तव में, वास्तुकला का जैसा सुन्दर रूप यहाँ देखने को मिलता है वैसा अन्यत्र नहीं।

यह भवन आगरा में यमुना नदी के दाँये किनारे पर स्थित है। इसके समीप ही ताजगंज नामक मुहल्ला है। सम्भवतः उस मुहल्ले का नाम भी इसी के आधार पर रक्खा गया हो। प्रसिद्ध ऐतिहासिक इमारत आगरा फोर्ट से करीब दो मील की दूरी पर है। इस विशाल भवन के तीन ओर बाग है और पीछे कालिन्दी कल-कल शब्द करती हुई निरन्तर बहती रहती है। मुगल सम्राट शाहजहाँ बड़े ठाट-बाट वाला व्यक्ति था। वह अपनी बेगम मुमताज से बड़ा प्रेम करता था। मुमताज की यह आकांक्षा थी कि उसके मरने के पश्चात् उसकी समाधि पर ऐसा सुन्दर मकबरा बनवाया जाय जो संसार में बेजोड़ हो। शाहजहाँ ने अपनी प्रिय बेगम की इस आकांक्षा को पूरा करने का निश्चय किया और ताजमहल को बनवाकर अपने प्रगाढ़ प्रेम का परिचय दिया। यह इमारत सत्रहवीं शताब्दी की वास्तुकला के स्वरूप को हमारे सामने उजागर कर रही है,

ताजमहल के विषय में यह दन्त कथा प्रचलित है कि शाहजहाँ ने इस भवन के नक्शे को स्वप्न में देखा था और उसी के अनुसार इसका निर्माण करवाया। सन् 1641 में इस भवन का निर्माण हुआ। करीब बीस वर्ष में यह बनकर तैयार हुआ। इस इमारत में करीब 22 सहस्र मजदूर प्रतिदिन कार्य करते थे। संसार के कोने कोने से कारीगर बुलाए गये थे। शाहजहाँ ने देश-देशान्तर से बहुमूल्य पत्थर तथा अन्य सामग्री मँगवाई। यह इमारत पूर्णतः संगमरमर की बनी हुई है। संगमरमर राजपूताने की खानों से मँगवाया गया था। इसके निर्माण में करीब 20 करोड़ रुपया व्यय हुआ। एक किंवदन्ती यह भी प्रसिद्ध है कि शाहजहाँ ने ताज बनाने वाले करीगरों के हाथ कटवा दिये थे। ताकि वे ऐसी सुन्दर इमारत अन्यत्र न बना सकें।

इस विशाल भवन तक पहुँचने के लिए सर्वप्रथम एक विशाल प्रवेश द्वार में होकर जाना पड़ता है। इस प्रवेश द्वार के दाएँ-बाएँ तथा ऊपरी ओर कुरान शरीफ की आयतें बड़े सुन्दर ढंग से लिखी गई हैं। उन अक्षरों का अनुपात ऐसा है कि करीब-करीब सभी अक्षर एक ही प्रकार के दिखाई पड़ते हैं। कुरान शरीफ की आयतों में सुन्दर पच्चीकारी इस प्रकार हो रही है मानो कोई डिजाइन बन गई हो। ये प्रवेश द्वार लाल पत्थर का बना हुआ है। द्वार के समीप ही एक अजायबघर है जहाँ मुगल बादशाहों के अस्त्र-शस्त्र आदि सुरक्षित हैं। दरवाजे के भीतर इमारत तक पहुँचने के लिए चौड़ा राजमार्ग है। फुब्बारों से युक्त नाली के दोनों ओर सन्तरी की भाँति वृक्ष सदैव शोभा पाते हैं। कुछ दूरी पर एक सुन्दर सरोवर है, जिसमें पंकज खिलकर तालाब की मनोहर छटा को बढ़ा देते हैं। रंग-बिरंगी मछलियाँ किलोल करती हुई दृष्टिगोचर होती हैं। इसमें ताज का प्रतिबिम्ब बड़ा मोहक लगता है। इस सरोवर के चारों ओर संगमरमर की चौकियाँ बिछी हुई हैं, जिन पर यात्रीगण बैठकर सरोवर तथा ताज की मनोहर छटा को निहारते हैं।

इसी स्थान पर बैठकर दर्शकगण ताज के उद्यान की शोभा निहारते हैं। उद्यान में भाँति-भाँति के रंग-बिरंगे पुष्प सर्वत्र दिखाई देते हैं। सुन्दर हरी-हरी घास मखमल के गद्दों के समान प्रतीत होती है। यहीं से श्वेत संगमरमर की इमारत भली-भाँति दृष्टिगोचर होती है। यह इमारत संगमरमर के विशाल चबूतरे पर बनी हुई है। चबूतरे के चारों कोनों पर चार मीनारें हैं, जो मकबरे के चारों ओर प्रहरी-सी खड़ी हैं तथा जिनमें ऊपर चढ़ने के लिए

चक्करदार सीढ़ियाँ हैं । मध्य में ताज का विशाल गुम्बद है जो दो सौ पिचहत्तर फीट ऊँचा है । इतना ऊँचा गुम्बद संसार में अन्यत्र कहीं नहीं है । इसके चारों ओर छोटे-छोटे चार गुम्बद और हैं । सफेद संगमरमर के बने हुए इस भवन को करीब तीन सौ वर्ष हो गये, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि मानो आज ही बनकर तैयार हुआ हो । ताजमहल के चारों ओर दीवारों पर काले पत्थरों के अक्षरों में कुरान की आयतें खुदी हुई हैं । उन पर बड़ी सुन्दर पच्चीकारी हो रही है ।

ताज के अन्दर का और ही दृश्य है । विशाल गुम्बद के नीचे शाहजहाँ और मुमताजमहल की समाधियाँ हैं । वे वास्तविक समाधियों की नकल हैं । वास्तविक समाधियाँ उनके नीचे हैं । इन पर बहुमूल्य पत्थर की नक्काशी है जिसे देखकर दाँतों तले उँगली दबानी पड़ती है । सीढ़ियों द्वारा तहखाने में जाकर वास्तविक समाधि के दर्शन होते हैं । तहखाने में अन्धकार छाया रहता है । अतः समाधियों के दर्शनार्थ प्रकाश की सहायता लेनी पड़ती है । वहाँ का दृश्य बड़ा ही चित्ताकर्षक है । वहाँ पर हर समय सुगन्धित अगरबत्तियाँ जला करती हैं । दोनों समाधियों में यह अन्तर है कि मुमताजमहल की समाधि पर तो कुरान की आयतें अंकित हैं पर शाहजहाँ की समाधि पर नहीं । मुमताज महल की समाधि पर शाहजहाँ ने कुरान की आयतों को लिखवाने में कोई हर्ज न समझा, किन्तु शाहजहाँ की समाधि उसके पुत्र औरंगजेब द्वारा बनवाई गई, उसने यह सोचकर कि किसी दिन समाधि पर मनुष्य के पैर पड़ सकते हैं, कुरान की आयतें नहीं लिखवाईं ।

शरद्-पूर्णिमा की रात्रि को ताजमहल की मनोरम छटा देखते ही बनती है । उस समय ताज की छटा का वर्णन करना लेखनी की शक्ति के परे है । चन्द्रमा की किरणों से मकबरा तथा मीनारें जगमगाने लगती हैं । सारा मकबरा चाँदी के समान चमकने लगता है । बहुत से विदेशी शरद्-पूर्णिमा को रात्रि में ताज की अनुपम छटा को देखने के लिए आते हैं और अपने मस्तिष्क में ताज की अनुपम शोभा अंकित कर ले जाते हैं । स्मृति के लिए वे संगमरमर की बनी हुई ताज की अन्य प्रतिमायें भी अपने साथ ले जाते हैं ।

ताजमहल वास्तुकला के एक अद्वितीय नमूने के साथ-साथ दाम्पत्य प्रेम का अद्वितीय स्मारक है । लगभग तीन सौ वर्ष समाप्त होने पर भी ताज के सौन्दर्य में किसी प्रकार की कमी नहीं आई है । एक योगी की भाँति वह धूप, वर्षा शीत आदि को सहता रहता है । पत्थरों की जुड़ाई, चित्रकारी, पच्चीकारी

कटाई आदि को देखकर मुगलकालीन वास्तुकला का परिचय मिलता है। भारतीय कला धन्य है, जिसने संसार में ताज जैसा मकबरा प्रस्तुत किया। इस पर हमें और हमारे देश को गर्व है। किसी कवि के शब्दों में—

"मुमताज शहंशाह रहे नहीं, गाथा भी बहुत पुरानी है।
पर शरद् रात की वर्ष गाँठ, तेरी यह ताज जवानी है॥"

यथार्थ रूप में कहा जाय तो यह निश्चित है कि ताज आगरा नगर के गौरव में चार चाँद लगा रहा है। आगरा नगरी ताज को अपनी गोद में लेकर धन्य है।

किसी देखे हुए मैच का वर्णन

विचार-तालिका **(फुटबॉल मैच)**

- प्रस्तावना—खेल की आवश्यकता
- खेल की रचना तथा व्यवस्था
- मैच की तैयारी
- खेल का वर्णन तथा मैच का फल
- फुटबॉल के खेल की उपयोगिता
- फुटबॉल के खेलों से अन्य खेलों की तुलना
- उपसंहार

विद्यार्थियों के लिए खेलना परमावश्यक है। खेलने से उनका शारीरिक विकास भली प्रकार हो जाता है। अँग्रेजी की कहावत प्रसिद्ध है "Sound mind in a sound body" अर्थात् स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क रहता है। विद्यार्थी-जीवन बिना समुचित मानसिक विकास के सुचारु रूप से नहीं चल सकता। विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने के लिए खेलों की योजना बनाई जाती है। प्रत्येक स्कूल और कॉलेजों में खेलों की व्यवस्था का प्राविधान है। नवीन पद्धतियों के अनुसार तो खेल ही शिक्षा का माध्यम है। सारे पाठ्यक्रम को खेल के इर्द-गिर्द इस प्रकार बाँध दिया जाता है कि सम्पूर्ण शिक्षा खेल द्वारा ही दी जा सके। अतः विद्यार्थियों के लिए खेलना परमावश्यक है।

फुटबॉल का खेल हमारे देश में अँग्रेजी सभ्यता के साथ-साथ आया है। यह समतल मैदानी भूमि में खेला जाता है। इस खेल के लिए लगभग 100 गज लम्बी और 60 गज चौड़ी भूमि की आवश्यकता होती है। खेल की व्यवस्था इस प्रकार की जाती है कि मैदान में दो-दो लट्ठे गाढ़ दिये जाते हैं। यही स्थान गोल सूचक-चिह्न माने जाते हैं। इस खेल में एक गेंद और उसमें हवा भरने के लिए पम्प की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त इस खेल में अन्य किसी सामान को जुटाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। देशी खेलों की भाँति यह खेल सस्ता है। खेल के मध्य में एक रेखा मैदान को दो भागों में विभाजित करती है। इसके अतिरिक्त दो रेखाएँ होती हैं, जिन्हें क्रमशः गोल लाइन "Goal Line" और टच लाइन "Touch Line" कहते हैं। इस खेल में हॉकी की भाँति दोनों पक्षों में ग्यारह-ग्यारह खिलाड़ी होते हैं।

मैंने जिस मैच को देखा वह आगरा ग्राउण्ड पर डी० ए० वी० इण्टर कॉलेज व अग्रवाल इण्टर कॉलेज के मध्य खेला गया था। अक्टूबर का महीना था, मैच का आरम्भ होने का समय सोमवार को चार बजे था। प्रधानाचार्य जी ने छात्रों को मैच की सूचना शनिवार को ही दे दी थी ताकि सभी छात्र नियत समय पर क्रीड़ा-स्थल पर पहुँचकर अपने कॉलेज की टीम को प्रोत्साहित करें। सोमवार के दिन करीब तीन बजे कॉलेज (डी० ए० वी० कॉलेज) के खिलाड़ी एवं अन्य विद्यार्थी उपस्थित हुए। कॉलेज से खेल का मैदान करीब दो मील की दूरी पर था। खिलाड़ियों ने खेल की पोशाक पहन ली और अन्य विद्यार्थी कॉलेज की पोशाक में थे। लगभग 3½ बजे सेक्रेटरी के साथ पैदल ही खेल के मैदान को चल दिए। उसी समय अग्रवाल कॉलेज की टीम भी आ पहुँची। खेल के मैदान में दर्शक-गणों की भीड़ इकट्ठी हो रही थी। रैफरी के सीटी बजाते ही मैच आरम्भ हो गया। उस समय का दृश्य बड़ा चित्ता-कर्षक था। आकाश में इन्द्रधनुष की अनुपम छटा दिखाई दे रही थी और शीतल पवन मन्द-मन्द गति से बह रहा था, जिससे खेल के मैदान के चारों कोनों पर लगी हुई झण्डियाँ फहरा रही थीं। गोल के चारों स्थानों पर जाली लकड़ी से चौड़ा दरवाजा सा बना दिया था। एक ओर नगर के प्रमुख व्यक्तियों के बैठने के लिए कुर्सियों का प्रबन्ध था। पुरस्कार वितरित करने के लिए जिलाधीश को आमन्त्रित किया गया था। जिलाधीश के सामने एक मेज पर ट्राफी रक्खी हुई थी।

दोनों टीमों के खिलाड़ी किसी भी प्रकार एक-दूसरे से कम नहीं थे। करीब आध घण्टे तक किसी ओर से गोल नहीं हुआ। एक बार गेंद हमारे गोल में घुसने से बाल-बाल बच गई, क्योंकि हमारा गोल रक्षक बड़ा फुर्तीला था। गेंद को चतुराई से फेंककर उसने एक गोल बचाया किन्तु कुछ ही देर बाद अग्रवाल कॉलेज की टीम ने एक गोल कर दिया। रेफरी ने सीटी बजाई। सारा वातावरण करतल-ध्वनि से गुञ्जित हो उठा, परन्तु हमारे खिलाड़ी हतोत्साहित नहीं हुये। हमारे कॉलेज के विद्यार्थियों ने खिलाड़ियों को उत्साहित करना प्रारम्भ कर दिया। हमारी टीम और अधिक सावधानी से खेलने लगी। इतने में ही विश्राम का समय हो गया। दोनों ओर के खिलाड़ियों की दर्शकों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की। दोनों ओर के खिलाड़ियों को फल खिलाये गये। पन्द्रह मिनट के विश्राम के पश्चात् सीटी बजी और खिलाड़ी अपने-अपने स्थान पर पहुँच गये। खेल पुनः आरम्भ हुआ। विपक्षी टीम ने हमारे कॉलेज की टीम को हराने में किसी प्रकार की कसर न रक्खी थी। सुरेशचन्द्र नामक एक खिलाड़ी ने गेंद में ऐसी लात मारी कि गेंद विपक्षियों के गोल में जा पहुँची। अबकी बार विपक्षियों पर गोल हो गया। हम लोगों के हर्षोल्लास का ठिकाना न था। हमारा कोई साथी रूमाल उछाल रहा था तो कोई पैसे ऊपर की तरफ फेंक रहा था। सम्पूर्ण वातावरण एक अजीब कोलाहल से गूँज उठा। अब मैच समाप्त होने में थोड़ा ही समय शेष था कि हमारी टीम ने एक गोल और कर दिया। रेफरी ने लम्बी सीटी बजाई, खेल समाप्त हो गया। हमारे हर्ष का पारावार न रहा इसके पश्चात् जिलाधीश ने हमारे कैप्टिन को ट्राफी प्रदान की और खेलों की उपयोगिता पर प्रकाश डाला। लगभग साढ़े छः बजे हम विद्यालय वापस लौटे। जीत के उपलक्ष में प्रधानाचार्य जी ने एक दिन के लिए कॉलेज बन्द कर दिया। सभी विद्यार्थी सानन्द अपने अपने घर लौट गये।

खेल से स्वस्थ रहने के अतिरिक्त मनोरंजन भी होता है। फुटबॉल का खेल अन्य अँग्रेजी खेलों की अपेक्षा सुलभ, सस्ता और अधिक उपयोगी है। इस खेल में न तो अधिक झंझट ही है और न कोई विशेष सामान जुटाने की आवश्यकता ही। मैदानी खेलों में यह सबसे अधिक मनोरंजक और स्वास्थ्यवर्द्धक है। फुटबॉल खेलने से माँसपेशियाँ सबल हो जाती हैं। श्वासोच्छ्वास की क्रिया शीघ्र होने के कारण रक्त भी शुद्ध होता है, स्फूर्ति भी आती आज्ञा-पालन

और कर्त्तव्य-परायणता की क्षमता आती है, पारस्परिक प्रेम और सहानुभूति की भावना प्रगाढ़ होती है। एक विद्वान के कथनानुसार "यदि किसी के चरित्र की परीक्षा करनी है तो खेल के मैदान में करो।"

मैदानी खेलों में हॉकी, कबड्डी, टेनिस और क्रिकेट मुख्य हैं। अन्य सब खेलों की अपेक्षा फुटबॉल के खेल से व्यायाम अधिक होता है। फुटबॉल का खेल किसी भी ऋतु में खेला जा सकता है। यही खेल है, जिसमें सहयोग की प्रवृत्ति का जन्म होता है।

मैच खेलने के अनेक लाभ होते हैं। खिलाड़ी खेल के मैदान में धैर्य और सहन-शक्ति के गुण प्राप्त करते हैं। वे सहयोग के साथ काम करना सीखते हैं। उनमें आज्ञा पालन और कर्त्तव्य-परायणता की क्षमता आती है। इसके अतिरिक्त जन-साधारण का भी मनोरंजन होता है, इसलिए विद्यार्थी के लिए खेलना परम आवश्यक होता है।

अपने जीवन की सबसे मनोरंजक घटना

विचार-तालिका

- **भूमिका—पन्द्रह अगस्त का महत्त्व**
- **पन्द्रह अगस्त पर जनता द्वारा तैयारियाँ**
- **नगरों में सभाओं का आयोजन**
- **इस दिन के मनोरंजक होने का कारण**
- **उपसंहार—इस दिन से शिक्षा**

मेरे जीवन की सबसे मनोरंजक घटना थी, भारत माँ का बन्धनहीन होना। 15 अगस्त सन् 1947 का दिन भारतीय इतिहास में सदैव अमर रहेगा। यह भारत का स्वर्ण दिवस है। आज के दिन भारतीयों को यह कहने का साहस हुआ कि भारत-माता स्वतन्त्र है, वह किसी के अधीन नहीं। यह वह दिन था जब हमारे राष्ट्र के नेताओं का अथक् परिश्रम सफल हुआ, यह वह दिन था जब कि पूज्य बापू के अहिंसा के अस्त्र के समक्ष विदेशियों ने हार स्वीकार कर ली। आज के दिन को देखने के लिए न जाने कितने बलिदान हुए, न जाने कितनी माँ-

बहिनों की माँग का सिन्दूर तलवार की नोंक से पोंछा गया, मासूम बच्चों को संगीनों की नोंकों पर लटकाया गया। अन्त में भारतीयों की साधना सम्पन्न हुई तथा इस दिन के दर्शन हुए। इस दिन राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति के मुख पर अपूर्व छटा के दर्शन होते हैं।

पन्द्रह अगस्त का दिन जनता और सरकार दोनों ने ही बड़ी सजधज से मनाया। उस दिन का कार्यक्रम बहुत ही मनोरंजक था। कहीं द्वारों पर बन्दनवार बाँधे गये; कहीं तिरङ्गा झण्डा फहराया गया, विद्यालयों में दो-तीन दिन पहिले से ही खेल-प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। उस दिन अच्छे खिलाड़ियों को पुरस्कार प्रदान किये गये। प्रभातफेरियाँ निकलीं ''भारत माता की जय हो', 'बापू की जय हो' आदि के नारे राष्ट्र के प्रत्येक नौनिहाल के हृदय में उत्साह और उमङ्ग भर रहे थे। उस दिन सभी जोश और उत्साह से भरे थे। कितना सुखद था वह दिन !

दस बजे तिरंगे झण्डे फहराये जाने को थे। आकाश में उड़ती हुई ध्वजायें हृदय को प्रफुल्लित कर रही थीं। जनता विशेष उत्साह-सम्पन्न दीख पड़ रही थी। लाल किले के शिखर पर पहुँच कर प्रधान मन्त्री नेहरू ने जिस समय राष्ट्रीय ध्वज को फहराया उस समय भारत की जनता प्रेम एवं हर्ष के सागर में गोते लगाने लगी। ध्वजा फहराने के पश्चात् मिठाई बाँटी गई, भूखों-नंगों को भोजन तथा वस्त्र दिये गये। आज के दिन को अमर बनाने के हेतु बहुत से देश-प्रेमियों ने वृक्ष लगवाये।

आज के दिन नगरों में एक अनुपम शोभा छा रही थी। बच्चे, युवक, वृद्ध, प्राणपण से आज के कार्यक्रम को सफल बनाने में संलग्न थे। उड़ती हुई ध्वजाएँ दर्शकों के हृदय में आशा, कल्पना तथा देश प्रेम की हिलोरें उत्पन्न कर रही थीं। रिमझिम-रिमझिम, मन्द-मन्द फुहारें मानो उस दिन की प्रसन्नता की घोषणा कर रही थीं। तिरंगे झण्डे की कीर्ति नवीन आभा से युक्त थी। संध्या के समय अनेक सभाओं का आयोजन किया गया, जिनमें देश के नव-युवकों तथा वृद्धों ने देश-प्रेम से आपूरित भाषण दिये एवं कवितायें सुनाईं ---साथ ही उन महान् विभूतियों के प्रति श्रद्धा प्रगट की, जिनके अथक् परिश्रम से जनता आज का दिन देख सकने में समर्थ हुई। रात्रि के समय की शोभा तो वर्णन से परे है। घर-घर में प्रकाश जगमगा रहा था। निर्धन लोग भारत माँ के स्वागत में मिट्टी के दीपक जलाकर सन्तोष अनुभव कर

रहे थे। नगरों की शोभा का क्या कहना ? बिजली का प्रकाश सूर्य के प्रकाश को चुनौती दे रहा था। बहुत-सी दुकानों पर गाँधी, सुभाष तथा नेहरू आदि के चित्र शोभा से सम्पन्न दीख रहे थे। जिन्हें देखकर जनता प्रसन्नता का अनुभव कर रही थी तथा अपने को धन्य मान रही थी। कितना आकर्षक था, पन्द्रह अगस्त का वह दिन।

वह दिन मेरे जीवन की सबसे मनोरंजक घटना इसलिए थी, क्योंकि गुलामी की जंजीरों से जकड़े होने पर क्या किसी राष्ट्र के व्यक्ति सुख और शान्ति का अनुभव कर सकते हैं ? पराधीन जाति, पराधीन देश एक ऐसे मुर्दे के समान है, जिसके माँस को पशु तक त्याज्य मानते हैं। पराधीनता एक ऐसा अभिशाप है जो सर्वथा घृणित तथा निकृष्ट है। स्वतन्त्रता मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है, और उसे प्राप्त करना उसका सबसे बड़ा कर्त्तव्य है। यही कारण है जो मैं इसे अपने जीवन की सबसे अधिक मनोरंजक घटना मानता हूँ।

पन्द्रह अगस्त आता है तथा चला जाता है और स्वाधीन भारतीय नागरिकों को एक सन्देश प्रदान कर जाता है। कितनी मादकता एवं प्रसन्नता भरने की शक्ति है, इस दिन में ? कितना है उल्लास से पूरित आज का दिन—देखिये कवि की ये पंक्तियाँ—

यह शुभ अवसर मङ्गलमय हो।
जन जीवन के नव वितान में स्वर्णिम भाव उदय हो॥
मङ्गलमुखी उषा सज्जित हो, सविता का मङ्गल घट लाई,
तम के अवगुंठन से झाँकी उर उमङ्ग लेकर मुसकाई।
कुञ्ज कुञ्ज में कल कूजन से विहग गा रहे अति मुदमय हो,
यह शुभ अवसर मङ्गलमय हो॥

आज का दिन हमें यही सन्देश देता है कि हममें सच्चा प्रेम हो, त्याग हो, दया हो, सहानुभूति हो और हो कर्त्तव्य-परायणता की भावना। क्या आज का दिन कभी भुलाया जा सकता है ? आइए आज हम सारे राष्ट्र के नौनिहाल जन-जन के मन में ज्ञान की पावन ज्योति जगाने का व्रत लें। स्वतन्त्रता देवी के स्वागत में, जगमगाते दीपकों के प्रकाश में अपने हृदय के अन्धकार को नष्ट कर भारत के कण-कण में कल्याण एवं शान्ति की ऐसी हिलोर उठा दें

जिसमें निमग्न भारतवासी यथार्थ सुख का अनुभव करें। तभी देश के कण-कण से निम्न स्वर मुखरित होता हुआ सुनाई पड़ेगा। देखिए—

"सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा"

दीपावली

विचार-तालिका

- दीपावली मनाने का कारण
- दीपावली मनाने की प्रथा
- घरों की मरम्मत एवं लक्ष्मी-पूजन
- जुआ की कुप्रथा
- उपसंहार

अमावस की काली अंधियारी रात में प्रज्वलित दीपकों की पंक्तियाँ एवं नभ में छूटती हुई रंग-बिरंगी फुलझड़ियाँ मनुष्यों के हृदय में एक अपूर्व उत्साह तथा उमंग को घोल देती हैं। इस दीपावली को यदि प्रकाश का पर्व कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

फुलझड़ियों की चमक-दमक तथा पटाखों की तीव्र ध्वनि एक विचित्र दृश्य उपस्थित कर देते हैं। इस दिन व्यापारी यह आशा करते हैं कि उनके व्यापार में इस दिन से नयी अभिवृद्धि होगी। घर में लक्ष्मी का प्रवेश होगा।

कार्तिक कृष्णा अमावस्या की तिथि में यह उत्सव भारतवर्ष में बड़े उत्साह एवं उल्लास के साथ मनाया जाता है। दीपावली आर्य जाति का पवित्र तथा मुख्य त्यौहार है। आर्य जाति अपने आर्थिक वर्ष का प्रारम्भ इसी पवित्र दिन से करती आई है। कहा जाता है, मर्यादा-पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्रजी बनवास की अपनी चौदह वर्ष की अवधि को पूरा करके इसी तिथि को अयोध्या में पधारे थे। उनके स्वागतार्थ अयोध्यावासियों ने जो उत्सव मनाया था उसी आनन्दोत्सव की आवृत्ति इस पवित्र दिन की जाती है। चाहे इस त्यौहार के मनाने का कुछ भी कारण हो, किन्तु आर्य जनता इस त्यौहार को बड़े उत्साह

तथा प्रसन्नतापूर्वक मनाती है। दीपकों के झिलमिलाते प्रकाश में अमावस्या का घोर अन्धकार धुल जाता है। जिधर नजर उठाकर देखिए, उधर दीपावली की धूमधाम ही दृष्टिगोचर होती है। घरों की सजावट देवों के मन को भी लुभाती है।

दीपावली मनाने के लिए लोग सप्ताहों पहले से ही तैयारी आरम्भ कर देते हैं। दीवारें, किवाड़, चौखट अनेक प्रकार के रंगों से रंग दी जाती हैं। विभिन्न प्रकार के चित्रों से घर चित्रशाला के समान बन जाते हैं चित्र तथा मूर्तियों को बनाते समय लोग इतने तल्लीन हो जाते हैं कि उन्हें पूर्ण करने के लिए खान-पान तक भूल जाते हैं। यह है दीपावली के प्रति आर्य जाति का सच्चा प्रेम। शहरों में भी पक्के मकानों की पुताई की जाती है। कृषक-वर्ग भी अपनी जीर्ण-शीर्ण कुटियों को गोबर से लीप-पोत कर दीपावली के लिए स्वच्छ कर लेते हैं। ग्रामों के छप्परों पर लहलहाती बेलें नगरों की बनावटी बेलों से कहीं अधिक सुन्दर प्रतीत होती हैं। अन्य दिनों की अपेक्षा आज के दिन बाजार भी बहुत ही अधिक सुन्दर दिखाई पड़ते हैं। छोटी दीपावली की पवित्र तिथि को नरसिंह भगवान् ने अवतार लेकर हिरण्यकश्यप को मार कर प्रह्लाद भक्त को बचाया था।

दीपावली अमावस्या के दिन बड़ी प्रसन्नता के साथ मनाई जाती है। प्रातःकाल से ही ईश्वर का गुणगान प्रारम्भ होता है। स्थान-स्थान पर हवन किये जाते हैं तथा व्याख्यानों से आकाश गूंजने लगता है। रात्रि के समय लक्ष्मी-पूजन किया जाता है। रात्रि को मिट्टी के दीपकों के प्रकाश में अन्धकार धुल जाता है। नगरों में बिजली का प्रकाश सूर्य के प्रकाश को भी चुनौती देता है। प्रत्येक घर में प्रसन्नता ही प्रसन्नता दिखाई पड़ती है। मिठाई तथा विविध प्रकार के पकवान तैयार किये जाते हैं। बच्चे अपनी जेबों में खील बताशे भरकर सड़क पर कूदते हुए नजर आते हैं। दीपावली के सुअवसर पर कहीं रेडियो पर उच्च कलाकारों के गीत सुनने को मिलते हैं; कहीं पर नाटक-प्रेमी दीपावली से सम्बन्धित नाटकों का आयोजन करते हैं; कहीं रास-प्रेमी अपने रास रचाकर वातावरण में और भी सरसता तथा मधुरता का संचार कर देते हैं। सारांश यह है कि सर्वत्र प्रसन्नता ही प्रसन्नता दृष्टिगोचर होती है।

दीपावली के अवसर पर जहाँ इतने आमोद-प्रमोद के साधन जुटाये जाते हैं वहाँ पर इस पवित्र त्यौहार में एक जुए की बड़ी बुराई भी है जो जनता का

सर्वनाश कर डालती है । लाखों की संख्या में लोग जुआ खेलते हैं । परिणाम-स्वरूप वे भिखारी बनकर दर-दर की ठोकरें खाते फिरते हैं । इस राक्षस जुए ने जाने कितने लखपतियों को क्षणमात्र में खाकपति बना दिया, न जाने कितनी माँ-बहिनों के अलंकार से सुशोभित शरीरों को अलंकार विहीन कर दिया ? कौरवों तथा पाण्डवों का सत्यानाश करने वाला यही जुआ था । दुःख का विषय है कि आज स्वतन्त्र-भारत में भी जनता इस कुप्रथा का शिकार बनी हुई है ।

बहुत से चोरों की यह धारणा होती है कि दीपावली की रात्रि को चोरी करके उन्हें स्वयं के भाग्य की परख करनी चाहिए। इसी विश्वास के आधार पर वे चोरी करने के लिए प्रस्थान कर देते हैं । दूसरी ओर अनेक अन्ध विश्वासी गृहस्थ-लक्ष्मी के आगमन की प्रतीक्षा में अपने गृह के दरवाजे खुले रखते हैं । लक्ष्मी का आगमन होता नहीं अपितु चोर गृह में प्रवेश करके सामान तथा धन उठाकर ले जाते हैं । पर्व की आड़ में जुआ तथा चोरी दोनों विनाशकारी हैं ।

दीपावली के दूसरे दिन गोवर्धन-पूजा की जाती है । यह पवित्र तिथि इन्द्र के प्रकोप से गोवर्धन द्वारा ब्रज की रक्षा किये जाने के कारण भगवान् श्रीकृष्ण की पावन स्मृति में मनाई जाती है । आगे आने वाले दिन भैया-दूज आती है । यह पवित्र दिन भाइयों तथा बहिनों के लिए विशेष महत्त्व का है । बहिनें प्रातःकाल से ही स्नान करके अपने भाइयों को टीका करती हैं और इसके बदले में भाई, बहिनों को रुपया अथवा अन्य उपहार प्रदान करते हैं ।

वर्षा के प्रकोप के कारण मकान टूट-फूट जाते हैं इसलिए मकानों में गन्दगी होने के कारण अनेक प्रकार के विषैले कीटाणु निवास करने लगते हैं । परन्तु दीपावली के आने से सप्ताहों पूर्व लोग अपने घरों को स्वच्छ करने में जुट जाते हैं, इससे विषैले कीटाणुओं का नाश होता है । इसके अतिरिक्त दीपावली की रात्रि को तेल के दीपक जलने एवं हवन की सलोनी गन्ध से वायु शुद्ध हो जाती है तथा कीटाणुओं का नाश होता है । त्यौहार के अवसरों पर मनुष्यों में पारस्परिक प्रीति की वृद्धि होती है, वे एक-दूसरे से हृदय खोलकर मिलते हैं । अनेक प्रकार के मनोरंजन होने के कारण जीवन प्रसन्नता से भर जाता है । इस अवसर पर व्यक्ति अपने विवाद को भूल कर सुख के हिंडोलों पर झूलने लगते हैं ।

मगर इन त्यौहारों में जो दोष आ गये हैं उनमें सुधार होना परमावश्यक है आज हम स्वतन्त्र हैं, इस कारण हमारी राष्ट्रीय सरकार भी इस जुए की कुप्रथा का नाश करने के लिये सक्रिय कदम उठा रही है। देश हितैषियों को सरकार के इस कार्य में सहयोग देना चाहिए। दीपावली के अवसर पर साहित्यिक गोष्ठी एवं प्रदर्शनियों का प्रदर्शन होना चाहिए, जिससे कि जनता की मनोवृत्ति में परिष्कार हो तथा हमारे देशवासियों का सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक जीवन उच्च हो, यही अभिलाषा है। कवि नीरज के शब्दों में—

"जलाओ दिए पर रहे ध्यान इतना,
धरा पर अँधेरा कहीं रह न जाये॥"

6
विद्यालय का वार्षिकोत्सव

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना— विद्यालय में वार्षिकोत्सव की तैयारियाँ**
- **पहले दिन खेल-कूद की प्रतियोगिताएँ**
- **दूसरे दिन वाद-विवाद, निबन्ध और कविता सम्बन्धी प्रतियोगिताएँ**
- **तीसरे दिन प्रधानाध्यापक द्वारा विद्यालय की रिपोर्ट सुनाना, पुरस्कार वितरण, सभापति का भाषण, नाटक आदि का प्रदर्शन।**
- **उपसंहार**

हमारे विद्यालय का वार्षिकोत्सव प्रतिवर्ष फरवरी मास में बड़ी सजधज तथा धूम-धाम के साथ मनाया जाता है। गत वर्ष का वार्षिकोत्सव हमारे विद्यालय का 77 वाँ वार्षिकोत्सव था। वार्षिकोत्सव के अवसर पर मैं 9वीं कक्षा का विद्यार्थी था। विद्यालय की प्रबन्धकारिणी सभा ने एक सयोजक-समिति का निर्माण किया, जिसने वार्षिकोत्सव का कार्यक्रम दिनांक 15, 16 और 17 को निर्धारित किया। लगभग 20-25 दिन पहले घोषित कर दिया गया कि प्रतियोगिता में भाग लेने वाले छात्र प्रतियोगिता के लिए तैयारियाँ करें। अब क्या था! कोई कबड्डी खेल रहा था, तो कोई लम्बी कूद में व्यस्त था। कहीं छात्र वाद-विवाद प्रतियोगिता के लिए भरसक प्रयत्न कर रहे थे तो कहीं कविता-कानन में रमण करने के लिए छात्रों का जी लालायित हो रहा था। इस प्रकार सभी अपने-अपने कार्य में व्यस्त थे। चारों ओर प्रतियोगिता की गूँज व्याप्त थी।

एक ओर प्रतियोगिताओं की गूँज कानों में आती थी, दूसरी ओर विद्यालय के कोने-कोने की सफाई हो रही थी। हमारे कॉलेज के कुछ विद्यार्थी इसमें अधिक आनन्द ले रहे थे। वह कॉलेज के प्रत्येक कमरे को स्वच्छ कर रहे थे, कहीं दीवारों पर सिद्धान्त वाक्य लिखे जा रहे थे। जिस प्रकार दीपावली आने से पूर्व नगर के सभी घर स्वच्छ किये जाते हैं तथा भाँति-भाँति के चित्र चित्रित कर उन्हें और भी सुन्दर रूप प्रदान कर दिया जाता है, उसी प्रकार हमारे कॉलेज का प्रत्येक कमरा स्वच्छ किया गया, उसकी दीवारों पर सुन्दर-सुन्दर अक्षरों में अनेक प्रकार के सिद्धान्त वाक्य विद्यार्थियों को आदर्श सिखलाने के लिए लिखे गये थे। कतिपय अध्यापक भी इस कार्य में अपना योग प्रदान कर रहे थे।

वार्षिकोत्सव के प्रथम दिन 15 फरवरी को सभी छात्र कॉलेज की पोशाक खाकी नेकर और नीली कमीज पहन कर लगभग 8 बजे बड़ी प्रसन्नता के साथ विद्यालय के क्रीड़ा स्थल पर आये। हमारे कॉलेज के प्रधानाचार्य और अन्य अध्यापक भी वहाँ पहुँच गये। साढ़े आठ बजे सबसे पहले 100 मीटर, 400 मीटर तथा 1 मील की दौड़, लम्बी कूद तथा ऊँची कूद क्रमशः प्रारम्भ हुई। इसके बाद वॉलीबॉल, फुटबॉल, कबड्डी, हॉकी आदि के मैच प्रारम्भ हुए। दूसरी ओर छोटी कक्षाओं के विद्यार्थियों की अमरूद दौड़, चम्मच की दौड़, कुर्सी की दौड़, तीन टाँग की दौड़, आँख पर पट्टी बाँधकर दौड़ें हो रही थीं। अपने साथी के जीतने पर लड़के बड़ी खुशी के साथ तालियाँ बजा रहे थे — मानो इस प्रकार उसे प्रोत्साहित कर रहे थे। इसके बाद सभी विद्यार्थी बड़ी खुशी के साथ अपने-अपने घर गये। तीन बजे वे फिर उसी स्थान पर इकट्ठे हो गये। जब कुश्तियाँ आरम्भ हुईं। कुश्तियों को सभी विद्यार्थी और नगरवासी बड़ी उत्सुकता से देख रहे थे। इसके बाद साइकिल दौड़, रस्साकसी, रुकावट की दौड़, गोला फेंकना आदि खेल हुए। इनमें से सबको रस्साकसी में अधिक आनन्द आया। रस्सा तीन बार खींचा गया। एक टीम में मैं भी था। अन्त में हमारी टीम की विजय हुई और हमारी टीम के खिलाड़ियों के नाम लिख लिए गये। अन्य खेलों में जो छात्र प्रथम और द्वितीय थे उनके भी नाम लिखे गये। इस प्रकार आज का कार्यक्रम समाप्त हुआ। सभी खुशी-खुशी अपने घर लौटे।

वार्षिकोत्सव के दूसरे दिन 16 फरवरी का कार्यक्रम बड़ा ही महत्त्वपूर्ण और आकर्षक था। प्रातःकाल साढ़े आठ बजे वाद-विवाद प्रतियोगिता हुई।

विषय था—"देश की उन्नति कृषि की अपेक्षा विज्ञान से हो सकती है।" इसमें दोनों पक्षों के विद्यार्थियों ने बड़ी ही उमंग के साथ भाग लिया। अपने भाषणों में उन्होंने बड़े ही तर्कपूर्ण ढंग से अपने-अपने पक्ष का समर्थन किया। श्रोतागण मन्त्र-मुग्ध होकर विद्यार्थियों के भाषणों को सुन रहे थे। युवा छात्र उमंग तथा उत्साह से पूरित हो बड़ी रोचक तथा सरल शैली में अपने विषय का प्रतिपादन कर रहे थे। अन्त में निर्णायक महोदयों की ओर से दो कुशल वक्ताओं को प्रथम तथा द्वितीय पुरस्कार घोषित किये गये। ये दो कुशल वक्ता थे रजनीकान्त तथा रमेशचन्द्र।

इसके पश्चात् अपने प्रधानाचार्य की आज्ञानुसार हम दोपहर बाद तीन बजे निबन्ध और कविता सम्बन्धी प्रतियोगिता के लिए उपस्थित हुए, निबन्ध का विषय था—"स्वदेश-प्रेम"। इस विषय पर विद्यार्थियों ने लेख लिखे थे तथा योग्य विद्यार्थियों ने पुरस्कार प्राप्त किये। इसके पश्चात् कवि-सम्मेलन आरम्भ हुआ। स्व० पं० हरिशंकर शर्मा कविरत्न इस आयोजन के सभापति थे। अनेक कविगण भी पधारे थे जिन्होंने कविता पाठ से सभा को रस में डुबो-सा दिया। अन्त में लगभग 7 बजे सभी लोग कवियों की कविताओं की चर्चा करते हुए अपने घर लौटे।

वार्षिकोत्सव का अन्तिम कार्यक्रम 17 फरवरी को सम्पन्न हुआ। उस दिन सभी विद्यार्थियों में अपूर्व उल्लास भरा था। वे खुशी से फूले नहीं समा रहे थे, क्योंकि वह पुरस्कार वितरण का दिन था। आज के दिन कॉलेज को भाँति-भाँति से सजाया गया था। विज्ञान, कला और भूगोल के भवनों में विशेष प्रकार की सजावट की गई थी। अनेक स्थानों पर तिरंगे झण्डे पवन में लहरा रहे थे। मंच के ऊपर आर्य-समाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द जी का विशाल तैल-चित्र उपस्थित था।

उत्सव 4 बजे होने वाला था। विद्यार्थी तो तीन बजे ही आ गये थे। 3½ बजे से आमन्त्रित व्यक्ति आने लगे। उनको यथास्थान बैठाने के लिए बालचर नियुक्त थे। एक कमरे में साइकिल स्टैण्ड था। सभापति, श्री आचार्य की कार 3-55 पर आई। उनको द्वार पर एन० सी० सी० के विद्यार्थी ने गार्ड ऑफ आनर दिया।' पुष्पमाला से सभापति जी को सुशोभित करने के बाद पाँच लड़कों द्वारा 'राष्ट्रीय-गान' से आज का कार्यक्रम आरम्भ किया।

प्रारम्भ में विद्यार्थियों ने कुछ हिन्दी तथा अँग्रेजी की कविताओं का मधुर स्वर से गायन किया। दो-एक हिन्दी-अँग्रेजी से व्याख्यान हुए। सबसे प्रमुख

विद्यार्थियों द्वारा आयोजित एक एकांकी नाटक था जिसका विषय था—"भारत की मूल समस्यायें।" हमारे यहाँ की यह विशेषता रहती है कि हर वर्ष अपने यहाँ का लिखा नाटक ही खेला जाता है। इन सबको देख कर सभापति जी बड़े प्रसन्न हुए। तदन्तर हमारे कॉलेज के मैनेजर ने वार्षिक रिपोर्ट पढ़कर सुनाई। इसमें कॉलेज की पढ़ाई में प्रगति एवं वर्ष भर का आय-व्यय तथा परीक्षाफल का विवरण था। कॉलेज में वैदिक धर्म का भी विद्यार्थियों को ज्ञान कराया जाता है—यह भी उन्होंने बताया।

तत्पश्चात् पारितोषिक-वितरण का कार्य आरम्भ हुआ। प्रतियोगिताओं के विजेताओं के अतिरिक्त उन छात्रों को भी पुरस्कार दिया गया, जो पिछली कक्षाओं में प्रथम रहे थे। उसके पश्चात् सभापति जी ने विज्ञान, कला और भूगोल के भवनों को भली प्रकार से अवलोकन किया। इस प्रकार आज के कार्यक्रम समाप्त होने पर मिष्ठान्न प्राप्त कर सभी विद्यार्थी खुशी-खुशी अपने घर पहुँचे।

इस प्रकार हमारे विद्यालय का वार्षिकोत्सव बड़े हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुआ। वास्तव में इस प्रकार के उत्सव बड़े ही उपयोगी हैं। इनसे विद्यार्थियों में नव जीवन का संचार होता है। पुरस्कार पाये हुए विद्यार्थियों को अपने कार्य में विशेष उत्साह मिलता है। यही कारण है कि प्रत्येक विद्यालय में इसी प्रकार के वार्षिकोत्सव मनाये जाते हैं।

विद्यार्थी-जीवन

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—विद्यार्थी-जीवन का मानव-जीवन में महत्त्व
- चरित्र और सत्संग
- स्वतन्त्र भारत का विद्यार्थी
- उपसंहार—विद्यार्थी का आदर्श

"काक चेष्टा बको ध्यानं, श्वान निद्रा तथैव च।
अल्पाहारी गृहत्यागी विद्यार्थी पंच लक्षणम्।"

मानव-जीवन में सबसे मधुर, नवीन-नवीन कल्पनाओं तथा आशाओं से भरा विद्यार्थी-जीवन है। जीवन को जितना उच्च आदर्शों से पूर्ण इस काल में

विषय था—"देश की उन्नति कृषि की अपेक्षा विज्ञान से हो सकती है।" इसमें दोनों पक्षों के विद्यार्थियों ने बड़ी ही उमंग के साथ भाग लिया। अपने भाषणों में उन्होंने बड़े ही तर्कपूर्ण ढंग से अपने-अपने पक्ष का समर्थन किया। श्रोतागण मन्त्र-मुग्ध होकर विद्यार्थियों के भाषणों को सुन रहे थे। युवा छात्र उमंग तथा उत्साह से पूरित हो बड़ी रोचक तथा सरल शैली में अपने विषय का प्रतिपादन कर रहे थे। अन्त में निर्णायक महोदयों की ओर से दो कुशल वक्ताओं को प्रथम तथा द्वितीय पुरस्कार घोषित किये गये। ये दो कुशल वक्ता थे रजनीकान्त तथा रमेशचन्द्र।

इसके पश्चात् अपने प्रधानाचार्य की आज्ञानुसार हम दोपहर बाद तीन बजे निबन्ध और कविता सम्बन्धी प्रतियोगिता के लिए उपस्थित हुए, निबन्ध का विषय था—"स्वदेश-प्रेम"। इस विषय पर विद्यार्थियों ने लेख लिखे थे तथा योग्य विद्यार्थियों ने पुरस्कार प्राप्त किये। इसके पश्चात् कवि-सम्मेलन आरम्भ हुआ। स्व० पं० हरिशंकर शर्मा कविरत्न इस आयोजन के सभापति थे। अनेक कविगण भी पधारे थे जिन्होंने कविता पाठ से सभा को रस में डुबो-सा दिया। अन्त में लगभग 7 बजे सभी लोग कवियों की कविताओं की चर्चा करते हुए अपने घर लौटे।

वार्षिकोत्सव का अन्तिम कार्यक्रम 17 फरवरी को सम्पन्न हुआ। उस दिन सभी विद्यार्थियों में अपूर्व उल्लास भरा था। वे खुशी से फूले नहीं समा रहे थे, क्योंकि वह पुरस्कार वितरण का दिन था। आज के दिन कॉलेज को भाँति-भाँति से सजाया गया था। विज्ञान, कला और भूगोल के भवनों में विशेष प्रकार की सजावट की गई थी। अनेक स्थानों पर तिरंगे झण्डे पवन में लहरा रहे थे। मंच के ऊपर आर्य-समाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द जी का विशाल तैल-चित्र उपस्थित था।

उत्सव 4 बजे होने वाला था। विद्यार्थी तो तीन बजे ही आ गये थे। 3½ बजे से आमन्त्रित व्यक्ति आने लगे। उनको यथास्थान बैठाने के लिए बालचर नियुक्त थे। एक कमरे में साइकिल स्टैण्ड था। सभापति, श्री आचार्य की कार 3-55 पर आई। उनको द्वार पर एन० सी० सी० के विद्यार्थी ने गार्ड ऑफ आनर दिया।' पुष्पमाला से सभापति जी को सुशोभित करने के बाद पाँच लड़कों द्वारा 'राष्ट्रीय-गान' से आज का कार्यक्रम आरम्भ किया।

प्रारम्भ में विद्यार्थियों ने कुछ हिन्दी तथा अँग्रेजी की कविताओं का मधुर स्वर से गायन किया। दो-एक हिन्दी-अँग्रेजी से व्याख्यान हुए। सबसे प्रमुख

विद्यार्थियों द्वारा आयोजित एक एकांकी नाटक था जिसका विषय था— "भारत की मूल समस्यायें।" हमारे यहाँ की यह विशेषता रहती है कि हर वर्ष अपने यहाँ का लिखा नाटक ही खेला जाता है। इन सबको देख कर सभापति जी बड़े प्रसन्न हुए। तदन्तर हमारे कॉलेज के मैनेजर ने वार्षिक रिपोर्ट पढ़कर सुनाई। इसमें कॉलिज की पढ़ाई में प्रगति एवं वर्ष भर का आय-व्यय तथा परीक्षाफल का विवरण था। कॉलेज में वैदिक धर्म का भी विद्यार्थियों को ज्ञान कराया जाता है—यह भी उन्होंने बताया।

तत्पश्चात् पारितोषिक-वितरण का कार्य आरम्भ हुआ। प्रतियोगिताओं के विजेताओं के अतिरिक्त उन छात्रों को भी पुरस्कार दिया गया, जो पिछली कक्षाओं में प्रथम रहे थे। उसके पश्चात् सभापति जी ने विज्ञान, कला और भूगोल के भवनों को भली प्रकार से अवलोकन किया। इस प्रकार आज के कार्यक्रम समाप्त होने पर मिष्ठान्न प्राप्त कर सभी विद्यार्थी खुशी-खुशी अपने घर पहुँचे।

इस प्रकार हमारे विद्यालय का वार्षिकोत्सव बड़े हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुआ। वास्तव में इस प्रकार के उत्सव बड़े ही उपयोगी हैं। इनसे विद्यार्थियों में नव जीवन का संचार होता है। पुरस्कार पाये हुए विद्यार्थियों को अपने कार्य में विशेष उत्साह मिलता है। यही कारण है कि प्रत्येक विद्यालय में इसी प्रकार के वार्षिकोत्सव मनाये जाते हैं।

विद्यार्थी-जीवन

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना—विद्यार्थी-जीवन का मानव-जीवन में महत्त्व**
- **चरित्र और सत्संग**
- **स्वतन्त्र भारत का विद्यार्थी**
- **उपसंहार—विद्यार्थी का आदर्श**

"काक चेष्टा बको ध्यानं, श्वान निद्रा तथैव च।
अल्पाहारी गृहत्यागी विद्यार्थी पंच लक्षणम्।"

मानव-जीवन में सबसे मधुर, नवीन-नवीन कल्पनाओं तथा आशाओं से भरा विद्यार्थी-जीवन है। जीवन को जितना उच्च आदर्शों से पूर्ण इस काल में

बनाया जा सकता है उतना अन्य कालों में नहीं। विद्यार्थी-जीवन का काल वास्तव में मानव-जीवन का वसन्त काल है, क्योंकि इस काल में बड़ी तीव्रता के साथ विचार और भावनाओं के पत्र और पुष्प जीवन-बेल पर विकसित होते हैं। इस समय छात्र अपने कोमल मन और मस्तिष्क को उनकी अंकुरित अवस्था होने के कारण किसी भी दिशा में मोड़ सकता है। अपने विद्यार्थी जीवन में एक ही तरह से मनुष्य भविष्य-निर्माण की तैयारी करता है। जिस प्रकार के संस्कार विद्यार्थी पर विद्यार्थी-जीवन में पड़ जाते हैं वे जीवन-पर्यन्त रहते हैं।

यदि अपने विद्यार्थी-जीवन में बालक सावधानी के साथ अपने चरित्र-निर्माण तथा उच्च आदर्शों की ओर ध्यान दे तो वह अवश्य अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में सफल होगा। साथ ही अपने समाज, कुटुम्ब, जाति तथा राष्ट्र के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

विद्यार्थी-समाज को सदैव अपनी संगति से सतर्क रहना चाहिए क्योंकि संगति का विद्यार्थी पर पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। अन्य लोग किसी के गुण तथा अवगुणों का पता उसकी संगति से ही लगाते हैं। कविवर रहीम कहते हैं—

"रहिमन नीचन संग बसि, लगत कलंक न काहि।
दूध कलारिन हाथ लखि, मद समुझहिं सब ताहि॥"

अतः यह स्पष्ट है कि यदि विद्यार्थी के संगी-साथी, मित्र अच्छे हैं तो अवश्य ही उसके चरित्र में चाँद लग जायेंगे अन्यथा मित्रों के दुराचारी, कपटी, चरित्रहीन होने पर अवश्य ही वे पतन की खाई में उसे घसीटकर ले जायेंगे।

जिस मनुष्य ने विद्यार्थी-जीवन को जितना ही पवित्र, सादगी, सच्चरित्रता से व्यतीत किया है वह जीवन में उतना ही ऊँचा उठा है। जब हम गोखले, जवाहरलाल नेहरू, गाँधी, स्वामी रामतीर्थ आदि के जीवन पर दृष्टिपात करते हैं तो यह विदित होता है कि इन चमकते हुए रत्नों ने अपने चरित्र को विद्यार्थी काल में इतना परिमार्जित कर लिया था जिससे कि वे समस्त विश्व के समक्ष आदर्श चरित्र उपस्थित करने में समर्थ हुए। अस्तु, छात्र को अपने मित्रों, वातावरण तथा संगति के प्रति सतर्क रहना चाहिए जिससे कि उनका चरित्र पतन की ओर उन्मुख न हो।

समय का सदुपयोग, सुन्दर चरित्र, अनुशासन में रहना आदि गुण ऐसे हैं जिनका कि विद्यार्थी को अपने जीवन में पालन करना चाहिए परन्तु दुःख

का विषय है कि आजकल विद्यार्थियों में अनुशासनहीनता, निरंकुशता एवं उच्छृङ्खलता आदि दुर्गुणों का बाहुल्य देखा जाता है। फलतः गुरुजनों का अपमान, नियमों की अवहेलना, परीक्षा में नकल, हड़ताल करना आदि घटनाओं के समाचार सुनना एक साधारण-सी बात हो गई है। अतएव इन बुरी प्रवृत्तियों को समूल नष्ट करने के लिए विद्यार्थियों को अनुशासन एवं आज्ञा-पालन की आवश्यकता है।

स्वतन्त्र भारत के लिए स्वस्थ एवं शिक्षित समाज की आवश्यकता है। इसके लिए विद्यार्थियों को समाज-सेवा का व्रत धारण करना चाहिए। जब तक विद्यार्थी समाज-सुधार का दिया लेकर उस क्षेत्र में आगे नहीं बढ़ेंगे तब तक समाज उत्थान का कार्य स्वप्न ही बना रहेगा। बालकों को विद्यार्थी-जीवन व्यतीत करने के लिए विद्यालयों में भेजने का तात्पर्य यही है कि वे संसार की प्रत्येक वस्तु से भली-भाँति परिचित हो जाएँ। उन्हें पता लग जाए कि मानव-जीवन का उद्देश्य क्या है? आदर्श जीवन व्यतीत करने के लिए किन-किन बातों की आवश्यकता है—इस प्रकार का ज्ञान अध्यापकों के अध्यापन द्वारा छात्रों को प्राप्त होता है। जो छात्र ध्यानपूर्वक सभी बातों को ग्रहण करते हैं, वे विद्वान होने के साथ श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करने के योग्य बन जाते हैं।

सबसे अधिक आवश्यकता इस बात की है कि विद्यार्थी अपने समय का सदुपयोग करें। प्रायः देखा जाता है कि विद्यार्थी व्यर्थ की बातों में अपना अमूल्य समय नष्ट करते रहते हैं। उन्हें अध्ययन की, ज्ञान की बातें इतनी प्रिय नहीं लगती हैं जितनी कि चल-चित्रों की। परिणाम क्या होता है, समय का नाश! समय के नाश का अर्थ है, जीवन का नाश—विद्यार्थी अध्ययन के घण्टों को अश्लील बातों तथा लड़ने-झगड़ने में नष्ट कर देते हैं और परीक्षाओं में असफल होकर मारे-मारे फिरते हैं।

विद्यार्थी में मिथ्याडम्बरों और झूठी टीम-टाम का दुर्व्यसन भी उनके भावी जीवन को संकटमय बनाता है। किसी कवि के शब्दों में—"सादा जीवन उच्च विचार' यही है विद्यार्थी जीवन का सार।" बाहरी टीम-टाम के लिए विद्यार्थी अपने माता-पिता का पैसा पानी की तरह बहाते हैं। उन्हें इस बात की बिलकुल चिन्ता नहीं कि इस पैसे को कमाने में उनके अभिभावकों को कितना कष्ट उठाना पड़ता है। मनुष्य की वास्तविक शोभा बाहरी टीम-टाम में न होकर

उसके चरित्र तथा आवरण में होती है । अतः विद्यार्थियों का मूल ध्येय होना चाहिए—"सादा जीवन और उच्च विचार" यही विद्यार्थी-जीवन का सार है ।

चरित्र-विकास के साथ शारीरिक विकास के लिए व्यायाम भी विद्यार्थी के लिए आवश्यक है । खेल और व्यायाम से मस्तिष्क की थकान दूर होगी, उसमें स्वाभाविक ओज, साहस और उत्साह बढ़ेगा । आनन्द की अभिवृद्धि और शरीर में सुन्दर कान्ति का आविर्भाव होगा ।

राष्ट्र की सम्पत्ति वहाँ के नागरिक होते हैं । जिस राष्ट्र के नागरिकों की जैसी दशा होगी वह राष्ट्र भी उसी प्रकार हो जायेगा । प्रत्येक राष्ट्र की उन्नति के लिए अच्छे एवं योग्य व्यक्तियों की आवश्यकता होती है । अच्छे तथा योग्य नागरिकों का निर्माण विद्यार्थी-जीवन में ही हो सकता है, क्योंकि किसी विद्वान ने कहा है—"बच्चा मनुष्य का बाप होता है ।" अतः क्या ही उत्तम हो यदि भविष्य की आशा-लता के ये पुष्प-स्वरूप विद्यार्थी सुन्दर रूप से विकसित होकर अपने राष्ट्र तथा विश्व के कल्याण में योग दें, यही विश्व के कोटि-कोटि जनों के कण्ठों की पुकार है ।

8

पुस्तकालय से लाभ

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—पुस्तकालय का महत्त्व
- पुस्तकालय के लाभ
- पुस्तकालय के भेद
- उपसंहार—देश की प्रगति में पुस्तकालयों का योग

ज्ञान का क्षेत्र असीम है, मनुष्य का जीवन थोड़ा है, बुद्धिमान चाहते हैं कि उनका समय, उनके अवकाश के क्षण, ठीक प्रकार से व्यतीत हों । अतः इनसे समाज में ज्ञान की किरणें फैलती हैं, मनुष्य का अज्ञान रूपी अंधकार नष्ट हो जाता है । नवजीवन की कली विकसित होने लगती है । अतः मानव के अज्ञान रूपी अन्धकार का नाश करके उनके हृदय में ज्ञान रूपी सूर्य उदय करने के लिए पुस्तकालय का महान् योगदान है ।

विद्यालय में पढ़ने मात्र से वास्तविक ज्ञान नहीं होने पाता। किसी विषय का ज्ञान पुस्तकालय का सहारा लिए बिना नहीं प्राप्त हो सकता। बड़े-बड़े पुस्तकालयों में पाठकों के अध्ययन की पूर्ण व्यवस्था होती है। निर्धन छात्रों को पुस्तकालयों में बड़ी सहायता मिलती है।

पुस्तकालयों के द्वारा जिन पुस्तकों का अध्ययन किया जाता है उनसे आत्मोन्नति में बड़ी सहायता मिलती है। मन का मैल, सन्देह, भ्रम दूर हो मानसिक स्वास्थ्य सुधर जाता है। महान् पुरुषों के वाक्य, जीवन-चरित्र, भाषण मानव को उन्नति के शिखर पर ले जाते हैं।

प्रायः देखा जाता है कि समय का जितना सदुपयोग पुस्तकों का अध्ययन करने से होता है उतना अन्य किसी प्रयास से नहीं। जिसके पास कुछ काम नहीं वे अपने समय को बुरी आदतों में, कलह में, सोने में समाप्त करते हैं। परन्तु पुस्तकावलोकन से समय का सदुपयोग होता है। थोड़ा सा मासिक चन्दा देकर आप पुस्तकालय की सभी पुस्तकों के पढ़ने के अधिकारी हो सकते हैं। सुविधा के लिए पुस्तकालय में पुस्तक की सूची देखने को प्राप्त होती है, जिसके सहारे आप उन पुस्तकों तथा लेखकों के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं, जिनसे आप अपरिचित हैं अथवा विलम्ब के कारण आप उनको भूल गये हैं।

यदि आपके पास धनाभाव है, यदि आप रेडियो नहीं खरीद सकते सिनेमा में नहीं जा सकते, अथवा विदेशों में जाकर मनोरंजन तथा आनन्द ग्रहण नहीं कर सकते तो पुस्तकालय आपको उच्च कोटि के कलाकारों की पुस्तकें प्रदान करके आपका मनोरंजन करने में सदा सहायक सिद्ध होगा। पुस्तकालय में जाकर बैठ जाइए, आपके सामने मनोरंजन का विशाल कोष खुल पड़ेगा। चाहे आप तुलसी के काव्य का आनन्द ग्रहण कीजिए, चाहे कालिदास की वियोगिनी शकुन्तला के साथ आँसू की दो-चार बूँदें करुणा से प्लावित होकर टपकाइए। जी चाहे जिससे बात कीजिए। यहाँ आप सूर के कृष्ण की मुरली की तान भी सुन सकते हैं और भूषण के शिवाजी की वीरों के कलेजे को दहलाने वाली वाणी भी। क्या इस प्रकार का ज्ञान कोष किसी एक स्थान पर अन्यत्र प्राप्त होना असम्भव हो सकता है ?

पुस्तकालय समाज-सुधार में भी विशेष स्थान रखता है। पुस्तकालय आलोचना के कठिन प्रहारों से समाज में फैली हुई बुराइयों को छिन्न-भिन्न कर

देता है। पुस्तकें पढ़ने से मनुष्यों में ज्ञान तथा सौन्दर्य-बोध की वृद्धि होती है। अच्छे विचारों के माध्यम से ही रुचि का परिष्कार होता है एवं ज्ञान वृद्धि होती है।

पुस्तकालय, जो मानव का कल्याण करने वाले हैं, अनेक प्रकार के होते हैं। पहले प्रकार के विद्यालयों के पुस्तकालय होते हैं। इनसे केवल छात्रों और अध्यापकों का हित होता है। दूसरे प्रकार के पुस्तकालय वे हैं जिनको अध्ययन में विशेष रुचि रखने वाले व्यक्ति बना लेते हैं। तीसरे प्रकार के पुस्तकालय वे होते हैं जो कि सर्वसाधारण के लाभ के लिए स्थापित किये जाते हैं। उनसे प्रत्येक व्यक्ति पुस्तकालय के नियमों का पालन करके तथा कुछ मासिक शुल्क देकर पूर्ण-रूपेण लाभ उठा सकता है। हम देखते हैं कि अध्ययन में रुचि लेने वाले, पुस्तकालय के खुलने के समय पर इस प्रकार से प्रफुल्लित होकर अध्ययन के लिए लालायित होने लगते हैं जिस प्रकार कि कोई अबोध बालक सामने रखी हुई मिठाई को लेने के लिए अधीर होने लगता है।

बड़े दुःख का विषय है कि हमारे देश में श्रेष्ठ पुस्तकालयों का बड़ा अभाव है। थोड़े-बहुत पुस्तकालय नगरों में ही दिखाई देते हैं। भोले किसानों, ग्रामीणों के लिए पुस्तकालयों की व्यवस्था अभी तक नहीं हुई है। इसलिए भारत के करोड़ों लोग अविद्या के अन्धकार में ठोकर खाकर गिर रहे हैं। देश की सरकार एवं बड़े-बड़े दानी तथा उदार हृदय वालों का यह बड़ा ही परम पावन कर्त्तव्य है कि राष्ट्र में ज्ञान की ज्योति का प्रकाश भरने के लिए अपने धन तथा समय का त्याग करें, जिससे कि अज्ञान रूपी रात्रि का विनाश हो तथा उसके स्थान पर ज्ञान का भानु उदय हो जाय।

विदेशों में पुस्तकालयों का अच्छा प्रबन्ध है। कुछ ऐसे पुस्तकालय हैं जो अपने धर्म या सिद्धान्तों के प्रचार के लिए बिना मूल्य विश्व के प्रत्येक देश में पुस्तकें भेजते रहते हैं। ग्राम के लोगों को ज्ञान देने के लिए सचल पुस्तकालयों की व्यवस्था होती है। सचल पुस्तकालय गाँवों में भ्रमण करके ग्रामीणों को सुन्दर पुस्तकें प्रदान करने में विशेष योग देते हैं। विदेशों में पुस्तकालयाध्यक्ष इतने योग्य, प्रवीण एवं अध्ययनशील होते हैं कि आप किसी भी पुस्तक को पढ़ने से पूर्व उनकी अमूल्य राय का लाभ उठा सकते हैं।

हमारे देश में जो शिक्षित हैं, वह भी योग्य तथा विद्वान नहीं हैं। इसका यदि कोई कारण है तो यही कि समाचार पत्रों तथा ज्ञान-विकास के साधनों

की इतनी कमी है कि दीन जनता धन के अभाव में उन्हें खरीद नहीं सकती फिर भला वह अपने ज्ञान की वृद्धि कहाँ से करे ?

प्रसन्नता की बात है कि अब हमारा देश स्वतन्त्र है। स्वाधीनता की सुनहली उषा में भारत का कण-कण आलोकित हो रहा है। अपना देश है, अपना राज्य है। हमारी सरकार देश में शिक्षा प्रसार के लिए अनेक पुस्तकालयों की व्यवस्था कर रही है। पुस्तकालय हमारे उत्थान में बहुत ही योग देंगे, अतः आशा है कि भविष्य में भारत के भावी नागरिक पुस्तकालय के माध्यम से उत्तम संस्कारों से युक्त होकर देश की उन्नति में महत्त्वपूर्ण योग देंगे।

6
मेला

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- मेलों के प्रकार
- मेलों से लाभ
- मेलों से हानियाँ
- विभिन्न मेलों के नाम तथा वर्णन
- उपसंहार

मेले प्रायः देश की किसी गौरवपूर्ण घटना की स्मृति में आयोजित हुआ करते हैं। ये सामाजिक, धार्मिक तथा राष्ट्रीय संगठन में बड़े सहायक होते हैं। इन अवसरों पर पढ़े-लिखे मनुष्यों के हृदयों पर अतीत की स्मृति अंकित हो जाती है।

मेले विभिन्न प्रकार के होते हैं, कुछ तो ऐतिहासिक घटनाओं की याद दिलाते हैं, जैसे, बनारस, प्रयाग में दशहरा का मेला। ऐतिहासिक मेले जातीय जीवन को उत्साहित तथा जाग्रत करने आदि में बड़े सहायक होते हैं। यह बड़े शोक का विषय है कि आज हमारे राष्ट्र में अधिकांशतः लोग अशिक्षित हैं। वे रामलीला के मेले में जाकर तथा रामलीला देखकर इस बात का

ज्ञान कर लेते हैं कि हमारे पूर्वज कितने स्वाभिमानी, बलिष्ठ तथा मर्यादा में रहने वाले थे। रामलीला ने हमारे जीवन में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन कर डाला है। भारत के त्याग को देखकर ऐसा कौन व्यक्ति होगा जिसका कि हृदय न पिघल जाता हो ? सीताजी के त्याग तथा कष्ट सहने की शक्ति को देखकर ऐसी कौन-सी अबला है जिसके हृदय में भयंकर परिस्थितियों का सामना करने के लिए वीरता तथा उमंग का संचार न होता हो ? इस प्रकार यह स्पष्ट है ये ऐतिहासिक मेले हमारे भूतकाल को हमारे सामने रखते हैं जिसके द्वारा मुर्दादिलों में भी जोश आ जाता है।

धार्मिक मेलों का तो कहना ही क्या है। सर्वत्र बच्चे, युवक, वृद्ध, स्त्री-पुरुष पवित्र तीर्थों पर पहुँच जाते हैं। श्रद्धा तथा भक्ति के साथ गंगा में स्नान करते हैं। कहीं पर गायों का प्रदान होता है तो कहीं पर ब्राह्मणों को यात्री लोग बड़ी श्रद्धा के साथ भोजन कराते हैं, कहीं पर सत्संग प्रेमी साधुओं के पास बैठकर अपनी धार्मिक जिज्ञासा शान्त करते हैं।

मेले के अवसर पर ताँगे वालों, पण्डों तथा दुकानदारों की पाँचों उँगली घी में रहती हैं। साधु तथा संन्यासी लम्बी-लम्बी जटाओं को धारण किये हुए यात्रियों का भविष्य बताने का दावा कर कुछ दान प्राप्त करने की इच्छा करते हैं। हलवाई भी अपनी कच्ची पूड़ियों की प्रशंसा करते-करते नहीं अघाते। बेचारे यात्रियों को उन कच्ची पूड़ियों तथा बिना स्वाद की सब्जियों को लेना ही पड़ता है। यदि न लें तो करें भी क्या ? प्रयाग तो गंगा से काफी दूरी पर है। पण्डों का तो ढंग ही निराला है। वे यात्री पर अपना अधिकार सिद्ध करने के लिए अपने पोथी-पत्राओं में से यात्री के बाप, दादा, बाबा आदि का नाम बखान करते हैं तथा यात्री को अपने घर लाने का भरसक प्रयत्न करते हैं, क्योंकि यात्रियों की दया तथा दान पर ही उनका जीवन निर्भर है।

प्राचीन काल में मेलों में सभ्य, शीलवान् तथा धार्मिक प्रवृत्ति वाले मनुष्य जाया करते थे, परन्तु आजकल विज्ञान के आविष्कार रेलों की सहायता से दुष्ट, धूर्त तथा चोर भी वहाँ पहुँच जाते हैं। गिरहकट एवं चोर अवसर की घात लगाये इस प्रकार बैठे रहते हैं जैसे कि बगुला नदी के किनारे चुपचाप, शान्त मछलियों की ताक में खड़ा रहता है। अवसर आने पर झट से हाथ साफ कर देता है। मेलों के अवसर पर सकुशल टिकट लेकर रेल में

सवार हो जाना बहुत ही टेढ़ी खीर है, क्योंकि एक ओर तो भीड़ तथा दूसरी ओर चोरों से जेब कटने का डर।

मेलों में भिन्न-भिन्न स्थानों के नर-नारी एक ही स्थान पर मिल जाते हैं। इस प्रकार उनमें परस्पर विचारों का आदान-प्रदान होता है, उनमें परस्पर प्रेम तथा बन्धुत्व भावना की वृद्धि होती है। यात्रा करने से मनुष्यों को भिन्न-भिन्न देश तथा मनुष्य देखने को मिलते हैं, इससे इनके अनुभव तथा ज्ञान का विस्तार होता है।

जहाँ मेलों से इतना लाभ होता है, वहाँ उनसे हानियाँ भी बहुत हैं। मेलों को जाते समय यात्रियों को मार्ग में बहुत से कष्टों को सहन करना पड़ता है। गर्मी तथा जाड़े के प्रकोप से यात्री तो रोग के शिकार हो जाते हैं। मेलों में चारों ओर गिरहकटों के भय से यात्रीगण राम-राम करके धन की रक्षा कर पाते हैं। आज हमारे देश में जबकि चारों ओर से रोजी-रोटी की पुकार आ रही है, देश के लाखों कन्हैया माखन मिश्री के अभाव में पत्तल चाट रहे हैं, ऐसी दशा में मेलों में पानी की तरह धन बहाना कहाँ तक उचित है, यह जानकार पाठक स्वयं ही समझ सकते हैं।

इन सब बातों की परेशानी होते हुए भी मेलों से प्राप्त होने वाले आनन्द तथा उनकी उपयोगिता के विषय में कभी दो मत नहीं हो सकते। एक अन्य कोलाहलपूर्ण मेला होता है, आगरा का रामलीला का मेला। आगरे का शायद ही ऐसा कोई शौकीन युवक हो जो इस मेले में भाग न लेता हो। इस मेले में गाँवों से हजारों की संख्या में धर्म-प्रिय व्यक्ति आते हैं। सेठ लोग अपनी गाड़ियों को सजाकर निकालते हैं। लोग उत्साह में भरे हुए 'रामचन्द्र जी की जय' आदि जोशीले नारों से आकाश गुँजा देते हैं। इस मेले में धर्म के नाम पर धन पानी की तरह बहाया जाता है। लेकिन अगर—

"करते रहें यदि अनुकरण, जो राम के व्यवहार का ॥
तो रामलीला सत्य हो, हो गर्व इस त्यौहार का ॥
सर्वस्व खोया अब यहाँ, दुर्भाग्य का अवशेष हो ॥
यह रामलीला सत्य हो, रक्षक सदैव "रमेश" हो ॥"

मेलों का वर्णन अधूरा रहेगा, यदि आगरा जिले का कैलाश के मेले का वर्णन न किया जाय। यह स्थान जमुना जी के किनारे आगरा से सात मील

दूर है। यहाँ कैलाश नामक शिव-मन्दिर है। इस मन्दिर में स्नान किए हुए पूजा करने वालों की भीड़ लगी रहती है। प्रत्येक भक्त यमुना जी का पानी बड़ी श्रद्धा एवं भक्ति के साथ शिवजी की मूर्ति पर चढ़ाता है। मन्दिर के चारों ओर अनेक व्यक्ति परिक्रमा देते हैं तथा शिवजी की जय बोलते हैं। नर तथा नारी मन्दिर में मूर्ति पर पैसा चढ़ाते हैं। बाहर अनेक साधु बैठे रहते हैं जो यात्रियों से अनवरत पैसा माँगते रहते हैं।

मेले अधिकांशतः गंगा-यमुना के किनारों के निकट लगते हैं। राजघाट, सोरों, हरिद्वार तथा बनारस के मेले बहुत ही विख्यात हैं। मथुरा में तो हर रोज मेला-सा दिखाई पड़ता है।

इन मेलों में सुधार करने तथा उन्हें उपयोगी बनाने के लिए कुछ प्रयत्न करना आवश्यक है। ऐसी वस्तुएँ जो कि मनुष्य के लिए हानिप्रद हैं उनको मेले में बेचने की आज्ञा न होनी चाहिए। चोरों तथा गिरहकटों एवं चरित्र-हीन व्यक्तियों की जाँच करके उनका प्रवेश ही मेलों में वर्जित कर दिया जाय तभी इन मेलों से जनता को अधिक लाभ हो सकता है।

10
वसन्त

विचार-तालिका

- ऋतुराज वसन्त में प्रकृति की छटा
- वन-उपवन की सुन्दरता
- वसन्त में कवियों की भावना जाग्रत होना
- होली का त्यौहार
- उपसंहार

"पहाड़ खड़ा है, ओहार ओढ़े
ओहार में गुँथे हैं भरमार
रंग धार।
दिन की देह वसन्त की सुबह है।"- -केदारनाथ अग्रवाल

कोकिल के मधुर रस पगे कर्णप्रिय शब्द ने ऋतुराज वसन्त के आने की सूचना संसार को दी और वृक्षों ने सुन्दर-सुन्दर पल्लवों से अपने शरीर को आच्छादित कर लिया। वे प्रसन्नता में झूमते हुए दृष्टिगोचर होने लगे, मानो ऋतुराज के आगमन के आनन्द में आनन्द-विभोर हो उठे हों। शीत ने वसन्त के आगमन की खुशी में अपना प्रकोप कुछ कम कर दिया। सरसों ने वासन्ती साड़ी धारण कर ली, पक्षी अपनी अटपटी बोलियों से वातावरण की रसमयता में वृद्धि करने लगे। आम के वृक्षों पर लदा बौर महक उठा, पवन उस भीनी एवं मधुरसपगी सुगन्ध को चारों ओर बिखराने लगा। कितना सरस एवं सुहावना मौसम है यह ! न अधिक ठण्डक और न अधिक गरमी।

सम्पूर्ण प्रकृति एक विचित्र आभा तथासुन्दरता से दमक उठी है। सम्पूर्ण जड़ तथा चेतन में नवीन जीवन का संचार हो गया। आम्र के बौरों पर मधु के लोभी भँवरे बार-बार चक्कर काटने लगे। क्षणमात्र के लिए प्रकृति की मनोहारिणी छवि का दर्शन कीजिए, कितना मनमोहक दृश्य है ? आह ! कैसी चित्त को लुभाने वाली सुन्दरता है ? शीतल पवन ने तो कोकिल को इतना मस्त बना दिया है कि वह पंचम स्वर में आलाप कर वातावरण में मिठास घोल रही है। मधुमक्खी इधर-उधर उड़कर मद में डूबी हुई है। विविध पक्षी संगीतज्ञ की भाँति सारे उपवन को संगीतमय बना रहे हैं। चन्द्रदेव अपनी शीतल किरणों से संयोगियों के मन को लुभा रहे हैं। तारों की छटा अनुपम है। मुर्दादिलों में जान आ गई। वनस्थली में लाल, पीले, नीले, हरे, सफेद आदि विभिन्न रंगों के पुष्पों को देखकर मन-मयूर नृत्य करने लगा है। पलाश ने तो लाल-लाल पुष्पों से अपने सम्पूर्ण शरीर को सजा लिया है। कितना मादक दृश्य है ?

वसन्त ऋतु का महत्त्व साधारण मनुष्यों के अतिरिक्त कवियों के लिए और भी अधिक है। कवि प्रकृति की मनोहर गोद में अपनी भावनाओं को जाग्रत करते हैं। वसन्त-ऋतु में उनकी कविता-कामिनी अपनी पूर्ण सज-धज के साथ निकलती है। प्रकृति-वर्णन में वसन्त का ही स्थान सर्वोपरि है। वसन्त में मनुष्य के मन में मादकता उत्पन्न करने की अद्भुत शक्ति है। इस सम्बन्ध में ठाकुर गोपालशरणसिंह की वसन्त-सुषमा की अग्रांकित पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं।

"बदल गयी है प्रकृति, समय ने
भी अब पलटा खाया है
फिर से सभी वनस्पतियों में
नव जीवन सा आया है।
फूलों के मिस लतिकायें सब
मंद मंद मुसकाती हैं
पल्लव रूपी पाणि हिलाकर
मन के भाव बताती हैं।"

कितनी भावपूर्ण है यह कविता ! वसन्त में ही यह अनुपम शक्ति है कि वह कवियों के मस्तिष्क में अपने सुरम्य वातावरण से नवीन-नवीन कल्पनाओं का सूत्रपात करता है।

कृषकों के हृदय में नवीन आशाएँ एवं उमंगें उठने लगी हैं। सरसों के पीले रंग को देखकर उनके मन तथा प्राण पुलकित हो उठे हैं। उनकी स्त्रियाँ कोयल की कूक के साथ आम और जामुन के बगीचों में अपने सुरीले कण्ठ से लोकगीतों की सुन्दर पंक्तियों को दुहराने लगी हैं। शीतल वायु के झोकों से बौर तथा कोपलों से लदे हुए वृक्ष थिरकने लगे हैं। छोटे-छोटे शिशु अपने शरीर को शीतल करने के लिए बाहर आकर खड़े हो गए हैं।

इसी वसन्त ऋतु में हिन्दुओं का पवित्र पर्व होली का उत्सव मनाया जाता है। इस अवसर पर भाँति-भाँति के लोकगीत गाये जाते हैं। ढप मृदंग तथा ढोलक आदि वाद्यों के साथ वृद्ध तक नाचने-कूदने लगते हैं, बालक अपनी पिचकारियों में रंग का अभाव होने पर पानी ही भरकर लोगों पर उछालने लगते हैं।

वसन्त की शोभा एवं छटा तो वर्णनातीत है। गुलाब की नई कलियों पर भौंरे मँडरा रहे हैं मानो उसकी नुकीली काँटेदार कलियों पर सहज अधिकार पाने में असमर्थ होकर वे सुरीली तान सुना रहे हैं। गुलाबों के फूल भौंरों के द्वारा इतने सम्पादित होने के कारण ऐसे फूल रहे हैं कि अपने अंगों में फूल नहीं समाते।

वसन्त ऋतु में प्रातःकाल घूमने से शरीर सुन्दर, बलिष्ठ तथा पुष्ट होता है। जो मनुष्य प्रातःकाल वसन्त की पवन का सेवन करते हैं वे बीमारियों का

शिकार नहीं हो पाते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि बसन्त ऋतु सब ऋतुओं की रानी है। इस ऋतु में सभी मनुष्य आनन्द में निमग्न रहते हैं तथा सर्वत्र नवीन आभा तथा सुन्दरता के दर्शन होते हैं।

11
ग्राम्य जीवन

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- ग्रामों का सरल जीवन
- ग्राम्य जीवन की विशेषता
- ग्राम्य-जीवन के दोष
- उपसंहार

ग्राम्य शब्द के स्मरण मात्र से ही राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की निम्न पंक्तियाँ हमारे मस्तिष्क में चक्कर काटने लगती हैं—

'अहा ग्राम्य जीवन भी क्या है—
क्यों न इसे सबका मन चाहे।
थोड़े में निर्वाह वहाँ है –
ऐसी सुविधा और कहाँ है।।'

वास्तव में ग्राम्य का जीवन बड़ा ही मधुर तथा सरल होता है, प्रत्येक मानव का मन ग्राम के जीवन से प्राप्त होने वाले आनन्द को प्राप्त करने के लिए लालायित रहता है। हरी-भरी वनस्पति के बीच बसी ग्रामीणों की बस्तियाँ अमरावती को भी लज्जित करती हैं।

गाँवों का लोक ही निराला है। प्रकृति की सुरम्य गोद में बसे हुए गाँव भी प्रकृति के अवयव जैसे ही प्रतीत होते हैं। अपने चारों ओर के मीलों तक विस्तृत मैदान में ग्रामीण खेती करते हैं। उनका सच्चा और सरल जीवन है, किसी प्रकार की कृत्रिमता उनमें न दीख पड़ेगी। वे सीधे-सादे होते हैं।

परस्पर प्रेम से रहते हैं। द्वेष से वे इतने अनभिज्ञ हैं कि उनके जीवन में द्वेष का स्थान ही नहीं। सादा भोजन, सादा वस्त्र तथा सादा रहन-सहन ही उनकी जीवन चर्या है। काम करने से तो वे मानो कभी थकते ही नहीं।

प्रकृति की समस्त विभूतियाँ - वर्षा चन्द्रिका, उषा, सन्ध्या अपने-अपने वैभव का गाँवों में प्रदर्शन करती हैं। ऐसा लगता है कि प्रकृति की क्रीड़ास्थली का केन्द्र ये गाँव ही हैं। जिधर देखो उधर ही प्राकृतिक सौन्दर्य बिखरा-सा पड़ा है। यहाँ की झूमती हुई बेलें हृदय को आनन्द-विभोर कर देती हैं। कुओं का जल ग्रीष्म-काल में हरिद्वार की गंगा के जल-सा शीतल, मधुर तथा शीत काल में स्वाभाविक उष्ण तथा निर्मल बनकर सभी को नवीन-स्फूर्ति और शक्ति प्रदान करता है। कहीं झील-झाँवरों के वक्षस्थल पर अनेक रंग के कमलों का वास है तो कहीं चंचल तितलियाँ और मधुलोलुप भ्रमर रंग-बिरंगे फूलों की मुस्कराती और पराग भरी पंखड़ियों पर रस का पान करते हैं।

सावन मास की छटा भी अनुपम है। यहाँ पर मन-भावन का दृश्य किसके नेत्रों को आकर्षित नहीं करता। गाँवों की रिमझिम-रिमझिम वर्षा में किसानों के प्राण पुलक उठते हैं। वर्षा में लहलहाते खेतों को देखकर उनके हृदय में आनन्द की बाढ़ आ जाती है। जो प्राणदायक स्वच्छ पवन नगर से कोसों दूर है। वह शीतल, मन्द, सुगन्ध, समीर भोले-भाले ग्रामवासियों को अनायास ही प्राप्त होती है।

ग्रामों में भोले-भाले किसानों के मूक बच्चे रूखी-सूखी रोटियाँ ही खाकर स्वादिष्ट भोजन का सा रसास्वादन करते हैं। ग्रामों का किसान अपनी और अपने बच्चों की चिन्ता न कर दूसरों के लिए अन्न और घी आदि उपकरणों को जुटाता है। कितना महान् त्याग है उसका—

> "शोणित का पानी कर किसान, अन्नों को पैदा करते।
> जो पालन करते सब जग का, हा ! कष्ट अनेकों वे सहते।"

मगर ग्राम्य-जीवन में अनेक दोष हैं। वास्तव में ग्राम्य-जीवन एक दुःखान्त नाटक है। बेचारे किसानों को सरकारी कर्मचारी घुड़कियाँ दिखाकर उनके रक्त को चूसने में जरा भी नहीं हिचकते। ग्रामों में दरिद्रता का तो बोलबाला है। यद्यपि ग्रामीण सम्पूर्ण आवश्यक पदार्थों को उत्पन्न करने में ब्रह्मा के समान हैं, तथापि इन सम्पूर्ण पदार्थों का उपभोग उनके भाग्य में नहीं, इन पदार्थों के उत्पन्न करने से पहले ही वे ऋण के बोझ से दबे रहते हैं। फसल काटने

पर सभी ऋणदाता अपना-अपना भाग बाँट लेते हैं, बेचारा किसान मूक होकर देखता ही रह जाता है। उसे अपने परिश्रम का फल भी नहीं मिल पाता। ग्रामीण किसान काल की उपेक्षा का अवतार और धनी पुरुषों के व्यंग्य की साकार मूर्ति है।

सरस्वती की कृपा के पात्र बनना तो बड़े भाग्य की बात है, उसका अनुग्रह तो किसी-किसी ग्रामीण को ही प्राप्त होता है। पराये हाथों उनका अस्तित्व है। ग्रामों में शिक्षा है भी तो अधूरी। अशिक्षा ही इनकी दरिद्रता का कारण है। दरिद्रता और अशिक्षा ने भारतीय ग्रामों में ग्रामीण को अपंग बना दिया है। अन्धविश्वास और रूढ़िवादिता किसानों के मनों में अपनी जड़ें गहराई तक जमाए हुए हैं।

आमोद-प्रमोद के साधनों का तो हमारे ग्रामों में नितान्त अभाव है। दिन भर मशीन की तरह जुटे रहने पर भी ग्रामीणों को मनोरंजन के साधन उपलब्ध नहीं होते। वैज्ञानिक आविष्कार मनोरंजन के साधन प्रस्तुत करने में अधिकांश सफल हुए हैं, लेकिन बेचारे ग्रामीण तो उनसे अछूते ही रह गये हैं। उन्हें इन आविष्कारों का पता तक नहीं।

यथार्थ में हमारे राष्ट्र का अभ्युदय इन्हीं दुर्बल किसानों के कन्धों पर आधारित है। ग्रामों की उन्नति में ही हमारे देश की उन्नति निहित है। गाँवों में अशिक्षा एवं असुविधाओं का प्रमुख कारण है। जब तक इस अशिक्षा रूपी झाड़-झंकड़ों को साफ न किया जायगा, तब तक हमारा देश अवनति और अन्धकार के पथ पर डगमगाता ही रहेगा।

स्वतन्त्रता प्राप्त करने के पश्चात् ग्रामोत्थान की ओर हमारी सरकार ने विशेष ध्यान दिया है, अनेक नवीन योजनाओं का शुभारम्भ किया जा रहा है जिसके कारण ग्रामवासियों में नवीन जाग्रति तथा चेतना का आविर्भाव हुआ है। सबसे पहले पूज्य बापू जी के आत्म-निर्भरता के पाठ को ग्रामों में प्रसारित किया जा रहा है। सन् 1937 में एक ग्राम-सुधार आयोग की स्थापना हुई। सन् 1948 में उत्तर प्रदेश सरकार ने अग्रगामी विकास योजना का श्रीगणेश करके देश की प्रगति में योग दिया। अमरीकी सरकार ने ग्रामोत्थान के लिए टैक्नीकल सहायता प्रदान की तथा 55 सामुदायिक योजनाओं के लिए 5 करोड़ डालर सहायता रूप में प्रदान भी किये। प्रत्येक ग्राम में ट्यूब-वैल

स्थापित किये गये हैं। पशुओं की देखभाल के लिए पशु चिकित्सालय खोले जा चुके हैं, ग्रामीणों के स्वास्थ्य की देखभाल के लिए औषधालयों का निर्माण हो रहा है। विशाल जनसंख्या वाले गाँवों में प्रसूति-गृह खुल रहे हैं। शिशु-रक्षा तथा स्वच्छता पर भी ध्यान दिया जा रहा है। सड़कों का निर्माण हो रहा है, साथ ही ग्रामीण उद्योग-धन्धों का विकास किया जा रहा है। शिक्षा-प्रसार हेतु ग्राम-ग्राम में एक मील के मध्य प्राइमरी स्कूल की व्यवस्था है। साथ ही प्रौढ़ पाठशालाएँ भी खोली जा रही हैं। जन-सहयोग आन्दोलन तथा सहकारिता को भी बढ़ावा दिया जा रहा है।

स्वतन्त्र भारत की आत्मा स्वरूप ग्रामों का विकास और उत्थान होना अत्यन्त आवश्यक है। अतः भारतीय सरकार को ग्रामों की उन्नति के प्रति जागरूक रहना पड़ेगा। हर्ष का विषय है कि हमारी राष्ट्रीय सरकार ने ग्राम्य उन्नति के लिए पंचवर्षीय योजनाओं तथा सामुदायिक विकास-योजनाओं का संगठन किया है जिनसे भविष्य में ग्रामों की दशा में अवश्य ही सुधार होगा।

12

देशाटन

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- देशाटन का उद्देश्य तथा महत्त्व
- देशाटन की प्राचीन पद्धति
- देशाटन के विभिन्न लाभ—ज्ञान वृद्धि एवं मनोरंजन
- स्वास्थ्य सुधार तथा उन्नति
- उपसंहार

मनुष्य का जीवन बहुत छोटा है अतः उसी मनुष्य का जीवन सार्थक है जो अपने जीवन में अधिक से अधिक आनन्द प्राप्त करता है। यह सत्य ही प्रतीत होता है कि जीवन का आनन्द सैर-सपाटे में है। एक स्थान पर रहते-रहते

व्यक्ति का जीवन बोझिल हो जाता है, उसमें सरसता नहीं रहती, इसलिए किसी कवि ने कहा है—

"सैर कर दुनियाँ की गाफिल
जिन्दगानी फिर कहाँ ?"

वास्तव में आज का मनुष्य बहुत ही भाग्यशाली है, क्योंकि विज्ञान की कृपा से उसके लिए देशाटन करना आज बहुत ही सुलभ हो गया है।

प्राचीन काल में देशाटन की इतनी अधिक सुविधाएँ न थीं मगर तब भी हमारे पूर्वज देशाटन को बहुत ही महत्त्व देते थे। सभी जानते हैं कि 'जातक' की कथाओं में अध्यापक विद्यार्थियों को भ्रमण के लिए अपने साथ ले जाया करते थे और भिन्न-भिन्न स्थानों का परिचय कराया करते थे। आज इस बात की आवश्यकता है कि जो विद्यार्थी एक ही विषय की भिन्न-भिन्न पुस्तकों की भूल-भुलैयों में भटक रहा है। उसे देशाटन का दीपक दिखाकर पुस्तकों के बोझ से हल्का किया जाए।

देशाटन का भी एक निश्चित उद्देश्य होना चाहिए। निरुद्देश्य देश-विदेशों में भटकना देशाटन नहीं कहा जा सकता। देशाटन का समय और उद्देश्य अवश्य होना चाहिए, तभी देशाटन का यथार्थ लाभ प्राप्त हो सकता है। साथ ही जिस देश का भ्रमण करना है, उस देश की प्रसिद्धि के कारण और उसके महत्त्व को पहले ही समझ लेना अधिक हितकर होगा।

प्राचीन काल में यात्रा के सरल साधन उपलब्ध नहीं थे। मनुष्य बैलगाड़ियों ऊँटों, घोड़ों अथवा अन्य मन्दगामी साधनों का प्रयोग एक स्थान से दूसरे स्थान को जाने के लिए करते थे। इस प्रकार उन दिनों समय अधिक लगता ही था साथ ही मार्ग को सुगमता से पार कर लेना भी बड़े भाग्य की बात होती थी। उन दिनों मार्ग सुलभ नहीं थे, फिर चोर-डकैतों का भय बराबर बना रहता था। कहने का तात्पर्य यह है कि व्यापार करना तो कठिन था ही साथ ही एक स्थान से दूसरे स्थान को जाना भी दुष्कर था। आज को मनुष्य बड़ा भाग्यशाली है। विज्ञान की उस पर पूर्ण कृपा है। आज देशाटन के अनेक साधन उपलब्ध हैं। प्राचीन काल में जो मनुष्य पैदल चलकर अनेक दिनों में कठिनाई से अपनी यात्रा समाप्त करता था, वह आज रेलों में दौड़ने लगा, हवाई जहाजों में चिड़ियों की भाँति उड़ने लगा, समुद्रों में तैरने लगा। जो यात्रा कई दिनों में पूर्ण होती थी, वह अब कुछ घण्टों में पूर्ण होने लगी। जो

चीजें प्राचीन काल में असम्भव मानी जाती थीं, हमारे पूर्वजों के विचार में भी न आई थीं, वे आज हमारे जीवन में क्रियात्मक रूप से घटित हो रही हैं ।

देशाटन से अनेक लाभ हैं । प्रत्येक कार्य की सिद्धि के लिए दो साधन हैं । क्रियात्मक और अध्ययनात्मक । पुस्तकों से हम किसी वस्तु का अध्ययनात्मक ज्ञान ग्रहण कर सकते हैं । परन्तु अपने इस ज्ञान को पूर्ण करने के लिए हमें उसे क्रियात्मक रूप से परिवर्तित करना होगा । वह ज्ञान परिपक्व अवस्था में तभी आ पावेगा, जब उसे या तो प्रयोग किया जाये या उसे क्रियात्मक रूप से देखा जाय । जिस वस्तु को हम अपनी आँखों से देख लेते हैं, हाथों से छू लेते हैं, वह प्रसंग आने पर हमारी आँखों के सामने अपने उसी रूप में नाचने लगती है, जिस रूप में हमने उसे देखा या स्पर्श किया । 3-4 साल के बच्चे को जो पढ़ाया जाय और कुछ देर बाद उससे पूछा जाय तो वह नहीं बता पावेगा, लेकिन उसी बच्चे से उसकी आँख देखी घटना का वर्णन पूछा जाय तो वह उसे तुरन्त बता देगा, और इसका एकमात्र कारण यही है कि वस्तु का क्रियात्मक ज्ञान परिपक्व होता है अपेक्षाकृत वस्तुओं द्वारा प्राप्त ज्ञान के । इसी प्रकार विज्ञान की पुस्तकों के अवलोकन से जितना ज्ञान प्राप्त किया जाता है, अपने उस ज्ञान को पूर्ण करने के लिए प्रयोगशाला में उसका अभ्यास करना परम आवश्यक है । ठीक इसी प्रकार भिन्न-भिन्न देशों की भौगोलिक, ऐतिहासिक, आर्थिक तथा राजनीतिक स्थिति का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन देशों का भ्रमण करना बहुत आवश्यक है । बड़े नगरों और ऐतिहासिक इमारतों को देखकर हम अपने ऐतिहासिक ज्ञान में इतने परिपक्व हो जाते हैं कि अवसर आने पर उनका सुन्दर कथात्मक वर्णन करना हमारे लिए बहुत ही सरल हो जाता है ।

देशाटन से भिन्न-भिन्न स्थानों की प्राकृतिक स्थिति जलवायु, उपज, सामाजिक दशा, कला-कौशल, औद्योगिक अवस्था एवं वहाँ के निवासियों का रहन-सहन, रीति-रिवाज का ज्ञान होता है । देशाटन ही अनुभव की कसौटी है । कबीर देशाटन के फलस्वरूप ही आज श्रेष्ठ कवियों में गिने जाते हैं । महाप्रभु शंकराचार्य ने अपने धर्म-प्रचार के लिए भारत की चतुर्मुखी यात्रा की थी । बाण की 'कादम्बरी' और कालिदास का 'मेघदूत' देश-विदेश के भ्रमण का ही फल है । देशाटन से हम भी इन्हीं महान् आत्माओं के समान श्रेष्ठ और पवित्र हो सकते हैं । 'रामचरितमानस' की लोकप्रियता का रहस्य इसी में निहित है ।

देशाटन से हमारी संकुचित विचारधारा का नाश होकर व्यापक दृष्टि-कोण का अभ्युदय होता है। व्यापारी-वर्ग भी देशाटन से लाभान्वित होते हैं। वे विदेशों में जाकर देख सकते हैं कि कौन-सी वस्तु कहाँ से अल्प दामों में क्रय कर अधिक लाभ पर बेची जा सकती है? इन सब लाभों के साथ-साथ देशाटन मनोरंजन का अद्वितीय साधन है। हम देशाटन के द्वारा प्राकृतिक और कृत्रिम सभी प्रकार की वस्तुओं को देखकर खुशी से नाच उठते हैं। स्वास्थ्यवर्द्धक स्थानों का भ्रमण कर हम स्वास्थ्य-लाभ प्राप्त करते हैं। अनेक मरीज डॉक्टरों की अनुमति से स्वास्थ्य-सुधार के लिए स्वास्थ्यवर्द्धक स्थानों पर जाते हैं।

विभिन्न देशों के भ्रमण से उन देशों की शिक्षा-पद्धति, व्यापार, कला-कौशल आदि का निरीक्षण हमारे अन्दर देश-प्रेम की भावना जाग्रत करता है। यूरोप ने देशाटन के द्वारा ही अपने देशों की उन्नति की है। अंग्रेजों ने देशाटन से ही अनेक देशों पर अपना प्रभुत्व स्थापित किया। देशाटन के द्वारा हम भाँति-भाँति के लोगों के सम्पर्क में आते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि देशाटन के द्वारा मनुष्य अपनी तथा अपने देश का चतुर्मुखी विकास करता है। प्रगति के पथ पर वह स्वयं भी आगे बढ़ता है तथा अपने देश को आगे बढ़ाता है। मनुष्य में व्यावहारिक ज्ञान अभिवृद्धि का देशाटन एक प्रमुख साधन है।

13
किसी रमणीक स्थान का वर्णन

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना**
- **वृन्दावन की स्थिति**
- **वृन्दावन के प्रमुख मन्दिरों का वर्णन**
- **वृन्दावन में कतिपय बुराइयाँ**
- **उपसंहार**

मथुरा जिले में वृन्दावन बहुत प्राचीन काल से ही अत्यन्त रमणीक और

प्रसिद्ध तीर्थस्थान है । पहले यह श्रीकृष्ण जी के खेलने की क्रीड़ास्थली थी । इसके चारों ओर घने उद्यान हैं । वृन्दावन में आकाश को चुनौती देने वाले अनेक मन्दिर हैं । गुफायें, लताओं से आच्छादित वृक्ष पंक्तियाँ तथा स्वच्छ जल से पूरित सरोवर देखने वालों के मन मुग्ध हो जाते हैं । यहाँ के उद्यानों में मोर, वानर तथा अन्य प्रकार के पशु-पक्षी आनन्द के साथ विहार करते हैं । भीनी-भीनी वायु चलने पर मोर तथा कोयल अपनी मधुर वाणी में कुछ गाने लगते हैं । वास्तव में उपवन की रमणीयता अनुपम है ।

वृन्दावन कोई विशाल नगर नहीं है, न यहाँ बड़े नगरों की सी चहल-पहल ही है । यह पवित्र नदी यमुनातट पर अवस्थित है और स्वर्ग के समान प्रतीत होता है । यहाँ अधिकतर बंगाली तथा ब्राह्मण ही रहते हैं । कुछ लोग पशु पालते हैं तथा कृषि के द्वारा अपना जीवन-निर्वाह करते हैं । कुछ वैश्य लोग व्यापार भी करते हैं । प्रायः यहाँ के सभी लोग नम्र, सुशील तथा धर्म परायण हैं । यहाँ के लोगों के जीवन से बनावटीपन कोसों दूर है । ब्राह्मण लोग जप, तप और पूजा-पाठ में ही लीन रहते हैं तथा भगवान् से यह वरदान माँगते रहते हैं कि कोई धनवान चंगुल में फँसे जिससे कि पर्याप्त पैसे मिलें । यहाँ पर कुछ संस्कृत पाठशालाएँ भी हैं, जिनमें संस्कृत भाषा पढ़ाई जाती है । वृन्दावन में कई गौशालाएँ भी हैं, जिनमें सब प्रकार की गाएँ पाली जाती हैं । गौशाला के प्रबन्धक तथा कर्मचारी लोगों के समक्ष इस बात का उदाहरण उपस्थित करते हैं कि हमारे देश को उन्नत करने के लिए गायों की दशा में सुधार होना अति आवश्यक है । इस दयनीय स्थान का गौरव ऊँचे-ऊँचे भवनों के कारण नहीं है । यही हमें प्राचीन भारतीय वास्तुकला के नमूने दृष्टिगोचर होते हैं । इसके प्रसिद्ध मन्दिर ही इसकी शोभा को बढ़ाते हैं । वृन्दावन में अनेक मन्दिर हैं । रंग जी का विख्यात मन्दिर तो वृन्दावन का प्राण ही है । इस मन्दिर का धार्मिक महत्त्व तो है ही, साथ ही इसमें लगा हुआ स्वर्ण का लट्ठा दर्शकों के कुतूहल का कारण बना हुआ है । इस मन्दिर की शोभा दर्शनीय है। इसके अतिरिक्त कई पुराने मन्दिर वृन्दावन में विशेष महत्त्व रखते हैं । काँच का मन्दिर तो अपनी निराली आभा में सर्वदा शोभा-सम्पन्न दीख पड़ता है, इसमें दिन में भी देखने पर सूर्य की किरणों के समान प्रकाश जगमगाता रहता है । वृन्दावन में टेढ़े खम्भे वाला मन्दिर तो दूर से देखने पर ताजमहल-सा प्रतीत होता है । इसकी स्वच्छता तथा सुन्दरता को देखकर मन तथा नेत्र दोनों

इसकी ओर आकृष्ट हो जाते हैं। बिहारी के मन्दिर की शोभा तो पूछिये ही मत? लाखों नर-नारी श्री बांके बिहारी जी के दर्शन करने के लिए तैयार खड़े रहते हैं। जैसे ही पुजारी झाँकी देने के लिए पट खोलता है वैसे ही अपार जन-समूह समुद्र की भाँति उमड़ पड़ता है तथा प्रत्येक नर-नारी यह भरसक प्रयत्न करता है कि उसे भली प्रकार भगवान् की झाँकी मिल जाए।

इन मन्दिरों के अतिरिक्त वृन्दावन में अन्य अनेक देखने योग्य स्थान हैं। लोगों के कथनानुसार वृन्दावन में पाँच हजार से भी अधिक मन्दिर हैं। यहाँ पर प्रत्येक हिन्दू के घर में एक मन्दिर अवश्य है।

वृन्दावन के कण-कण में श्रीकृष्ण का प्रेम-कलित क्रीड़ा कर रहा है। यहाँ की प्रत्येक वस्तु पर श्रीकृष्ण की छाप अंकित है। आइए, सेवा-कुंज का भ्रमण करें। सेवा-कुंजों के अतिरिक्त एक सुन्दर सरोवर भी है तथा कुछ लोगों का मत है कि श्रीकृष्ण जी ने सरोवर मुरली से खोदा था। यह भी कहना है कि इस कुंज में कोई भी जीव रात्रि को निवास नहीं कर सकता यदि कोई निवास करने का साहस करेगा तो जीवित नहीं बच सकेगा। मधुवन की शोभा भी निराली है।

कुंज-गली में भ्रमण बिना शायद इस स्थान का वर्णन ही अधूरा रह जायगा। वृन्दावन की कुंज-गली में श्रीकृष्ण जी ने रास रचाये थे, यहीं पर माखन तथा मिश्री के रसिक गोपेश्वर ने गोपियों का दधि लूटा था। कुंज-गली से आगे चलकर हम "चीर-हरण" होने वाले स्थान पर पहुँचते हैं। यहाँ पर वृक्ष से अनेक चीर लटके हुए हैं तथा बाहर से आने वाला यात्री वहाँ बैठे हुए पुजारियों से चीर लेकर पेड़ से चीर बाँधता है; क्योंकि वृन्दावन के पुजारियों के कथनानुसार यदि कोई व्यक्ति वृन्दावन में जाकर चीर नहीं बाँधेगा तो उसकी यात्रा अपूर्ण ही समझी जायेगी। उसे वृन्दावन की यात्रा का फल नहीं प्राप्त होगा। यहाँ पर कालीदह के मन्दिर का वर्णन नहीं किया जाय तो सम्भवतः विपत्ति में व्रज की रक्षा करने वाले श्रीकृष्ण जी का महत्त्व अधूरा रह जायेगा कालीदह के मन्दिर में भगवान् कृष्ण नाग को नाथकर उसके फण पर विराजमान हैं। इस दृश्य को देखकर दर्शक के मस्तिष्क में एक यही विचार उठता है कि कठिन से कठिन परस्थितियों के अवसर पर भी मनुष्य को धैर्य का त्याग नहीं करना चाहिए।

कालीदह के मन्दिर में बैठा हुआ पुजारी भक्त से कुछ नगद-नारायण लेकर उनको माखन-मिश्री का भोग प्रदान करता है। ब्रज की भूमि में पैर रखते ही अनायास भगवान् श्रीकृष्ण का स्मरण हो जाता है तथा हृदय भक्ति-भाव से भरकर गद-गद हो जाता है। देश के कोने-कोने से यहाँ धार्मिक व्यक्ति आते हैं और यहाँ की यात्रा से अपने को कृत-कृत्य समझते हैं। वह स्थान, जिसने कालिन्दी को अपने पास बुला लिया, क्यों न हिन्दू मात्र की श्रद्धा का पात्र बनेगा ? क्यों न हिन्दू नर-नारियों के हृदय में उच्च आसन ग्रहण करेगा ? क्यों न अनेक धर्मप्रिय व्यक्तियों की धर्म पिपासा शान्त करेगा ?

आजकल जब यात्री इस नगरी के दर्शन करता है तो उसे पवित्रता के साथ गन्दगी के भी दर्शन होते हैं। इस धर्म-प्रधान स्थान पर ठगी की कमी नहीं। यात्रियों के वृन्दावन पहुँचने पर पण्डे तथा पुजारी उन्हें इस प्रकार घेर लेते हैं जैसे भेड़ को उसकी ऊन काटने के समय घेर लिया जाता है। पण्डे तथा पुजारी प्रेम से पगी हुई चिकनी-चुपड़ी बातें बनाकर आने वाले दर्शक-गणों को मनमाना ठगते हैं तथा धर्म के नाम पर शिकार खेलते हैं। धर्म की आड़ में यहाँ पापों का प्रचार होता है। श्रीकृष्ण की इस क्रीड़ा भूमि में ये ढोंग तथा आडम्बर की बात शोभा नहीं देती यह स्थान धर्म तथा शिक्षा का केन्द्र रहा है।

वृन्दावन का धार्मिक महत्त्व बहुत ही उत्कृष्ट रहा है। यह भारतवर्ष का अनुपमेय तथा रमणीक स्थान है। इस नगर का दर्शन कर प्राचीन संस्कृति का चित्र आँखों के सामने आ जाता है। मनुष्य में पवित्र भाव जाग्रत होने लगते हैं, यदि अब भी वृन्दावन में—वृन्दावन के पुजारी तथा पण्डे सच्चे हृदय से, पैसे का मोह छोड़कर, विश्व-कल्याण की भावना का संसार में प्रचार तथा प्रसार करें तो वृन्दावन से पुनः कृष्ण की वंशी की ध्वनि गूँजने लगे, जिससे कोटि-कोटि व्यक्तियों का मन -मानस प्रफुल्लित होकर आत्मिक शान्ति का अनुभव करने लगेगा।

14
एक भिखारी की आत्म-कहानी

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना**
- **बाल्यकाल का जीवन**
- **जीवन में विपत्तियों का झंझावात**
- **भिखारी-जीवन**
- **उपसंहार**

शरद ऋतु का प्रातःकाल था। शरीर को कम्पित करने वाला शीत पड़ रहा था। घर के सारे व्यक्ति बैठे चाय पी रहे थे। आनन्द का वातावरण अपनी चरम सीमा पर था—तभी द्वार पर किसी ने पुकारा, "भगवान् तुम्हारा भला करे, दो रोटी का आटा दिला दो।" इस एक पुकार की तो हममें से किसी ने लेशमात्र भी चिन्ता न की, परन्तु जब थोड़ी देर बाद पुनः वही करुण एवं दयनीय शब्द सुनाई पड़े तो मैं उठा। उस समय मेरे मन में उस भिक्षुक के प्रति दया नहीं थी बल्कि मैं सोच रहा था कि ये भिक्षुक कार्य क्यों नहीं करते ? ये समाज पर भार बनकर क्यों रहते हैं ? इस प्रकार के विचारों में निमग्न मैं दरवाजे पर गया। वहाँ एक दीन वृद्ध भिखारी को देखा, जो ठण्ड के कारण थर-थर काँप रहा था। भूख के कारण रो रहा था। जाड़े से बचने के लिए उसके पास पर्याप्त वस्त्र भी नहीं थे। मैंने कहा, "आओ अन्दर, मैं तुम्हें भोजन दूँगा।" और वह भिखारी घर के भीतर चला आया। मैंने उसे खाने के लिए रोटियाँ दीं और वह खाने लगा। भोजन करके जब वह निवृत्त हुआ तो मैंने पूछा, "तुम इस वेदना एवं दुःख से भरी हुई अवस्था को किस प्रकार प्राप्त हुए ?"

मेरे इस प्रश्न को सुनकर क्षण भर उसने मेरी ओर देखा और बोला—बाबूजी, इन बातों में क्या लोगे ? यदि जानना ही चाहते हो तो सुनो। जहाँ तक मुझे याद है, जब मैं छोटा था तब मेरे घर में किसी प्रकार का अभाव नहीं था। किन्तु समय बदलता रहता है, क्योंकि कभी दिवस है तो कभी अँधेरी रात। किसी मनुष्य को सर्वदा सुख ही नहीं मिला करता और यही

मेरे साथ भी हुआ। भयंकर हैजा फैलने से मेरे माता-पिता कराल-काल के गाल में चले गये। परन्तु मुझे संसार में दुःख भोगने के लिए जीवित छोड़ गये अब मुझे अपना घर बड़ा कष्टप्रद प्रतीत होने लगा। मेरा संसार में अब कोई नहीं था। समाज अनाथों को कहाँ आश्रय देता है ? अस्तु, मुझे समाज से किसी भी प्रकार की सहायता न मिली। मैं चाहता था उस दुःखी जीवन से छुटकारा। यदि कोई मुझे यह विश्वास दिलाता कि तुम्हें इस कष्ट से मुक्त करा दूँगा तो वह मेरे लिए उस समय भगवान के समान होता।

बाबूजी ! पैसे की कमी के कारण मैंने मजदूरी करके पेट भरना प्रारम्भ कर दिया। उस समय मैं एक धनिक के घर उसके बच्चों की देखभाल करता था। एक दिन मालिक के घर से दिन कुछ रुपये चोरी चले गये। मेरे ऊपर शंका की गई, पर बाबूजी मैं अपने हृदय से कह रहा हूँ कि मैंने एक पैसा भी नहीं चुराया, पुलिस को सूचना दी गई और मैं उस घर का नौकर होने के कारण पुलिस द्वारा पकड़ लिया गया। मैंने अपनी निर्दोषता का प्रमाण दिया परन्तु कौन सुनता है ! परिणाम यह हुआ कि मुझे कारावास का दण्ड भोगना पड़ा।

कारावास के कठोर दण्ड को भुगतने के पश्चात् जब मैं मुक्त हुआ तो साथियों की खोज में निकला। मगर उनमें से कोई भी दिखलाई न दिया। गाँव से बाहर एक बाग था, मैं उसी ओर चला। बाग में पहुँचकर मैंने देखा, एक वृक्ष के नीचे एक महात्मा बैठे हैं। मैं प्रसन्नता से नाच उठा। मैं महात्मा जी के निकट गया, प्रणाम किया, महात्मा जी ने प्रसन्न रहने का आशीर्वाद दिया। 'प्रसन्न' शब्द को सुनकर मैं चौंक पड़ा, मैंने कहा, "महात्माजी, मेरे भाग्य में तो प्रसन्नता करना विधाता ने लिखा ही नहीं। प्रसन्नता तो मुझसे कोसों दूर रहती है।" महात्मा ने कहा, "बेटा, तुम चिन्ता मत करो, मेरे साथ रहो, तुम्हें किसी प्रकार का कष्ट नहीं होगा।" महात्मा के इन प्रेम भरे शब्दों को सुनकर मुझे जैसे संसार-सागर में डूबते हुए को सहारा मिला। मैं उनका शिष्य हो गया। मैं भिक्षा माँगकर लाता और उसी से मेरा तथा महात्माजी दोनों का जीवन सुख से कटने लगा। परन्तु भाग्य की रेखा बड़ी ही टेढ़ी होती है। एक दिन अचानक पेट की पीड़ा से महात्मा का स्वर्गवास हो गया और मैं इस संसार में फिर निस्सहाय रह गया। इतना कहकर वह एक क्षण के लिए रुका और फिर कहने लगा—

बाबूजी, समाज हमें फटकारता है। पर क्या वह कभी यह सोचता है कि इतने भूखों की जीविका का प्रबन्ध कैसे किया जाय ? भिक्षा तो हम लोगों को विवश होकर माँगनी पड़ती है। कौन ऐसा होगा, जो कि मेहनत व मजदूरी करने के बजाय दर-दर फटकार सुनने के लिए जायेगा। भिखारी का जीवन ही मृतक के समान होता है। मैं भी अब निराश्रित होकर भीख माँगता फिरता हूँ, यदि भीख न माँगू तो इस वृद्ध अवस्था में क्या करूँ ? आँखों से दिखलाई नहीं देता, कानों से सुनाई नहीं देता, दो डग चलने पर कदम लड़खड़ाने लगते हैं।

भिखारी के जीवन की इस कष्टप्रद कहानी को सुनकर मेरी आँखों से आँसू निकल पड़े। मैंने सोचा मनुष्य का भाग्य कितना क्रूर होता है ! मनुष्य को वह कितना बदल डालता है ! फिर अपना एक पुराना कोट उसे देकर मैं बोला, "जब तक तुम जीवित हो, तुम्हें भोजन और वस्त्र का कष्ट न रहेगा" और इन शब्दों को सुनकर वह वृद्ध भिखारी आनन्द से भरकर नाच-सा उठा। मुझे आशीर्वाद देकर जब वह चलने लगा तो ऐसा प्रतीत हो रहा था, मानो उसके बूढ़े मन में फिर से जवानी फूट पड़ी थी। अब उसके कदम दृढ़ता के साथ पृथ्वी पर पड़ रहे थे।

15
रुपये की आत्म-कथा

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- जन्म तथा आरम्भ की कथा
- जीवन में परिवर्तन
- अनेक स्थान के सैर-सपाटे
- महत्त्व
- उपसंहार

जीवन में पहले-पहले मेरी माताजी ने मुझे रुपया दिया मैं रुपया लेकर

अपने ग्राम के पास की हाट में गया। वहाँ से मैंने पर्याप्त वस्तुएँ मोल लीं। मैंने केवल-मात्र एक रुपये से ही बहुत-सा सामान खरीदा। हाट देखकर जब मैं घर लौटा तो भोजन करके चारपाई पर लेटकर रुपये की महिमा के विषय में सोचता हुआ सो गया। यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि मनुष्य जिन विचारों की लड़ी पिरोता हुआ सोता है, विचारों की वे लड़ियाँ स्वप्न में आकर मनुष्य के सामने नाचने लगती हैं, मैं भी रुपये के चमत्कार को विचारता हुआ सोया था, अतः वही विचार मन में चक्कर काटने लगे और कुछ समय बाद रुपये ने मुझे अपना वृत्तान्त इस तरह सुनाया—

संसार का ऐसा कौन-सा प्राणी है जो मुझसे परिचित न हो। संसार में ऐसा कौन है जो मुझे न चाहता हो ? संसार के मनुष्य चाहे बड़े-बड़े विद्वानों, नेताओं, अधिकारियों को अपना मस्तिष्क न झुकाते हों, किन्तु मेरे सामने तो अच्छे से अच्छा नाक रगड़ता है। संसार में ऋषियों ने कहीं भगवान के गीत तो गाये, परन्तु मेरा नाम तक नहीं लिया। इसी कारण वनों में तथा कन्दराओं में कन्दमूल फल खाते हुए मारे-मारे फिरते हैं। यदि इन ऋषियों ने कहीं मेरी प्रार्थना की होती तो न जाने कितने आनन्द एवं सुख से जीवन-यापन करते।

"सुनो, मेरी जीवन कहानी बड़ी रोचक है। तुम इसे सुनकर दाँतों तले उँगली दबाओगे। मेरा जीवन खान से हुआ, परन्तु अपने जन्म समय का मुझे ठीक अनुमान नहीं है। एक दिन खान में काम करने वाले श्रमिकों ने मुझे खान से बाहर निकाला। मेरा वह स्थायी घर था, जन्म-भूमि थी। अपना स्थायी घर छोड़ना किसे रुचिकर प्रतीत होता है ? पर मेरा वश ही क्या था, इस बलिष्ठ मानव के सम्मुख एक न चली। मैं भद्दे एवं मिट्टी से युक्त टुकडे के रूप में खान से निकाला गया। उस खान के जीवन में मैंने स्वप्न में भी विचार नहीं किया था मुझे उन्नति करनी चाहिए। मगर किसी उर्दू कवि का यह कथन मेरे विषय में सत्य निकला—

'इज्जत उसे मिली जो वतन से निकल गया।
वह फूल सर चढ़ा जो चमन से निकल गया।।

वास्तव में अपने घर से निकलकर मैं उन्नति के पथ पर आगे बढ़ा।

अब मेरे पुरखे, अन्य टुकड़े भी साफ किये जाने लगे। बेचारों को विवश होकर भट्टियों पर तपना पड़ा। यह उनकी सबसे बड़ी तपस्या थी। इस तपने की तपस्या के आधार पर ही मैं एक चमकदार धातु की छड़ के रूप में

परिवर्तित हो गया। अब तो मुझे लोग रजत (चाँदी) कहने लगे। फिर चाँदी को टकसाल में लाया गया और यों ही सीधे-सीधे से टुकड़े काट लिये गये उन टुकड़ों को सुधार कर उन पर कुछ चिह्न अंकित किये गये। वैसे वही मेरा पुराना रूप था, परन्तु सभ्यता के विकास के साथ-साथ मेरे रूप में भी परिवर्तन हो गया था और होता भी क्यों नहीं ? परिवर्तन तो सृष्टि का नियम ही है। विश्व के कण-कण में परिवर्तन अपनी फलित-क्रीड़ा कर रहा है। जिधर नजर डालिये उधर ही परिवर्तन छाया हुआ है। तो फिर उन मेरे पूर्वजों के रूप में यदि कुछ परिवर्तन हुआ, तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है ? टकसाल का कार्य भी आरम्भ हो गया। अब मेरा तथा मेरे पूर्वजों का रूप चमक उठा। उस पर चित्र बनाया गया तथा मेरे इस नये जन्म की तिथि भी अंकित की गई। आज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विज्ञान की ही तूती बोल रही है। अतः विज्ञान की प्रगति के साथ-साथ मेरे रूप में और भी अधिक परिवर्तन होता गया। मेरी आत्मा की पवित्रता धीरे-धीरे नष्ट होने लगी और मेरा बाहरी रूप निखर उठा। यह सुनकर तुम्हें कुछ आश्चर्य होगा, परन्तु आश्चर्य करने की इसमें कोई बात नहीं है। मेरे निर्माता मनुष्य ने मेरा भी रूप अपने समान कर लिया। अब मेरा शरीर शुद्ध चाँदी का नहीं रहा। उसमें गिलट, लोहा और न जाने क्या-क्या मिला दिया गया। हाँ, बाहरी आडम्बर में कुछ वृद्धि अवश्य हो गई और इस बाहरी शोभा का परिणाम यह निकला कि बालक, युवा, वृद्ध सभी मुझे लालच भरी आँखों से देखने लगे। मनुष्य ने अपनी आसानी के लिए कागज का रुपया भी बना डाला और मुझे मेरे इस रूप में आप नोट कहकर पुकारने लगे।

अब मेरा क्या कहना ? मैं हाथों-हाथ देश-विदेश की यात्रा करने लगा। मेरी सैर की सीमा न रही। कभी कहीं तो कभी कहीं। कभी कलकत्ते तो कभी इलाहाबाद; कभी देहली तो कभी आगरा। कभी बैंक में तो कभी तिजोरी में। मेरे भ्रमण की सीमा न रही। जब कभी मैं कंजूसों के हाथों में पड़ जाता, मेरी आफत आ जाती। वहाँ से निकलना कठिन हो जाता। बीस-बीस वर्ष तक एक ही स्थान पर पड़ा सड़ता रहता। मैं गाँवों का अनुभवी हूँ और नगरों का भी, झोंपड़ियों का और महलों का भी। मैं एक स्थान पर ठहरना पसन्द नहीं करता। यही कारण है लोग मुझे 'चला' कहकर सम्बोधित करते हैं। सभी मनुष्य मुझे खरा-खोटा देखकर लेते हैं। कभी पत्थर पर पटकते

हैं तो कभी हाथ से रगड़ते हैं। कभी-कभी मैं पैरों तले लापरवाही से पड़ा रहता हूँ। कोई भी मेरी खबर-सुध नहीं लेता। अनेक दुःख सहता हूँ पर मेरी महिमा किसी से छिपी नहीं है। मेरे लिए लोग गलियों-गलियों भटकते फिरते हैं। अपने शरीर को कष्ट देकर भी लोग मुझे प्राप्त करने के लिए उत्सुक रहते हैं।

देखिए, कहीं किसी को मैं मिल जाऊँ तो वह कितना प्रसन्न होता है फूला नहीं समाता, भागा भागा माँ के पास जाता है। सुकोमल बच्चों को स्कूल में भेजा जाता है, अनेक कष्ट सहते हुए डिगरियाँ प्राप्त करते हैं, चोरियाँ और डकैतियाँ होती हैं, घोर पाप किये जाते हैं, अत्याचार किये जाते हैं यह सब क्यों? मुझे प्राप्त करने के लिए ही। आज के अधिकांश विद्यार्थी शिक्षा का उद्देश्य पूछे जाने पर यही बतायेंगे—नौकरी। मेरे बिना सैकड़ों काम बिगड़े पड़े रहते हैं। इस दुनियाँ में सारे कार्य मुझ पर ही आधारित हैं।

मैं जो चाहूँ वह करा सकता हूँ, यदि मैं चाहूँ तो बड़े-बड़े साम्राज्य स्थापित कर दूँ चाहूँ तो सुस्थापित साम्राज्यों को अस्त-व्यस्त कर दूँ। मानव को गौरवान्वित होने की शक्ति मैं ही देता हूँ। मानवीय मनोवृत्ति पर मेरा पूर्ण अधिकार है। मनुष्य को संसार के सुख प्रदान करने वाला तथा उसकी आशाओं को पूरा करने वाला मैं ही हूँ भूखे को अन्न देने वाला, नंगे को वस्त्र देने वाला मैं ही तो हूँ, आज मैं मूर्खों को पण्डित बनाने वाला हूँ। इस मायावी संसार में जो शोभा है, जीवन में जो आनन्द है, वह सब मेरी ही कृपा पर है।

अब आपको ज्ञान हो गया होगा कि मेरा कितना महत्त्व है? मैं रोते को हँसाने वाला हूँ। मुझे यह देखते हुए दुःख होता है कि आज का मानव मेरा प्रयोग हानिकारक और निम्न स्तरीय कामों में करता है। क्या ही अच्छा हो कि वह मेरा प्रयोग सत्कर्मों में करने लगे।

16
मेरा एक स्वप्न

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- पावस की मनोहारिणी छटा
- डाकुओं का मेरे घर में प्रवेश
- डाकुओं द्वारा मेरे घर की छानबीन तथा उनसे मेरी बातचीत
- मेरी निर्धनता पर डाकुओं को तरस आना एवं मेरे कथन से प्रभावित होकर उनका डाका डालना बन्द कर देना।

मानव-जीवन भी एक अजीब विचित्र पहेली है। मनुष्य इस विश्व में रह-रहकर अपनी अधिक से अधिक इच्छाओं की तृप्ति करने का प्रयास करता है, परन्तु जिन अभावों की पूर्ति मनुष्य अपने दैनिक जीवन में नहीं कर पाता, उनकी पूर्ति वह स्वप्न अथवा कल्पना के जगत् में भ्रमण करके करता है। इस प्रकार कल्पना अथवा स्वप्न के लोक में अपने अभावों की पूर्ति देखकर वह फूला नहीं समाता, हर्ष से गद्गद् हो जाता है, चाहे उसके वे स्वप्न कभी पूरे हों या न हों।

हाँ, तो उस रात्रि में काल्पनिक नृत्य अत्यन्त ही नयनाभिराम था। पावस की मनोहर रात्रि थी, विधु जलध-टुकड़ियों के साथ अठखेलियाँ कर रहा था। उसकी शीतल किरणें वृक्ष-दलों पर उल्लासपूर्ण नृत्य प्रदर्शित कर रही थीं। हरी दूब पर दौड़ती हुई चाँदनी के पीछे अन्धकार में दबे पाँव चलकर और झटककर उसे पकड़ने का प्रयत्न कर रहा था। विश्व नीरवता की गोद में पड़ा रंगीन स्वप्न देख रहा था और ऐसे सुरम्य वातावरण में चातक मेघों की आराधना कर रहा था। उसे इतना अवकाश कहाँ कि वह प्रकृति की इस मन मोहक छटा में स्वयं को भी लवलीन कर सके अथवा शैवालिनी की वारि-धारा और तट का प्रेम अभिनय देख सके। किन्तु उसके उपास्यदेव वारिद को उससे विशेष ममता न थी। वे तो शशि के साथ खेल कर मृदुल हास हँस रहे थे। अन्त में चातक से न रहा गया और उसने पिउ-पिउ कर कहा—"हे

उपास्यदेव ! मैं बारहों मास पुकार कर तुम्हारी अनन्त साधना करता हूँ और तुम हो कि सुनते ही नहीं, तुम्हें प्रसन्न करने के लिए क्या यह पर्याप्त नहीं, आराध्य !"

प्रकृति के ऐसे सुरम्य, मनोहर वातावरण की छठा को निहारते-निहारते रात के दस बज गये। मैं खाट पर पड़ा था। एकाएक मुझे निद्रा ने अपने आधिपत्य में ले लिया और मैं स्वप्नों के संसार में आगे बढ़ा। मैंने देखा कुछ डाकू मेरे कमरे में घुस आये हैं। वे मेरे घर की खोजबीन कर रहे हैं, मै चुप रहा और अपने मन में सोचा, यदि मैं चिल्लाता हूँ तो मौत निश्चित ही है और यदि मौन रहता हूँ तो ये निर्दयी मेरे सारे सामान को बाँधकर ले जायेंगे। फिर मुझ जैसे निर्धन को भारी विपत्ति का सामना करना पड़ेगा। मैंने सोचा कि इन्हें समझाऊँ कि आप लोग मुझ सुदामा की कुटिया में क्या देख रहे हैं, यहाँ पर तो तन्दुलों के अतिरिक्त तुम्हें और मिलेगा भी क्या ? मैं इन विचारों के साथ खिलवाड़ कर ही रहा था कि एक डाकू मेरे समीप आकर बोला, "सब धन कहाँ हैं ? शीघ्रातिशीघ्र बताओ, नहीं तो मौत के घाट उतार दिये जाओगे।"

मैंने कहा, "धन ? क्या तुम धन यहीं पर खोजने आये हो ? निर्धनों की झोंपड़ियों में तो भूख की ज्वाला से तड़पते हुए मासूम बच्चे मिल सकते हैं। रोजी एवं रोटी की समस्या से आक्रांत कराहते हुए मजदूर मिल सकते हैं। चिथड़ों में अपनी लज्जा को छिपाये हुए अनेक द्रौपदी मिल सकती हैं।"डाकू ने कहा "चुपचाप सब धन बता दो अन्यथा तुम्हें मेरी गोली का शिकार होना पड़ेगा। मैं अधिक देर तक राह नहीं देख सकता।" मैंने दुःखित स्वर में कहा कि, "यदि मुझ निर्धन को मारकर ही तुम्हें धन की प्राप्ति हो जावेगी तो मेरी छाती सहर्ष तुम्हारी गोली को सहने के लिए तैयार हैं।"

परन्तु स्मरण रखना मैं सत्य कहता हूँ कि मेरी मृत्यु के पश्चात् तुम्हें गुदड़ियों के अतिरिक्त इस झोंपड़ी में और कुछ हाथ न लगेगा। मुझे मृत्यु का भय लेशमात्र भी नहीं है। विश्व में जिसने जन्म लिया है, उसका मरण भी निश्चित है। फिर मृत्यु से भय कैसा ? वह तो अनिवार्य है, अवश्यम्भावी है। पर एक बात सदैव याद रखना, तुम्हें परमपिता परमेश्वर के समक्ष यह उत्तर देना होगा कि तुमने एक निर्बल-कंगाल पर अत्याचार क्यों किया ? धिक्कार है तुम्हें तथा तुम्हारी काली करतूतों को। तुमने अपने वंश का नाम डुबो दिया, पूर्वजों की शान को मिट्टी में मिला दिया। तुम्हारे बाबा, दादा तो डाका डालते समय अमीर-गरीब का सदा ध्यान रखते थे, वे विचार कर डाका डालते थे

कि कहीं हमारे हाथों से किसी कंगाल का खून न हो जाय, क्योंकि ऐसा करने से उनके बच्चे, भूख की ज्वाला से तड़प-तड़प कर मर जायेंगे। परन्तु एक तुम हो, जो कि स्वार्थवश गरीबों के गले पर छुरी चला रहे हो, उन्हें लूटने के लिए उद्यत होकर अपनी शान समझ रहे हो। मुझे परवाह नहीं; मार दो मुझे गोली से; परन्तु एक बात स्पष्ट कह देना चाहता हूँ कि गरीबों की आह से तुम जीवन-पर्यन्त सुख का भोग नहीं कर सकते, क्योंकि जब मरी खाल की श्वास से लोहा तक भस्म हो जाता है तो तुम स्वयं ही अनुमान लगा सकते हो कि एक जीवित मनुष्य की आह जो उसके दुःखी हृदय से निकलेगी तुम्हारा सर्वस्व ही नष्ट कर देगी। मानव हृदय तो कोमल होता है, वह दया, सहानुभूति तथा प्रेम से परिपूर्ण होता है, आखिर तुम लोग भी तो मनुष्य का हृदय रखते हो। यदि परिस्थिति तथा समाज उन्हें ऐसा करने के लिए बाध्य करते हैं तो इसमें दोष किसका? उनका? समाज का? अथवा "हमारा तथा आपका?" डाकू मेरे आर्तस्वर को सुनकर बोला, "अच्छा अब हम जाते हैं। हमारी इच्छा है कि तुम कंगाल हो, धन के अभाव में अनेक कष्ट सहन कर रहे हो इसलिए कुछ धन तुम्हें दे जाएँ।"

मैंने कहा, नहीं कौन कहता है कि मैं निर्धन हूँ। जब ईश्वर ने मुझे हाथ-पैर दिये हैं तो मुझे कायर बनकर दूसरे के धन की अभिलाषा क्यों करनी चाहिए? मैं मेहनत मजदूरी करके अपने उदर की पूर्ति कर लेता हूँ मुझे संसार में किसी से शत्रुता नहीं तथा मैं यह भी सोचता हूँ कि मेरा भी कोई शत्रु नहीं। तुम भी मनुष्य हो, तुम भी मेहनत-मजदूरी करके अपना पेट भर सकते हो तो फिर इन राक्षसी कृत्यों को करके अपने जीवन को पापों से क्यों बोझिल बनाते हो? ईश्वर के यहाँ तुम्हें उत्तर देना पड़ेगा, कि तुमने दूसरे की कमाई को क्यों अपहरण किया?' डाकू ने जब मेरे ये शब्द सुने तो कहा "बेटा मैं भी एक अच्छे बाप का बेटा हूँ, पिता की मृत्यु के पश्चात् मेरी सारी सम्पत्ति समाज के ठेकेदारों ने पानी की तरह नष्ट करवा दी। मैंने सहायता के लिए समाज के समक्ष हाथ फैलाये, घर-घर भटका, परन्तु किसी ने भी शरण नहीं दी। जब मैंने अपने नादान शिशुओं को भूख से बिलखते देखा तो मुझसे रहा नहीं गया और मैं डाका डालने के लिए विवश हुआ।"

परन्तु बेटा तुमने अन्धकार में भटकते हुए मेरा मार्ग प्रशस्त कर दिया

है। आज से मैं वचन देता हूँ कि मेहनत-मजदूरी करके सूखी रोटी के टुकड़ों से ही अपनी उदर पूर्ति करूँगा, चाहे ऐसा करने में मुझे कितने ही कष्टों का सामना क्यों न करना पड़े। डाकू अपने इन शब्दों को कहकर रुका ही था कि तभी एक मित्र ने आकर मुझे जगा दिया और मेरा स्वप्न भंग हो गया।

17
ब्रह्मचर्य की महिमा

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- शारीरिक पुष्टता और सौन्दर्य-वृद्धि
- मानसिक विकास
- आत्मिक उन्नति और विकास
- कुछ ब्रह्मचारियों के उदाहरण
- उपसंहार

संसार में ब्रह्मचर्य के समान कोई दूसरा तप नहीं। ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने वाला मनुष्य देवताओं की कोटि में आ जाता है। प्राचीन काल में हमारे पूर्वजों का शारीरिक और मानसिक विकास जो कि इतना बढ़ा-चढ़ा था इसका श्रेय ब्रह्मचर्य को ही है। प्राचीन काल में सम्पूर्ण जातियाँ ब्रह्मचर्य के महत्त्व को समझती थीं और यथावत् ब्रह्मचर्य धर्म का पालन करती थीं। परन्तु आज हम अवनति के गर्त में पड़े हैं। इसका एकमात्र कारण यही है कि हम ब्रह्मचर्य-पालन की ओर थोड़ा भी ध्यान नहीं देते हैं। अगर हमको बलवान्, प्रतापी, सत्यवादी और दीर्घजीवी बनना है तो ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना पड़ेगा। इस भयंकर पतन से उद्धार पाने के लिए हमें ब्रह्मचर्य की आवश्यकता है।

ब्रह्मचर्य का पालन करने से मनुष्य का शरीर हृष्ट-पुष्ट हो जाता है और उसका चेहरा सूर्य की भाँति चमकने लगता है। शरीर में वीर्य ही प्रमुख वस्तु है। ब्रह्मचर्य से वीर्य की रक्षा होती है। वीर्य शरीर में आरोग्यता और पुष्टता

लाता है । हमारे मुख पर कोमलता, कमनीयता और तेज ब्रह्मचर्य के कारण ही आता है । वाणी में शेर की सी गर्जना, भुजदण्डों में अपार बल और हृदय में साहस केवल ब्रह्मचर्य के कारण ही आता है । ब्रह्मचर्य की साधना करने से हमारे जीवन पर पर्याप्त प्रभाव पड़ता है । नियमित जीवन व्यतीत करने से स्वास्थ्य ठीक रहता है, जो आजीवन हमारे लिए लाभदायक है । ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करने से हमारा हृदय पवित्र हो जाता है । पवित्र हृदय से जो अध्ययन किया जाता है, वह हमारी समझ में आता है और उपयोगी बनता है । ब्रह्मचर्यव्रत के पालन से हमारे जीवन की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति होती है । जो लोग ब्रह्मचर्यव्रत की अवहेलना करते हैं, वे आत्मोन्नति नहीं कर सकते ।

ब्रह्मचर्य से मस्तिष्क को बल और उत्साह प्राप्त होते हैं । स्वास्थ्य ठीक रहता है । बुद्धि तीव्र होती है, स्मरण शक्ति कुशाग्र होती है । मेधाशक्ति बढ़ती है । इसी ब्रह्मचर्य के कारण ऋषि लोग बड़े मेधावी विद्वान् होते थे और बड़े-बड़े ग्रन्थों को कण्ठस्थ कर लेते थे । विद्या प्राप्त करने वालों के लिए एक स्वर में सभी ने ब्रह्मचर्य पर जोर दिया है । हमारे ऋषियों ने ब्रह्मचर्य आश्रम में ही शिक्षा का विधान रखा है, परन्तु पाश्चात्य सभ्यता के फलस्वरूप आज इस विधान का पालन नगण्य हो गया ।

ब्रह्मचर्य से आत्मिक उत्थान भी होता है । जब बुद्धि तीव्र होती है तब आत्मिक उत्थान स्वयं हो जाता है । शुद्ध बुद्धि शुद्ध विचार उत्पन्न करती है । उत्तम विचार रहने से शान्ति स्वयं आ जाती है । संसार में तीन बल हैं—एक शारीरिक बल, दूसरा धन बल और तीसरा मनोबल । मनोबल तब तक प्राप्त नहीं होता है जब तक शारीरिक बल प्राप्त नहीं होता है । शारीरिक बल ही हमारे सब बलों का मूल कारण है । शारीरिक बल तब तक सम्भव नहीं जब तक कि ब्रह्मचर्य-धर्म का पालन न किया जाये । अतः जब तक शारीरिक बल न होगा तब तक संसार में विजय प्राप्त करना कठिन है । ब्रह्मचर्य के प्रसाद से साधारण व्यक्ति भी अपनी आत्मोन्नति करके मुक्ति तक का अधिकारी हो सकता है । धन्वन्तरि महाराज अपने शिष्यों को आयुर्वेद का उपदेश देते समय ब्रह्मचर्य का महत्त्व बताते हैं—"मृत्यु, रोग और बुढ़ापे का नाश करने वाला अमृत रूप ब्रह्मचर्य है ।" जो संसार में शान्ति, सुन्दरता, ज्ञान, आरोग्य और

उत्तम सन्तान चाहता है, वह ब्रह्मचर्य का पालन करे। ऋषियों ने सांसारिक तथा आध्यात्मिक लक्ष्य की प्राप्ति का मूल मंत्र ब्रह्मचर्य ही बताया है। आजकल ब्रह्मचर्य का अर्थ अत्यधिक संकुचित हो गया है।

महाभारत एवं रामायण के वीर योद्धाओं की कथाएँ आज किसे असम्भव नहीं लगतीं ? अर्जुन के प्रताप-शौर्य पर किसको आश्चर्य नहीं होता ? इन महापुरुषों के जीवन का जब स्मरण हो जाता है तो शरीर रोमांचित हो उठता है। भीष्म पितामह आदि ब्रह्मचारियों का यश आज संसार में सर्वत्र फैल रहा है। भीष्म पितामह के सामने उनके प्रतापी गुरु परशुराम को भी हार माननी पड़ी थी। यदुकुल-कैरवचन्द्र श्रीकृष्ण भगवान् को भी भीष्म पितामह के सामने सिर झुकाना पड़ा था। हनुमानजी ने ब्रह्मचर्य के बल से ही रावण को एक घूँसे में ही मूर्च्छित कर दिया था; द्रोणाचल पर्वत को लाकर लक्ष्मण जी को जीवनदान दिया था और एक सौ योजन लम्बे समुद्र को लाँघ कर पार कर दिया था। इसे ब्रह्मचर्य की महिमा न कहें तो क्या कहें ? इसी प्रकार अन्य उदाहरण भी हमारे धार्मिक ग्रन्थों में मिलते हैं। ब्रह्मचर्य की महिमा बताते हुए एक कवि ने लिखा है कि—

"विज्ञान पाठ वेद पढ़ों को पढ़ा गया।
विद्या विलास विज्ञवरों का बढ़ा गया॥
सारे असार पन्थ मतों को हिला गया।
आनन्द सुधा सार दया का पिला गया॥
वह कौन दयानन्द यती के समान है।
महिमा अखण्ड ब्रह्मचर्य की महान् है॥

इस प्रकार हम देखते हैं कि ब्रह्मचर्य व्रत के पालन से हमारे जीवन का विकास होता है। ब्रह्मचर्य ही हमारी विद्या, वैभव और उन्नति का एकमात्र साधन है। ब्रह्मचर्य से असंभव कार्य संभव हो सकता है। ब्रह्मचर्य से ही लोक और परलोक दोनों बनते हैं। हमें अपने जीवन को उन्नत तथा विकसित बनाने के लिए ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करना परमावश्यक है।

18
आदर्श विद्यार्थी

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—विद्यार्थी जीवन की परिभाषा
- विद्यार्थी जीवन का महत्त्व
- विद्यार्थी समाज का आदर्श है
- आदर्श विद्यार्थी का जीवन
- राष्ट्र-हित और आदर्श विद्यार्थी
- उपसंहार

हमारे प्राचीन मनीषियों ने मनुष्य के जीवन को निम्नलिखित चार भागों में विभक्त किया है—

(1) ब्रह्मचर्य, (2) गृहस्थ, (3) वानप्रस्थ, तथा (4) संन्यास ।

विद्यार्थी जीवन ब्रह्मचर्य का ही पर्याय है । उस समय अपने जीवन के इस काल में मनुष्य अपने सभी सुखों को छोड़कर विद्या का उपार्जन किया करता था । अपने जीवन के इस काल में विद्या अर्जन करने के अतिरिक्त उसे दूसरा कोई भी कार्य नहीं करना पड़ता था । वास्तव में उसके जीवन का यह पवित्रतम काल था, जिसमें उसके भावी जीवन की सार्थकता छिपी थी ।

अगर हम ध्यानपूर्वक देखें तो यह बात हमारी समझ में भली प्रकार से आ जाती है कि विद्यार्थी-जीवन मानव-जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अंग है । मानव-जीवन का प्रभात, जिसमें सब प्रकार के विकास की सम्भावनाएँ सन्निहित रहती हैं, विद्यार्थी जीवन के रूप में व्यतीत होता है । अतः विद्यार्थियों के संरक्षक तथा शिक्षकों का यह पवित्र कर्त्तव्य है कि वे विद्यार्थियों को अवनति के मार्ग पर चलने से रोकें तथा उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ाएँ । साथ ही विद्यार्थियों का भी यह परम कर्त्तव्य हो जाता है कि वे अपने जीवन के इस काल में अपने कर्त्तव्यों की ओर ध्यान दें तथा अपने जीवन का निर्माण सुचारु रूप से करें ।

विद्यार्थी आने वाले कल की आशायें हैं । भारत-कोकिला श्रीमती सरोजनी नायडू ने एक बार कहा था—"विद्यार्थी-जीवन में बच्चों का हृदय कच्चे घड़े के समान होता है । उस पर इस जीवन में जो प्रभाव पड़ जाते हैं,

वे जीवन-पर्यन्त अमिट रहते हैं। यही वह समय है जब विद्यार्थी अपने कोमल मन और मस्तिष्क को अंकुरित अवस्था में होने के कारण किसी दिशा में मोड़ सकता है। विद्यार्थी मानव एवं राष्ट्र के कर्णधार होते हैं। इन्हीं विद्यार्थियों पर देश की उन्नति और अवनति आधारित है। इन्हीं विद्यार्थियों में से जवाहर जैसे वीर, पटेल और गाँधी के समान कर्मवीर बनते हैं।"

जिस प्रकार मनुष्य उत्तम, मध्य, नीच—तीन प्रकार के होते हैं, उसी प्रकार विद्यार्थी को भी तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है। एक प्रकार के तो वे हैं जो केवल माता-पिता के भय के कारण कॉलेज में पढ़ने जाते हैं, लेकिन यह तो केवल समय काटना भर है। दूसरे प्रकार के विद्यार्थी वे हैं जो मध्यम श्रेणी में गिने जाते हैं, परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए आवश्यक परिश्रम करते हैं। ये दोनों ही प्रकार के विद्यार्थी देश तथा समाज के लिए भार-स्वरूप होते हैं। तीसरे तथा सर्वोत्तम प्रकार के विद्यार्थी वे हैं जो इन दोनों प्रकार के विद्यार्थियों से बहुत ऊपर की श्रेणी में आते हैं। इन्हें हम आदर्श विद्यार्थी कहते हैं। आदर्श विद्यार्थी का नाम सुनते ही हमारे हृदय में एक उत्कट अभिलाषा जाग्रत हो जाती है कि हम जानें, आदर्श विद्यार्थी के क्या लक्षण हैं?

आदर्श विद्यार्थी सद्‌गुणों का पालन करता हुआ देश और समाज के लिए यश और उन्नति का स्रोत होता है। वह अपने कर्त्तव्य, विद्योपार्जन का पालन निष्ठापूर्वक करता है। आदर्श विद्यार्थी माता-पिता एवं गुरुजनों के प्रति अटूट भक्ति तथा अपने समवयस्कों के प्रति प्रेम भाव का पालन करता है। उसका हृदय अनुराग, परोपकार, क्षमता, सहकारिता, त्याग, दयालुता, श्रद्धा, संगठन उदारता आदि सद्‌गुणों का आगार होता है। आदर्श विद्यार्थी अपने जीवन में समय का सदुपयोग करता हुआ आचार में पवित्र, वाणी में नम्र, व्यवहार में सात्त्विक और कर्त्तव्य के प्रति निष्ठावान होता है। वह अनेक विघ्न उत्पन्न होने पर भी दुःख-सुख में समभाव रहकर स्वावलम्बी मनुष्य का सा जीवन-यापन करता है। यह मिथ्या आडम्बरों से कोसों दूर भागता है।

आदर्श विद्यार्थी का चरित्र दूसरों के लिए आदर्श-स्वरूप होता है। वह अपने चरित्र से अपने साथियों के चरित्र को भी आदर्श बना देता है। वह अपना सम्पूर्ण समय केवल पढ़ने में ही व्यतीत नहीं करता वरन् खेल-कूद और व्यायाम में खर्च करता है। वह यह बात भली प्रकार से समझता है—

"स्वस्थ मस्तिष्क स्वस्थ शरीर में ही निवास करता है।" उसका दैनिक कार्य-क्रम नियमित होता है। वह प्रत्येक काम समय पर करता है। भाषण और वाद-विवाद प्रतियोगिता में भी अपनी अभिरुचि प्रकट करता है। समाज-सेवा से भी अछूता नहीं रहता। समाज सेवा के लिए बालचर होकर सफल कार्य करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि भावी जीवन में एक सफल नागरिक बनने के उसमें सभी गुण विद्यमान रहते हैं।

आदर्श विद्यार्थी निष्कर्ष रूप में वह कहा जा सकता है, जो सदाचारी, समय का सदुपयोग करने वाला, संयमी, सत्य-भाषी, समाज-सेवी एवं व्यवहार शिष्ट होता है। शिष्टाचार उसके जीवन का एक आवश्यक अंग है, क्योंकि वह इस बात को भली प्रकार से समझता है कि शिष्ट होने पर ही वह भविष्य में उन्नति और यश को प्राप्त करेगा—

'अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलम्॥

हमारे देश के लिए ऐसे ही आदर्श विद्यार्थियों की आवश्यकता है जो अर्थ की भूल-भुलैया में न भटककर सच्चे मार्ग की खोज करें तथा देश और समाज को उन्नतिशील बनाएँ। अन्य विद्यार्थियों को भी इन आदर्श विद्यार्थियों के चरित्र का अनुकरण करना चाहिए। तभी वे गुरु वशिष्ठ, चाणक्य, दयानन्द सरस्वती, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, स्वामी रामतीर्थ आदि विभूतियों के समान ज्ञानी, विज्ञानी, बलिष्ठ तथा तेजस्वी बनकर विश्व का कल्याण कर सकने में सक्षम सिद्ध हो सकते हैं।

19
पंचायत राज्य

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—पंचायतों का आरम्भिक स्वरूप
- स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त पुनर्गठन
- पंचायत-राज्य के लाभ
- उपसंहार

पंचायतों की प्रथा भारतवर्ष में अत्यन्त प्राचीन है। इसके अनुसार ग्रामीण जनता शासन का संचालन करने के लिए योग्य और विश्वासपात्र सदस्यों को चुनती है। इन सदस्यों की समिति ही ग्राम-पंचायत कहलाती है तथा इस प्रकार की शासन-पद्धति को ही पंचायत राज्य के नाम से पुकारते हैं। इस प्रणाली का इतिहास अत्यन्त गौरवमय है, जो सहस्रों वर्ष पुराना है। प्राचीन काल में पंचायतों ने जिस कुशलता और न्यायप्रियता का परिचय दिया, उसके लिए वे आज भी सम्मान की दृष्टि से देखी जाती हैं। न्याय कार्य में अनुभवी और न्यायप्रिय योग्य व्यक्तियों को 'पंच परमेश्वर' की उपाधि से विभूषित किया जाता है। इस शासन-प्रणाली का प्रारम्भ वैदिक काल से होता है। उपनिषद् काल, रामायण-महाभारत-काल तथा बौद्ध-काल में पंचायतों का कार्य अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया था। अंग्रेजी के शासन-काल में भी यहाँ पर पचायतें बनीं, किन्तु उनके अधिकार बहुत ही सीमित थे। पंच सरकार द्वारा चुने जाते थे, अतः वे जनता के सच्चे प्रतिनिधि नहीं होते थे। इस प्रकार हम देखते हैं कि पंचायतों का ग्रामीण रूप कभी नष्ट नहीं हुआ। आज भी जाति विषयक मामले पंचायतों द्वारा ही तय किये जाते हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्त करने के उपरान्त हमारी सरकार का ध्यान पंचायतों के पुनर्गठन की ओर गया। फलस्वरूप पंचायत-राज-कानून पारित किया गया। इसके अनुसार प्रत्येक गाँव या ग्रामों के समूह के लिए एक सभा होती है, (प्रायः एक हजार जनसंख्या वाले गाँव में एक ग्राम-सभा होती है) जिसे ग्राम-सभा कहते हैं। इस संस्था का सदस्य बनने के लिए कम से कम आयु 21 वर्ष रखी गई। पागल, अपराधी, कोढ़ी, दिवालिये आदि इनके सदस्य नहीं हो सकते। संस्था एक कार्यकारिणी समिति होती है, जिसमें जनसंख्या के अनुसार 30 से 41 सदस्य तक होते हैं। जिसे ग्राम पंचायत कहते हैं। इसका एक प्रधान होता है। प्रधान की सहायता के लिए उपप्रधान भी होता है। इस समिति के सदस्य प्रायः पाँच वर्ष के लिए चुने जाते हैं। तीन या पाँच ग्राम-सभाओं के मध्य एक 'अदालती पंचायत' होती है। इसका 'प्रधान सरपंच' कहलाता है।

पंचायत राज्य कानून द्वारा स्थानीय ग्राम-शासन-व्यवस्था का भार ग्रामीण जनता को ही दे दिया है; किन्तु फिर भी पंचायतों के अधिकार सीमित हैं। दीवानी, फौजदारी और माल के साधारण मुकद्दमों का फैसला ग्राम

पंचायत द्वारा ही किया जाता है। इस प्रकार गाँव वालों का बहुमूल्य समय नष्ट होने से बच जाता है, जो नगरों की अदालतों में प्रायः नष्ट हो जाया करता है। क्योंकि ग्रामों की जनता अधिकांशत अब भी अशिक्षित हैं इसलिए उसमें परस्पर छोटे-मोटे झगड़े होते ही रहते हैं। गाँव के लोगों को इन झगड़ों का कारण मालूम होता ही है इसलिए न्याय लगभग ठीक ही हो जाता है।

इसके अतिरिक्त ग्राम-पंचायतों को अनेक कार्य करने पड़ते हैं। शिक्षा का प्रसार किया जाता है। पुस्तकालयों तथा वाचनालयों की स्थापना करके गाँव की जनता के ज्ञान की वृद्धि की जाती है। स्वास्थ्य-रक्षा के ऊपर विशेष ध्यान दिया जाता है, औषधालय खुलवाये जाते हैं। व्यायामशालाओं का निर्माण भी पंचायतों द्वारा किया जाता है। गाँव के अन्दर गन्दे पानी के गड्ढों को भरवा दिया जाता है, जहाँ कि भिन्न-भिन्न प्रकार के विषैले कीटाणु उत्पन्न हो जाते हैं। कृषि की उन्नति के लिए खाद तैयार करना, सिंचाई का प्रबन्ध करना, सड़क बनवाना आदि कार्य पंचायतों द्वारा ही किये जाते हैं। गाँव में पुलिस का अभाव रहता है, इसलिए रात्रि को चोर-डाकुओं से बचने के लिए पहरा देने वाली मण्डलियाँ बना दी जाती हैं। प्रकाश के लिए लालटेनों का प्रबन्ध किया जाता है।

इन कार्यों को पूरा करने के लिए ग्राम-पंचायतों को धन की आवश्यकता होती है जिसके लिए वे सरकार से सहायता प्राप्त करती हैं—किसानों पर उनके लगान के अनुसार कर लगाती हैं। दण्ड आदि में प्राप्त हुआ धन भी इन्हीं सार्वजनिक कार्यों में खर्च किया जाता है। जिन कार्यों में अधिक रुपया व्यय होता है, उन्हें पूरा करने के लिए चन्दा एकत्रित किया जाता है।

पंचायत-राज्य एक आदर्श व्यवस्था है। देश की जनता में सुख और शान्ति स्थापित करने का एकमात्र उपाय है। यही सबसे उत्तम शासन-प्रणाली है। यदि ग्राम-पंचायतों के सदस्य अपने कार्यों का सम्पादन सच्चाई, ईमानदारी और सद्भावना से करें एवं सहयोग एकता और सेवा को अपने कार्यों का लक्ष्य बनावें तो वह दूर नहीं जबकि ग्रामीण जनता सुख और आनन्द का अनुभव करने लगेगी। सम्पूर्ण सार्वजनिक कार्यों में रुचि के साथ भाग लेगी। वास्तव में इसी में देश और जनता का कल्याण निहित है।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि कोई प्रजातन्त्र प्रणाली उसी दशा में सफल ठहराई जा सकती है जब समाज सुख के सपनों में विहार कर रहा हो

और यह कल्पना ग्राम-पंचायतों के द्वारा ही सम्भव हो सकती है क्योंकि ग्राम-पंचायतें ही देश को स्वावलम्बन एवं आत्म-निर्भरता की ओर ले जाने में समर्थ हो सकती हैं। अतः जब स्वतन्त्र भारत में संविधान का निर्माण हो रहा था तो उसकी 40 वीं धारा में इस बात का निम्न रूप में स्पष्ट उल्लेख है—
"राज्य ग्राम-पंचायतों का संगठन करने के लिए अग्रसर होगा तथा उन्हें ऐसी शक्तियाँ और अधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक है।"

20

स्वतन्त्र भारत में नारी का स्थान

विचार-तालिका

- **प्रारम्भ—प्राचीन काल में नारी का महत्त्व**
- **मध्य काल में नारी की अवस्था**
- **आधुनिक काल में नारी-जागरण**
- उपसंहार

यदि हम प्राचीन भारतीय-संस्कृति एवं सभ्यता पर विहंगम दृष्टिपात करें तो उसमें हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि हमारे समाज में स्त्रियों को प्रारम्भ से ही उच्च स्थान प्रदान किया गया है। हमारे देश में नारी केवल मात्र विलासिता को साधन ही नहीं अपितु उसने समय-समय पर अपने अद्भुत पराक्रम से विश्व को आश्चर्य में डाल दिया है। उन्होंने सामाजिक एवं राज-नीति के क्षेत्र में भी पुरुषों के कन्धे से कन्धा मिलाकर पदार्पण किया है। ऐसा है भारतीय नारी का स्वरूप एवं अपने इस स्वरूप को अक्षुण्ण बनाये रखने हेतु भारतीय नारी आज भी कटिबद्ध है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने एक स्थान पर अपने काव्य में भारतीय नारी को अबला कहकर पुकारा है। परन्तु जहाँ एक ओर हमारे कवियों ने नारी को अबला कह कर सम्बोधित किया है, वहाँ दूसरी तरफ नारियों की अद्भुत वीरता का वर्णन करके उनके 'अबला' पर्याय को मिथ्या सिद्ध कर दिया है—

"खूब लड़ी मर्दानी वह तो,
झाँसी वाली रानी थी।"

लेकिन वीरता ही नहीं भारतीय आध्यात्मिकता की जीती-जागती प्रतिमा है। ईश्वराधना एवं उसमें अटूट विश्वास उसकी अपूर्व भक्ति भावना के परिचायक रहे हैं एवं उसमें ईश्वर भक्ति के प्रति एकनिष्ठता के लक्षण भी दृष्टिगोचर होते हैं—

"मेरे तो गिरधर गोपाल,
दूसरा न कोई।"

भारतवर्ष सीता, सावित्री, गार्गी तथा लक्ष्मीबाई का देश है। भारत ने समय-समय पर अनेक नारी रत्नों को जन्म दिया है। भारतीय नारी ने अपने त्याग, तपस्या, बलिदान एवं आत्म-त्याग द्वारा जो गौरवमय परम्परा स्थापित की है, वह निश्चय ही महान् है। जहाँ नारी की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते हैं। यही महान् वाक्य प्राचीन काल से लेकर आज तक नारी का महत्त्व निर्धारित करता रहा है। नारी ने पुरुष को माँ, बहिन और पत्नी के रूप में जो प्रेम प्रदान किया है वही उसके जीवन की प्रेरणा है। अंग्रेजी लेखक का कथन सत्य है कि जो हाथ पालना झुलाता है, वही संसार पर शासन करता है।

अत्यन्त प्राचीन काल में नारी को पुरुष के समकक्ष स्थान प्राप्त था। वह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरुषों के बराबर थी, यज्ञों में पुरुषों के साथ बैठकर वेदमन्त्रों का पाठ करती थी। भगवान् राम को भी यज्ञ के समय सीता की स्वर्ण प्रतिमा बनाकर रखनी पड़ी थी। राजा दशरथ के साथ कैकेयी स्वयं युद्ध के मैदान में जाती थी। शंकराचार्य और मण्डन मिश्र के शास्त्रार्थ का निर्णय मण्डन मिश्र की पत्नी ने ही किया था।

पौराणिक काल में गार्गी ने धर्म और दर्शन पर याज्ञवल्क्य से महत्त्वपूर्ण शास्त्रार्थ किया था। उस समय नारी को स्वयं, अपने पति चुनने का अधिकार प्राप्त था। अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि नारी उस समय अपने भविष्य का निर्माण करने की पूर्ण क्षमता रखती थी।

मध्य काल के आते-आते नारी का सम्मान और आदर्श क्षीण होने लगा। विशेष रूप से मुस्लिम-युग में भारतीय नारी की अवस्था अत्यन्त ही दयनीय और शोचनीय हो गई—उसे पर्दे के पीछे घर की चहारदीवारी में बन्द कर

दिया गया, उसकी स्वतन्त्रता का अपहरण किया गया। उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा को नष्ट किया गया। उसे शिक्षा के अधिकार से भी वंचित किया गया। समाज से उसका कोई महत्त्व ही न रह गया। वह केवल भोग-विलास की ही साधन रह गई, वह सब प्रकार से पुरुष की दासी बन गई। पति की मृत्यु हो जाने पर उसे बलपूर्वक सती कर दिया जाता था। इस प्रकार मध्य काल नारी के पतन का युग था। तुलसीदास जी ने भी—"ढोल, गँवार, शूद्र पशु, नारी ये सब ताड़न के अधिकारी" कहकर नारी के प्रति कोई विशेष महत्त्वपूर्ण सहानुभूति नहीं दिखलाई। इसके विपरीत उन्होंने नारी के प्रति रोष प्रकट किया। अंग्रेजी कवि शेक्सपीयर ने 'दुर्बलता को ही नारी कहा है" और नीत्शे ने "नारी को ईश्वर की दूसरी गलती बताया है।" महात्मा कबीर ने भी नारी की बड़ी भर्त्सना की है, नारी की झाँई परत अन्ध होत भुजंग।" इस प्रकार जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नारी को अपमानित किया गया और वह देवी के पवित्र आसन से हटकर मात्र दासी बन गई।

आधुनिक-काल में सभ्यता की उन्नति के साथ-साथ नारी के जीवन में एक नई स्फूर्ति आई। पाश्चात्य सभ्यता के सम्पर्क में आकर भारतीय नेताओं ने नारी की दशा सुधारने के लिए प्रयत्न किये। सती की प्रथा का अन्त हुआ। पर्दा प्रथा का विरोध हुआ। स्त्री-पुरुष की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी और पुनः देश में नारी के जागरण का सूत्रपात हुआ। गाँधी के नेतृत्व में स्त्रियों ने स्वतन्त्रता-संग्राम में पूरा-पूरा सहयोग दिया, पुरुषों के समान जेल में उन्होंने भी दुःख उठाये। पुलिस की लाठियाँ और गोलियाँ खाईं।

भारतीय स्वतन्त्रता के पश्चात् देश का वातावरण आज भी पूरी तरह परिवर्तित हो चुका है। आज वह समय आ गया है कि हम नारी को उसके उचित अधिकार प्रदान करें। स्त्रियाँ जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अवसर दिया जाने पर कार्य करने में उतनी ही कुशल हैं जितने कि पुरुष। विश्वविद्यालय की परीक्षाओं में नारियाँ पुरुषों से आगे निकल गई हैं। श्रीमती इन्दिरा गाँधी, श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डित, सुचेता कृपलानी, अरुणा आसफअली आदि इस युग की महिला-रत्न हैं, उनकी योग्यता पर देश को गौरव और अभिमान है। स्वतन्त्र भारत के संविधान में नारी को पुरुष के बराबर स्थान दिया गया। आधुनिक युग नारी के उत्थान का युग है।

शिक्षा के प्रसार के साथ-साथ सामाजिक क्षेत्र में भी नारी की दशा को

सुधारने के प्रयत्न किये जा रहे हैं । हिन्दू कोड बिल तथा अन्य समान कानूनों के द्वारा नारी के आर्थिक स्तर को ऊँचा उठाया जा रहा है । नये कानून के अनुसार नारी को विशेष अवस्थाओं में अपने पति को त्यागने का अधिकार प्राप्त हो गया है और उसे अपने पिता की सम्पत्ति में भाग प्राप्त करने का अधिकार दिया जा रहा है । छोटी आयु में विवाह निरन्तर कम होते जा रहे है । विधवा विवाह का प्रचार भी बढ़ रहा है । यहाँ पर ध्यान रखना आवश्यक है कि गाँवों में जो नारी की दुर्दशा है उसे सुधारने की तरफ हम ध्यान दें । ग्रामीण नारी के उत्थान के बिना सम्पूर्ण नारी जागरण अधूरा ही रहेगा ।

आधुनिक नारी को जहाँ अपनी उन्नति और विकास पर ध्यान देना है, वहाँ उसे यह भी ध्यान रखना होगा कि वह भारतीय नारी है । त्याग और तपस्या की पोषक है । उसका पाश्चात्य रंग में रंग जाना भारतीय परम्परा के विरुद्ध है, तभी भारतीय नारी आधुनिक आदर्श ग्रहिणी के उच्च पद पर आसीन हो सकेगी ।

आज भारत स्वतन्त्र है तथा स्वतन्त्र भारत में स्त्री-शिक्षा के लिए बड़े बड़े विद्यालयों का आयोजन किया जा रहा है । उनके पाठ्यक्रम में गृह-विज्ञान, शरीर-विज्ञान एवं गृह-परिचर्या आदि विषयों को स्थान दिया जा रहा है । वे घर की चहारदीवारी से निकलकर समाज-सेवा के क्षेत्र में कूद पड़ी हैं । स्वतन्त्रता-संग्राम में भी पुरुषों के साथ उन्होंने शानदार भूमिका निर्वाह की है । महाकवि मैथिलीकरण गुप्त की निम्नलिखित पंक्तियों के लिए उनके स्तन में दुग्ध अवश्य है लेकिन नेत्रों में जल के स्थान पर धीरता वीरता एवं संयम के शोले भड़क रहे हैं—

> "अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी
> आँचल में है दूध और आँखों में पानी ।"

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि स्वतन्त्र राष्ट्र भारत की स्त्रियाँ अपने मन-मानस में नयी उमंग, नयी चेतना तथा नये जागरण के सपने संजोये हुए हैं । वह दिन अब दूर नहीं है जबकि वे जन-जीवन के हर क्षेत्र में मनुष्यों के समकक्ष ठहराई जायेंगी तथा नारी के प्रति श्रद्धा के रूप में निम्न ध्वनि हृदय से फूटती रहेगी—

> "नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नग पग तल में ।
> पीयूष स्रोत सी, बहा करो जीवन के सुन्दर समतल में ।"

21

नागरिक के कर्तव्य और अधिकार

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना—कर्त्तव्य और अधिकार**
- **नागरिक के अधिकार—**

(क) सम्पत्ति का अधिकार, (ख) औद्योगिक अधिकार, (ग) भाषण का अधिकार, (घ) समानता का अधिकार, (ङ) कौटुम्बिक अधिकार, (च) राजनीतिक अधिकार, (छ) धार्मिक अधिकार।

- **नागरिक के कर्त्तव्य—**

(क) सामाजिक, (ख) राजनीतिक, (ग) धार्मिक और (घ) वैयक्तिक।

- **उपसंहार**

किसी राष्ट्र में रहने वाले प्रत्येक नागरिक के कुछ-न-कुछ अधिकार और कर्त्तव्य अवश्य होते हैं। इन अधिकारों का लाभ उठाने के लिए उसे कुछ कर्त्तव्यों का भी अनिवार्य रूप में पालन करना पड़ता है। प्रत्येक राष्ट्र नागरिकों के जीवन, सम्पत्ति एवं अधिकारों की रक्षा की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेता है तथा इसके बदले में नागरिकों को कुछ कर्त्तव्यों का पालन करना पड़ता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि कर्त्तव्यों और अधिकारों का बड़ा ही घनिष्ठ सम्बन्ध है। यह एक-दूसरे पर आश्रित हैं। कर्त्तव्य और अधिकार राज्य की तुला के दो पलड़े हैं। इन दोनों के सन्तुलन से ही राज्य का कार्य सुचारु रूप से चल सकता है। प्रत्येक अधिकार के साथ एक कर्त्तव्य अवश्य जुड़ा होता है। अधिकारों का लाभ उठाने के लिए उनसे सम्बन्धित कर्त्तव्यों का पालन भी करना चाहिए।

प्राचीन काल से ही मानव को कर्त्तव्य पालन की शिक्षा प्रदत्त की जाती रही है। महाभारत के युद्ध में युद्ध से विरक्त होने वाले अर्जुन को श्रीकृष्ण ने प्रस्तुत वाक्य कह कर उसके कर्त्तव्य का आभास कराया था—

"हे अर्जुन ? तुझे इस युद्ध के मैदान में अज्ञान किस हेतु जाग्रत हुआ क्योंकि न तो यह उत्तम पुरुषों का सा आचरण है तथा न स्वर्ग का प्रदाता है।

और न यश प्रदान करने वाला है।" अर्जुन को प्रोत्साहित करते हुए पुनः कृष्ण ने कहा कि हे अर्जुन ! यदि तू युद्ध में विजय प्राप्त कर लेगा तो पृथ्वी के भोग का आनन्द ग्रहण करेगा। यदि मृत्यु को प्राप्त होगा तो स्वर्ग जायेगा। श्रीकृष्ण ने अन्त में अर्जुन को समझाते हुए निम्न श्लोक दुहराया—

"कर्मण्ये वाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन"

(The business is with deeds alone,
Not with the fruits the deeds may yield,
Act not for what the act may bring,
Not to in action be attached)

—*The Song Divine By C. C. Caleb*

भगवान् राम ने पिता के वचनों को शिरोधार्य करके अपने कर्त्तव्य का पालन किया। इस प्रकार कर्त्तव्य पालन को सीमा में नहीं तोला जा सकेगा यह मानव मन की स्वाभाविक उत्कंठा एवं अनुभूति है। आर्त तथा दुःखग्रस्त मानव के प्रति संवेदना व्यक्त करना मानवीय कर्त्तव्य है। इसमें किसी की कहने-सुनने की अपेक्षा नहीं होती है।

राज्य की ओर से प्रत्येक नागरिक को शारीरिक स्वतन्त्रता का अधिकार प्राप्त होता है। राज्य निर्बलों की बलवानों के अत्याचार से रक्षा करता है। किसी व्यक्ति को राज्य में इसका डर बिल्कुल नहीं होता कि कोई व्यक्ति उसे मार डालेगा। राज्य में रहते हुए प्रत्येक नागरिक अपना जीवन सुरक्षित समझता है। इसके लिए राज्य-पुलिस, न्यायालय आदि का प्रबन्ध करता है। राज्य की ओर से प्रत्येक व्यक्ति को ईमानदारी और सचाई से अर्जित सम्पत्ति का अपनी इच्छानुसार उपभोग करने का अधिकार होता है। राज्य प्रत्येक व्यक्ति के घर-बार और सम्पत्ति की चोरों और डकैतों से पूर्ण रक्षा करता है।

जीवन-निर्वाह के लिए प्रत्येक व्यक्ति को कोई-न-कोई व्यवसाय करना पड़ता है। वह अपनी रुचि, शक्ति तथा योग्यता के अनुसार ही उद्योग कर सकता है। राज्य की ओर से प्रत्येक नागरिक को उसकी इच्छा अनुसार व्यवसाय, व्यापार आदि करने की स्वतन्त्रता होती है। इसी अधिकार पर आजीविका का प्रश्न आधारित है। जिस देश में व्यक्तियों को उनकी इच्छानुसार उद्योग-धन्धों की स्वतन्त्रता मिल जाती है, वह शीघ्र उन्नति कर जाता है।

मनुष्य अपनी बुद्धि और विवेक के बल से बड़े-बड़े आश्चर्यजनक आविष्कार करता है। वह ज्ञान द्वारा ऐसे विचार प्रकट करता है जिनकी सामाजिक जीवन पर छाप पड़े। उसके भाषण तथा लेख समाज के लिए कल्याणकारी सिद्ध हो सकते हैं इसलिए सभी सभ्य राष्ट्र अपने नागरिकों को भाषण व लेखन की स्वतन्त्रता देते हैं। साहित्य, विज्ञान, इतिहास आदि की उन्नति विचारों और लेखन की स्वतन्त्रता पर आधारित है।

एक अच्छे राज्य में सभी व्यक्तियों को समानता का अधिकार प्राप्त होता है। धनी तथा निर्धन सबके साथ समानता का व्यवहार होता है। किसी के साथ पक्षपात नहीं होता। समानता के अधिकार का तात्पर्य यह है कि सभी नागरिकों को अपनी योग्यता के अनुसार उन्नति करने का समान अवसर मिले। राज्य की ओर से किसी वर्ग विशेष के लिए सुविधाएँ नहीं होतीं।

राज्य में प्रत्येक नागरिक को व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का अधिकार प्राप्त होता है। किसी व्यक्ति पर अनावश्यक प्रतिबन्ध लगाने से उसका व्यक्तित्व मिट जाता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक नागरिक को कौटुम्बिक अधिकार प्राप्त है। प्रत्येक व्यक्ति इच्छानुसार विवाह कर सकता है और अपने कुटुम्ब का पालन कर सकता है। नागरिक को कुछ राजनीतिक अधिकार प्राप्त होते हैं जैसे वोट देने का अधिकार, राज्य में योग्यतानुसार पद पाने का अधिकार और कानून के सामने समानता का अधिकार प्राप्त होता है। वह जिस मन्दिर, मस्जिद और गिरजाघर में जाकर ईश्वरोपासना करना चाहे तो वैसा वह कर सकता है। राज्य किसी धर्म-विशेष के प्रचार का आग्रह नहीं करना।

उन अधिकारों का भली-भाँति उपयोग तभी हो सकता है जब नागरिक अपने कर्त्तव्यों की ओर अधिक ध्यान दें। प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य है कि वह राज्य-कार्य में सहायता देने के लिए नियत कर ठीक समय पर दे, राज्य के नियमों का पालन करे, देश में शान्ति रखे और देश की रक्षा के लिए हर समय उद्यत रहे। नागरिक को अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए दूसरे धर्मों के प्रति आदर प्रकट करने की आवश्यकता है। दूसरे धर्म की व्यर्थ निन्दा करना उचित नहीं है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कर्त्तव्य और अधिकार में परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है जिस राज्य में नागरिकों को अधिकार की स्वतन्त्रता दी जाती है, वहाँ वे राज्य के प्रति सच्चे होकर अपने कर्त्तयों का पालन करते हैं। ऐसे

राष्ट्र ही शीघ्र उन्नति कर प्रगतिशील राज्य कहलाते हैं। अत: हमें आज के निम्न कोटि की तथा सस्ती लोकप्रियता को त्यागकर मानव सेवा में जुटना होगा अन्यथा हमको निम्न स्वर सुनने पड़ेंगे :

"लीडरों की है मची धूम फौलोअर कोई नहीं।
यहाँ तो जनरल हैं सभी आखिर सिपाही कौन है।"

22

स्वतन्त्र भारत का संविधान

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना**
- **विधान का स्वरूप**
- **मूल अधिकार**

(क) समानता, (ख) स्वतन्त्रता, (ग) शोषण से मुक्ति, (घ) धार्मिक स्वतन्त्रता, (ङ) सम्पत्ति की रक्षा तथा सांस्कृतिक स्वतन्त्रता।

- **संविधान की रूपरेखा**
- **विधान में परिवर्तन**
- **उपसंहार**

भारतवर्ष सदियों तक विदेशियों द्वारा गुलामी के बन्धनों में जकड़ा रहा। एक के पश्चात् एक शासक एवं लुटेरों ने इसकी बहुमूल्य निधि को लूटा एवं आँधी के झोंके के समान आए तथा चले गए। चूँकि भारतवर्ष की धरती प्रारम्भ से ही ऋषि-मुनियों की तपो-भूमि रही है। अत: विदेशियों के आगमन के फलस्वरूप इसी पर अशान्ति का वातावरण उपस्थित होना अवश्यम्भावी था। इस अशान्ति के वातावरण ने धीरे-धीरे गम्भीर रूप धारण कर लिया। यही नहीं प्राचीन काल में 'सोने की चिड़िया' कहा जाने वाला हमारा देश विदेशियों ने खोखला कर दिया था। गुलामी की जंजीरों में जकड़ी आहत्

मानवता का करुण चीत्कार जन-जन के हृदय को विदीर्ण कर रहा था। भारतीय-शासन ब्रिटिश पार्लियामेंट के संकेतों पर चल रहा था एवं इंगलैण्ड की सरकार इसमें समय-समय पर अपनी इच्छानुसार परिवर्तन एवं संशोधन कर सकती थी। इस प्रकार की विषम परिस्थितियों में हमारे देश के कर्णधार भी हाथ पर हाथ रखकर नहीं बैठे थे अपितु देश को स्वतन्त्र करने एवं विदेशियों को भारत छोड़कर शीघ्र चले जाने हेतु अहिंसा के आन्दोलनों को चला रहे थे। यही नहीं वर्षों से छेड़ा गया स्वतन्त्रता आन्दोलन एवं अन्य स्वतन्त्रता सेनानियों के स्वप्न साकार हुए एवं देश का कोना-कोना खुशी के वातावरण से गूँज उठा।

शताब्दियों के पश्चात् 15 अगस्त सन् 1947 को भारत स्वतन्त्र हुआ और देश के संविधान के निर्माण का श्रीगणेश हुआ। विधान परिषद् ने लगभग 3 वर्ष का समय लगाकर 64 लाख रुपया खर्च करके स्वतन्त्र भारत के संविधान को तैयार किया, और यह संविधान 26 जनवरी सन् 1950 से सम्पूर्ण भारत में प्रभावी कर दिया।

नये विधान के अनुसार हमारे राष्ट्र को सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न जनतन्त्रात्मक गणराज्य का स्वरूप प्रदान किया गया है। इसमें कुल 397 धाराएँ हैं। इसका स्वरूप संघीय है जिसमें एक केन्द्रीय तथा उसके अन्तर्गत अन्य राज्य सरकारों की व्यवस्था है।

इस संविधान के अनुसार देश के प्रत्येक नागरिक को सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक विचार-अभिव्यक्ति, उपासना की स्वतन्त्रता, उन्नति का समान अवसर तथा राष्ट्रीय एकता का विश्वास दिलाया गया है। 21 वर्ष से ऊपर की आयु वाले व्यक्ति को मत देने का अधिकार है। वे ही विधान-सभाओं में अपने प्रतिनिधि भेजेंगे। देश की सम्पूर्ण शासन-व्यवस्था की बागडोर जनता द्वारा चुने गए इन प्रतिनिधियों के हाथ में ही होगी। इस देश में जन्म लिए, पाकिस्तान से आये हुए तथा विदेश में बसे हुए भारतीयों को इसका नागरिक स्वीकार किया गया है।

भारत के संविधान के अन्तर्गत कुछ मूलभूत अधिकार स्वीकार किये गए हैं। वे इस प्रकार हैं—

(1) **समानता का अधिकार**—न्याय की दृष्टि से प्रत्येक व्यक्ति को समान समझा गया है। जाति, धर्म, लिंग-भेद तथा जन्म स्थान के आधार पर उनमें कोई भेद-भाव नहीं किया जावेगा। किसी भी नागरिक पर किसी भी सार्वजनिक स्थान में जाने तथा सरकारी नौकरी के सम्बन्ध में कोई प्रतिबन्ध नहीं होगा। छुआछूत का अन्त कर दिया गया है।

(2) **स्वतन्त्रता का अधिकार**—प्रत्येक नागरिक को भाषण तथा लेखन की स्वतन्त्रता, एकत्रित होने, सभा करने, देश के किसी भाग में आने-जाने तथा बसने एवं सम्पत्ति खरीदने, बेचने और रखने तथा कोई भी व्यापार करने की पूरी स्वतन्त्रता प्रदान की गई है।

(3) **शोषण से मुक्ति**—दास-प्रथा, बेगार तथा अन्य अनुचित श्रमों का अन्त कर दिया गया है।

(4) **धार्मिक-स्वतन्त्रता का अधिकार**—हमारा देश धर्म-निरपेक्ष राष्ट्र है। यहाँ पर प्रत्येक व्यक्ति को किसी धर्म के पालन की पूरी सुविधा और स्वतन्त्रता है।

(5) **सांस्कृतिक व शिक्षा सम्बन्धी अधिकार**—संविधान में अल्पमत वाली जातियों के सांस्कृतिक, धार्मिक तथा भाषा सम्बन्धी हितों तथा अपनी शिक्षण संस्थाएँ स्थापित करने के अधिकार की रक्षा का भी प्राविधान किया गया है।

(6) **सम्पत्ति का अधिकार**—किसी भी व्यक्ति को अवैधानिक रूप से उसकी सम्पत्ति से वंचित नहीं किया जा जायेगा।

(7) **वैधानिक न्याय प्राप्ति का अधिकार**—किसी भी व्यक्ति के अधिकारों पर किसी प्रकार का आघात किया जाता है तो उसकी रक्षा के लिए राष्ट्र के उच्चतम न्यायालय के सम्मुख प्रार्थना-पत्र उपस्थित करने का अधिकार है।

विधान में जहाँ जनता के अधिकारों की रक्षा पर ध्यान दिया गया है वहाँ राज्य से मार्ग-दर्शन के लिए कुछ सिद्धान्तों की भी व्यवस्था की गई है। इन सिद्धान्तों का पालन करना तथा कानून बनाते समय इनका ध्यान रखना राज्य का परम कर्तव्य होगा। इन सिद्धान्तों के अनुसार न्यायपूर्ण समाज व्यवस्था का निर्माण, प्रत्येक नागरिक को जीविका का समान अवसर प्रदान करना, शराबखोरी को बन्द करना, निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करना,

ग्राम-पंचायतों का संगठन करना तथा आन्तरिक सुख-शान्ति को स्थिर रखना राज्य का प्रमुख उत्तरदायित्व है।

संविधान की रूपरेखा

राष्ट्रपति—संविधान के अनुसार राष्ट्र का सर्वोच्च अधिकारी राष्ट्रपति होगा जो केन्द्रीय संसद के दोनों सदनों के चुने हुए सदस्यों तथा प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओं के चुने हुए सदस्यों द्वारा 5 वर्ष की अवधि के लिए निर्वाचित किया जाना है। इसकी आयु कम से कम 35 वर्ष होगी। कोई भी व्यक्ति दो बार से अधिक इस पद पर न चुना जा सकता। वह देश की समस्त सेनाओं का सेनाध्यक्ष होगा तथा केन्द्रीय सरकार के सारे कार्य उसके नाम से किये जायेंगे। उसको परामर्श देने के लिए एक मन्त्रिमण्डल होगा जो राजकीय मामलों पर उसे उचित परामर्श देगा। उसे मन्त्रिमण्डल के निर्माण, उच्चतम न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति करने के अधिकार भी प्राप्त हैं। संसद के दोनों सदनों द्वारा पास किया हुआ कोई भी विधेयक राष्ट्रपति की अनुमति के बिना कानून नहीं बन सकता।

उपराष्ट्रपति—राष्ट्रपति की सहायता के लिए एक उपराष्ट्रपति भी होगा। राष्ट्रपति की अनुपस्थिति में उनके रिक्त स्थान की पूर्ति करना तथा राज्य-सभा के अधिवेशनों की अध्यक्षता ही उसका मुख्य कार्य है। इसकी भी आयु 35 साल से कम नहीं होनी चाहिए और संसद के दोनों सदनों की सम्मिलित बैठक में 5 वर्ष के लिए इस पद का चुनाव किया जाता है।

मन्त्रिमण्डल—राष्ट्रपति को परामर्श देने तथा शासन का संचालन करने के लिए मन्त्रिपरिषद् होगी जिसका अध्यक्ष 'प्रधानमन्त्री' कहलायेगा। संसद में जिस दल का बहुमत होगा। उस दल के नेता को राष्ट्रपति प्रधानमन्त्री निर्वाचित करेगा। सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होगा।

संसद—यह केन्द्रीय शासन का मुख्य अंग है। इसके दो सदन होंगे—(1) लोकसभा, (2) राज्य-परिषद्। दोनों सदनों की वर्ष में कम से कम दो बैठक होनी आवश्यक हैं।

लोकसभा—लोकसभा में वयस्क मताधिकार के आधार पर चुने हुए सदस्य 545 तक होंगे। सदस्य सीधे जनता द्वारा चुने जायेंगे। इसका कार्य काल 5 वर्ष होगा। केन्द्रीय शासन के सम्बन्ध में विधान बनाने का इसे पूर्ण

अधिकार होगा। राज्य-परिषद् के 250 सदस्य होंगे जिनमें से एक-तिहाई सदस्य प्रतिवर्ष अवकाश ग्रहण किया करेंगे। इसके 12 सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जायेगी।

राज्य शासन—सम्पूर्ण भारत को शासन की सुविधा की दृष्टि से बहुत से राज्यों में विभाजित किया गया है। इनके प्रधान अधिकारी का नाम राज्यपाल होता है जिसकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा होगी। प्रत्येक राज्य की अपनी पृथक राज्य-विधान सभायें होती हैं। कुछ राज्यों में केवल एक ही और कुछ में सदन होंगे—(1) विधान-सभा, (2) विधान-परिषद्। विधान-सभा का चुनाव वयस्क मताधिकार के सिद्धान्त के अनुसार होता है। विधान-परिषद् के चुनाव में वोट देने का अधिकार म्यूनिस्पैलिटी, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के सदस्यों, शिक्षकों तथा विधान-सभा के सदस्यों को ही होगा।

देश में 600 छोटी-छोटी रियासतों को मिलाकर 9 बड़े राज्यों का निर्माण कर दिया गया है। इसके प्रमुख अधिकारी को राज्यपाल नाम न देकर 'राज-प्रमुख' नाम दिया गया है।

न्याय शासन—भारत का सर्वोच्च न्यायालय सुप्रीम कोर्ट होगा। इस न्यायालय का एक प्रधान तथा उसके सहायक अधिकाधिक 17 अन्य न्यायाधीश होंगे। इसके मुख्य तीन कार्य होंगे—(1) संविधान के व्याख्या सम्बन्धी विवादों का निर्णय करना, (2) संघ तथा राज्यों के परस्पर विवादों का निर्णय करना; (3) राज्यों के उच्च न्यायालय से प्रेषित अपीलों को सुनना।

लोक-सेवा आयोग—प्रत्येक राज्य में तथा केन्द्र में राजकीय अधिकारियों की भर्ती के लिए पब्लिक सर्विस कमीशनों की स्थापना की गई है।

राज्य-भाषा—देवनागरी लिपि में लिखी गई हिन्दी को संघ की राज्य-भाषा स्वीकार किया गया है। राजकीय कार्यों में हिन्दी में राज्य द्वारा अँग्रेजी के परिवर्तन के लिए 15 वर्ष की अवधि निश्चित की गई है।

विधान में परिवर्तन—संसद के दोनों सदनों के दो-तिहाई सदस्यों के बहुमत तथा राष्ट्रपति की स्वीकृति से संविधान में आवश्यक परिवर्तन किये जा सकते हैं।

इस विधान के निर्माण का मुख्य श्रेय डॉ० अम्बेडकर को है जो उस समय न्यायमन्त्री के पद पर थे। विधान की अच्छाई और बुराई के सम्बन्ध में

भिन्न-भिन्न लोगों के भिन्न-भिन्न मत हैं। किन्तु संविधान की सफलता उसके सुन्दर शब्दों में नहीं परन्तु उसके क्रियात्मक उपयोग में है। स्वतन्त्र भारत के संविधान का सम्मान करना प्रत्येक भारतीय का परम पवित्र कर्त्तव्य है और विधान की सफलता उसकी अपनी सफलता है।

23
भारतीय किसान

विचार-तालिका

- भारतीय किसान की वर्तमान अवस्था
- उसकी दयनीय अवस्था के कारण—
  (क) निरक्षरता, (ख) खेतों का छोटा होना, (ग) पानी, (घ) खाद-
  (ङ) उपज का मूल्य।
- उपसंहार।

भारतवर्ष आदिकाल से ही एक कृषि प्रधान देश है। हमारे अति प्राचीन ग्रन्थ वेदों में यत्रतत्र कृषि का वर्णन किया गया है। यही नहीं सिन्धु-घाटी की सभ्यता एवं मोहन-जोदड़ो, हड़प्पा की खुदाइयों में जो अन्न कोयले के रूप में प्राप्त हुआ है उससे यह निर्विवाद रूप से सिद्ध हो जाता है कि कृषि भारत का प्राचीन व्यवसाय रहा है। प्राचीन काल में कृषि-यन्त्र साधारण थे एवं कृषक की दशा ठीक नहीं थी। प्राचीन काल ही नहीं बल्कि आजकल के वैज्ञानिक युग में भी अधिकांश भारतीय किसान उसी स्थान पर हैं, जिस पर वह सदियों पहले थे। अन्नोत्पादन करके लोगों का पोषण करने के रूप में यदि दृष्टिपात किया जाय तो भारतीय कृषक ईश्वर से कम नहीं है परन्तु दूसरी तरफ उसकी दयनीय स्थिति का अवलोकन करके हर सहृदय की आत्मा काँप उठती है। कपड़ों के नाम पर शरीर पर केवल मात्र फटी लँगोटी एवं फटे-पुराने वस्त्र, भोजन के स्थान पर रूखी-सूखी रोटी एवं घर के स्थान पर वही सदियों पुरानी टूटी-फूटी झोंपड़ी जो हर ऋतु में उसके

लिए असुविधाजनक है। इस पर भी वह अथक परिश्रम में रत रहकर एवं खून पसीना एक करके कभी भी अपने कर्त्तव्य से मुँह नहीं मोड़ता है तथा शीत, धूप एवं वर्षा आदि सभी कुछ सहन करता हुआ निरन्तर कार्य में संलग्न रहता है।

भारतीय किसान की अवस्था अत्यन्त ही दयनीय है। कठिन परिश्रम करने के उपरान्त भी उसे भर पेट भोजन और शरीर की रक्षा के लिए पर्याप्त वस्त्र नहीं मिल पाते। वह प्रातःकाल अपने बैलों को लेकर खेत पर जाता है और रात्रि तक निरन्तर खेत में कुछ न कुछ कार्य करता रहता है। कभी-कभी तो उसे रात-दिन कार्य करना पड़ता है। फिर भी वह सबसे निर्धन रहता है। वह बराबर कर्जदार बना रहता है। भारतीय किसान के बारे में यह प्रसिद्ध है कि वह कर्ज में जन्म लेता है, कर्ज में ही सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करता है। और कर्ज में ही मर जाता है।'

किसानों की इस अवस्था का कारण है उनका अशिक्षित होना। वह आधुनिक वैज्ञानिक खोजों से अनभिज्ञ है। वह पुराने ढंग से खेती करने का ही अभ्यस्त है। भारतीय सरकार को प्रत्येक गाँव में स्कूल खोलने चाहिए, जहाँ गाँव के नवयुवकों को हिन्दी लिखना व पढ़ना सिखाया जाय। यद्यपि प्रत्येक कस्बे में साक्षरता केन्द्र खोले जा रहे हैं, किन्तु वे अपर्याप्त हैं। जब तक प्रत्येक किसान शिक्षित नहीं हो जाता, भारत की अन्य समस्याएँ भी हल नहीं की जा सकतीं।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, भारतीय किसान सदैव कर्ज से लदा रहता है, ऐसी अवस्था में वह आधुनिक वैज्ञानिक मशीनों को खरीदने में असमर्थ है। सरकार को चाहिए कि किसान को कम ब्याज पर कर्ज देकर उसकी सहायता करे।

भारतीय किसान के खेत बिखरे और छिटके हुए हैं। वे एक स्थान पर नहीं हैं। ऐसी परिस्थिति में किसान को अपने खेतों का निरीक्षण करने में बड़ी असुविधा होती है, एक से दूसरे खेत पर पहुँचने में समय भी काफी लग जाता है। चकबन्दी योजना इस समस्या का हल है। चकबन्दी के द्वारा किसान के सम्पूर्ण खेत एक स्थान पर हो जायेंगे। भिन्न-भिन्न खेतों पर वह कुआँ भी नहीं बना सकेगा। फलतः कुल व्यय भी अधिक होता है। जब उसके सब खेत एक जगह होंगे तो वह कुआँ भी बना सकेगा। उसे अपनी फसल की देखभाल करने में भी कोई कठिनाई नही होगी। कुल व्यय

भी कम हो जायेगा । इसके अतिरिक्त वह अपने चक्र के चारों ओर तार भी लगवा सकेगा तथा इस प्रकार जानवरों से अपनी फसल की रक्षा भी कर सकेगा ।

किसान के सामने पानी की समस्या बड़ी भयंकर है। साधारणतया किसानों को जलवृष्टि पर ही निर्भर रहना पड़ता है जिसके अभाव में सारी फसल नष्ट हो जाती है जिस वर्ष वर्षा ठीक समय पर नहीं होती, किसानों को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। नहरें अपर्याप्त हैं। कभी-कभी ये नहरें धोखा दे जाती हैं। सिंचाई के लिए अधिक से अधिक नहरों की आवश्यकता है । आजकल सरकार किसानों की पानी की इस समस्या को सुलझाने का भरसक प्रयत्न कर रही है । भिन्न-भिन्न स्थानों पर बाँध बाँधे जा रहे हैं जिसके द्वारा वर्षा का पानी एकत्रित करके सिंचाई के काम में लिया जा सकेगा । कुएँ तथा ट्यूबवैल बनाये जा रहे हैं ।

बिना खाद के खेती की उर्वरा शक्ति नष्ट होती जा रही है । खाद के अभाव में कभी-कभी खेती में लागत से भी कम उपज हो पाती है। भारतीय किसान अशिक्षित होने के कारण खाद का महत्त्व नहीं समझते और गोबर जैसी उत्तम खाद को भी जलाने के काम में लेते हैं।

किसान द्वारा उत्पन्न की गई वस्तुओं को बाजार में उचित मूल्य पर बेचने का कोई प्रबन्ध नहीं। उसे ऐसे समय अपना अनाज बेचना पड़ता है जबकि मूल्य गिरे हुए होते हैं । यातायात के साधन कम होने के कारण दूर बाजार में ले जाने में बड़ी असुविधा होती है । इसलिए उसे विवश होकर अपना अनाज गाँव में ही बेचना पड़ता है, जहाँ उसे उचित मूल्य नहीं मिल पाता ।

सरकार की योजनाओं को सफल बनाने के लिए कृषि और कृषक दोनों की अवस्थाओं में सुधार करना परमावश्यक है । किसान को खेती के नवीनतम साधनों की जानकारी देनी चाहिए। नए वैज्ञानिक तरीकों का प्रयोग करके भारतीय किसान अधिक अन्न उपजाने में समर्थ होगा । सरकार भारतीय किसान की दशा को सुधारने का भरसक प्रयत्न कर रही है । किसान अपने खाली समय में अनेक कार्य, जैसे—टोकरी बुनना, रस्सी बनाना आदि भली प्रकार कर सकते हैं जिससे उनकी आर्थिक अवस्था में पर्याप्त सुधार हो सकता है। देश का भला किसानों के भले में ही निहित है। आज किसानों के

सम्मुख अनेक समस्याएँ हैं। सरकार को चाहिए कि उन्हें शीघ्रातिशीघ्र दूर करे।

24
छत्रपति शिवाजी

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—जन्म के समय की परिस्थिति
- बाल्यावस्था
- मरहठों का संगठन और युद्धारम्भ
- बीजापुर के सुल्तान से अनबन
- औरङ्गजेब से संघर्ष
- उपसंहार

समस्त भारतवर्ष में मुसलमानों का राज्य स्थापित हो चुका था। हिन्दू-जनता उनके अत्याचारों से बहुत ही दुःखी थी। निराश्रित प्रजा की पुकार कहीं नहीं सुनी जाती थी। यवनों की कट्टरता अपनी पराकाष्ठा तक पहुँच गई थी। हिन्दुओं के अधिकारों का बड़ी निर्दयता से दमन हो रहा था। इन्हें पग-पग पर घोर विपत्तियों का सामना करना पड़ रहा था। हिन्दुओं के धार्मिक ग्रन्थ जलाये जाते थे। तीर्थ स्थानों को नष्ट किया जाता था। हिन्दू इतने अशक्त हो चुके थे कि उनमें आत्म-रक्षा की शक्ति नष्ट प्रायः हो गई थी। ऐसी परिस्थितियों में वीर शिरोमणि छत्रपति शिवाजी का आविर्भाव हुआ।

शिवाजी का जन्म सन् 1627 ई० में पूना के पास एक किले में हुआ था। इनकी माता का नाम जीजाबाई था। बाल्यावस्था से ही माता ने अपने पुत्र को वीरतापूर्ण कहानियाँ सुनाई। उनकी इच्छा थी कि शिवाजी एक वीर और पराक्रमी महान्-पुरुष बने। माता की शिक्षा का बालक पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा। शिवाजी के पिता का नाम शाहजी था। वे बड़े युद्ध कुशल सरदार थे।

शिवाजी की शिक्षा का भार दादा कोंणदेव को सौंपा गया। ये बड़े ही योग्य और विद्वान् पुरुष थे। शिवाजी ने बाल्यावस्था में ही कुश्ती लड़ना,

घोड़े की सवारी करना, अस्त्र-शस्त्र चलाना आदि कार्य भली-भाँति सीख लिए। दादा कोंणदेव की शिक्षा के परिणामस्वरूप शिवाजी में आत्म-विश्वास, साहस, वीरता आदि गुणों का पूर्ण रीति से विकास हुआ। उन्होंने हिन्दू-धर्म, हिन्दू जाति तथा हिन्दू राष्ट्र के पुनरोद्धार को अपने जीवन का ध्येय बनाया। समर्थ गुरु रामदास के उपदेशों से उनमें अलौकिक आत्म-शक्ति चमक उठी।

सबसे पहले शिवाजी ने मरहठा जाति को सुसंगठित किया। तदुपरान्त उन्होंने इधर-उधर छापे मारना शुरू किया। शीघ्र ही शिवाजी ने अनेक किलों पर अधिकार जमा लिया। बीजापुर के सुल्तान ने शिवाजी को पकड़ने का भरसक प्रयास किया किन्तु वह असफल रहा। इस पर सुल्तान ने साहजी को कैद कर लिया। शिवाजी ने यह देखकर मुगलों से लिखा पढ़ी प्रारम्भ की और अपनी कूटनीति से अपने पिता को छुड़ा लिया। बीजापुर के सुल्तान आदिलशाह ने अफजलखाँ को शिवाजी को पकड़ने के लिए भेजा। खान ने शिवाजी को कहला भेजा कि तुम मुझसे अकेले आकर मिलो तो मैं बादशाह से तुम्हारे अपराध क्षमा करवा दूँगा। शिवाजी ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया, किन्तु जिस समय दोनों मिले तो खान ने शिवाजी के ऊपर तलवार का प्रहार किया। शिवाजी ने तुरन्त ही खान को ऐसा उत्तर दिया कि वह तुरन्त मर गया मरहठों की छिपी हुई सेना ने अविलम्ब ही अफजलखाँ की सेना पर आक्रमण कर दिया और उसे मार भगाया।

इस समय दिल्ली का बादशाह औरंगजेब था। वह हिन्दुओं पर बहुत ही अत्याचार करता था। शिवाजी ने मुगलों के राज्य में भी छापे मारने प्रारम्भ कर दिए। दक्षिण में शिवाजी की इस हलचल को शान्त करने के लिए औरंगजेब ने शाइस्ताखाँ को भेजा। शिवाजी ने अचानक उसके ऊपर आक्रमण कर दिया और वह अपनी जान बचाकर भाग गया। इसके उपरान्त औरंगजेब ने जयसिंह को भेजा। शिवाजी ने उसके साथ सन्धि कर ली और वे उसके साथ आगरे चले आये। यहाँ वे अपमानित हुए। वे कैद कर लिए गये, किन्तु शिवाजी एक टोकरी में बन्द होकर कैद से बाहर आ गये और फिर दक्षिण पहुँच गये। औरंगजेब ने चिढ़कर एक बार शाहजादा मुअज्जम और जयसिंह को भेजा किन्तु इस बार इनका प्रयत्न असफल ही रहा। अन्त में औरंगजेब को

निराश होकर मुँह की खानी पड़ी। शिवाजी ने अहमदनगर आदि राज्यों से चौथ वसूल की और खानदेश पर भी आक्रमण किया।

अब शिवाजी ने अपने आप को स्वतन्त्र राजा घोषित कर दिया। बड़ी धूमधाम के साथ रायगढ़ में इनका राज्याभिषेक संस्कार सम्पन्न हुआ। शिवाजी का शासन-प्रबन्ध उच्च कोटि का था। सारी भूमि की नाप कराई गई और उपज के हिसाब से लगान निर्धारण किया गया। सेना का समुचित प्रबन्ध किया। उसने अष्ट प्रधान मन्त्रिमण्डल की स्थापना की। इस सभा का शिरोमणि पेशवा होता था। शिवाजी इन्हीं मन्त्रियों की सहायता से राज्य-प्रबन्ध करते थे। उनके राज्य में प्रजा सुखी थी तथा शासन न्यायपूर्वक होता था।

शिवाजी का चरित्र उच्च कोटि का था। वे धर्म-प्रिय व्यक्ति थे। उनमें धार्मिक-सहिष्णुता पूर्ण रूप से पायी जाती थी। वे मुसलमानों के सन्तों और धर्म ग्रन्थों का पूर्ण आदर करते थे। मुसलमान स्त्रियों को भी सदैव आदर की दृष्टि से देखते थे। उनकी सब सैनिकों के लिए आज्ञा थी कि स्त्रियों के सतीत्व की सब प्रकार से रक्षा की जाय। वे कट्टर हिन्दू तथा गाय और ब्राह्मणों के सेवक थे। शिवाजी बुद्धिमान, दूरदर्शी तथा साहसी थे। सन् 1680 ई० में इस वीर नेता का स्वर्गवास हो गया।

आज शिवाजी इस संसार में नहीं हैं किन्तु उनका आदर्श हमारे सामने है। शिवाजी ने केवल मरहठों को ही एकत्रित नहीं किया; किन्तु उन्होंने एक हिन्दू राष्ट्र का निर्माण किया। धार्मिक-भावना और वीरता का इस महान् पुरुष में एक अद्भुत सम्मिश्रण था। प्रत्येक भारतीय शिवाजी के नाम पर गर्व करता है। सम्पूर्ण हिन्दू जनता इस राष्ट्र-निर्माता की सदैव आभारी रहेगी।

25

सर जगदीशचन्द्र बोस

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—भारत और विज्ञान
- बाल्यकाल एवं शिक्षा

- **जगदीशचन्द्र बोस की खोज**
- **चरित्र तथा अन्य कार्य**
- **उपसंहार**

वैसे तो भारतवर्ष ने अपनी आध्यात्मिक शक्ति के कारण सम्पूर्ण संसार में अपनी अतुल ख्याति प्राप्त की है। किन्तु विज्ञान के क्षेत्र में भी इस देश का महत्त्वपूर्ण स्थान है। धर्म, राजनीति, साहित्य और विज्ञान के क्षेत्र में भारतवर्ष ने बड़े-बड़े महारथियों को जन्म दिया है। सर चन्द्रशेखर वेंकटरमण, सर प्रफुल्लचन्द्र राय तथा जगदीशचन्द्र बोस आदि ऐसे महान् वैज्ञानिकों में से ही हैं, जिनके ऊपर भारतवर्ष को सदैव ही गर्व रहेगा। भारतीय वैज्ञानिकों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने संसार को नष्ट करने वाली खोजों में अपना ध्यान केन्द्रित नहीं किया। उन्होंने तो सदैव ही लोक-कल्याण के लिए परिश्रम किया है।

जगदीशचन्द्र बोस बंगाल के विक्रमपुर जिले में राढ़ीखाल गाँव में पैदा हुए थे। इनका जन्म 30 नवम्बर 1858 ई० को कायस्थ परिवार में हुआ था। इनके पिता भगवानचन्द्र डिप्टी कलक्टर थे। इन्होंने बालक बोस को शिक्षा दिलाने का पूरा-पूरा प्रयत्न किया। जगदीशचन्द्र बाल्यावस्था से ही बड़े तेज और होनहार थे। इनके पिताजी विज्ञान की उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए उन्हें विलायत भेजना चाहते थे, किन्तु बोस का विचार डॉक्टरी पढ़ने का था। इसी समय असम में मलेरिया फैल जाने के कारण इनका स्वास्थ्य बिगड़ गया। जब वे कुछ स्वस्थ हुए तब प्रकृति-ज्ञान का अध्ययन करने के लिए ये विलायत चले गये। जब परीक्षा पास करके विदेश से लौटकर भारत आये तो कलकत्ता के प्रेसीडेंसी कॉलेज में प्रोफेसर का स्थान मिल गया। इस पर इन्होंने तीन वर्ष तक अवैतनिक कार्य किया। वेतन न लेने के कारण उन्हें अत्यन्त आर्थिक कठिनाइयाँ उठानी पड़ीं।

संसार के कर्मवीरों ने विपत्तियों से घबड़ाना नहीं सीखा है। बोस भी ऐसे ही कर्मवीरों में से थे। उनके जीवन में बड़ी-बड़ी आपत्तियाँ आईं किन्तु अध्ययन निरन्तर चलता ही रहा। 1893 ई० से अपनी वर्ष गाँठ के अवसर पर उन्होंने विज्ञान में नई-नई खोज करने का संकल्प किया और विद्युत लहरों के तत्वों की खोज में वे लग गए। सन् 1900 ई० से लेकर एक के बाद एक वैज्ञानिक-सिद्धान्त वह संसार के समक्ष रखने में सफल हुए।

भारतीय-दर्शन प्रकृति मात्र से चेतन शक्ति को स्वीकार करता है। वह जड़ से जड़ पदार्थ में भी जीव की सत्ता मानता है। जिस प्रकार सुख-दुःख की भावना मनुष्यों में है, वह पेड़-पौधों में भी है। इस सिद्धान्त को सुनकर विदेशी लोग भारतीयों की हँसी उड़ाते थे। उन लोगों की समझ में यह नहीं आता था कि पेड़-पौधे भी सुख-दुःख का उसी प्रकार से अनुभव कर सकते हैं जैसे कि अन्य समस्त जीवधारी। सर जगदीशचन्द्र बोस ने सिद्धान्त की सत्यता को प्रमाणित करके सम्पूर्ण संसार को आश्चर्य में डाल दिया।

एक बार वे पेरिस की विज्ञान-परिषद् में सम्मिलित होने के लिए गये। वे पेड़-पौधों की चेतना को यूरोप के वैज्ञानिकों के सामने सिद्ध करना चाहते थे। उन्होंने अनेक प्रकार के नए-नए यन्त्र भी बनाये थे। जब वे जहाज में बैठकर गए तो छोटे-छोटे यन्त्र टूट-फूट गये। वे पुनः भारतवर्ष लौट आये। यहाँ से पुनः नये यन्त्र बनाकर ले गये। पेरिस पहुँचकर उन्होंने अपने प्रयोग परिषद् के सामने रखे। वे यह सिद्ध करना चाहते थे कि जिस विष से चेतन प्राणी मर सकते हैं, उनके प्रयोग से पेड़-पौधे भी नष्ट हो सकते हैं। इसके लिए उन्होंने पोटेशियम साइनाइड मँगवाया। धोखे से उनको दूसरा पाउडर लाकर दिया गया। जब बोस का प्रयोग विफल रहा तब सब लोगों ने तालियाँ पीटकर उनकी हँसी उड़ाने की चेष्टा की, उन्होंने तुरन्त उस पाउडर को खा लिया। जब उन्हें इससे तनिक भी हानि न पहुँची तब तो योरोपीय डॉक्टरों की गर्दन नीची हो गई। श्रीयुत् बोस ने संसार को बता दिया कि पेड़-पौधे भी स्थिर प्राणी हैं। सन् 1911 में वृक्षों की चेतन-शक्ति के अद्भुत प्रयोग को सिद्ध करके उन्होंने समस्त विश्व को आश्चर्य में डाल दिया।

सर जगदीशचन्द्र बोस बड़े समाज-सेवी थे। उन्हें साहित्य और कला से भी प्रेम था। जीवात्मा तथा परमात्मा के सिद्धान्त में उनका प्रगाढ़ विश्वास था। उन्होंने कलकत्ता में एक प्रयोगशाला स्थापित की ताकि वहाँ विज्ञान सम्बन्धी अनुसन्धान किये जा सकें। यह प्रयोगशाला आज भी संसार की प्रसिद्ध संस्थाओं में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। यहाँ पर प्राकृतिक-ज्ञान सम्बन्धी खोजें निरन्तर होती हैं। श्री बोस ने शिक्षा-विभाग में सर्वोच्च पद ग्रहण किया था। इससे जो रुपया मिलता था उसी से वे प्रयोगशाला संचालन करते थे। उन्होंने कई बार विशेष-यात्राएँ कीं और महत्त्वपूर्ण भाषण दिये। सन् 1938 ई० में इस महान् वैज्ञानिक की जीवन लीला का अन्त हो गया।

सर जगदीशचन्द्र बोस की खोजों के लिए संसार सदैव ही उनका ऋणी रहेगा। पौधों के बारे में उनकी खोज ने संसार का दृष्टिकोण ही बदल दिया है। श्री बोस की प्रतिभा की धाक सम्पूर्ण वैज्ञानिकों पर है। सारे संसार को इनका लोहा मानना पड़ा। उनकी खोज तथा विज्ञान के लिए उनकी देन के कारण उनका यश अमर रहेगा।

26
महर्षि दयानन्द

विचार-तालिका

- ऋषि का आविर्भाव
- जन्म और बाल्यावस्था
- बोध (ज्ञान) प्राप्ति
- संसार से विरक्ति और संन्यास
- संसार-सुधार
- उपसंहार

भारतवर्ष में प्राचीन वैदिक धर्म का ह्रास हो चला था। उसमें अनेक आडम्बरों का सामावेश हो गया था। जनता पर ईसाई-धर्म का प्रभाव बढ़ता जा रहा था। विदेशी सभ्यता के सम्पर्क में आकर भारतीय नवयुवक अपनी संस्कृति से बहुत दूर होते चले जा रहे थे। ऐसे समय में भारत के नेताओं ने हिन्दू धर्म में सुधार करने का भरसक प्रयत्न किया। राजा राममोहन राय और महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने ब्रह्म-समाज की स्थापना की। परन्तु महर्षि दयानन्द इनसे और आगे बढ़े और उन्होंने वैदिक-धर्म का वास्तविक रूप भारतीय जनता के सम्मुख प्रस्तुत किया।

महर्षि दयानन्द का बचपन का नाम मूलशंकर था। उनका जन्म सन् 1824 ई० में गुजरात में टँकारा नगर में हुआ था। उनके पिता का नाम किशन जी था। वे एक धार्मिक व्यक्ति थे। अतः बालक मूलशंकर का पालन-पोषण धार्मिक वातावरण में हुआ। पिता ने पुत्र को अपने कुल की परम्परा के

अनुसार ही शिक्षा दिलाई। छोटी अवस्था में ही बालक ने पढ़ना आरम्भ कर दिया। घर पर ही उसने बहुत से मंत्र और श्लोक कण्ठाग्र कर लिए। कुशाग्र-बुद्धि होने के कारण बालक दयानन्द विद्याध्ययन में दिन-प्रति-दिन उन्नति करते गये। परिवार का वातावरण धार्मिक होने के कारण बालक मूलशंकर ने भी धार्मिक कार्यों में पूर्णरूपेण भाग लेना प्रारम्भ कर दिया। किन्तु इसी शिक्षा के लिए उनका जीवन इस संसार में नहीं था। वास्तव में उन्हें तो एक महान् सुधारक के रूप में विधाता ने इस संसार में भेजा था।

शिवरात्रि का व्रत था। बालक मूलशंकर ने भी परिवार के अन्य सदस्यों के साथ उपवास किया। धर्म में अपार श्रद्धा और प्रेम तो उनके हृदय में पहले ही से विद्यमान था। अपने ऐसे ही भक्ति से परिपूर्ण हृदय के साथ वह मन्दिर गये और रात्रि जागरण का निश्चय कर शिवजी की पूजा पर बैठ गये। शिवजी की मूर्ति के निकट बहुत से फल और मिठाइयों का ढेर लगा हुआ था। चूहों ने उन वस्तुओं में से चोरी प्रारम्भ कर दी। बस यहीं से मूलशंकर के मन में शङ्का उत्पन्न हो गई और वह विचारने लगे कि जो भगवान् अपने ऊपर से चूहे को नहीं उठा सकता, वह हमारी रक्षा क्या कर सकता है। पुत्र ने पिता से तुरन्त ही अपनी शंका के समाधान हेतु अनेक प्रश्न किये किन्तु बालक को संतोषजनक उत्तर नहीं मिल सका। यही घटना उनके जीवन में एक महान् परिवर्तन का मूल कारण बन गई। वे सच्चे शिव की खोज के लिए अपने सम्पूर्ण जीवन को अर्पित करने को तैयार हो गये। इसी बीच उनकी बहिन और चाचा की मृत्यु हो गई, किन्तु उनके मन में थोड़ा-सा भी कष्ट नहीं हुआ। इस दुख को सहन करने की उनमे अपार क्षमता जाग उठी। वह उस महान् उच्च मानसिक स्तर पर पहुँच चुके थे जहाँ पहुँचकर मनुष्य को सांसारिक मोह-माया कष्ट नहीं दे पाते। उनका जीवन चिन्तन का जीवन बन गया था। इसी घटना ने बालक मूलशंकर को महर्षि दयानन्द बनने को प्रेरित किया।

वह अपनी यौवनावस्था को प्राप्त कर चुके थे। उनको सांसारिक भोग-विलास से घृणा थी। उनके जीवन का उद्देश्य अब केवल यही रह गया था कि किसी प्रकार मृत्यु को जीता जाये। जब परिवार के अन्य व्यक्तियों ने संसार की वस्तुओं के प्रति उनकी यह विरक्ति देखी तो उन्हें बड़ा दुःख हुआ। प्रत्येक माँ-बाप यही चाहते हैं कि उनकी सन्तान यौवनावस्था प्राप्त कर सांसारिक सुखों को भोगे। अपने पुत्र की गृहस्थ-जीवन के प्रति उदासीनता कोई भी माँ-

बाप सहन नहीं कर सकते । इसी आशा में कदाचित् विवाह होने के उपरान्त मूलशंकर की प्रवृत्ति बदल सकेगी । घर वालों ने उनके विवाह की सम्पूर्ण तैयारियाँ कर दीं । किन्तु मूलशंकर इस मायाजाल में कब फँसने वाले थे । वह एक दिन चुपचाप महात्मा बुद्ध की तरह घर छोड़कर चले गये और अनेक महात्माओं के साथ भ्रमण करते हुए उन्होंने अन्त में संन्यास की दीक्षा ग्रहण कर ली, किन्तु उन्हें कोई सच्चा गुरु नहीं मिला था । उन्हें तो सच्चे शिव को बतलाने वाले गुरु की आवश्यकता थी । जब मनुष्य संसार में किसी कार्य को पूरा करने में तन, मन और धन तक अर्पण करने को तैयार हो जाता है तब ईश्वर की ओर से कोई-न-कोई सहायक उसको मिल ही जाता है । मूलशंकर के हृदय में सच्चे गुरु को प्राप्त करने की उत्कृष्ट अभिलाषा जाग्रत हो चुकी थी । उसे प्राप्त करने के लिए वह बहुत व्याकुल तथा बेचैन थे । तभी उन्हें गुरु बिरजानन्द मिले । मथुरा में उनके ज्ञान का उदय हुआ । गुरु ने अनेक ग्रन्थों का अध्यापन कर स्वामी दयानन्द को ऋषि बनाने का भरसक प्रयत्न किया । अन्त में गुरु ने अपने योग्य शिष्य से संसार का उद्धार करने की गुरु-दक्षिणा माँगी । उस महान् गुरु को महान् दक्षिणा भी चाहिए थी, जो केवल त्यागी भक्त के ही द्वारा सम्भव थी । शिष्य भी सच्चा गुरु-भक्त था । उसने गुरु की आज्ञा मानकर संसार के उपकार के लिए अपने जीवन को अर्पण कर दिया ।

जब ऋषि दयानन्द अपने इस कार्य में संलग्न हुए तो उन्होंने सम्पूर्ण वैदिक ग्रन्थों का मंथन कर उनका सार ग्रहण किया और इस प्रकार प्राप्त सार तत्वों को आधार मानकर उन्होंने हिन्दू धर्म में सुधार करने का निश्चय कर लिया । उन्होंने प्रचलित सम्पूर्ण अन्धविश्वास, आडम्बरों और रूढ़ियों की आलोचना की । हिन्दू-जनता अनेक देवी-देवताओं को पूजती है, जिसका स्वामी जी ने घोर विरोध किया । उन्होंने लोगों को बतलाया कि वैदिक-धर्म केवल एक ही ईश्वर की सत्ता को मानता है । उन्होंने यज्ञ और हवन आदि पर जोर दिया तथा धार्मिक वातावरण में एक अपूर्व क्रान्ति उपस्थित कर दी । इस प्रकार महर्षि दयानन्द ने हिन्दू धर्म के सच्चे स्वरूप को जनता के सामने रखकर बहुत से हिन्दुओं को ईसाई और मुसलमान बनने से बचा लिया ।

ऋषि दयानन्द ने वेदों के भाष्य किये और 'सत्यार्थ प्रकाश' नामक एक महान् ग्रन्थ लिखकर वैदिक धर्म की व्याख्या की । उन्होंने अपनी प्रखर बुद्धि द्वारा वेदों का सच्चा-स्वरूप संसार के सामने प्रस्तुत कर धार्मिक क्षेत्र में एक

नवीन जाग्रति का शंखनाद किया । उन्होंने आर्य समाज की स्थापना की आर सामाजिक दोषों का पूर्ण-रूपेण विरोध किया । बाल-विवाह तथा अनमेल विवाह के प्रति उन्होंने रोष प्रकट किया । विधवाओं की दशा को सुधारने का प्रयत्न किया । शिक्षा के क्षेत्र में उन्होंने महान् कार्य किया और बहुत से गुरुकुलों और कॉलेजों की स्थापना की । उन्होंने अछूतों के उद्धार के लिए भी खूब प्रचार किया । उन्होंने लोगों के हृदय में देश-प्रेम की भावना को भरपूर जगाया । विदेशी शासन की बेड़ियों को तोड़ने के लिए उन्होंने जनता के हृदय में राष्ट्रीय भावना कूट-कूट कर भर दी ।

महर्षि दयानन्द ने सम्पूर्ण हिन्दू जाति पर एक महान् उपकार किया । उन्होंने कोई नया सम्प्रदाय नहीं चलाया बल्कि प्राचीन वैदिक धर्म को सच्चा रूप व्यावहारिक धर्म देने का प्रयत्न किया । वास्तव में जब तक हिन्दू और हिन्दू धर्म इस संसार में विद्यमान है तब तक महर्षि दयानन्द का नाम एक समाज सुधारक के रूप में अमर तथा चिरस्मरणीय रहेगा ।

27
स्वामी श्रद्धानन्द

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना—जन्म तथा शिक्षा**
- **गृहस्थ जीवन**
- **श्रद्धानन्द जी का आर्य-समाज के प्रति प्रेम**
- **स्वामी जी के अन्य सार्वजनिक कार्य**
- **उपसंहार**

स्वामी श्रद्धानन्द जी का जन्म सन् 1856 में तलवन जिला जालन्धर में हुआ था । इनके पिता का नाम लाला नानकचन्द था । वे उस समय कोतवाल थे । पुरोहित ने बालक का नाम वृहस्पति निकाला किन्तु पिता ने इनका नाम मुंशीराम रखा । स्वामी जी की प्रारम्भिक शिक्षा फारसी से आरम्भ हुई । घर पर उन्होंने हिन्दी पढ़ना प्रारम्भ किया । किन्तु इसका कोई संतोषजनक

परिणाम न देखकर उन्हें विद्यालय में भर्ती करवा दिया। फिर म्योर सैण्ट्रल कॉलेज प्रयाग में आपकी शिक्षा हुई; परन्तु शीघ्र ही विवाह हो जाने के कारण आपका अध्ययन न चल सका।

सन् 1880 में आप लाहौर गये और कानून की शिक्षा प्राप्त करने लगे। यहीं से उनका सम्पर्क सभा-संस्थाओं से प्रारम्भ हुआ। शिक्षा के उपरान्त आपने जालंधर में वकालत आरम्भ की। वहाँ पर आर्य-समाज में आने-जाने की रुचि उत्पन्न हुई और समाज के प्रायः सभी ग्रन्थों का अवलोकन किया। परिणामस्वरूप इनके हृदय में आर्य-समाज के प्रति प्रेम और श्रद्धा उत्तरोत्तर बढ़ती ही गई। इन दिनों सम्पूर्ण पंजाब में मांसाहार की प्रवृत्ति चरमसीमा पर थी। ऋषि दयानन्द द्वारा विरोध किये जाने पर भी बहुत से लोग इसका त्याग न कर सके। महात्मा हंसराज जी ने उन्हीं दिनों डी० ए० वी० कॉलेज की स्थापना की। किन्तु इसमें भी वैदिक सिद्धान्तों का शिक्षण संस्कृत द्वारा न हो सका। मुंशीराम जी ने वैदिक सिद्धान्तों की शिक्षा मातृ-भाषा में देने के लिए गुरुकुल की स्थापना का संकल्प किया।

मुंशीराम जी ने अपनी गृहस्थी बनाने में बहुत ही परिश्रम किया था। पत्नी को शिक्षित बनाया और वैदिक धर्म के प्रति उनमें जिज्ञासा उत्पन्न की। इतने परिश्रम द्वारा तैयार किये हुए उत्तम गृहस्थ के अलौकिक आनन्द के नष्ट होने की मुंशीराम जी को तनिक भी कल्पना नहीं थी कि सहसा उनकी पत्नी बीमार पड़ गई और लाख प्रयत्न करने पर भी उन्होंने सदा के लिए आँखें बन्द कर लीं। अब गृहस्थी का सम्पूर्ण भार उनके ऊपर ही आ पड़ा। उन्होंने बच्चों के लिए माता का कर्त्तव्य भी स्वयं पूरा करने का दृढ़ संकल्प किया। धीरे-धीरे वकालत से भी उनका मन विचलित होने लगा। संवत् 1952 में पंजाब आर्य-प्रतिनिधि सभा के प्रधान होने के बाद उन्होंने वकालत से पूर्ण मुक्ति प्राप्त कर ली।

ऋषि दयानन्द ने सिद्धान्तों का प्रचार करने के लिए संवत् 1956 में गुरुकुल काँगड़ी की स्थापना की। उन्होंने अपना सर्वस्व दान करके गुरुकुल की स्थापना की और देश के नवयुवकों को पाश्चात्य विचारों से पृथक् करके शुद्ध भारतीयता की ओर अग्रसर करने वाले शिक्षा क्षेत्र में एक नूतन पथ का निर्माण किया। गुरुकुल काँगड़ी उनके शिक्षा-सम्बन्धी विचारों का ज्वलन्त उदाहरण है।

स्वामी जी ने सार्वजनिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों को अपना कार्य क्षेत्र बनाया। देश तथा जाति के उद्धार का कोई भी पहलू उनसे अछूता नहीं रह गया। राजनीति, समाज-सुधार, हिन्दी-भाषा, अनाथ-रक्षा, अकाल, बाढ़ दीन-रक्षा, अछूतोद्वार आदि सभी कार्यों में आप सबसे आगे दिखाई देते थे। उनका समग्र जीवन एक कर्मयोगी का जीवन था। उनकी भव्य-मूर्ति और व्यक्तित्व देखने योग्य था। अपने संन्यास जीवन से पूर्व वे 'महात्मा मुंशीराम' के रूप में जाने जाते थे। आपने 15 वर्ष तक गुरुकुल की सेवा करके संन्यास लिया और संन्यास लेकर स्वामी श्रद्धानन्द कहलाये।

उनके जीवन-काल में उन जैसे मेधावी क्रान्तिकारी को बहुत कम लोग समझ पाये। वे समय से बहुत आगे थे। जब लोग किसी महान् परिवर्तन की कल्पना भी न कर पाते थे, वे क्रान्तिकारी कदम उठाकर लोगों को चकित कर देते थे। सामाजिक क्षेत्र में अस्पृश्यता-निवारण के लिए सर्वप्रथम उन्होंने ही कदम उठाया। जाति-पाँति तोड़ने के औचित्य पर लोग अभी विचार ही कर रहे थे कि आपने जाति-पाँति तोड़कर अपनी लड़की का विवाह कर दिया। लोग अभी उच्च-शिक्षा को मातृ-भाषा में देने का स्वप्न भी न देख पाये थे कि स्वामीजी ने विज्ञान, अर्थशास्त्र आदि आधुनिक विषयों की उच्च शिक्षा का माध्यम मातृ-भाषा हिन्दी को कर दिया। गाँधी जी को अस्पृश्यता निवारण का सुझाव आपने ही दिया था। राजनीति में धर्म और नैतिकता का समावेश करके उन्होंने प्रथम बार वेद-मन्त्र का उच्चारण करते हुए, 'अमृतसर काँग्रेस' के स्वागताध्यक्ष पद से ब्रह्मचर्य और चरित्र-निर्माण आदि पर उपदेश दिया। पंजाब में हिन्दी-प्रचार के जन्मदाता भी वही थे। उर्दू पत्र को हिन्दी में रूपान्तरित करने का साहस आप जैसे मेधावी, साहसी और कर्मयोगी का साहस ही था। काँग्रेस जैसी संस्था के मंच से विदेशी खान-पान, विदेशी वेश-भूषा और विदेशी भोगमय जीवन को त्यागने की अपील पहली बार आपने ही की और आपका ही पहला भाषण काँग्रेस के स्वागताध्यक्ष पद से हिन्दी में हुआ उनका भाषण रह-रहकर हमें याद आता है, मैं आप सब बहिनों और भाइयों से एक याचना करूँगा—"इस पवित्र जाति मन्दिर में बैठे हुए अपने हृदयों को मातृभूमि के प्रेम-जल से शुद्ध करके प्रतिज्ञा करो कि आज से साढ़े छः करोड़ भारतवासी हमारे लिए अछूत नहीं हैं, बल्कि वे हमारे भाई-बहिन

हैं। हे देवियो और सज्जन पुरुषो। मुझे आशीर्वाद दो कि परमेश्वर की कृपा से मेरा यह स्वप्न पूरा हो।"

समग्र रूपेण स्वामीजी का जीवन एक अद्भुत कर्मयोगी का जीवन था। उन्होंने देश की साम्प्रदायिकता को नष्ट करने के लिए भगीरथ प्रयत्न किया।

देश को उस समय एक बलिदान की आवश्यकता थी। स्वामी श्रद्धानन्द महाराज ने अपना बलिदान देकर देश की इस आवश्यकता को सहर्ष पूरा किया। स्वर्गवास से पूर्व उनके सिर पर बलिदान का मुकुट रखा गया। स्वामी जी की उदारता का परिचय अन्तिम क्षणों में मिलता है, जिसमें उन्होंने अपने बधिक को ठण्डा पानी पिलाकर उसकी प्यास बुझाई और अन्त में उसे अपना रक्त प्रदान किया। जब तक आर्य-समाज जीवित है, अमर शहीद श्रद्धा नन्द का नाम भारतीय इतिहास में अमर रहेगा तथा देश-प्रेमियों के लिए ऐसा प्रेरणा देने वाला होगा जिसके आधार पर अपने राष्ट्र एवं जाति के लिए आवश्यकता पड़ने पर सहर्ष सर्वस्व बलिदान करने के लिए उद्यत रहेंगे। ईश्वर हम सबको श्रद्धानन्द के गुण प्रदान करे जिससे हम अपनी शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक उन्नति कर सकें।

28
महात्मा गाँधी

विचार-तालिका

- गाँधी की महत्ता
- जन्म, माता-पिता एवं विवाह आदि
- वकालत
- सार्वजनिक कार्य
- गाँधीजी का आदर्श
- गाँधीजी के जीवन से शिक्षा

भारत-भूमि पर अंग्रेजों का पूर्ण प्रभुत्व था। भारतीय जनता दिन-प्रतिदिन के कष्टों, पीड़ाओं तथा व्यापारों के कारण कराह उठी थी। परन्तु प्रकृति का

यह नियम भी रहा है कि संसार में जब-जब मानवों को कष्टों का अनुभव हुआ, तब-तब ईश्वरीय प्रेरणा से हमारे देश में ऐसी अलौकिक विभूतियाँ जन्म लेती रही हैं, जिन्होंने मानवता का परित्राण किया है। पूज्य बापू भी भारतीय आकाश में इसी निमित्त एक चमकते हुए नक्षत्र की भाँति उदय हुए।

आज विश्व में ऐसा कौन सा मानव है, जिसने महात्मा गाँधी का नाम न सुना हो। उनके लघु शरीर में महान् आत्म-बल छिपा हुआ था। उन्होंने विश्व को बुद्ध की अहिंसा का सन्देश दिया। ईसा का दीन-प्रेम, मुहम्मद की करुणा, कृष्ण की निष्काम सेवा का उनमें अद्भुत समन्वय था।

आपका पूरा नाम मोहनदास करमचन्द गाँधी था। आपका जन्म 2 अक्टूबर, 1869 को काठियावाड़ प्रदेश के पोरबन्दर नामक स्थान के एक उच्च परिवार में हुआ था। पिता करमचन्द पहले पोरबन्दर, पीछे राज-कोट और फिर बीकानेर के दीवान रहे। आपकी माता पुतलीबाई बहुत साधु स्व-भाव और पूजा-पाठ तथा व्रत-उपवास में विश्वास रखने वाली महिला थीं। गाँधी जी का जन्म वैश्य कुल में हुआ। इसलिए सत्य और अहिंसा में आपका विश्वास आरम्भ से ही था। तेरह वर्ष की अवस्था में विवाह हो गया। बाल्यावस्था में आप बहुत ही लज्जाशील थे। आपकी शिक्षा अधिकतर राज-कोट में ही हुई। 17 वर्ष की आयु में आपको बैरिस्टरी की शिक्षा प्राप्त करने के लिए इंग्लैण्ड भेजा गया। सन् 1888 में आप बैरिस्टरी पास करके भारत-वर्ष लौट आये।

शिक्षा समाप्त करके जब गाँधी जी भारतवर्ष लौटे तो उन्हें अपना घर सूना दिखाई पड़ा। उनकी स्नेहमयी माता का पहले ही स्वर्गवास हो चुका था। बहुत दिनों तक वे उदास रहे। परन्तु कुछ समय के बाद एक असफल वकील के रूप में बम्बई में आपने वकालत शुरू की। आप खूब तैयारी करके अदालत में जाने पर वहाँ सब कुछ भूल जाते, क्योंकि अभी तक आप स्वभाव से संकोचशील थे। इसलिये आप अपने पहले मुकद्दमे में पूर्ण रूप से असफल रहे। मुकद्दमे की पैरवी करते समय आपके हाथ-पैर काँप गये तथा जैसे ही बहस करने के लिए खड़े हुये आपसे कुछ भी न बोला गया। निराश होकर आप राजकोट चले आये और अर्जियाँ, दावे आदि लिखकर अपनी जीविका उपार्जन करने लगे।

गाँधीजी के सार्वजनिक हित के लिए किये गये कार्य विश्व में अपूर्व हैं। उनके जीवन के 20 वर्ष दक्षिणी अफ्रीका के आन्दोलन में व्यतीत हुए। आपने इस आन्दोलन के द्वारा अपने पिछड़े हुए तथा घृणित समझे जाने वाले भारतीयों के अधिकारों की रक्षा की। उन दिनों दक्षिणी-अफ्रीका में अंग्रेजों के खेतों पर काम करने के लिए हजारों भारतीय किसान भारत सरकार ने अफ्रीका भेजे थे। ये वहाँ पर 'कुली' कहलाते थे। उनके साथ बहुत बुरा बर्ताव किया जाता था। इनके उत्थान के लिए गाँधी जी ने आन्दोलन छेड़ा जिसका संचालन उन्होंने स्वयं ही किया, जिसमें उन्हें जेल जाना पड़ा तथा कठोर यातनायें भी सहनी पड़ीं। गाँधी जी पीटे भी गये तथा उन पर अनेक प्रकार के अमानुषिक अत्याचार भी किये गये। लेकिन भावी महापुरुष अपने भावी मार्ग को प्रशस्त करने के उद्देश्य से पल भर को भी अपने व्रत से न डिगा। ट्रांसवाल के भारतीय कुलियों पर कर लगाया गया। महामना गोखले के अफ्रीका पहुँचने पर पहले तो सरकार ने इसे माफ करने का वचन दे दिया, परन्तु पीछे अपने वचन को भंग कर दिया। इसके लिए गाँधीजी ने एक दूसरा सत्याग्रह आन्दोलन शुरू किया। अपने इस आन्दोलन में उनको पूण सफलता मिली।

इस प्रकार अपने कार्य में सफलता प्राप्त करके सन् 1914 में वे भारत-वर्ष लौटे। भारतवर्ष में आपका जोशीला स्वागत-सम्मान हुआ। भारत आने पर कुछ दिनों तक आप श्री गोपालकृष्ण गोखले के साथ रहे। गोखले आपके राजनीतिक गुरु थे। यहाँ आकर आपने भारतीय नेताओं से परिचय प्राप्त किया। भारत की अंग्रेज सरकार के वचनों पर विश्वास कर गाँधीजी ने सन् 1914 के महायुद्ध में अंग्रेजों की सहायता की, लेकिन युद्ध के समाप्त होने पर जब उन्होंने देखा कि अंग्रेज सरकार अपने वचनों का पालन करने के लिए बिल्कुल भी तैयार नहीं है तथा इस तरह के कानून देश के लिए बना रही है जो देश के लिए किसी भी रूप में हितकर नहीं हैं, तो उन्होंने सभी कानूनों की अवहेलना करने की बात सोची, जिन कानूनों को भारतीय अंग्रेजी सरकार देश में लागू करना चाहती थी।

1920 के असहयोग आन्दोलन में आपने अपूर्व कार्य किया। आपने विदेशी वस्त्र आदि का बहिष्कार किया तथा खादी-प्रचार, अछूतोद्धार, मादक-द्रव्य-

निषेध, हिन्दू-मुस्लिम एकता का चतुर्मुखी कार्यक्रम कांग्रेस के समक्ष रखा। चर्खे के व्यवहार पर आपने विशेष बल दिया। आपके ही कहने पर देश भर में विदेशी वस्त्रों की होली जलाई गई तथा देशवासियों ने खादी पहनने का वृत धारण किया। आपके ही प्रयत्नों से 15 अगस्त सन् 1947 को देश स्वतन्त्र हुआ।

गाँधीजी हिन्दू-मुस्लिम एकता के समर्थक थे। जीवन के अन्तिम दिन तक आपने हिन्दू-मुस्लिम एकता पर विशेष बल दिया। सन् 1930 में आपने नमक कानून का विरोध किया तथा भारतीयों के अधिकारों की रक्षा की। सन् 1931 में आप गोलमेज परिषद् में सम्मिलित होने के लिए इङ्गलैंड गये। गाँधीजी ने हरिजनोद्धार पर भी विशेष बल दिया। यह आपके प्रयत्नों का फल है कि देशवासियों के मन में से ऊँच-नीच का भेद निकल गया।

गाँधीजी गो-सेवा के भी बहुत बड़े पक्षधर थे आपकी ही प्रेरणा से 'अखिल भारतवर्षीय गो-सेवा-संघ' की स्थापना की गई। गाँधीजी को भारतवर्ष के गाँवों से बड़ा प्रेम था। अपने ग्राम-सुधार के लिए अद्भुत लगन के साथ कार्य किया यह आपके परिश्रम का ही फल है कि आज प्रत्येक भारतीय गाँधीजी को अपना भाग्य-निर्माता समझता है। वास्तव में वे स्वतन्त्र भारत के जनक थे।

गाँधीजी की सी सादगी, सच्चाई, अहिंसा तथा कर्मठता अन्यत्र मिलनी दुर्लभ है। आप स्वभाव के अत्यन्त नम्र तथा मधुर-भाषी थे। आपने भारतवर्ष को ही नहीं, बल्कि विश्व भर को सत्य एवं अहिंसा का अमर सन्देश दिया। यही कारण है जो आप विश्वबन्धु महात्मा गाँधी के नाम से सम्बोधित किये जाते हैं।

गाँधीजी के चरित्र की सबसे प्रमुख विशेषता थी असाधारण मनोबल का होना। प्राण की कीमत पर भी वे सत्य से विचलित नहीं होते थे। इसी गुण ने उन्हें विश्व में विख्यात कर दिया।

अनेक लोगों की धारणा है कि गाँधी की अहिंसा एक चाल एवं धोखा है। परतन्त्र भारत दुर्बल तथा अस्त्र एवं शास्त्रों से रहित था। ब्रिटिश सत्ता अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित तथा शक्ति सम्पन्न थी। इसी कारण गाँधीजी अहिंसा के मार्ग पर अग्रसर हुए। इस कथन में आंशिक सत्य की गन्ध हो सकती है। लेकिन यह स्वीकार करना पड़ेगा कि गाँधी जी ने जिस अहिंसा व्रत का आजीवन पालन किया उसके समक्ष अस्त्र-शस्त्र तथा बल तुच्छ प्रतीत होता

है। राजनीति में ही नहीं अपितु जीवन के सम्पूर्ण क्षेत्रों में आपने देश का मार्गदर्शन किया।

एक पथभ्रष्ट भारतीय नवयुवक (नाथूराम विनायक गोडसे) की गोलियों से आपकी मृत्यु 30 जनवरी सन् 1958 को हुई और उस दिन सारा संसार आपकी मृत्यु का समाचार सुनकर शोक सागर में डूब गया।

गाँधीजी वास्तव में समूचे विश्व की एक महान् विभूति थे। सत्य, अहिंसा और परस्पर समानता के वे घोर पक्षपाती थे। उनका जीवन सभी को अनुप्रेरित करने वाला एक ऐसा आकर्षण-केन्द्र था जिसमें सभी के लिए अपार प्रेम भरा था। दीन-दुखियों के सच्चे सेवक तथा सामर्थ्यवान् एवं धनवानों के वे सफल मार्गदर्शक थे। उनके जीवन का प्रत्येक क्षण मानव-जाति की सेवा करते हुए ही व्यतीत हुआ। वास्तव में गौतम बुद्ध के बाद जन्म लेने वाले इस महापुरुष का जीवन विश्व के लिए हजारों-लाखों वर्षों तक मार्ग दर्शन का कार्य करता रहेगा।

29

पं० जवाहरलाल नेहरू

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—जन्म और शिक्षा
- राजनीति की ओर उन्मुख
- कांग्रेस में कार्य
- गाँधी के साथ
- स्वतन्त्रता संग्राम
- स्वतन्त्रता प्राप्ति
- प्रधान मन्त्री
- उपसंहार।

1961 में तत्कालीन प्रेसीडेण्ट कैनेडी के शब्दों में नेहरू जी-

"आप विश्व नेता हैं, संसार आपकी नीति का मान, आदर और सत्कार करने के लिए लालायित है।"

पं० जवाहरलाल नेहरू का जन्म 14 नवम्बर, 1889 ई० को इलाहाबाद में काश्मीरी-ब्राह्मणों के एक सम्पन्न परिवार में हुआ था। पं० मोतीलाल नेहरू के वे इकलौते पुत्र थे। उन्होंने बालक नेहरू के लिए घर में एक अंग्रेज संरक्षिका को नियुक्त किया था और बाद में उन्हें शिक्षा के लिए विदेश भेजा। 1905 ई० में वे पढ़ने के लिए हैरो गए। उन्होंने अपने साथी अँग्रेज बालकों को मन्दबुद्धि पाया। इंगलैंड में होने वाले आम चुनाव ने उन्हें किंचित भी आकर्षित नहीं किया। इस समय की एक घटना उल्लेखनीय है। उनके अलावा उनकी कक्षा में एक भी छात्र ऐसा नहीं था जो मन्त्रिमण्डल के समस्त सदस्यों के नाम बता सकता हो। स्कूल में उत्तम कार्य के लिए नेहरूजी को अनेक पुरस्कार मिले। हैरो को अपने विचारों के अनुकूल न पाकर वे कैम्ब्रिज चले गये जहाँ तीन वर्ष तक उन्होंने अध्ययन किया। इसके उपरान्त उन्होंने दो वर्ष तक कानून का अध्ययन किया और 1922 ई० में भारत में लौट आये।

भारत लौटकर नेहरूजी ने उस वर्ष बांकीपुर काँग्रेस अधिवेशन में भाग लिया। अधिवेशन में राजनीतिक उत्साह का अभाव उन्होंने अनुभव किया। इस सम्बन्ध में वे केवल एक व्यक्ति से ही विशेष रूप से प्रभावित हुए। वे थे श्री गोपाल कृष्ण गोखले जिनमें सार्वजनिक मामलों में विशेष लगन एवं उत्साह था।

बैरिस्टर होने पर भी नेहरूजी से यह आशा की जाती थी कि वे अपने पिताजी के पद-चिन्हों पर चलेगे और एक प्रतिभाशाली वकील के रूप में विशेष ख्याति प्राप्त करेंगे, किन्तु उनका रुझान इस ओर नहीं था। कुछ समय तक सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी की राष्ट्र के लिए सेवाओं के समर्पण की अपील ने उन्हें प्रभावित किया, लेकिन उनके उदार विचारों से वे प्रभावित नहीं थे। अतः शीघ्र ही तिलक तथा एनीबेसेंट की होमरूल लीग की ओर वे आकर्षित हुए। श्री मोतीलाल नेहरू यह अनुभव कर रहे थे कि राजनीति में उनका झुकाव उग्रता की ओर बढ़ रहा है।

1916 ई० में लखनऊ काँग्रेस अधिवेशन के समय नेहरूजी ने गाँधीजी के प्रथम बार दर्शन किये। इसी वर्ष कमलाजी के साथ उनका विवाह हुआ था।

नवम्बर 1917 में इन्दिरा का जन्म हुआ जो उनकी इकलौती पुत्री थीं। श्री नेहरू ने यह अनुभव किया कि केवल गाँधीजी ही भारत के सच्चे प्रतिनिधि हैं तथा पद-दलित इस प्राचीन देश की भावना को वही व्यक्त करते हैं। उनके साथ रहकर ही उन्हें कार्य करना चाहिए। महात्मा गाँधी के साथ निकट सम्पर्क का अर्थ स्वतन्त्रता संग्राम में जेल का जीवन बिताना था। 1921 तथा 1934 के बीच वे कई बार लगभग साढ़े पाँच वर्ष के लिए भिन्न-भिन्न अवधियों के लिए जेल गये। श्री नेहरूजी की गाँधीजी के प्रति निष्ठा बढ़ती ही गई किन्तु उन्होंने अपनी अन्तरात्मा को कभी समर्पित नहीं किया। शीघ्र ही अपने प्रतिभाशाली महान् व्यक्तित्व के कारण वे गाँधीजी के उत्तराधिकारी समझे जाने लगे।

1929 ई० में लाहौर काँग्रेस में नेहरूजी प्रथम बार काँग्रेस के सभापति बने तथा पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पारित हुआ। 1931 ई० में करांची काँग्रेस में मूलभूत अधिकार सम्बन्धी प्रस्ताव भी उन्हीं के कारण आया और 1937 ई० में उन्होंने समाजवाद के ध्येय को भी काँग्रेस के सामने रखा। अतः देश की आर्थिक अवस्था और समस्या को काँग्रेस के समक्ष प्रस्तुत करने वाले वही प्रथम महान् पुरुष थे।

द्वितीय महायुद्ध छिड़ जाने पर उन्होंने पूर्ण स्वतन्त्रता की माँग को पुनः दोहराया जिससे इस ऐतिहासिक संकट के अवसर पर भारत भी मित्र राष्ट्रों का पूर्ण सहयोग प्राप्त कर सके। किन्तु अक्टूबर 1940 ई० में उनको सत्याग्रह आन्दोलन के अवसर पर जेल जाना पड़ा। 1941 ई० में वे छोड़ दिये गये लेकिन 1941 ई० के 'भारत छोड़ो' आन्दोलन में फिर जेल गये। इस आन्दोलन में जेल जाने वालों में वे सबसे बाद 1945 ई० में जेल से मुक्त हुए।

15 अगस्त, 1947 ई० को भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई। नेहरू जी भारत के प्रथम प्रधानमन्त्री बने और अन्त तक उस पद पर कार्य करते रहे। भारत के प्रधानमन्त्री के रूप में तथा विश्व के नेताओं में नेहरूजी का सर्वोपरि स्थान रहा। गाँधीजी के उपरान्त वे ही भारत के प्रधान निर्माता थे। उन्होंने लोकतन्त्र में एक नये युग का आरम्भ किया, कल्याणकारी राज्य तथा समाजवादी समाज की नींव डाली, देश की आर्थिक समृद्धि के लिए पंच-

वर्षीय योजनाओं का सूत्रपात तथा धर्म-निरपेक्षता के आदर्श को अग्रसर किया। विभिन्न राजनीतिक आदर्शों के संघर्षों के बीच उन्होंने तटस्थता के आदर्श को प्रस्तुत किया। विश्व-शाँति के लिए जितना प्रयत्न नेहरूजी ने किया उतना किसी अन्य व्यक्ति ने नहीं किया। पूरब और पश्चिम तथा विश्व के लोकतन्त्रों तथा कम्युनिस्ट राज्यों को परस्पर निकट लाने में जो कार्य नेहरूजी ने किया उसके लिए वे सदैव स्मरण किये जायेंगे।

नेहरूजी का देहावसान 17 मई, 1964 ई० को हृदयाघात के कारण हुआ। इस दिन हमारे इतिहास के अनन्त गौरव गरिमा से पण्डित नेहरू युग का पटाक्षेप हो गया, जिसका प्रादुर्भाव गाँधी युग के उपरान्त हुआ था।

30
जयशंकर प्रसाद

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना—जन्म व बाल्यवस्था**
- **रचनाएँ**
- **भाषा**
- **शैली**
- **प्रस्तावना—प्रसादजी का महत्त्व**

प्रसादजी का जन्म माघ शुक्ला दसवीं संवत् 1946 विक्रमी में काशी के एक प्रतिष्ठित वैश्य परिवार में हुआ था। आपके पिता का नाम श्रीदेवीप्रसाद था। इनके बड़े भाई का नाम शम्भूरत्न था। माता-पिता के देहान्त के उपरान्त घर का भार इनके बड़े भाई पर पड़ा। प्रसादजी ने पढ़ना छोड़कर भाई की सहायता करना प्रारम्भ कर दिया, फिर भी विद्याध्यन का क्रम बराबर चलता रहा। कुछ समय बाद उनके भाई की मृत्यु हो गई और सम्पूर्ण गृहस्थी का भार प्रसादजी के कंधों पर आ पड़ा। उस समय प्रसादजी की अवस्था केवल 17 वर्ष की थी। प्रसादजी बड़े उदार प्रकृति के व्यक्ति थे, इस कारण उन्हें बड़े-बड़े आर्थिक संकटों का सामना करना पड़ा।

प्रसादजी ने अनेक ग्रन्थों की रचना की। उन्होंने उपन्यास, नाटक, कहानी, काव्य और निबन्ध आदि साहित्य के सभी अंगों पर अपनी लेखनी चलाई। 'कंकाल' 'तितली' और 'इरावती' इनके उपन्यास हैं। राजश्री, अजातशत्रु, स्कन्दगुप्त तथा चन्द्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी नाटक। छाया, प्रतिध्वनि, आकाशदीप, आँधी और इन्द्रजाल नामक कहानियाँ लिखीं। चित्राधार, कानन कुसुम, करुणालय, महाराणा का महत्त्व, झरना, लहर, कामायनी आदि इनके काव्य ग्रन्थ हैं। इन्होंने 'काव्य और कला' नामक निबन्ध भी लिखा है।

प्रसादजी एक उच्च कोटि के कलाकार थे। उन्होंने नवयुग साहित्य का मिश्रण करते समय भाषा पर बहुत अधिक बल दिया है। प्रायः गद्य में इनकी भाषा खड़ी बोली रही है, किन्तु पद्य खड़ी बोली और शुद्ध ब्रजभाषा का मिश्रण है। यही कारण है कि उनकी भाषा में कहीं भी शिथिलता नहीं आने पाई है। प्रसादजी की प्रारम्भिक रचनाएँ बड़ी सरल हैं किन्तु जैसे-जैसे उनका ज्ञान बढ़ता गया रचनाओं की भाषा भी उत्तरोत्तर कठिन होती गई है। उनका शब्द-चयन बड़ा ही सुन्दर है। एक-एक शब्द नगीने की तरह जड़ा हुआ प्रतीत होता है, उनके वाक्य उनकी विचारधारा के साथ चलते हैं। मुहावरों का प्रयोग नहीं के बराबर हुआ है किन्तु वह पाठक को खटकता नहीं। भाषा में माधुर्य, ओज और प्रवाह सर्वत्र विद्यमान हुआ है। नाटकों में पात्रों के अनुसार भाषा में उतार-चढ़ाव नहीं है। सभी पात्रों की भाषा एक-सी ही है। इसलिए नाटकों में स्वाभाविकता नहीं आने पाई है, लेकिन भाषा में एक अद्भुत गति, तल्लीनता और प्रवाह है जो बरबस पाठक को अपनी ओर आकर्षित कर लेता है।

प्रसादजी की शैली में उनकी स्वाभाविक रुचि, अध्ययन की गम्भीरता तथा व्यक्तित्व का प्रवाह स्पष्ट झलकता है। प्रत्येक भाषा में वह स्वयं बोलते हुए से जान पड़ते हैं। छोटे वाक्य में गूढ़ और गम्भीर भावों और विचारों को भर देना और फिर उसमें संगीत और लय का विधान करना प्रसादजी की शैली की मुख्य विशेषता है उनकी शैली में काव्यात्मक चमत्कार है। उनके नाटकों में सर्वत्र ही ओजपूर्ण शैली के दर्शन होते हैं। काव्य में उनकी शैली सर्वथा नवीन है। अतुकान्त और अप्रचलित छन्दों का प्रयोग करके प्रसादजी ने अपनी शैली में एक अद्भुत चमत्कार दिखाया है जो अन्यत्र दुर्लभ

है। इस प्रकार प्रसादजी की शैली सरल, स्वाभाविक, प्रभावपूर्ण और ओज-मयी है।

प्रसादजी सच्चे साधक और कलाकार थे। साहित्य-साधना उनके जीवन का प्रमुख लक्ष्य था। किसी प्रकार के यश तथा अर्थ की कामना से उन्होंने साहित्य का सृजन नहीं किया। भारतेन्दु के बाद वे ही हिन्दी की सबसे बड़ी विभूति थे। जिन्होंने हिन्दी को नई जीवन चेतना का सर्वतोमुखी प्रतिनिधित्व किया है। जीवन, प्रेम, जन्म, मरण, सुख, दुख, प्रकृति जो निरन्तर और शाश्वत है, वही प्रसाद के काव्य का विषय है। इसलिए वे एक युग के ही नहीं अनेक युग के कवि हैं। उनका साहित्य चिर नवीन है। यह सत्य है कि उनका साहित्य जन-साधारण के लिये इतना लाभकारी नहीं जितना कि तुलसी का। वास्तव में, तुलसीदास की भाँति वे लोकधर्म की प्रतिष्ठा नहीं करते, फिर भी उनका महत्त्व अक्षुण्ण है। जब तक मानव हृदय में राग, विराग और द्वन्द्व है तब तक प्रसाद का साहित्य अमर रहेगा। वे हमारे आधुनिक हिन्दी साहित्य के सर्वोच्च साहित्यकार हैं।

31
महाकवि सूरदास

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—सूरदास का आविर्भाव
- जन्म तथा बाल्यावस्था
- रचनाएँ
- भाषा
- शैली
- वात्सल्य तथा शृंगार-वर्णन
- उपसंहार।

"उनका काव्य एक महान् सागर है, जिसमें अनेक प्रकार के रत्न छिपे मरजीवा बनकर कोई चाहे तो उन्हें निकालने का प्रयत्न कर सकता है।"

डॉ० हरवंशलाल शर्मा

भगवान् कृष्ण के अनन्य भक्त सूरदास का जन्म ऐसे युग में हुआ था जब कि देश की सामाजिक तथा राजनीतिक परिस्थितियाँ बहुत ही विकृत अवस्था को प्राप्त हो चुकी थीं, हिन्दू-जन-मानस खिन्न और निराश था। जनता के हृदय से दुःख की पुकार निकल रही थी। कवि सूरदास ने भगवत प्रेम की धारा को काव्य के रूप में मुखरित किया। उन्होंने नेत्रहीन होते हुए भी बालक कृष्ण की लीलाओं का ऐसा जीता-जागता चरित्र चित्रण प्रस्तुत किया जिससे जनता शीघ्र ही सच्ची शान्ति और सुख का अनुभव करने लगी।

महात्मा सूरदास का जन्म सं० 1540 में देहली-मथुरा रोड पर अवस्थित सीही नामक ग्राम में हुआ था। इनके जीवन के सम्बन्ध में विद्वानों में बहुत मतभेद है। कुछ विद्वान् 'चौरासी वैष्णवों की वार्ता' के अनुसार उन्हें सारस्वत ब्राह्मण मानते थे। ये पहले गऊघाट पर रहा करते थे। यहीं महाप्रभु बल्लभा-चार्यजी से इनकी भेंट हुई। सूर ने उन्हें विनय के पद सुनाये। तब आचार्यजी ने सूर को अपने मत में दीक्षित कर 'पुरुषोत्तम सहस्रनाम' सुनाया। कुछ विद्वान् 'साहित्य-लहरी' पुस्तक में आए हुए वंश-परिचय के आधार पर उन्हें चन्दवरदाई के वंशज ब्रह्मभट्ट जाति के मानते हैं और इनके पिता का नाम बाबा रामदास बतलाते हैं। कुछ विद्वानों का मत है कि सूरदासजी का विवाह भी हुआ था, किन्तु इनकी पत्नी एवं सन्तान की मृत्यु इनके जीवन काल में ही हो गई थी, सूर स्वभाव से ही विरक्त थे।

सूरदासजी के विषय में बहुत-सी किम्वदतियाँ प्रचलित हैं। कुछ लोग सूर को जन्मांध मानते हैं, किन्तु उनके काव्य का अध्ययन करने के उपरान्त उप-युक्त तथ्य में संदेह लगता है। कोई भी अन्धा व्यक्ति प्रकृति के नानारूपों का इतना स्वाभाविक, सजीव और विशद् वर्णन नहीं कर सकता, इसलिए कुछ विद्वान सूर को जन्मांध नहीं मानते। उनके अनुसार सूर के नेत्रों की ज्योति बाद में जाती रही थी।

सूरदासजी के गुरु महाप्रभु बल्लभाचार्यजी के पुत्र गोस्वामी विट्ठलनाथ ने अष्टछाप की स्थापना की जिसमें आठ बड़े-बड़े महात्माओं के नाम थे। सूरदासजी इन सबसे अग्रगण्य थे। इनके भक्तिपूर्ण पदों की प्रसिद्धि चारों ओर फैली। कुछ विद्वान् सूरदास जी को उद्धव का साक्षात् अवतार मानते हैं।

नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी की खोज के अनुसार सूरदास के 16 ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं, जिनमें सूरसागर, सूरसारावली और साहित्य-लहरी अधिक महत्त्व-पूर्ण हैं। तुलसी के 'रामचरितमानस' की भाँति सूरदास जी का 'सूरसागर' सवा लाख पदों का संग्रह है, किन्तु आज उनमें से दस हजार पदों से अधिक उपलब्ध नहीं है। सूरसागर का एक-एक पद भगवान् कृष्ण के प्रेम से ओत-प्रोत है। सूरसारावली और साहित्य-लहरी दोनों में कूट पद लिखे गये हैं।

सूरदासजी की भाषा शुद्ध ग्रामीण ब्रजभाषा है, किन्तु वह साहित्यिकता की ओर झुकी हुई है। यह संस्कृत भाषा के प्रभाव से सर्वथा मुक्त है। प्रचलित भाषाओं के शब्द भी प्रयोग किये हैं किन्तु बहुत कम। भाषा में यत्र-तत्र अरबी, फारसी और संस्कृत के शब्द भी मिल जाते हैं। सूर की भाषा में प्रसाद ओज और माधुर्य तीन गुण पाये जाते हैं। कहीं-कहीं मुहावरों के प्रयोग के कारण भाषा में और भी अधिक सरसता और प्रवाह आ गया है। शब्दों की तोड़-मरोड़ भी बहुत अधिक मिलती है। सूरदास जी की भाषा में सजीवता पूर्ण रूपेण से पाई जाती है। अलंकारों को लाने का प्रयत्न नहीं किया गया है, उनका निर्वाह स्वाभाविक रूप से हुआ है। उपमा और रूपक विशेष रूप से प्रयुक्त किये गये हैं। ग्रामीण ब्रजभाषा को शुद्ध साहित्यिक रूप में ढाल कर इतना सौन्दर्य प्रदान करने का श्रेय अकेले सूरदास की प्रतिभा को ही है। फलतः सूर-साहित्य जन-साधारण और साहित्यकार दोनों को समान रूप से प्रिय है।

सूर ने अपने काव्य की रचना जयदेव और विद्यापति के गीतिकाव्य को आधार मानकर ही की है। सूर-साहित्य गेय-साहित्य है, वे स्वयं उच्चकोटि के गायक थे इनके पद आज भी बड़ी रुचि के साथ गाये जाते हैं और भक्त लोगों में अपना एक विशेष महत्त्व रखते हैं। सूरदास-स्वयं अपने पद गाते-गाते तन्मय हो जाते थे। सूर का प्रत्येक पद अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखता है। उन्होंने अपनी कविता पदों में ही की है। इसे हम मुक्तक काव्य कह सकते हैं, फिर कुछ पदों को क्रम से रखने पर एक छोटा-कथानक बन सकता है।

सूर ने प्रधानतः वात्सल्य और शृङ्गार रस को ही अपने काव्य में विशेष स्थान दिया है। इन क्षेत्रों में वे अद्वितीय हैं। सूर की पैनी दृष्टि बाल्यकाल तथा यौवन काल का कोना-कोना झाँक आई है। कृष्ण के बाल्य-जीवन से सम्बन्धित कोई बात उन्होंने नहीं छोड़ी। कृष्ण का जन्म, नामकरण, वर्षगाँठ, पालने में झूलना, अँगूठा चूसना, लोरियों के साथ सोना, हँसना, मचलना, बहाने बनाना आदि शैशव काल की अनेक क्रीड़ाओं का अत्यन्त सूक्ष्म और विशद् वर्णन सूर ने किया है। माता यशोदा के हृदय में बालक कृष्ण द्वारा उत्पन्न उत्सुकता, उत्साह, क्षोभ, चिन्ता और मोह आदि समस्त अन्तरंग और बहिरंग वृत्तियों का प्रकाशन सूर ने अद्भुत रीति से किया है। बाल-चेष्टा के स्वाभाविक मनोहर चित्रों का इतना बड़ा भण्डार और कहीं नहीं है जितना सूरसागर में है। दो-चार चित्र देखिए—

(क) "शोभित कर नवनीत लिए।
घुटुरन चलत, रेनु तन मण्डित, मुख दधि-लेप किये।"

(ख) "सिखवत चलत, जसोदा मैया।
अरबराय करि पानि गहावत, डगमगाय धरनी धरै पैया।"

(ग) "मैया मोहि दाऊ बहुत खिझायौ।
मोसों कहत मोल को लीन्हौं तोहि जसुमति कब जायौ।

(घ) 'मैया मैं नाहीं माखन खायौ।
जानि परत इन ग्वालन मेरे मुख लपटायौ।"

(ङ) "मैया कबहि बढ़ेगी चोटी।
किती बार मोहि दूध पियत भई यह अजहूँ है छोटी।"

शृंगार के दो पक्ष होते हैं, एक वियोग पक्ष और दूसरा संयोग पक्ष। सूर ने दोनों ही पक्षों पर लिखा है। शृंगार का अत्यन्त विस्तृत वर्णन करके सूर ने अपनी कीर्ति अमर कर दी है। राधा और गोपिकाओं के प्रेम द्वारा जो पावन-सरिता प्रवाहित की गई उससे महाकाव्य में एक विशेष सरलता और रोचकता आ गई है। सूर का शृंगार-वर्णन अन्य सब कवियों से अनौखा है। शृंगार का रस-राजस्व यदि किसी ने पूर्ण रूप से दिखाया है तो वे सूर ही हैं। उनके शृंगार वर्णन में अपनी स्वयं की मनोहरता और स्वाभाविकता है।

सूर के प्रेम की उत्पत्ति में रूप और साहचर्य दोनों का सम्मिश्रण है। साथ-साथ रहने वाले दो प्राणियों में स्वभावतः प्रेम हो ही जाता है। कृष्ण और गोपियों के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि बाल-क्रीड़ा के सखा-सखी यौवन-क्रीड़ा के सखा-सखी हो जाते हैं। एक तो कृष्ण बाल्यावस्था से ही गोपियों के बीच में रहे, दूसरे सुन्दरता में भी अद्वितीय थे। अतः कृष्ण के प्रति गोपियों का प्रेम बहुत ही स्वाभाविक है। कृष्ण भी प्रथम भेंट में राधा के रूप के प्रति ही आकर्षित होते हैं—

"खेलति हरि निकसे ब्रज-खोरी।
सूर स्याम देखत ही रीझै, नैन-नैन मिली परी ठगोरी।"

कृष्ण राधा के रूप पर मोहित होकर—

"बूझत स्याम, कौन तू गोरी।
कहाँ रहति, काकी तू बेटी, देखी नाहिं कबहुँ ब्रज खोरी।"

राधा और कृष्ण का मेल हो गया, उनमें घनिष्ठता बढ़ती ही गई। राधा का नित्य-प्रति कृष्ण के पास आना, यशोदा को कम रुचता था। तब उन्होंने एक दिन कह ही डाला—

'बार-बार तू ह्याँ जनि आवै।"

किन्तु राधा भी शान्त न रहकर तुरन्त ही बोल उठी—

"मैं कहा करों सुतहिं नहिं बरजत, घर तें मोहि बुलावै॥
मौसों कहत तोहि बिनु देखें, रहत न मेरो प्रान॥
छोह लगत मोको सुनि बानी, महरि तिहारी आन॥"

प्रेम का कितना शुद्ध और भोला स्वरूप है। वास्तव में सूर का समस्त श्रृंगार मानव प्रकृति की ऐसी ही मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर खड़ा है। राधा के साथ-साथ गोपिकाओं से भी कृष्ण की प्रणय-लीला चलती है। रास, कुंज-लीला, दान-लीला, पनघट-लीला, हिंडोला, होली, बसन्त आदि संयोग चित्रण के अनेक प्रसंगों द्वारा सूर ने गोपी-कृष्ण की संयोग-क्रीड़ाओं का विस्तृत वर्णन किया है। सूर का सयोग वर्णन एक क्षणिक घटना नहीं है, वह प्रेम संगीतमय जीवन की एक गहरी और मन्थर गति से प्रवाहित धारा है। राधा-कृष्ण के प्रेम-रहस्य के भिन्न-भिन्न चित्र सामने आते हैं। गायों के चराते हुए दुहते समय के एक दो चित्र देखिए—

(क) "करि ल्यौ न्यारी, हरि, आपनि गैयाँ।
नहिं न बसात लाल कछु तुम सों, सबै ग्वाल एक ठैयां।
अति अधिकार जनावत यातें हैं कछु अधिक तुम्हारे गैयाँ।"

(ख) "धेनु दुहति अति ही रति बाढ़ी।
एक धार दोहनि पहुँचावत, एक धार जहँ प्यारी ठाढ़ी।
मोहन कर तें धार चलति पय मोहनि मुख अति ही छावे बाढ़ी॥"

(ग) "तुम पै कौन दुहावै गैया ?
इत चितवत, उत धार चलावत, एहि सिखयो है मैया।"

इस प्रकार प्रेम को अधिक तीव्र बनाने के लिए सूर ने अनेक क्रीड़ा विधान लाकर संयोजित किये हैं।

सूर ने संयोग की भाँति वियोग का भी विस्तृत और व्यापक चरित्र-चित्रण किया है। सूर का वियोग-वर्णन वर्णन के लिए है, परिस्थिति वैसी नहीं है। सीता के वियोग में परिस्थिति की गम्भीरता है। गोपियों के वे कृष्ण थोड़ी दूर एक नगर में राजसुख भोग रहे हैं, या किसी कुञ्ज में छिप जाते हैं। बस ! गोपियाँ मूच्छित हो जाती हैं। परिस्थिति के विचार से सूर का विरह-वर्णन कुछ असंगत-सा प्रतीत होता है फिर भी वह बड़ा करुण, मर्मस्पर्शी और हृदय को बेधने वाला है। वियोगी सूर के गीतों के विरह की दारुण व्यथा से दग्ध अन्तरात्मा की विकल हूक, टीस, करुणा और दीनता मूर्तिमान हो गई। कृष्ण के मथुरा चले जाने के उपरान्त सम्पूर्ण वातावरण वियोगमय हो जाता है। गोपियाँ बार-बार यही कहती हैं कि श्रीकृष्ण के बिछुड़ते समय हमारा हृदय फट क्यों नहीं गया। संयोग में जो वस्तुएँ आनन्द देने वाली होती हैं, वही वियोग में दुःखदायी हो जाती है। वृन्दावन के हरे-भरे कुञ्ज, यमुना के मनोहर तट, मधुवन के पुष्प और लतायें गोपियों को कृष्ण की याद दिलाते हैं। रात्रि सर्पिणी के समान प्रतीत होती है।

'पिया बिन साँपिन कारी राति।'

सायंकाल हो जाने पर कृष्ण के वन से घर लौटने की याद आ जाती है।

'एहि बिरियाँ वन ते ब्रज आवते।'

राधा भगवान् कृष्ण के एक बार तो दर्शन करना चाहती ही है, क्योंकि न जाने कब जीवन समाप्त हो जाय।

'बारक जाइयौ मिलि माधौ ।
को जाणे कब छूट जाइयौ स्वांस रहे जिस साधो ॥'

कृष्ण की ओर से उद्धव गोपियों को निर्गुण भक्ति का उपदेश देने के लिए ब्रज आते हैं । इस अवसर पर गोपियों की गम्भीरता में हास्य और व्यंग्य का पुट अधिक हो जाता है । वे उद्धव को मूर्ख बनाने का प्रयास करती हैं ।

(क) 'आयो घोष बड़ो व्यापारी ।
लादि खेप यह ज्ञान जोग की ब्रज में आय उतारी ।
फाटक देकर हाटक माँगत भोरे निपट सुधारी ॥'

(ख) 'ऊधौ ! जाहु तुम्हें हम जाने ।
श्याम तुम्हें ह्याँ नाहि पठायो, तुम हो अनत भुलाने ॥'

(ग) 'ऊधो ! तुम अपनो जतन करौ ।
हित की कहत कुहित की लागत कत बेकाज ररौ ॥'

(घ) ऊधो ! भली करी तुम आए ।
ये बातें कहि-कहि या दुःख में ब्रज के लोग हँसाये ।'

कृष्ण के प्रेम में मतवाली गोपिकाओं के प्रेमरस से सने मधुर व्यंग्य वचनों और अकाट्य तर्कों के सम्मुख उद्धव ठगे से रह जाते हैं । इस प्रकार उद्धव के निर्गुण ब्रह्म की हार होती है और गोपियों का सगुण के प्रति प्रेम विजयी होता है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सूर मानव-हृदय की कोमल, सरल और सरस भावनाओं के सर्वोत्कृष्ट कवि हैं । उनका काव्य स्वयं में ही पूर्ण है । वह अपने काव्य-क्षेत्र के एकमात्र सम्राट हैं । उनके समकक्ष कोई दूसरा कवि दृष्टिगोचर नहीं होता । विशुद्ध काव्य की दृष्टि से सूर हिन्दी साहित्य के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं । निम्नलिखित पंक्तियों का सृजन उनका महत्त्व प्रकट करने के लिए ही किया गया है—

(क) किधौं सूर को सर लग्यौ किधौं सूर को तीर ।
किधौं सूर को पद लग्यौ, बेधत सकल शरीर ॥'

(ख) 'सूर-सूर तुलसी शशी उडुगन केशवदास ।
अब के कवि खद्योत सम, जहँ-तहँ करत प्रकाश ॥

32

गोस्वामी तुलसीदास

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—गोस्वामी जी के आविर्भाव के समय सामाजिक दशा
- बाल्यावस्था
- रचनाएँ
- भाषा
- शैली
- अलंकार योजना
- उपसंहार

विक्रम की सत्रहवीं शताब्दी में सम्पूर्ण देश में मुसलमानी शासकों का एक-क्षत्र राज्य था। हिन्दू जनता की अवस्था बड़ी ही दयनीय तथा शोचनीय हो गई थी उस पर मुसलमानी शासकों द्वारा निरन्तर अत्याचार किये जा रहे थे। हिन्दू जनता अपने भविष्य के प्रति पूर्णतः उदासीन बन चुकी थी। यथार्थ में इन कठिन परिस्थितियों में उसका जीवन भार स्वरूप हो गया था। किसी ओर से भी उसे आशा की किरण दिखाई नहीं देती थी।

ऐसे समय में गोस्वामी तुलसीदास का आविर्भाव हुआ। उन्होंने मर्यादा पुरुषोत्तम राम के सगुण तथा लोकरक्षक रूप को हिन्दू जनता के सम्मुख रखा और इस तरह समाज को कल्याणकारी मर्यादा के बन्धन में बाँधकर जनता के हृदय में आशा का संचार किया।

गोस्वामी तुलसीदास का जन्म संवत् 1589 में बाँदा जिले के राजापुर गाँव में हुआ था। ये सरयूपारी ब्राह्मण थे। इनके पिता का नाम आत्माराम दुबे और माता का नाम हुलसी था। अभुक्तमूल नक्षत्र में पैदा होने के कारण माता-पिता ने इन्हें त्याग दिया था। बाल्यावस्था इनकी दरिद्रता में बीती। गुरु नरहरिदास से राम की कथा सुनी और नाना वेद-शास्त्र तथा पुराणों का गम्भीर अध्ययन करके गृहस्थ जीवन में प्रवेश किया। इन्हें अपनी पत्नी

रत्नावली से बहुत प्रेम था—एक बार इनकी पत्नी बिना इनसे पूछे अपने नैहर चली गई, तुलसीदास भी उसके पीछे-पीछे वहाँ पहुँच गये। इस पर पत्नी ने क्रोध में आकर इनको अपमानित किया और कहा—

'अस्थि चर्म मय देह मम, तामें ऐसी प्रीति।
होति जु तब भगवान में, होति न तो भवभीति ।।'

यहीं से उनमें वैराग्य की भावना उदय हुई। वास्तव में, 'रामचरितमानस' जैसे महान् ग्रन्थ के निर्माण की मूल प्रेरणा उन्हें इन्हीं पंक्तियों से मिली।

इस प्रकार गहस्थी से विरक्त होकर गोस्वामी जी ने पच्चीस वर्ष तक अनेक तीर्थ-स्थानों का भ्रमण किया। चित्रकूट, काशी, प्रयाग, अयोध्या और मथुरा-वृन्दावन आदि में रहकर उन्होंने अपने विविध ग्रन्थों का निर्माण किया। वैसे तो इन्होंने अनेक रचनाएँ कीं, किन्तु रामचरितमानस, विनय-पत्रिका, कवितावली, दोहावली, गीतावली, बरवै रामायण, पार्वती-मंगल, राम सतसई, जानकी-मंगल, वैराग्य-संदीपनी, रामाज्ञा प्रश्न और रामलला नहछू आदि बारह ग्रन्थ प्रामाणिक माने जाते हैं। गोस्वामीजी का गौरव और महत्त्व रामचरितमानस पर अधिकांशतः आधारित है। इस ग्रन्थ में हिन्दू धर्म का सच्चा स्वरूप व्यक्त किया गया है, यह अलौकिक पुरुष की अलौकिक कृति है। जीवन के सरलतम और जटिलतम सभी प्रश्नों का उत्तर इस ग्रन्थ में मिलता है। इस कृति में गुरु-शिष्य, भाई-भाई, पिता-पुत्र और माता-पुत्र के आदर्श पारिवारिक सम्बन्धों को उपस्थित किया गया है। इसके अतिरिक्त राजा-प्रजा क्षत्रिय-ब्राह्मण, द्विज-शूद्र और सभ्य-असभ्य के पारस्परिक व्यवहारों की सुन्दर व्याख्या हुई है। हिन्दू-गृहस्थ जीवन की समस्त व्यक्तिगत सामाजिक तथा पारिवारिक समस्याओं का मर्यादापूर्ण समाधान इस ग्रन्थ-रत्न की सबसे महान् विशेषता है। आज 'रामचरितमानस' समस्त उत्तरी भारत की जनता का कंठहार बन गया है।

'बिनय-पत्रिका' भक्ति का सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ है। भक्ति-रस का पूर्ण परिपाक जैसा 'विनय-पत्रिका' में देखा गया है वैसा अन्यत्र नहीं। यह तुलसी के आध्यात्मिक विचारों का भण्डार है। 'गीतावली' में राम के कोमल जीवन का वर्णन है, किन्तु 'कवितावली' उनके वीरत्व और शौर्य से आप्लावित है। इसमें लंकादहन और युद्ध का बड़ा ही सजीव तथा ओजपूर्ण वर्णन है। 'दोहावली' में

चातक की अनन्यता पराकाष्ठा को पहुँच गई है। भक्त और भगवान् के सम्बन्ध की जैसी विशद् व्याख्या दोहावली में है वैसी उनके अन्य किसी ग्रन्थ में नहीं।

तुलसीदास जी जिस समय साहित्य क्षेत्र में अवतरित हुये, उस समय तक अवधी काव्य-रचना की भाषा का रूप धारण कर चुकी थी। जायसी आदि सूफी कवियों ने अपने काव्य का माध्यम अवधी भाषा को ही बनाया था। परन्तु वह अवधी का ग्रामीण रूप ही था। गोस्वामी संस्कृतज्ञ और शास्त्रज्ञ थे, अतः उन्होंने कुछ स्थानों पर ठेठ अवधी का प्रयोग करते हुए भी अधिकाँश स्थलों में संस्कृत मिश्रित अवधी का व्यवहार किया है। उनके 'रामचरित-मानस' में अवधी के साहित्यिक तथा परिमार्जित रूप के दर्शन मिलते हैं। संस्कृत की कोमल-कान्त पदावली का समावेश करके उन्होंने अवधी में अपूर्व माधुर्य गुण का संचार किया है। ब्रजभाषा में भी अत्यन्त सुन्दर रूप से 'सूर सागर' की रचना हो चुकी थी। तुलदासजी ने 'विनय-पत्रिका', 'कवितावली' और 'गीतावली' की रचना ब्रजभाषा में करके अपनी प्रतिभा और काव्य-शक्ति का पूर्ण परिचय दिया है। उन्होंने ब्रजभाषा में भी अपनी संस्कृत पदावली का सम्मिश्रण किया है। 'कवितावली' की ब्रजभाषा बहुत ही परिष्कृत और लालित्यपूर्ण है। भाषा सर्वत्र भावानुकूल है। भावों के अनुसार उनका रूप कर्कश और मधुर हो जाता है। तुलसी की भाषा इस ढर्रे की है। इस प्रकार गोस्वामी जी का अवधी और ब्रजभाषा दोनों पर ही समान अधिकार है। दोनों में संस्कृत का समावेश करके एक नवीन चमत्कार उत्पन्न करने की सामर्थ्य अकेले तुलसी में है।

तुलसीदासजी ने अपने ग्रन्थों की रचना अनेक प्रकार की शैलियों में की है और उनमें विविध छन्दों का प्रयोग किया है। 'रामचरितमानस' में उन्होंने जायसी की तरह दोहे-चौपाइयों का क्रम रखा है। साथ ही हरिगीतिका और सोरठा आदि छन्दों का भी प्रयोग किया है। 'कवितावली' में सवैया, कवित्त और छप्पय आदि छन्दों का प्रयोग है, जो भाटों की परम्परा के अनुसार है। 'विनयपत्रिका' और 'गीतावली' में महात्माओं के गीतों की प्रणाली को स्वीकार किया गया है। 'दोहावली' और 'बरवै रामायण' में छोटे छन्दों में उपदेश समाहित हैं।

गोस्वामी जी ने अपनी रचनाओं में भावों का प्रकाशन इस कुशलता से किया है कि उनमें अलंकारों का समावेश स्वाभाविक रूप से हुआ है। केशव की तरह अलंकारों का प्रयोग उन्होंने चमत्कार-प्रदर्शन अथवा अपने पांडित्य के प्रदर्शन निमित्त नहीं किया है। अर्थालंकारों के साथ-साथ शब्दालंकारों का भी सुन्दर प्रयोग किया है। इनकी कविता में उपमा, उत्प्रेक्षा, उल्लेख, रूपक, अतिशयोक्ति, दृष्टान्त, असंगत आदि अलंकारों का प्रयोग खूब हुआ है। यमक, श्लेष आदि अलंकार भी स्थान-स्थान पर विद्यमान हैं। उपमाएँ तो बेजोड़ हैं।

महाकवि तुलसीदास का भारतीय जनता पर व्यापक प्रभाव है। इसका कारण उनका उदार और प्रतिभाशाली साहित्यिक व्यक्तित्व है। उनकी अनुभूतियाँ मानव-मात्र की अनुभूतियाँ हैं। उन्होंने अपने विचारों की सत्यता, गम्भीर अध्ययन और सारग्राहिणी प्रवृत्ति से सबको मोहित कर लिया है। भिन्न-भिन्न पुराणों और शास्त्रों से उन्होंने भारतीय संस्कृति के आधारभूत, सिद्धान्तों और तत्वों को एकत्रित करके समयानुसार अपनी रचनाओं में उनको व्यक्त किया है। इसे उनकी दूरदर्शिता और सारग्राहिणी प्रवृत्ति का ही प्रतिफल कह सकते हैं। तुलसीदासजी ने जो कुछ लिखा है वह 'स्वान्तः सुखाय' ही लिखा है। उपदेश देने के लिए, उन्होंने अपने काव्य का सृजन नहीं किया। इसी कारण उनका लक्ष्य सौन्दर्य की पराकाष्ठा पर पहुँच गया है। सुन्दरता का आदर्श यही है कि वह प्रतिक्षण नवीनता को धारण करे। यही कारण है जो तुलसीदासजी के काव्य में प्रत्येक बार हमें नवीनता का आभास होता है। तुलसी ने मानव-प्रकृति की अन्तर्दशाओं का अत्यन्त सूक्ष्म निरीक्षण किया है। इसी कारण उन्होंने चरित्र-चित्रण में अपूर्व सफलता प्राप्त की है।

तुलसीदास की प्रतिभा सर्वतोमुखी थी। वह भक्त, दार्शनिक, पंडित कवि, नीतिज्ञ, समाज-सुधारक एवं विचारक आदि अनेक रूपों में प्रकट हुए हैं। उन्होंने अपने समय के सभी विरोधी तत्त्वों का परिहार कर समन्वय की भावना को जनता के समक्ष रखा और एक सच्चे लोक धर्म की स्थापना की। वे समन्वयवादी कवि थे। उस समय समाज नैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और आर्थिक सभी दृष्टिकोणों से पतन की ओर जा रहा था। उसके सामने कोई आदर्श नहीं था। उच्च वर्ग अकर्मण्य और विलास-प्रिय था। निम्न वर्ग

के लोगों का अपमान किया जाता था, वे अशिक्षित तथा निर्धन थे। ज्ञानियों के साथ समाज का कोई सम्पर्क नहीं था। संन्यासी होना साधारण-सी बात थी। फलतः सम्पूर्ण देश नाना प्रकार के सम्प्रदायों से भर गया था। नाथपन्थी योगियों के नेतृत्त्व में ज्ञान, भक्ति और कर्म का रूप अत्यन्त विकृत हो चुका था। राजनैतिक परिस्थिति भी भयंकर थी। हिन्दू जनता त्राहि-त्राहि कर रही थी। ऐसे अवसर पर गोस्वामीजी ने उस भ्रष्ट और पंगु समाज का उचित पथ-प्रदर्शन किया। शक्ति, शील और सौन्दर्य की साक्षात् मूर्ति राम के जीवन-चरित्र को लोक के धरातल पर प्रतिष्ठित कर उन्होंने जनता में लोक-धर्म का महामन्त्र फूँका। सरस्वती के वरद् पुत्र ने अपनी वाणी का प्रयोग केवल जनकल्याण के लिए ही किया। तुलसीदास ने अपनी रचनाओं में वैराग्य और ग्राहंस्थ्य का, भक्ति और ज्ञान का, निर्गुण और सगुण का, आदर्श और व्यवहार का अपूर्व समन्वय उपस्थित किया है। उनका समस्त काव्य समन्वय की विराट चेष्टा है।

33

एक महान् गद्य लेखक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

विचार-तालिका

- ० प्रस्तावना—जन्म और बाल्यावस्था
- ० साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण
- ० आलोचना और निबन्ध
- ० भाषा
- ० शैली
- ० उपसंहार

हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ समालोचक पं० रामचन्द्र शुक्ल का जन्म बस्ती जिले के अगोना नाम ग्राम में संवत् 1961 विक्रमी में हुआ था। इनके पिता श्री

चन्द्रवती शुक्ल सुपरवाइजर कानूनगो थे। शुक्लजी ने आठवीं कक्षा तक उर्दू और फारसी पढ़ी तथा घर पर संस्कृत की भी शिक्षा प्राप्त की। एम० ए० पास करके उन्होंने नौकरी कर ली; किन्तु बाद में स्वयं ही नौकरी छोड़ दी। उनकी विद्वता देखकर नागरी प्रचारिणी सभा ने उन्हें अपने यहाँ बुला लिया। यहाँ उन्होंने कई ग्रन्थों का सम्पादन किया। इसी समय इन्होंने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' भी लिखा, जो हिन्दी साहित्य की सर्वोत्कृष्ट रचना है। सूर, तुलसी और जायसी पर आलोचनाएँ लिखीं। 'चिन्तामणि' में उन्होने अपने निबन्धों का संग्रह किया। इसके अतिरिक्त उन्होंने अंग्रेजी की कई पुस्तकों का अनुवाद किया।

शुक्लजी का 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' अपना एक विशेष महत्त्व रखता है। आदिकाल से लेकर आज तक हिन्दी भाषा और साहित्य के ऐसे क्रमबद्ध इतिहास का निर्माण अभी तक नहीं हुआ है। यह सत्य है कि हिन्दी साहित्य शुक्लजी से आज बहुत आगे बढ़ गया है। प्रतिदिन नए अनुसंधानों द्वारा उसे प्रकाश में लाया जा रहा है, किन्तु आज शुक्लजी का इतिहास हिन्दी साहित्य के अध्ययन के लिए एकमात्र प्रमाणिक ग्रन्थ माना जाता है। शुक्लजी द्वारा किया गया हिन्दी साहित्य के इतिहास का काल-विभाजन आज भी वैसा ही मान्य है। हिन्दी के समस्त विद्वान इस काल-विभाजन को निःस्संकोच स्वीकार करते हैं। हिन्दी साहित्य के समस्त परवर्ती साहित्यकार शुक्लजी के ही इतिहास को आधार मानकर चले हैं।

शुक्लजी एक महान् आलोचक और निबन्धकार थे। शुक्लजी से पूर्व हिन्दी का आलोचना-साहित्य, शिशु-अवस्था में ही था। शुक्लजी ने साहित्य के क्षेत्र में प्रवेश करते ही आलोचना क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन किये। आलोचना के मापदण्ड ही बदल दिये। उन्होंने अपनी गम्भीर मौलिक समीक्षाओं द्वारा एक नये युग का सूत्रपात किया। भारतीय आलोचना का समन्वय करके एक नया मार्ग निश्चित किया। उनके द्वारा लोक आदर्श को प्रकट करने वाला सर्वोत्कृष्ट साहित्य ही प्रकाश में आया। उन्होंने तुलसी को सर्वश्रेष्ठ काव्य का अधिकारी कहा है; क्योंकि उनकी कविता में लोक-हृदय की अधिक से अधिक पहिचान है। पाठक द्वारा कवि की रचना को समझने के लिए शुक्ल जी की आलोचना एक सुन्दर साधन है।

'चिन्तामणि' में मनोविकारों तथा साहित्यिक विषयों पर लिखे गये शुक्लजी के निबन्धों का संग्रह है। इन निबन्धों में विचारों की सुगठित योजना और शैली का अपूर्व चमत्कार देखने योग्य है। उन्होंने तर्कमय चिन्तन के साथ हिन्दी में पहली बार निबन्धों का सृजन किया है। उन्होंने मनोविकार की उत्पत्ति, उनके लक्षण और विकास का अध्ययन बड़े मनोवैज्ञानिक ढंग से व्यावहारिक जीवन के मध्य में किया है। फिर भी उनके निबन्धों का इतना मनोवैज्ञानिक मूल्य नहीं जितना कि साहित्यिक मूल्य है।

शुक्लजी के सभी निबन्धों में उत्कृष्ट निबन्धों की सभी विशेषतायें पाई जाती हैं। उनमें विचारों के सुगठित और क्रमबद्ध प्रकाशन के साथ-साथ व्यक्तिवाद की प्रधानता स्पष्ट झलकती है इसलिए उनके निबन्ध विचारात्मक होने के साथ-साथ वैयक्तिक भी हैं। विषय और व्यक्तित्व की प्रधानता उनमें स्पष्ट झलकती है। विचारों और भावों का आधिक्य होते हुए भी किसी स्थान पर असन्तुलन नहीं हो पाया है। उन्होंने स्वयं लिखा है—"शुद्ध विचारात्मक निबन्धों का चरम उत्कर्ष तो वहीं कहा जा सकता है जहाँ एक-एक पैराग्राफ में विचार दबा-दबा कर ठूँसे गये हों और एक-एक वाक्य किसी सम्बद्ध विचार-खण्ड को लिए हों।" शुक्लजी के अपने निबन्ध इसी प्रकार के हैं।

शुक्लजी के निबन्धों में उनके साहित्यिक व्यक्तित्व की झलक भली-भाँति देखी जा सकती है। उनके निबन्धों में मस्तिष्क और हृदय दोनों का सुन्दर समन्वय है। साहित्यिक व्यक्तित्व के साथ-साथ शुक्लजी ने समाज और लोक जीवन में जो अनुभव प्राप्त किये हैं उनका दिग्दर्शन भी बड़े सुन्दर ढंग से अपने निबन्धों में दिखाया है।

शुक्लजी का भाषा के ऊपर असाधारण अधिकार है अतः वे अपने विषय का प्रतिपादन अत्यन्त प्रभावपूर्ण ढंग से कर सके हैं। शैली की प्रौढ़ता और सौष्ठवता का श्रेय उनकी भाषा को ही है। उनकी भाषा इतनी समृद्ध है कि वे सभी भावों को बड़े ही सरल और सहज ढंग से व्यक्त कर सके हैं। प्रभाव डालने की पूरी शक्ति उसमें रहती है। भाव और विषय के अनुकूल होने के कारण उनकी भाषा स्वाभाविक और सजीव है। कहीं-कहीं उसमें क्लिष्टता भी पाई जाती है और कहीं-कहीं अत्यन्त व्यावहारिकता, किन्तु भावों की गम्भीरता के कारण वह सदैव ही स्वाभाविक है। फलतः इनकी भाषा जटिल

होते हुए भी स्पष्ट है। शुक्लजी ने अपनी भाषा में हिन्दी के प्रचलित शब्दों को ही अधिक महत्त्व दिया है। उर्दू और अंग्रेजी के प्रचलित शब्दों का भी प्रयोग किया है। कहावतों और मुहावरों का प्रयोग भी उन्होंने खूब किया है। इसलिए भाषा में अपूर्व मधुरता आ गई है।

शुक्लजी की भाषा सहज और स्वाभाविक है, शब्दों का आडम्बर नहीं दिखाई देता। भाषा में इसके अतिरिक्त शुक्लजी की भाषा भावों के चित्र खड़े करने की क्षमता रखती है; जिसके लिए उन्होंने अलंकारों का भी प्रयोग किया है। इस प्रकार शुक्लजी की भाषा मूर्तिमत्ता, चित्रोपमता तथा अलंकारों के कारण प्रभावोत्पादक और चमत्कारपूर्ण है।

शुक्लजी गम्भीर तथा विनोदपूर्ण व्यक्ति थे। उनकी शैली में हास्य और व्यंग्य पूर्ण रूप से पाये जाते हैं। उनके विनोद की यह विशेषता है कि उसमें गम्भीरता भी बनी रही है। जिसके कारण उनकी वाक्यावली अत्यन्त मार्मिक, आकर्षक और हृदयग्राही हो गई है। "मोटे आदमियो! तुम जरा से दुबले हो जाते; अपने अन्देशे से ही सही, तो जाने कितनी ठठरियों पर माँस चढ़ जाता।" "लोभियो; तुम्हारा अक्रोध, तुम्हारा इन्द्रिय-निग्रह, तुम्हारी मानापमान क्षमता, तुम्हारा तप अनुकरणीय है, तुम्हारी निष्ठुरता, तुम्हारी निर्लज्जता, तुम्हारा अविवेक, तुम्हारा अन्याय विगर्हणीय है। तुम धन्य हो तुम्हें धिक्कार है।"

शुक्लजी ने स्थान-स्थान पर सूत्र रूप में अत्यन्त छोटे-छोटे, किन्तु भावपूर्ण वाक्य कहे हैं—

"वैर क्रोध का आचार या मुरब्बा है।"
"भक्ति धर्म की रसात्मक अनुभूति है।"

मूर्तिमत्ता उनकी शैली का प्रधान गुण है। "इन क्षेत्रों का कोना-कोना वे (शुक्ल जी) झाँक आए, इस कारण उनकी शैली में एक विशेष सौन्दर्य आ गया है।"

आचार्य शुक्लजी की रचनाओं में कुछ ऐसे स्थान भी आ गये हैं जहाँ उन्होंने संश्लिष्ट वर्णन उपस्थित किये हैं। "इसी प्रकार जो केवल मुक्ताभास-हित-बिन्दु-मण्डित मरकतता में शाद्वल-जाल, अत्यन्त विशाल गिर-शिखर से

गिरते हुए जल-प्रपात के गम्भीर गर्त से उठी हुई सीकर नीहारिका के बीच विविध-वर्णन स्फुरण की विशालता, भव्यता और विचित्रता में ही अपने हृदय के लिए कुछ पाते हैं, वे तमाशबीन हैं—सच्चे भावुक या सहृदय नहीं।"

चमत्कार एवं प्रभाव उत्पन्न करने के लिए शुक्लजी ने विरोधाभास का प्रयोग किया है, जैसे, "वात्सल्य और शृङ्गार के क्षेत्र का जितना अधिक उद्घाटन सूर ने अपनी 'बन्द आँखों' से किया उतना किसी अन्य कवि ने नहीं।" यहाँ 'बन्द-आँखों' द्वारा उद्घाटन में विरोधाभास स्पष्ट है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि शुक्लजी ने अपनी-लेखन कला में भिन्न-भिन्न शैलियों को अपनाया है। जहाँ उनकी भाषा और भाव अत्यन्त जटिल हो गये हैं, यहाँ 'सारांश यह है', "तात्पर्य यह है" आदि लिखकर विषय को और अधिक स्पष्ट किया है। उनकी शैली में उनका व्यक्तित्व स्पष्ट रूप से झलकता है, 'Style is the man' की कहावत शुक्ल जी पर पूर्ण रूपेण चरितार्थ होती है।

शुक्लजी हिन्दी गद्य साहित्य के महान् लेखक थे। उन्होंने भारतेन्दुजी के कार्य को और आगे बढ़ाया तथा हिन्दी के निबन्ध-साहित्य की उन्नति सबसे अधिक की। अपने सैद्धान्तिक आधार पर निबन्ध लिखकर अपने समकालीन अन्य लेखकों को भी सन्देश दिया। उनके निबन्ध हिन्दी-साहित्य में ही नहीं वरन् विश्व-साहित्य में भी एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। उनके निबन्ध अंग्रेजी निबन्धकार बेकन के निबन्धों से टक्कर लेने वाले हैं। इसलिए उनका महत्त्व और भी अधिक बढ़ गया है।

34
व्यायाम

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—स्वास्थ्य ही सर्वस्व है
- व्यायाम के विभिन्न प्रकार
- व्यायाम से लाभ
- कुछ व्यायामशील पुरुषों के उदाहरण
- उपसंहार

कवि-कुल गुरु महाकवि कालिदास की यह सूक्ति—'शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्' (अर्थात् निश्चय ही धर्म का पहला साधन शरीर है) स्वास्थ्य की महत्ता प्रकट करती है। मानव-जीवन में स्वास्थ्य ही सर्वस्व है। नीरोगता ही महान-जीवन की सफल कुंजी है। निरोग शरीर से सब सुख सम्भव हैं। कहावत भी है—"पहला सुख निरोगी काया।" बलवान पुरुष में एक अद्‌भुत उत्साह, साहस और धैर्य होता है। निर्भयता की तो वह खान है। इसी आधार पर हमारे पूर्वज कहा करते थे—'बलमुपास्य' अर्थात् बल की पूजा करो। अनेक सुख प्रस्तुत होने पर भी यदि स्वास्थ्य ठीक नहीं है तो सब कुछ व्यर्थ है। रोगी पुरुष के लिए यह लोकोक्ति सत्य ही है "जी सुखी तो जहान सुखी।"

भारतवर्ष में व्यायाम के विभिन्न भेद हैं। भिन्न-भिन्न प्रकार के आसन, दण्ड-बैठक, खुले मैदान में दौड़ना, घूमना, प्राणायाम करना, कुश्ती लड़ना, तैरना, हॉकी, फुटबाल, बालीबाल, क्रिकेट, टेनिस, कबड्डी, बेडमिन्टन खेलना आदि सभी को व्यायाम के अन्तर्गत रख सकते हैं। इनमें से कुछ तो ऐसे व्यायाम हैं जिन के करने के लिए दूसरों की सहायता की कोई आवश्यकता नहीं, जैसे आसन, दण्ड-बैठक, खुले मैदान में दौड़ना, घूमना, प्राणायाम करना, तैरना आदि। लेकिन इनके 'अतिरिक्त कुछ ऐसे व्यायाम हैं जो बिना दूसरों की मदद के नहीं किये जा सकते, जैसे कुश्ती लड़ना, हॉकी, फुटबाल, बालीबाल, रस्साकसी, क्रिकेट, टेनिस आदि खेलना। बहुत से विद्वानों का कथन है कि प्रातः और सायंकाल के घूमने से बढ़कर कोई व्यायाम नहीं है। वैसे तो उपर्युक्त बताये सभी व्यायाम मानव-जीवन में महत्त्वपूर्ण हैं।

मानव-जीवन में व्यायाम का एक विशेष स्थान है। जिस प्रकार रेल के इंजन को चलाने के लिए कोयले और पानी की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार शरीर को क्रियाशील बनाये रखने के लिए व्यायाम रूपी कोयले की आवश्यकता होती है। व्यायाम से सारा शरीर सुडौल, सुगठित एवं दृढ़ बन जाता है। रक्त संचार ठीक तरह तथा तीव्र गति से होता है। हृदय की गति में वेग पैदा हो जाता है तथा पाचक शक्ति भी अपना कार्य ठीक तरह से करती है। पुट्ठे बलिष्ठ हो जाते हैं, सीना चौड़ा हो जाता है, गर्दन मोटी तथा गोल हो जाती है, सभी इन्द्रियाँ ठीक तरह से अपना कार्य करती रहती हैं। हृदय

में उत्साह, आत्म-विश्वास तथा निडरता रहती है। मन भी कभी अप्रसन्न नहीं होता। रोग तो व्यायामशील व्यक्ति के पास फटक ही नहीं सकते।

व्यायाम का सबसे अधिक प्रभाव व्यक्ति के मस्तिष्क पर पड़ता है। व्यायाम द्वारा मस्तिष्क का विकास होता है। अंग्रेजी में कहावत है— 'Healthy mind in a healthy body' अर्थात् स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क होना है। व्यायाम द्वारा शरीर में एक अनुपम स्फूर्ति का स्रोत बहने लगता है। व्यायामशील पुरुष संयमी होता है और संयम चरित्र का भूषण है। व्यायाम द्वारा मनुष्य में धैर्य, सहनशीलता एवं क्षमा आदि गुण स्वाभाविक रूप से ही उत्पन्न हो जाते हैं। व्यायामशील पुरुष छल, कपट एवं झूठ से घृणा करने लगता है। यदि हम आत्मा की रक्षा करना चाहते हैं तो हमें व्यायाम नित्य प्रति करना चाहिए।

जब से मनुष्य ने इस व्यायाम रूपी सुन्दर रत्न को त्याग दिया है तब से वह दुर्बलता की ओर अग्रसर हो रहा है। एक समय था जबकि भारत का शारीरिक बल समस्त भूमण्डल को हिला देता था। परशुराम, हनुमान, भीष्म, अर्जुन, अभिमन्यु आदि वीरों का नाम सुनकर किसके रोंगटे खड़े न होंगे? इन वीरों ने संसार में अपना नाम कैसे अमर किया—व्यायाम और ब्रह्मचर्य से। प्रताप, शिवाजी, पृथ्वीराज आदि वीरों का नाम कौन नहीं जानता? उनके वीरता से ओत-प्रोत चरित्रों को किसने नहीं सुना। स्वामी रामतीर्थ, स्वामी दयानन्द, महात्मा गाँधी आदि को टहलने, तैरने और अन्य प्रकार के व्यायाम करने का कितना भारी चाव था। गामा ने भारत में ही नहीं अपितु विश्व-भर में मल्ल-युद्ध करने में ख्याति प्राप्त की है। क्या यह बिना व्यायाम के सम्भव था। कदापि नहीं। राममूर्ति से भारत ही क्या संसार भर का कौन-सा व्यक्ति अपरिचित होगा। किसने उनकी वीर-गाथाएँ न सुनी होंगी। इन वीरों ने शेर को हाथ से मारने, इंजन रोकने और हाथी जैसे बलवान के वजन को अपनी छाती पर सँभालने आदि के कार्य किये हैं। ऐसे ही वीरों से हमारे भारत का इतिहास भरा पड़ा है।

एक बार व्यायाम की महत्ता बतलाते हुए स्वामी विवेकानन्द जी महाराज ने कहा था—"व्ययाम करने और गीता पढ़ने—इन दो बातों में यदि तुम्हें एक ही चुनना हो तो मैं कहूँगा, व्यायाम को चुन लो।" इन शब्दों में व्यायाम

की महत्ता स्वयं ही प्रकट हो जाती है । कमजोर तन और कमजोर मन वाले पुरुष क्या कभी देश और अपनी उन्नति कर सकते हैं । कदापि नहीं । शिथिल गात पुरुष का वर्णन करता हुआ कवि कहता है कि—

"कहा कबच ये धारि हैं, लचकीले मृदु गात ।
सुमनहार के भार ते, तीन-तीन बल खात ।।
कै चढ़ि लें असिधार पै, कै बनि लें सुकुमार ।
द्वै तुरंग पै एक संग, भयौ कौन असवार ।।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि जीवन में व्यायाम की अत्यन्त आवश्यकता है । आज जिधर दृष्टि डालिए, उधर ही रोग-ग्रस्त व्यक्ति पीड़ा भार से कराहते हुए दिखाई देते हैं । सुकोमल बच्चे शीघ्र ही मौत के मुँह में चले जाते हैं । अगर इनके माता-पिता स्वस्थ हों तो यह नहीं विचारा जा सकता कि उनकी सन्तान अस्वस्थ, रोगग्रस्त और शीघ्र मृत्यु-मुख-गामी होगी । यद्यपि आज के युग में अनेक अस्पताल, अच्छे से अच्छे वैद्य हैं, तो भी यह नहीं कहा जा सकता है कि जनता रोग-ग्रस्त होने से बचाई जा सकती है । हमारे देश में प्राचीन काल में बड़े-बड़े वीर व्यायामशील पुरुष हो चुके हैं, जिनके कुछ उदाहरण दिये भी जा चुके हैं । लेकिन आज व्यक्ति ब्रह्मचर्य का पालन न करने के कारण शीघ्र मृत्यु-मुख-गामी हो जाते हैं । उन पर चालीस वर्ष की अवस्था में ही बुढ़ापे की आभा दृष्टिगोचर होती है; कारण है कि आज व्यक्ति व्यायाम को अधिक महत्त्व न देकर वैद्य और डॉक्टरों पर निर्भर है । हमारे देश में ऐसे पुरुष की आवश्यकता नहीं । हमारा देश तभी उन्नति कर सकता है जबकि व्यायामशील पुरुषों का अभाव न हो । देश में व्यायाम के साधनों को जुटाना अत्यन्त आवश्यक है । व्यायाम भी नियमित रूप से करना चाहिए । व्यायाम आयु और शक्ति के अनुसार ही करना अधिक हितकर होगा । अतः यदि देश को सबल और दृढ़ बनाना है तो फिर प्राचीन काल की भाँति देशवासियों में व्यायाम के प्रति प्रेम उत्पन्न करना होगा ।

अनुशासन

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—अनुशासन क्या है ? (अनुशासन का अर्थ)
- अनुशासन की व्यापकता एवं महत्त्व
- अनुशासन से लाभ (शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय उन्नति होती है)
- अनुशासनहीनता का बोलबाला
- अनुशासन के विकास के साधन
- उपसंहार—अनुशासन की आवश्यकता

अनुशासन का मानव जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है। शिक्षा क्षेत्र में ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक क्षेत्र में भी अनुशासन का बोलबाला है। अतः अब देखना है कि इस सर्वव्यापी अनुशासन से क्या अभिप्राय है ? साहित्य में अनुशासन का निर्माण दो शब्द 'अनु' और 'शासन' से हुआ है। 'अनु' शब्द का प्रयोग पीछे के अर्थ में किया जाता है। 'शासन' का अर्थ अत्यन्त ही विस्तृत है। इसका कार्यक्षेत्र पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय जीवन है तथा इसमें अनुशासन की महती आवश्यकता होती है। इसके बिना जीवन में एक क्षण भी कार्य नहीं चल सकता। गृह, पाठशाला, कक्षा, सेना, कार्यालय, सभा इत्यादि में अनुशासन के बिना एक क्षण भी कार्य नहीं चल सकता। अतः अनुशासन का अर्थ नियन्त्रण में रहना, नियम-बद्ध कार्य करना है। इसका वास्तविक अर्थ है, बुद्धि एवं चरित्र को सुसंस्कृत बनाना।

अनुशासन का महत्त्व भी जीवन में उसी तरह व्याप्त है जिस प्रकार कि भोजन एवं पानी। एक विद्यालय का अनुशासन तभी अच्छा कहा जायेगा जब वहाँ के विद्यार्थी स्कूल में अध्यापक की आज्ञा शिरोधार्य करते हों। अनुशासन एक महान् गुण है। इसके पालन करने से प्रत्येक राष्ट्र उन्नति के शिखर पर पहुँच सकता है तथा इसके अभाव में ऐसी दुर्दशा भी हो सकती है जिसके अत्यन्त ही भयंकर परिणाम होते हैं। विधाता का सम्पूर्ण चर-अचर विधान अनुशासन की व्यापक व्यवस्था से बँधा हुआ नाच रहा है। अनुशासन के बल

पर ही किसी राष्ट्र की उन्नति सम्भव है। इसलिए स्वयं को अनुशासन में रखना मनुष्य का परम पवित्र कर्त्तव्य है।

अनुशासन का क्षेत्र अत्यन्त ही व्यापक तथा विस्तृत है। मनुष्य के सभी कार्य व्यापार अनुशासन की सीमा के अन्दर ही होते हैं। जिस जीवन में तिल-मात्र भी अनुशासन नहीं है वह जीवन ही नहीं। बिना अनुशासन के कोई भी छोटे से छोटा कार्य तक होना असम्भव है। असम्भव को सम्भव बनाने वाली शक्ति ही अनुशासन है। बिना अनुशासन के सेना, पुलिस, सभा, विद्यालय आदि का विचार भी नहीं किया जा सकता। जब तक मनुष्य में अनुशासन की भावना नहीं होगी तब तक जीवन ही निरर्थक है।

अनुशासन से अनेक लाभ हैं। आधुनिक समय में जितने भी राष्ट्र उन्नति के शिखर पर हैं, वे सब अनुशासन का व्रत पालन करके ही वहाँ पर पहुँच पाये हैं। इसके द्वारा मानसिक एवं बौद्धिक विकास में पर्याप्त सहायता मिलती है। मनुष्य-जीवन की सरलता एवं सौष्ठवता इसी गुण पर आधारित है। मनुष्य अपनी जीवनोन्नति के लिए उच्चादर्शों का निर्माण तथा उन पर चलने के अपूर्व साधन अनुशासन द्वारा ही प्राप्त करता है। अनुशासन से मनुष्य समय के मूल्य को जान जाता है, वह स्वयं को ऊँचा उठाने का भी प्रयत्न करता है। अनुशासन से मन एवं बुद्धि सुसंस्कृत होती है। चरित्र का निर्माण भी अनुशासन द्वारा ही होता है। स्वार्थपरता अनुशासन से दूर भागती है। अनुशासन से मनुष्य के हृदय में सत्यता, कर्त्तव्य-परायणता, देशभक्ति, परोपकार आदि गुण उत्पन्न होते हैं। भय से ये गुण कभी भी नहीं आ सकते। अनुशासन द्वारा नागरिकता का विकास होता है। ऐसा व्यक्ति राष्ट्र का सच्चा नागरिक कहलाता है।

मानव-जीवन एवं अनुशासन में अत्यन्त ही घनिष्ठ सम्बन्ध है। विश्व के समस्त कार्य अनुशासन से ही चल रहे हैं। अनुशासन में रहने पर शासन एवं जीवन के सभी कार्य बड़े ही सुचारु रूप में गतिमान रहते हैं। अनुशासन बल एवं भय पर निर्भर नहीं। इसकी उत्पत्ति स्वतन्त्रता पर निर्भर है। किसी विद्वान का कथन है—

"To rule by love is far better then to rule by force" अर्थात् बलपूर्वक राज्य करने से अधिक उत्तम प्रेमपूर्वक राज्य करना है। भय द्वारा

उत्पन्न अनुशासन की अपेक्षा स्वेच्छा से पालन किया जाने वाला अनुशासन हितकर, श्रेयस्कर एवं स्थायी होता है।

जिन देशों में अनुशासन को वास्तविक रूप में अपनाया गया है तथा अपनाया जा रहा है, वे आज उन्नति के सातवें आकाश पर हैं। अतः अनुशासन की उन्नति मानव जीवन की प्रवृत्ति के नियन्त्रित एवं नियमबद्ध रहने पर भी है। जो राष्ट्र आज अनुशासन को महत्त्व नहीं देते, वे संसार के सबसे पिछड़े हुए राष्ट्रों में से समझे जाते हैं। आत्मा पर पूर्ण नियन्त्रण प्राप्त कर लेने पर अनुशासन के गुण का अनुभव होता है और तभी मनुष्य की उन्नति होती है। शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक इन सब की उन्नति तभी सम्भव है जबकि मनुष्य अनुशासन में रहने का अभ्यस्त हो। अतः अनुशासन में विश्वास का न होना ही अनुशासत का पतन है। विश्व-शान्ति एवं उसके अभ्युदय के मार्ग में अनुशासनहीनता सबसे बड़ा रोड़ा है।

अनुशासन के विकास के अनेक साधन हैं। समाज में अनुशासन उत्पन्न करने के लिए शिक्षा का प्रसार करना आवश्यक है। प्रारम्भ में पुरस्कार, सम्मान भय आदि द्वारा अनुशासन में रहना सिखाया जाना चाहिए यद्यपि वह वास्तविक अनुशासन नहीं है। वास्तविक अनुशासन स्वतन्त्र इच्छा पर ही आधारित है। मनुष्यों को अनुशासन के विकास के लिए उनके अधिकार तथा कर्त्तव्य का पालन करना भी आवश्यक है। आत्म-सम्मान एवं ज्ञान द्वारा भी अनुशासन का प्रसार होता है। उत्तरदायित्व, स्वदेश-प्रेम, राष्ट्रीयता आदि की भावनाओं को प्रोत्साहन देना भी अनुशासन के विकास का भाग है। सभा, खेल-कूद, व्यायाम आदि भी अनुशासन पैदा करने के अच्छे साधन हैं। समाज के विविध नियमों का सहर्ष पालन एवं अपनी सफलता के साथ ही दूसरों की उन्नति में सहयोग भी अनुशासन के साधनों में वृद्धि करना है। आज्ञा-पालन, नियमित जीवन तथा शिष्टाचार भी अनुशासन को प्रोत्साहित करते हैं।

मानवीय जीवन को अमर बनाने वाली संजीवनी का सा प्रभाव रखने वाला अनुशासन आज केवल व्यक्ति एवं देश तथा राष्ट्र सीमा के अन्दर ही आवश्यक नहीं है, बल्कि हम जहाँ तक इस अमरत्वमयी शक्ति का क्षेत्र विस्तृत करें वहीं तक यह मानव एवं देश की उन्नति के लिए उपयोगी है।

आज प्रत्येक क्षेत्र में इसका होना अपेक्षित है। यदि हम अपना जीवन सुखमय एवं सरस बनाना चाहते हैं तो हमें शीघ्र ही अनुशासन के व्रत का पालन करना चाहिए। बिना अनुशासन के जीवन वास्तविक जीवन नहीं। यदि प्रत्येक मनुष्य अनुशासन में बंधकर कर्त्तव्य में जुट जायेगा तो यह पूर्णतया सम्भव है कि उसका जीवन वास्तविक जीवन हो जायेगा। अन्त में हमें पूर्ण आशा है कि प्रत्येक नवयुवक अनुशासन को अपने जीवन का अंग बनायेगा। अनुशासन में बँध कर ही रहने पर ही वह देश का योग्य नागरिक बन सकता है।

36
स्वावलम्बन

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना—स्वावलम्बन की व्याख्या**
- **स्वावलम्बन का महत्त्व**
- **स्वावलम्बन में राष्ट्र तथा समाज की उन्नति**
- **स्वावलम्बी राष्ट्र और व्यक्तियों के कतिपय उदाहरण**
- **उपसंहार**

मानव-जीवन संघर्षों से आपूरित है। प्रत्येक मनुष्य के जीवन में ऐसे भी अनेक अवसर आ उपस्थित होते हैं, जब वह व्याकुल होकर कराह उठता है-जब वह किसी अन्य की सहायता की कामना करता है। मगर तब वह यह देखता है कि इस समय अपना भी पराया है। इस समय न कोई उसका बन्धु है और न कोई साथी और वह निराश हो बैठा रहता है। फिर कभी शून्य आकाश की ओर आँखें उठाकर उस सर्वशक्तिमान प्रभु से सहायता की याचना करता है, मगर 'God helps those who help themselves' ईश्वर उनकी सहायता करता है जो स्वयं अपनी सहायता करते हैं। वास्तव में ऐसे अवसरों पर स्वावलम्बन ही मनुष्य का सच्चा साथी है।

स्वावलम्बन शब्द 'स्व' और 'अवलम्बन'—इन दो शब्दों से मिलकर बना है। 'स्व' का अर्थ निजी, अपना-आदि है और 'अवलम्बन' का अर्थ सहारा, आश्रय, आधार, शक्ति बल इत्यादि है। अतएव स्वावलम्बन का अर्थ हुआ—अपना बल, निजी शक्ति, अपनी सहायता, आश्रय इत्यादि। शारीरिक और मानसिक विकास तथा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र अथवा अवस्था से परिचित होकर भरण-पोषण के लिए अपने पैरों पर खड़े होकर उपादेय सामग्री का संग्रह ही स्वावलम्बन है। परिश्रम, उद्यम, पुरुषार्थ, प्रगति आदि शब्द स्वावलम्बन के ही दूसरे नाम हैं।

'उद्योगिन पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मी' अर्थात् उद्योगी पुरुष ही लक्ष्मी का भोग करते हैं। यथार्थ में संसार उद्योगी पुरुषों का ही है। परावलम्बी मनुष्य प्रत्येक समय दूसरों का ही मुँह ताका करते हैं। मगर स्वावलम्बी मनुष्य यश, सफलता, वैभव, सुख, शान्ति, सन्तोष आदि सभी कुछ प्राप्त करते हैं। स्वावलम्बन से जिस आत्म-सन्तोष की प्राप्ति होती है, वह स्वावलम्बी मनुष्य को दूसरे के यावत्-जीवन परिश्रम से अर्जित किये हुए धन और यश भोगने पर भी प्राप्त नहीं हो सकती है। दूसरे शब्दों में स्वावलम्बन ही मानव-जीवन का निर्माता एवं विधाता है। मानव-जीवन कंकटाकीर्ण है। मनुष्यों के सामने उन्नति के मार्ग में अनेक विघ्न हैं, जिन्हें दूर हटाकर केवल वे ही व्यक्ति अपने ध्येय की प्राप्ति में अग्रसर हो सकते हैं जो दूसरों का आश्रय छोड़कर अपने पैरों पर खड़े होकर कार्य करते हैं। कर्मशील पुरुष कभी अधीर और व्याकुल नहीं होता।

स्वावलम्बन ही समाज का निर्माता है। समाज की उन्नति उसके सदस्यों पर ही आधारित है। यदि समाज के सभी मनुष्य स्वावलम्बी हो जायें तो समाज शीघ्र ही उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच जाएगा। इस अलौकिक गुण से मनुष्य के शरीर के अंग-प्रत्यंग पुष्ट एवं बलिष्ठ हो जायेंगे। हमारे अनेक प्राचीन स्वावलम्बी महापुरुष हृष्ट-पुष्ट एवं नीरोग थे। जो पुरुष हृष्ट-पुष्ट और नीरोग होंगे वे सुख और शान्ति के भागी होंगे। इससे यह भी भलीभाँति समझ में आ जाता है कि स्वावलम्बन सुख और शान्ति का दाता है। स्वावलम्बन से बुद्धि का विकास होता है। प्रायः जिन मनुष्यों के पास कुछ काम नहीं होता, वे दुविधा-ग्रस्त, बेचैन और अशान्त रहते हैं। किसी अंग्रेज

विद्वान् का कथन है कि—"Empty mind is a devil's workshop" ऐसे व्यक्ति जीवन में कभी शान्ति का अनुभव नहीं कर पाते। ऐसे व्यक्तियों के मस्तिष्क सदा अस्थिर रहते हैं। इस प्रकार के मनुष्य समाज और राष्ट्र की उन्नति में भी बाधक होते हैं।

मगर स्वावलम्बी मनुष्य ही उन्नति के पथ पर निरन्तर आगे बढ़ते हैं। ऐसे अनेक उदाहरण हैं। सबसे सुन्दर उदाहरण तुलसीदास जी ने अपने 'रामचरितमानस' में दिया है। देखिये—

'लखन रामसिय कानन बसहीं।
भरत भवन बसि तप तनु कसहीं।।'

राम, लक्ष्मण और सीता के साथ कुबेर के कोष को त्याग कर वन चले गये हैं। भरत ने भी उसे पाकर त्याग दिया है। कैसी अनुपम झलक है! जो व्यक्ति अपने स्वार्थ में लगकर अपने चरित्र-निर्माण पर ध्यान नहीं देता, वह समाज की उन्नति में सहायक नहीं हो सकता। महाराणा प्रताप का अकबर भी लोहा मानता था। स्वावलम्बन के आधार पर ही शिवाजी ने हिन्दू-राष्ट्र का निर्माण किया। गुरु गोविन्दसिंह ने भी सिक्ख जाति को एक स्वावलम्बी, सुसंगठित जाति के रूप में बदल दिया। धनी मनुष्य ही देश की उन्नति में सहायक नहीं होते वरन् निर्धन और निस्सहाय भी जो स्वावलम्बी होते हैं, उसकी उन्नति में सहायक होते हैं। ऐसा ही एक उदाहरण हमारे सामने ईश्वरचन्द्र विद्यासागर का है। उन्होंने स्वावलम्बन का सहारा लेकर समाज में एक उच्च पद को प्राप्त किया। हमारे प्राचीन राजा अपने हाथ से काम करने में गौरव समझते थे। राजा विक्रमादित्य नित्य अपना पानी क्षिप्रा नदी से भरकर लाते थे। रानी भोजन स्वयं बनाती थीं। औरंगजेब स्वयं कुरान लिखकर और टोपियाँ बनाकर अपने घर का व्यय चलाता था।

हमारे भारतवर्ष ने इतने दिनों तक परावलम्बी होकर परतन्त्रता भोगी और आज भी हमारे बहुत से देशवासी परावलम्बी होकर परतन्त्रता स्वीकार करना चाहते हैं। अब भी उनकी आँखें नहीं खुली हैं। इंगलैण्ड और रूस आदि देश स्वावलम्बी होकर उन्नत हो उठे हैं। यहाँ पर यह नियम है कि जो व्यक्ति काम नहीं करेगा, उसे खाना नहीं दिया जायेगा। गोस्वामी जी का वचन सत्य ही है—

"कायर मन कर एक अधारा।
दैव दैव आलसी पुकारा।"

अन्त में हम निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि स्वावलम्बन ही मानव-जीवन की आधार-शिला है। "पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं" सत्य ही है। स्वावलम्बन जीवन है, परावलम्बन मृत्यु। स्वावलम्बन ही चरित्र का भूषण है स्वावलम्बन ही अशान्ति के कारण तिलमिलाते हुए मानव-जीवन का प्राण है। देखिए, राष्ट्रकवि के स्वावलम्बन के प्रति उद्‌गार—

"स्वावलम्बन की एक झलक पर
न्यौछावर कुबेर का कोष"

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि स्वावलम्बन मानव-जीवन, देश और समाज के कल्याण के लिये अति हितकर है, न जाने वह शुभ दिन कब आयेगा जब भारत का आबाल-वृद्ध स्वावलम्बी होकर अपनी सम्पूर्ण शक्तियों का विकास कर संसार के समक्ष अपना स्वयं का एक आदर्श रूप उपस्थित करेगा ? किसी कवि के शब्दों में—

जीवन के इस सागर तट पर खड़े न होकर यों पछताओ, अगर चाहते हो पार जलधि हो, अपनी नौका आप चलाओ।।'

37
सत्संगति

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—सत्संग का महत्त्व
- सत्संग के भेद
- सत्संग से लाभ
- कतिपय उदाहरण
- उपसंहार।

ईश्वर ने अपनी अपूर्व सृष्टि में ऐसे अनेक साधन सन्निहित कर दिए हैं जिनके द्वारा मानव सुख, समृद्धि एवं उन्नति प्राप्त कर सकता है। आज के मानव ने प्रगति के अनेक साधन खोज निकाले हैं और उन्नति के पथ पर अग्रसर भी हुआ है। आज के मानव का जो यह रूप दिखाई देता है, वह उन्हीं

साधनों से सम्भव हुआ है। ऐसे ही उन्नतिशील साधनों में सत्संगति है जिस से नीच भी उच्चता को प्राप्त कर लेता है, कलुषित भी गुण से विभूषित हो जाता है, मूर्ख भी प्रवीण हो जाता है। कीट भी पुरुषों के सत्संग से देवताओं के सिर पर चढ़ जाता है। वास्तव में सत्संगति की महिमा अपार है। मानव का आध्यात्मिक और लौकिक उत्थान सत्संगति से ही सम्भव है। मनुष्य परिस्थितियों का तो दास है ही, साथ ही सामाजिक जीव भी है। अतः उस पर वातावरण का अमिट प्रभाव स्वाभाविक ही है। कबीर कहते हैं—

"कबिरा संगति साधु की, हरै और की व्याधि।
संगति बुरी असाधु की, आठों पहर उपाधि॥"

संसार भी दो प्रकार का होता है—एक तो श्रेष्ठ पुरुषों का तथा दूसरा उच्चकोटि की पुस्तकों का। सज्जनों का सत्संग ठीक उसी प्रकार का है जिस प्रकार कि गन्धी की गन्ध का अपूर्व आनन्द सभी को सुलभ होता है। श्रेष्ठ पुस्तकों के सत्संग अर्थात् पठन-पाठन से भी वे ही गुण प्राप्त किये जा सकते हैं जो सज्जनों के साथ रहने से प्राप्त होते हैं। लेकिन अन्तर केवल इतना है कि सज्जनों के सत्संग का प्रभाव शीघ्र पड़ने वाला और स्थायी होता है लेकिन पुस्तकों का प्रभाव सजीव न होने के कारण इतना शीघ्र पड़ने वाला और स्थायी नहीं होता।

'जाड्यं धियो हरित सिंचित वाचि सत्यम्,
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिम,
सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसाम्।'

अर्थात् सत्संगतिः मनुष्य के लिए क्या नहीं करती है? (अर्थात् सब कुछ करती है) सत्संगति बुद्धि की जड़ता को हरती है, वाणी में सत्य का संचार करती है। मान और उन्नति को फैलाती है, पाप को नष्ट करती है, चित्त को प्रसन्न करती है, दिशाओं में कीर्ति को फैलाती है। वाह री सत्संगति! तेरी महिमा कहाँ तक वर्णन की जाय? ये कतिपय शब्द क्या तेरी महिमा को प्रकट कर सकते हैं। कदापि नहीं। साधु सत्संगति के समान इस संसार में कोई भी वस्तु नहीं है। सत्संग को भूलकर क्या आत्म-उन्नति सम्भव है। व्यक्ति कैसा ही क्यों न हो, सज्जनों के सम्पर्क में आकर वह अवश्य ही सुधर जायेगा।

पुस्तकों का सत्संग भी आत्मोन्नति के साधनों में मुख्य है। सत्संगति में ही लौकिक और पारलौकिक सुख सम्भव है। ज्ञान-वृद्धि के लिए तो सत्संगति कल्पवृक्ष के समान है। निराश अर्जुन को श्रीकृष्ण का सत्संग किस प्रकार उबार कर ले गया था—अर्जुन युद्ध में अपने सम्बन्धियों को देखकर किंकर्त्तव्य-विमूढ़ हो गया था। यदि श्रीकृष्ण का सत्संग प्राप्त न होता तो क्या धर्म-संस्थापन सम्भव था।

ऐसे अनेक व्यक्तियों के उदाहरण हमारे सामने हैं, जिन्होंने सत्संग के माध्यम से ही अपने जीवन को उन्नतिशील बनाया है—

रीछ और वानर भगवान् राम का सत्संग करने से उच्चकोटि की जाति में गिने जाने लगे हैं। घोर कलयुग के समय में स्वामी दयानन्द, योगी विरजानन्द के सत्संग से एक महात्मा के रूप में बदल गये। उन्हें आधुनिक युग का प्रवर्त्तक कहा जाता है। महात्मा गाँधी के संत्सग से जवाहर और सुभाष इतने महान् बन गये। सत्संग करने से मनुष्य अच्छे और कुसंग में फँसने से बुरे बन जाते हैं। इनके आधार पर ही तो सूरदासजी ने निम्न पंक्तियाँ कह डाली हैं—

'सीप गयौ मोती भयौ, कदली भयौ कपूर।
अहिमुख गयौ तो विष भयौ, संगति के फल सूर।'

पारसमणि के छूते ही लोहा सोना बन जाता है लोहा रूपी मूर्ख मनुष्य पारसमणि रूपी सत्संग से सोना-रूपी उच्च कोटि के मनुष्य के समान चमकने लगता है। किसी कवि ने ठीक ही कहा—

'काचः काचन संसर्गात् धत्ते मरकतद्युतिम्।
तथा सत्संनिधानेन मूर्खो याति प्रवीणताम ॥'

अर्थात् काँच सोने के संसर्ग से मरकत-मणि की चमक धारण कर लेता है, इस प्रकार सत्संगति से मूर्ख भी विद्वान हो जाता है।

अन्त में यही कहा जा सकता है कि सत्संगति मानव-जीवन में बड़ी ही उपयोगी वस्तु है इनका शब्दों में वर्णन कर सकना कठिन है। तुलसीदास जी ने ठीक ही कहा है—

"सकल स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिय तुला एक अंग।
तुले न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सत्संग ॥"

'सठ सुधरसिंह सत्संगति पाई' कहावत सत्य ही है। कुछ तो कवि होते ही हैं, कुछ बन जाते हैं तथा कुछ अभ्यास करते रहने से कवि हो जाते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि सत्संगति का व्यक्ति पर प्रभाव अमिट होता है और सत्संग से प्रत्येक काम सम्भव हो जाता है, महापुरुषों का विरोध भी हितकर होता है। यह किसका प्रभाव है ? सत्संग का। क्योंकि कहा भी है—

'वैरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः'

अर्थात् बड़े लोगों के साथ विरोध करना भी अच्छा होता है। यह निस्सन्देह सत्य है कि सत्संग-रूपी-पारसमणि ने न जाने कितने नर-नारियों के ·रकतुल्य जीवन को स्वर्ग-तुल्य बनाकर उसको योगक्षेम प्रदान किया है।

38

स्वदेश प्रेम

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—स्वदेश-प्रेम स्वाभाविक
- स्वदेश के प्रति प्रेम भावना अपेक्षित
- स्वदेश के प्रति हमारा कर्त्तव्य
- स्वदेश-प्रेम से देश का उत्थान
- स्वदेश-प्रेमियों के कतिपय उदाहरण
- उपसंहार

"जिसको न निज भाषा तथा निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं, नरपशु निरा है और मृतक समान है।।'

स्वदेश-प्रेम एक स्वाभाविक भावना है। प्रत्येक मनुष्य में कुछ जन्मजात गुण होते हैं। देश-प्रेम की भावना भी इन्हीं गुणों के अन्तर्गत मानी जाती है। इन गुणों की वृद्धि तथा व्यापकता मनुष्य के अभ्यास पर निर्भर है। जिस देश में हम पैदा हुए हैं, जिसकी रज में लोट-पोट कर बड़े हुए हैं, जिसके अन्न से पले हैं, क्या उसके प्रति हमारा प्रेम नहीं होना चाहिए ? मातृ-भूमि माता के समान हैं जिस प्रकार माता के अनेक अवगुणों से परिचित होने पर भी हम उससे

अटूट प्रेम करते हैं, उसी प्रकार जिस देश में हमारा जन्म हुआ है, उस देश के प्रति हमारा प्रेम स्वाभाविक है, क्योंकि माता और जन्म-भूमि स्वर्ग से भी बढ़कर है, जैसा कि मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र के कथन से प्रत्यक्ष है—

'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'

मनुष्य ही नहीं वरन् सभी जड़ पदार्थ, पशु-पक्षी आदि अपनी मातृभूमि से प्रेम करते हैं। इन वस्तुओं को यदि दूसरे स्थान पर ले जाया जाय या उत्पन्न करने का प्रयास किया जाय, चाहे वहाँ पर अन्य अनेक साधन व सुविधा उपलब्ध हों, फिर भी सफलता मिलना बड़ा कठिन है। अंग्रेजों ने अमरीका में आम को उगाने का बड़ा भारी प्रयत्न किया। क्या वह अमरीका में आम उगा सके ? कदापि नहीं। आम से ही क्या आप किसी भी स्थान की वनस्पति दूसरे स्थान पर नहीं उगा सकते। वनस्पति को अपनी मातृभूमि से इतना प्रेम है कि न तो यह दूसरे स्थान पर उगती ही है और न पनपती ही है। आप पशु-पक्षियों को ही देख लीजिए वे सदैव अपने स्थान पर विश्राम लेते हैं, चाहे उनके स्थान कितने ही दुःखपूर्ण हों और अन्य स्थानों पर उन्हें चाहे कितने ही सुख के साधन क्यों न उपलब्ध हों। पक्षी दिन-भर आकाश में उड़ते हैं, लेकिन संध्या के समय निर्धारित नीड़ों पर ही आकर विश्राम करते हैं। इससे यह स्पष्ट है कि केवल मानव ही नहीं वरन् प्रत्येक जीव भी अपनी मातृभूमि से प्रेम करता है।

किसी विद्वान् का कथन है—जो व्यक्ति देश की सभी संस्थाओं से स्वाभाविक प्रेम करता है, देश की रीति-रिवाजों से प्रेम रखता है, देश की वेश-भूषा को अपनाता है और देश की भाषा की उन्नति करता है, वास्तव में वही सच्चा देश-भक्त है।" जो व्यक्ति देश की रक्षा, स्वतन्त्रता और देश में प्रचलित कुरीतियों को दूर करने में अपना बलिदान कर सकता है, वह सच्चा देश-भक्त है। सच्चा देश-भक्त अपने देश से बाल-विवाह, विधवा-विवाह, अन्धविश्वास, दहेज-प्रथा, छुआछूत-प्रथा, स्वार्थपरता आदि को दूर करता है। जो व्यक्ति ऐसी प्रथाओं के अभ्यस्त हैं, वे मृतक तुल्य हैं। उनको दैत्य की उपाधि दी जा सकती है। देश भक्त को ऐसा काम करना चाहिए जिससे देश की उन्नति में किसी प्रकार की बाधा न पड़े। वह अपने देश की उन्नति करे देश के पतन को अपना पतन समझे स्वयं स्वस्थ होकर देश को स्वस्थ करे। वह देश में उत्पन्न वस्तु को ही अपनाये। वह देश की भलाई के लिए सामाजिक पुस्तकालय, वाचनालय और विद्यालय की स्थापना करे।

देश-प्रेम ही देश की उन्नति का मूल-मन्त्र है। देश-प्रेमी ही देश की उन्नति कर सकते हैं। आत्म-उन्नति ही देश की उन्नति है। उसे सबसे पहले अपने स्वास्थ्य पर ध्यान देना चाहिए, यदि उसका स्वास्थ्य ठीक रहेगा तो वह देश की उन्नति में हर प्रकार से योगदान कर सकेगा। देश की स्वतन्त्रता की रक्षा करने में सहायक हो सकेगा। अपने देश की मिट्टी में खेल-कूदकर ही मनुष्य बड़ा होता है। अपने देशवासियों के साथ रहकर ही मूर्ख से मूर्ख पण्डित हो जाता है। उसके देशवासी उसके भाई के समान हैं। एक ही देश के निवासियों की एक-सी प्रकृति, एक भाषा तथा समान वेश-भूषा होती है। यही कारण है जो एक देश के रहने वाले परस्पर सगे भाई जैसे होते हैं।

(विश्व में माता एवं मातृभूमि दो ही अमर विभूति हैं। मनुष्य इन दोनों के हेतु बलिदान होने में गौरव का अनुभव करता है। स्वदेश की प्रत्येक वस्तु हमें प्राणोपम प्रिय होती है। उन्नत पर्वत शिखरों को निहार कर हमारा मस्तक गर्वोन्नत हो जाता है। इठलाती तथा प्रवाहित होती हुई सरिताओं को निहार मन-मयूर-नृत्य करने लगता है। हरे-भरे खेतों तथा चरागाहों का अवलोकन करके अन्तःकरण प्रमुदित हो जाता है।) देश की संस्कृति एवं कला को देखकर हम फूले नहीं समाते। प्रकृति तथा मानव समाज के साथ घुल-मिलकर हम एक हो जाते हैं।

देश के ऊपर आक्रमण करने वाले से हम प्राण हथेली पर रखकर लोहा लेते हैं। उस समय न तो उन्नत पर्वत ही हमारा मार्ग अवरुद्ध कर पाते हैं और न गम्भीर सागर ही भयभीत कर सकते हैं। गृहिणी का प्यार तथा राज-प्रासादों का वैभव भी स्वदेश-प्रेमी का मार्ग अवरुद्ध नहीं कर सकता है। स्वदेश के प्रति अनुराग रखने वाले का अन्तःकरण निरन्तर एक अलौकिक तेज से प्रकाशित रहता है। भारत के स्वाधीनता संग्राम का इतिहास देश भक्तों की गाथाओं से आपूरित है इन शहीदों का बलिदान देशवासियों में अपूर्व स्वाभिमान भरता है। युगों तक मानव-जाति शहीदों की समाधि पर श्रद्धा के सुमन अर्पित करके स्वयं को धन्य मानती है।

स्वदेश-प्रेमियों से हमारे भारत का इतिहास भरा पड़ा है। भारतवर्ष में ऐसी-ऐसी आत्माओं ने जन्म लिया, जिन्होंने अपने देश की रक्षा के लिए अपने प्राणों को सहर्ष त्याग दिया। महाराणा प्रताप ने अपनी मातृभूमि की रक्षा के

लिए बार-बार युद्ध किया और अन्त में अपने प्राणों को उसी के ऊपर न्यौछावर कर दिया। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् रामाचन्द्रजी ने वन में अयोध्या की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। 14 वर्ष उन्होंने मातृभूमि को त्याग कर बड़ी कठिनता से व्यतीत किये। कृष्ण भी मातृभूमि को नहीं भूले। उन्होंने कहा—"ऊधो ! मोहि ब्रज विसरत नाहीं।" वीर छत्रपति शिवाजी, दुर्गादास और बन्दा वैरागी स्वदेश-प्रेम के कारण इतिहास में अमर हो गये। आधुनिक युग में वीर-शिरोमणि सुभाषचन्द्र बोस, मदनमोहन मालवीय, चन्द्रशेखर आजाद, महर्षि दयानन्द, गुरु गोविन्दसिंह आदि हमारी दृष्टि से कैसे ओझल हो सकते हैं, पं० जवाहरलाल नेहरू तो स्वदेश-प्रेम की साक्षात् मूर्ति थे। पुरुष ही नहीं, हमारे देश की स्त्रियों ने भी भारत के इतिहास में अपना नाम अमर कर दिया है। महारानी लक्ष्मी-बाई का नाम सदा अमर रहेगा। गाँधीजी भी हमारे मन में सदा निवास करते रहेंगे। भारत में ही नहीं वरन् विदेशों में भी अनेक महान् विभूतियों ने जन्म लिए हैं—अमरीका में इब्राहीम लिंकन तथा जार्ज वाशिंगटन, ईरान में रजाशाह, रूस के लेनिन आदि। अरब, साऊदी को कैसे भुलाया जा सकता है ? डॉ० बैलेरा का नाम आयरलैण्ड में हमेशा अमर रहेगा। कमालपाशा और सुकार्णो को टर्की और इण्डोचीन कभी नहीं भूल सकते।

अतः स्वदेश-प्रेम व्यक्ति के हृदय की एक ऐसी पवित्र भावना है, जिसका अंकुर प्रत्येक मानव के हृदय में होना स्वाभाविक है। देखिए, राष्ट्रकवि डॉक्टर मैथिलीशरण गुप्त द्वारा लिखित स्वदेश-प्रेम की प्रशंसा में निम्न पंक्तियाँ—

> 'जो भरा नहीं है भावों से बहती जिसमें रसधार नहीं।
> वह हृदय नहीं वह पत्थर है, जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।"

अतः हम सब का यह परम पावन कर्त्तव्य है कि हम सब अपने देश से प्रेम करें तथा समय आने पर स्वदेश पर सर्वस्व लुटाने को उद्यत रहें। पुष्प के रूप में कवि माखनलाल चतुर्वेदी का कथन भी द्रष्टव्य है—

> 'मुझे तोड़ लेना वन माली, उस पथ पर तुम देना फेंक।
> मातृभूमि पर सीस चढ़ाने, जिस पथ पर जाते वीर अनेक।'

कर्त्तव्य पालन

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—कर्त्तव्यपालन का महत्त्व
- प्रकृति में कर्त्तव्य-परायणता
- कर्त्तव्य-पालन में बाधाएँ
- कर्त्तव्य-वीर
- उपसंहार

मानव का जन्म संसार में कुछ करने के लिए हुआ है। प्रत्येक वस्तु का कोई-न-कोई कार्य अथवा कर्त्तव्य अवश्य है। कुछ कर्त्तव्य ऐसे हैं जिनको करना मनुष्य-मात्र का परम धर्म है। उन कार्यों में उदासीनता दिखाना ही कर्त्तव्य पथ से विमुख होना है। हमारे सामने सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक मानसिक अनेक कार्य हैं, जिनको नियमित ढंग से पूरा करना ही मनुष्य का परम कर्त्तव्य है। प्रकृति की समस्त वस्तुएँ अपने कार्य को पूर्ण समय से कर रही हैं। सूर्य अपने कार्य में ऐसा तत्पर है कि एक मिनट की भी भूल नहीं करता। ऋतुएँ निश्चित समय पर आकर हमें फल-फूल प्रदान करती हैं। चन्द्रमा कभी अमावस, द्वितीया और पूर्णिमा को नहीं भूलता। सरिताएँ अबोध रूप से हमें शीतल जल का दान देती हैं। प्रकृति की किसी भी वस्तु को लीजिए, वे सब की सब अपने-अपने काम में ऐसे लीन हैं कि अपने कर्त्तव्य से तनिक भी विचलित नहीं होतीं। छोटी सी घास पैरों से कुचल-कर धूल में भले ही मिल जाय पर वह अपने कर्त्तव्य पालन से विमुख नहीं होती। क्या मजाल इनका कोई भी काम तनिक भी ढीला हो जाय या थोड़ी देर भी वे थक कर बैठ जायें। जहाँ डट गये, डटे हैं। कर्मवीरों को प्रकृति से यही पाठ सीखना है, विपत्तियों का सामना करना है। कर्त्तव्य की बलिवेदी पर प्राण न्यौछावर करना कितना सुन्दर है—उसे कर्मवीर ही जानते हैं।

यह निर्विवाद सत्य है कि प्रत्येक शुभ कार्य के सम्पन्न करने में कुछ बाधाएँ अवश्य आती हैं, परन्तु कर्त्तव्यशील पुरुष हम उसी को कहेंगे जो इन बाधाओं से न घबड़ाकर अपने कर्त्तव्य पर उत्साहपूर्वक आगे बढ़ता है। कर्त्तव्य-

में कितनी ही बाधाएँ आयें, आने दो, बड़े विकराल शत्रुओं का सामना करना पड़े, सभी स्वजनों को त्यागना पड़े; बड़े-बड़े पद और साम्राज्यों को त्यागना पड़े, सहर्ष त्याग दो परन्तु कर्त्तव्य पथ से विचलित न हो। सफलता उन्हीं के आगे हाथ बाँधे खड़ी रहती है जो कर्त्तव्व पथ पर अडिग रहते हैं। इस प्रकार के अनेक उदाहरण हमें मिलते हैं। राम अपनी प्रिय सीता को हृदय पर पत्थर रखकर लक्ष्मण को जंगल में छोड़ आने की आज्ञा देते हैं। लक्ष्मण तुरन्त उनकी आज्ञा-पालन करते हैं। मेवाड़-केसरी एवं मुगल-सम्राट् अकबर का एकमात्र प्रतिद्वन्द्वी राणा प्रताप अपने देश-हित के लिए सब कुछ सहन करता है। प्रताप के कई दिन के भूखे बच्चे घास की रोटियाँ खाते हैं, उन्हें भी वन विलाव छीनकर ले जाता है। इस कारुणिक दृश्य को देखते हुए भी वे अपने कर्त्तव्य-पथ से विमुख नहीं होते। इसी प्रकार हमें हरिश्चन्द्र, दधीचि तथा राजा शिवि आदि कर्मठ सत्पुरुषों के कर्त्तव्य-परायणता के आदर्श उदाहरण देखने को मिलते हैं। हरिश्चन्द्र का प्यारा पुत्र सर्प द्वारा डस जाने से मर जाता है, उनकी रानी शैव्या अपने पति राजा हरिश्चन्द्र द्वारा रक्षित मरघट ही में दाहक्रिया के लिए जाती है। उनके पास उनकी आधी साड़ी का ही कफन है, करुण-क्रन्दन की ध्वनि से दिशाएँ प्रतिध्वनित होने लगती हैं, ऐसा प्रतीत होता है मानो वनस्पति तथा दिशाएँ उसकी करुणा पर आँसू बहा रही हैं, किन्तु कर्त्तव्यनिष्ठ एवं कर्मयोगी राजा हरिश्चन्द्र इतना होने पर भी कर चुकाए बिना अपने पुत्र की अन्तिम क्रिया नहीं होने देते।

इस सबका क्या कारण है। केवल कर्त्तव्य-पालन की एकमात्र निष्ठा।

"ज्यों गुंगेहि मीठे फल को रस अन्तर्गत ही भावै" के अनुसार कर्त्तव्य-पालन में जो अनूठी शान्ति विचित्र सांत्वना और लोकोत्तर आनन्द प्राप्त होता है, उसकी वास्तविक अनुभूति का अनुभव तो केवल सच्चे कर्मवीर की अन्तरात्मा ही कर सकती है। इस आनन्द को प्राप्त करने के लिए कर्मवीर कठोर से कठोर कार्य करने को प्रस्तुत हो जाता है। कर्त्तव्य-पालन में मनो-वृत्तियाँ एकाकार हो जाती हैं। कर्त्तव्य परायण व्यक्तियों के मन में साम्यभाव जाग्रत हो जाता है। उनमें विश्व-बन्धुत्व का भाव जग उठता है। अपने पराये का भाव लोप हो जाता है, उनमें संकीर्णता नहीं रहती; उसके हृदय की ध्वनि ही ईश्वरीय प्रेरणा है। चार आने की मजदूरी करके कैसी सुख की नींद सोता

है। रोगी को अच्छा करके डॉक्टर का हृदय प्रफुल्लित हो उठता है। शिष्य को विद्या पढ़ाकर गुरु को अपार आनन्द मिलता है। इसके वास्तविक सुख को कर्त्तव्यशील पुरुषों की अन्तरात्मा ही बता सकती है, जो कि उन्होंने अपने कर्त्तव्य पालन से प्राप्त किया है।

'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' के अनुसार कर्त्तव्य ही मनुष्य जीवन का चरम लक्ष्य है। कर्त्तव्य कर्म करने से व्यक्तिगत सौख्य और सन्तोष की प्राप्ति होने के साथ-साथ सामाजिक सौख्य और सन्तोष की प्राप्ति सुलभ हो जाती है। इस प्रकार कर्त्तव्य पालन के द्वारा केवल व्यक्तिगत ही नहीं अपितु समष्टिगत उन्नति भी होती है जो कि उन्नति का एक दृढ़-स्तम्भ है।

40
परोपकार

विचार-तालिका

- परोपकार की उन्नति एवं आवश्यकता
- परोपकार करना मनुष्य का कर्त्तव्य है
- परोपकार के लिए मनुष्य में अपेक्षित गुण
- परोपकार की व्यापकता
- कुछ परोपकारी व्यक्तियों के उदाहरण
- प्रकृति द्वारा परोपकार का पाठ
- उपसंहार

"रहिमन यों सुख होत हैं, उपकारी के संग।
बाँटन बारे को लगै, ज्यों मेंहदी का रंग॥"

मानव जीवन की सार्थकता लोक-कल्याण में ही निहित है। उसका प्रमुख कर्त्तव्य लोक सेवा ही है। जिस प्रकार बीज धूल में मिलकर सुन्दर वृक्ष को जन्म देता है, उसी प्रकार मानव जीवन की सार्थकता भी अपने अस्तित्व को मिटाकर परहित के लिए पूर्ण त्याग की भावना में है। परोपकार एक उच्च

कोटि की भावना है। इसकी उत्पत्ति करुणा तथा प्रेम से ही होती है। जिस मनुष्य का हृदय जितना विशाल होता है वह उतना ही दूसरों से अपना सम्बन्ध स्थापित करता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि मनुष्य जीवन का सबसे बड़ा गुण परोपकार ही है।

किसी व्यक्ति की संकट के समय सहायता करना, भूखे को भोजन देना, प्यासे को जल देना, रोगी का रोग दूर करना आदि ऐसे कार्य हैं, जिन्हें मनुष्यता के नाते करना अपना कर्त्तव्य समझना चाहिए। ऐसा करने से हम सन्तुष्ट होते हैं, हमारी आत्मा प्रफुल्लित होती है। ऐसा कौन सा धर्म है जिसने परोपकार के महत्त्व को स्वीकार न किया हो। क्या हिन्दू धर्म, क्या ईसाई धर्म, क्या बौद्ध धर्म, क्या जैन धर्म—सभी ने परोपकार को मान्यता दी है। प्रत्येक धर्म ने 'परोपकार को आदर दिया है तथा अपकार का अनादर किया है। महात्मा व्यास ने परोपकार को परम पुण्य बताकर उसे मनुष्य के लिए सर्वश्रेष्ठ धर्म माना है। परोपकार के धर्म को जानने वाले मन, वचन और कर्म से किसी भी प्राणी को कष्ट नहीं पहुँचाते। उनकी दृष्टि में दूसरे के साथ बुराई करना पाप है। दधीचि ऋषि के त्याग तथा परोपकार का स्मरण कीजिए। उन्होंने लोक कल्याण के लिए अपनी हड्डियाँ तक दे दीं। राजा कर्ण का नाम तो दुनियाँ में अमर है। मृत्यु-शय्या पर पड़े कर्ण ने दान के लिए अपना दाँत तोड़ दिया। महात्मा गान्धी ने राष्ट्रहित के लिए अपने प्राणों की आहुति दे दी।

सरिताएँ हमें जल देती हैं। वृक्ष फल देते हैं। सूर्य की किरणें हमें जीवन प्रदान करती हैं। चन्द्रमा हम पर अमृत की वर्षा करता है। अन्य जीव भी मनुष्य के हित का साधन बनकर मानवता का कल्याण करते हैं। भर्तृहरि ने परोपकार की इस विश्वव्यापी भावना का कैसा अनुपम चित्रण किया है—

"परोपकाराय फलन्ति वृक्षः
परोपकाराय वहन्ति नद्य।
परोपकाराय दुहन्ति गायाः,
परोपकाराय इदं शरीरम्।"

अतएव मानव-जीवन की सार्थकता परहित में ही है।

ईसाई धर्म की पुस्तक अन्जील में लिखा है—"अपना धन पृथ्वी पर संग्रह कर मत छोड़ जाओ" क्योंकि यहाँ कीड़े हैं जो कि उसे खा डालेंगे। अपने धन

को स्वर्ग में संग्रहीत करो, जहाँ न कीड़े खा सकेंगे, न मोर्चा ही लगेगा और न वहाँ चोर ही पहुँच सकेंगे।

सारांश यह है कि उपर्युक्त कथन में हजरत ईसा ने दान तथा परोपकार की महिमा का वर्णन किया है।

कवि रहीम ने लिखा है—

"तरुवर फल नहिं खात हैं, सरवर पियहिं न पान।
कहि रहीम पर काज हित, सम्पत्ति संचहिं सुजान॥"

अतः आज हमारे देश को परोपकारी मनुष्यों की बहुत आवश्यकता है। समाज तथा देश में जो दुर्बलता व्याप्त हो रही है, उसका सुधार साधारण मनुष्य की शक्ति के परे है। उसके विकास के कार्य परोपकार के द्वारा ही किये जा सकते हैं अतः आधुनिक काल में संसार को स्वार्थ तथा दुःख से बचाने के लिए परोपकारी वृत्ति की महान् आवश्यकता है तथा परोपकार के व्रत का पालन करना महान् पुण्य है।

परोपकार की पूर्ण व्याख्या के लिए सभी अन्य गुणों पर प्रकाश डालना अनिवार्य है। दान भी परोपकार का एक अनिवार्य अंग है। कंगालों को धन, भूखे-नंगों को भोजन-वस्त्र, निर्बल को बल, निराशा को आशा आदि देना परोपकार ही है। दुःखी और याचकों की आवश्यकता की पूर्ति करने से सुख एवं शान्ति मिलती है। प्रेम, उदारता, दया, सहानुभूति परोपकारी व्यक्ति के स्वाभाविक गुण हैं। चरित्र में बिना इन गुणों के समावेश के दया की भावना होना असम्भव है। दया तो परोपकार का अनमोल गुण है। अतएव इन गुणों में से किसी भी एक को अपनाना परोपकार के गुण को अपनाना है।

धन का संचय विकारों को जन्म देता है। अतः इसका उचित उपयोग दूसरों की सहायता करना ही है। किसी कवि ने कहा है—

"जो जल बाढ़ै नाव में घर में बाढ़ै दाम।
दोऊ हाथ उलीचिए, यही बड़ेन को काम।"

हमारे देश में आज भी राहगीरों के लिए धर्मशालाएँ, भक्तों के लिए मन्दिर बने हैं। पहले लोग राह पर वृक्ष लगाना, मार्ग में कुओं को बनवाना अपना पवित्र कर्त्तव्य समझते थे। बड़े-बड़े तालाब तथा वाटिकाओं का निर्माण

परोपकार की ही भावना से हुआ है। मानव की सेवा ईश्वर की सेवा है। दोनों की सेवा करना ही दीनबन्धु की सेवा करना है। जो व्यक्ति दीन-दुखियों को अपनाये, वह देवता का स्वरूप है। कवि के शब्दों में देखिये—

"मरा वही नहीं, कि जो
जिया न आपके लिए।"

सच्ची मनुष्यता परोपकार में है—

"मनुष्य है वही जो,
मनुष्य के लिए मरे।"

भारतवर्ष में परोपकार का पालन करने वाले अनेक व्यक्तियों ने जन्म लिया है। राजा रन्तिदेव ने भूखे भिक्षुक को अपना भोजन दे दिया, जबकि स्वयं महीनों से भूखे थे। राजा शिवि ने अपने आश्रम में आये हुए कबूतर की रक्षा करने के लिए भूखे बाज को कबूतर के बराबर अपने शरीर से माँस काट कर दिया। वास्तव में परोपकार मनुष्य का सर्वोपरि धर्म है।

41
परिश्रम का महत्त्व

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—श्रम का महत्त्व
- श्रम का अर्थ
- श्रम से मानव की उन्नति
- श्रम की अवनति के कारण
- कुछ परिश्रमशील महापुरुषों के उदाहरण
- श्रम का उद्देश्य
- उपसंहार

"आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महा रिपुः।"

आज विश्व के अनेक राष्ट्र उन्नति के पथ पर दौड़ लगा रहे हैं। हम देखते हैं कि निर्गुणी व्यक्ति गुणवान हो जाते हैं, मूर्ख बड़े-बड़े शास्त्रों में पारंगत हो

जाते हैं, निर्धन धनवान बनकर आराम, सुख तथा चैन से दिन व्यतीत करते हैं, पिछड़े हुए राष्ट्र उन्नति के शिखर पर पहुँचते हैं। यह सब किसके बल पर ? उत्तर मिलता है—अपने परिश्रम के बल पर, अपने उद्यम तथा पुरुषार्थ के बल पर। जो परिश्रम मनुष्य के जीवन में इतना महत्त्व रखता है, आइये, उसी के विषय में कुछ विचार करें।

श्रम का शाब्दिक अर्थ है, तन-मन से किसी कार्य को पूर्ण करने के लिए प्रयत्नशील होना। इसके प्रतिकूल निश्चेष्ट बैठे रहना ही कायरता है। मानव जाति की उन्नति का मूल कारण परिश्रमशील होना है। जिस जाति ने परिश्रम के बल तथा लगन के साथ आगे बढ़ने की चेष्टा की वह बराबर आगे बढ़ी। प्रत्येक मनुष्य को अपने जीवन के लिए कुछ न कुछ परिश्रम की आवश्यकता होती है। पशु-पक्षी से लेकर मनुष्यों तथा छोटे-छोटे जीव जन्तु भी बिना परिश्रम के अपना भोजन प्राप्त नहीं कर पाते, लेकिन मनुष्य के परिश्रम में और इन सबके परिश्रम से अन्तर है, क्योंकि मनुष्य समाज में रहता है तथा इन जीवों से अधिक ज्ञान भी रखता है। अतः मनुष्य जीवन में जितनी आवश्यकता भोजन की है, उससे भी अधिक आवश्यकता परिश्रम की है।

मानव-जीवन की उन्नति का मुख्य साधन परिश्रम है। जो मनुष्य जितना कठिन परिश्रम करता है, वह उतना ही जीवन में सिद्ध होता है। व्यक्ति को अपना कार्य करते समय केवल अपने गुण ही दिखाई देते हैं। परिश्रमी व्यक्ति को क्षितिज के उस पार अन्धकार के आवरण को चीरती प्रकाश की रेखा स्पष्ट दिखाई देती है। संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं, उन्होंने परिश्रम से ही उन्नति की है। हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने से कभी भी किसी को सफलता नहीं मिली। वास्तव में, परिश्रम का ही दूसरा नाम सफलता है। किसी संस्कृत कवि ने निम्नलिखित श्लोक में सत्य ही कहा है—

"उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः
दैवेन देयमिति कापुरुषाः वदन्ति।"

अर्थात् परिश्रमी व्यक्ति ही लक्ष्मी को प्राप्त करता है। 'सब कुछ भाग्य से मिलता है' ऐसा कायर और आलसी लोग कहते हैं।

परिश्रम ही जीवन में उन्नति और विकास का साधन है। विकास के लिये शिक्षा सहायक होती है और यहीं से मानव-जीवन का श्रीगणेश होता है। शिक्षा प्राप्त करना भी सरल कार्य नहीं है, इसकी प्राप्ति तपस्या के समान है। इसके लिए भी कठिन परिश्रम तथा अभ्यास आवश्यक है। प्रयत्न से ही सफलता सम्भव है। किसी कवि का कथन सत्य है—

"करत-करत अभ्यास के, जड़मति होत सुजान।
रसरी आवत जात पै, सिल पर परत निशान॥"

अतः सफलता परिश्रम की अनुगामिनी है परिश्रमी व्यक्ति सदैव प्रसन्न-चित्त, शान्त और आशायुक्त दिखाई देता है, क्योंकि ग्लानि तथा कठिनाइयाँ उसी व्यक्ति को घेरती हैं जो अपने कर्त्तव्य-पालन में लापरवाही करते हैं। अतः परिश्रम ही हमारी सफलता का पथ-प्रदर्शक है।

मनुष्य-जीवन की सफलता एवं अमरता परिश्रम पर ही निर्भर है। परिश्रम से हमें आत्म-सुख तथा शान्ति मिलती है। जीवन में मनुष्य को यशस्वी एवं पराक्रमी बनने के लिए परिश्रम करना परम आवश्यक है। जिन मनुष्यों ने परिश्रम करना अपने जीवन का व्रत बना लिया तथा निरन्तर कार्य में रत रहते हैं, वे हमेशा यश तथा सफलता के भागी होते हैं। परिश्रमी व्यक्ति संसार के उपहास की किंचित्मात्र भी चिन्ता नहीं करता है। आरम्भ में प्रत्येक मनुष्य का कार्य उपहास की वस्तु होती है। 'राइट ब्रादर्स' ने जब अमरीका में जहाज उड़ाने की बात सोची तो लोगों ने विश्वास नहीं किया तथा उनकी हँसी उड़ाई लेकिन वे वायुयान के सुधार के लिए प्रयत्न करते रहे तथा अन्त में उन्हें अपूर्व सफलता मिली। अतः सफलता परिश्रमी व्यक्ति की दासी है। परिश्रमी व्यक्ति को आत्म-साक्षात्कार हो जाता है। वह अपना प्रत्येक कार्य आरम्भ करने से पूर्व उसमें अपनी सफलता का दर्शन भी कर लेता है।

बिना परिश्रम के संसार में मनुष्य को कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकता। भाग्य पर भरोसा रखने वाले मनुष्य जीवन में दर-दर की ठोकरें खाते-फिरते हैं। वह अपने आत्म-विश्वास को खो बैठता है। परिश्रमी मनुष्य के समक्ष कठिनाइयाँ बर्फ की भाँति गल जाती हैं। जबकि कायर तथा आलसी व्यक्ति कठिनाइयों में फँसकर स्वयं को नष्ट कर लेता है। अधम कोटि के व्यक्ति विघ्नों के डर से कार्यों को आरम्भ ही नहीं करते। मलूकदास एक स्थान पर लिखते हैं—

"अजगर करे न चाकरी, पंछी करे न काम ।
दास मलूका कह गये, सबके दाता राम ।"

तथा तुलसीदास जी ने एक स्थान पर कहा—

"होइ है वही जो राम रचि राखा ।
को करि तर्क बढ़ावै साखा ।"

उपर्युक्त पंक्तियाँ कायर पुरुषों के लिए सत्य हैं, जो कि भाग्य पर ही निर्भर हैं तथा जो आत्म-विश्वास से हीन हैं । जो राम चाहेगा, वही होगा ऐसा कदापि नहीं । परिश्रमशील मनुष्य इस कथन पर कभी विश्वास नहीं करता, उसके हृदय में तो महाराज रणजीतसिंह जैसी भावनाएँ प्रत्येक क्षण आती रहती हैं । महाराज-रणजीतसिंह ने निर्भीकता से चढ़ती हुई अटक नदी में अपना घोड़ा डाल दिया था—

"जाके मन में अटक है सोई अटक रहा ।"

यह है, परिश्रमी व्यक्ति का आत्म-विश्वास ।

विश्व-इतिहास में अनेक परिश्रमी महापुरुषों की यश-गाथाएँ स्वर्णाक्षरों में अंकित हैं । परिश्रम की सहायता से अनेक मनुष्यों ने अपना नाम अमर किया है । यूनान में डिमास्थीज को पहले बोलना तक नहीं आता था परन्तु निरन्तर परिश्रम के फलस्वरूप वह आगे चलकर एक प्रसिद्ध वक्ता हो गये । राणा प्रताप एवं शिवाजी ने अपनी मातृभूमि को स्वाधीन कराने के लिए कितना परिश्रम किया था । प्रताप को तो अपने प्राणों की भी बाजी लगानी पड़ी । महात्मा गाँधी ने निरन्तर परिश्रम कर सदियों से गुलामी की बेड़ियों में जकड़े हुए भारत को स्वतन्त्रता दिलाई तथा लोगों को जाग्रत किया ।

परिश्रम का उद्देश्य केवल अपने स्वार्थ के लिए ही नहीं होना चाहिए । स्वार्थी मनुष्य का परिश्रम, परिश्रम नहीं । बहुत-सी ऐसी वस्तुओं के लिए भी प्रयत्न किया जाता है जिसका फल परिश्रम करने वालों को न मिलकर आगे आने वाली सन्तानों को मिलता है । परिश्रम आत्म-विश्वास, लक्ष्य के प्रति निष्ठा और सतत् प्रयत्न के द्वारा सफल ही होता है । किसी कवि के शब्दों में—"भुजबल में वह शक्ति भरी है, जिससे भाग्य बदलता ।"

उच्च उद्देश्य को मन मानस में संजोकर कार्य करना परिश्रम कहलाता है । एक कृषक अधिक अन्न उत्पादन करने के लिए रात-दिन श्रम करता है । अन्न के अधिक मात्रा में उत्पन्न होने से राष्ट्र आत्म-निर्भरता की ओर अग्रसर

होता है। इस प्रकार कृषक परिश्रमशील पुकारा जाता है। एक अध्यापक अपने छात्रों के साथ घोर श्रम करता है। उसका श्रम देश में उत्तम नागरिकों का सृजन करता है। इस भाँति छात्रों के साथ मनोयोगपूर्वक परिश्रम करने वाला अध्यापक अध्यवसायी तथा परिश्रम प्रिय होता है। कारखानों तथा मिलों में कार्यरत मजदूर भी परिश्रमशील होते हैं। खानों तथा खदानों में काम करने वाले श्रमिक-श्रम की जीती-जागती प्रतिमा हैं।

व्यक्तिगत स्वार्थ को दृष्टि में रखकर किया गया श्रम निम्न श्रेणी में आता है। एक दुकानदार प्रातः से रात्रि तक स्वयं की दुकान पर बैठकर धन अर्जित करता है। इस धन से केवल उसके ही परिवार का भरण-पोषण होता है फलतः यह एक दुकानदार परिश्रम प्रिय नहीं कहा जा सकता। उसके श्रम का फल उसके गृह तक सीमित है। इसके विपरीत श्रमदान के माध्यम से सड़क बनाने वाले ग्रामीण जन परिश्रमशील कहलाते हैं। इस सड़क निर्माण से ग्राम एवं राष्ट्र दोनों का ही उत्थान होगा। ये कार्य किसी परिवार विशेष के लाभार्थ नहीं किया गया है। राष्ट्र तथा समाज के उत्थान में श्रम का गौरवपूर्ण स्थान है।

संसार में कठिन से कठिन कार्य परिश्रम द्वारा ही सिद्ध हो सकते हैं। परिश्रम में एक ऐसी रहस्यमय शक्ति निहित है जो मानव को सिंह की भाँति बलवान बनाकर पथ की कठिनाइयों से टक्कर लेने के लिए निर्भीक बनाती है। यदि कोई राष्ट्र, कोई व्यक्ति सच्चे हृदय से परिश्रम का पुजारी है तो वह राष्ट्र देश, समाज तथा व्यक्ति अपने मनोरथ में शीघ्र ही सफलता प्राप्त करेगा, इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं है।

42
समय का सदुपयोग

विचार-तालिका

- समय का महत्त्व
- समय का सदुपयोग

- **समय के सदुपयोग से लाभ**
- **समय का सदुपयोग न करने से हानियाँ**
- **समय का सदुपयोग करने वाले व्यक्तियों का जीवन**
- **उपसंहार**

"है समय नदी की धारा,
जिसमें सब बह जाया करते हैं।
लेकिन कुछ जन ऐसे होते हैं,
जो इतिहास बनाया करते हैं।"

समय के मूल्य को प्रत्येक बुद्धिमान मनुष्य ने स्वीकार किया है। जिसने समय के मूल्य को जान लिया, उसके लिए संसार में कोई भी वस्तु असाध्य नहीं रही। हमारा जीवन बहुत अल्प है और वह समय के घेरे में घिरा हुआ है। ईश्वर की सारी सृष्टि का निर्माण एवं नाश समय पर ही निर्भर है। समय में महान् शक्ति है। वह गिरे हुओं को उठा सकता है, निर्बल को सबल बना सकता है, रंक को कुबेर का कोष प्रदान कर सकता है। समय के मूल्य को जानकर ही गिरे हुए राष्ट्र उन्नति की चोटी पर विराजमान हो जाते हैं। सभी प्रकार के उत्थान और पतन इसी के आधीन हैं। अधिक क्या कहें, समय की शक्ति महान् एवं अचूक है।

समय का सदुपयोग कई रीतियों से किया जा सकता है। "प्रत्येक मानव को समय का मूल्य समझ लेना चाहिए। गया हुआ समय हाथ नहीं आता। किसी अँग्रेज लेखक ने कहा था—"समय की चाँद गंजी होती है यदि हम उसे सामने से पकड़ लेंगे तो वह हाथ आ जायगा नहीं तो बाद में पश्चाताप के अतिरिक्त कुछ भी हाथ नहीं लगेगा।" अध्ययन के द्वारा समय का सबसे अच्छा उपयोग किया जा सकता है। अध्ययन से बुद्धि का परिष्कार तथा विकास होता है। अच्छे कामों में लगे रहने से समय का सदुपयोग होता है।

वह मनुष्य निश्चय ही बड़ा भाग्यवान् है जो अपने समय के अमूल्य क्षणों को दूसरों की भलाई में लगाता है। दूसरों की भलाई में समय व्यतीत करने वालों का जीवन धन्य है। शेक्सपियर ने एक बार कहा था—"मैंने समय को नष्ट किया और अब समय मुझे नष्ट कर रहा है।"

हम रुपये-पैसों के विषय में बहुत सोच-विचार करते हैं, पर समय को नष्ट करते समय हमें तनिक भी दुःख नहीं होता। प्रत्येक कार्य समय पर ही होना चाहिए, अन्यथा आगे चलकर पश्चाताप करना पड़ेगा।

समय के सदुपयोग से मनुष्य का शारीरिक, बौद्धिक एवं मानसिक विकास होता है। समय का सदुपयोग करने वाले मनुष्य राष्ट्र और समाज की उन्नति में सहायक होते हैं तथा स्वयं भी यश के भागी बनते हैं। समय का उचित मूल्य जानकर संसार की अनेक जातियाँ आज कीर्ति एवं सम्मान प्राप्त किये हुए हैं। समय के सदुपयोग द्वारा मूर्ख विद्वान तथा निर्बल सबल हो सकते हैं। आज कितने भी उन्नतिशील राष्ट्र हैं, वे सब समय के सदुपयोग के कारण ही उन्नति के शिखर पर पहुँच सके हैं, समय के सदुपयोग के कारण ही उनका उत्कर्ष हुआ है। हमें अपना समय दलितों को उठाने में, निर्बलों को सबल बनाने में, भूखे-प्यासों की भूख-प्यास मिटाने में एवं समाज, राष्ट्र, देश, जाति की उन्नति करने में लगा देना चाहिए। इससे हमारा आत्म-विश्वास बढ़ेगा, हृदय को शान्ति मिलेगी तथा विचार पवित्र होंगे।

बहुत से लोग आलस्य में पड़े हुए अपने समय को व्यर्थ खोया करते हैं। जो व्यक्ति, समाज अथवा राष्ट्र आलस्य के वशीभूत होकर समय नष्ट करते हैं, उनकी उन्नति कभी भी नहीं हो सकती। आलस्य उन्नति की जड़ों को काटने वाला है। युवकों की दशा यह है कि अवकाश के दिन में घर पर बैठे हुए यही सोचा करते हैं कि समय किस प्रकार व्यतीत हो? समय न बीतने का यही कारण है कि हमने अपने जीवन को गतिहीन बना लिया है। हमें जो कुछ समय प्राप्त हुआ है उसका सदुपयोग हम नहीं करते। शायद उस समय हम यह भूल जाते हैं कि प्रत्येक क्षण हमें मृत्यु के मुँह की ओर ले जा रहा है।

समय का दुरुपयोग करने वाले व्यक्ति और राष्ट्र पतनशील होते हैं। व्यर्थ की बातें करना, नशीले द्रव्यों का सेवन करना, आलस्य में पड़े रहना बुरी संगति करना, बुरे आचरण में रत रहना समय का दुरुपयोग है जिससे हमारा स्वास्थ्य, धन और बुद्धि का नाश होता है।

समय का सदुपयोग करने वाले मनुष्य जीवन में शान्ति और सुख प्राप्त करते हैं। कारण यह है कि सत्संग आदि में भाग लेने से अन्तःकरण का भ्रम दूर होता है। विवेक-शक्ति जाग्रत होती है। चित्त को असीम आनन्द प्राप्त होता

है। समय का सदुपयोग करने वाला व्यक्ति अपनी शक्ति में विश्वास करता है। पूर्णरूप से जानता है कि बिना समय के सदुपयोग के कार्य सिद्धि सम्भव नहीं। अपना मनोरथ पूर्ण होने पर वह अपनी शक्ति का प्रचार नहीं करता। उसकी दृष्टि में तो समय की पूजा ही ईश्वर की पूजा होती है। विश्व-इतिहास में समय का मूल्य पहचानने वाले अनेक महापुरुषों की गाथाएँ स्वर्णाक्षरों में अंकित हैं। महात्मा गाँधी, ईश्वरचन्द्र-विद्यासागर, पण्डित जवाहरलाल नेहरू आदि महापुरुष हमारे देश के रत्न हैं जिन्होंने समय का सदुपयोग करना अनिवार्य समझा है।

आज के वैज्ञानिक युग में समय की बचत के लिए अनेक सुविधाएँ उपलब्ध हैं, पर हम उनसे समय की बचत करने की जगह समय का और भी अधिक दुरुपयोग करते हैं। हमें चाहिए कि हम अपनी एक दिनचर्या बना लें और किसी भी कारण उसका उल्लंघन न करें। पाश्चात्य देशों के किसान खेती के साथ-साथ दस्तकारी के अनेक काम करते हैं। वहाँ के लोग जीवन के प्रत्येक क्षण का पूर्ण सदुपयोग करते हैं।

उन्नतिशील देश हो, चाहे मनुष्य, उसका तो एक-एक क्षण सत्कार्यों में ही व्यतीत होता है। इसी से उसकी और उसके राष्ट्र की प्रभात-बेला अपनी बाँकी झाँकी दिखाती है। इसी में उसका स्वाद मीठी मुस्कान में मुस्कराता चला आता नजर पड़ता है। समय के महत्त्व को पश्चिम के देशों ने भली प्रकार समझा है। इसीलिए उन्होंने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता प्राप्त की है। समय के सदुपयोग से हम उन्नति के शिखर पर पहुँचने में समर्थ हो सकते हैं। वास्तव में वही मनुष्य बुद्धिमान है, जो अपने समय का सदुपयोग कर उन्नति के पथ पर अपने कदम दृढ़ता के साथ रखता हुआ निरन्तर गतिशील रहता है।

43
चरित्र-बल

विचार-तालिका

- चरित्र की व्याख्या
- चरित्र-बल की महत्ता
- चरित्र-बल से लाभ
- चरित्र-बल के नाश से हानियाँ
- उपसंहार

सुचरित्र-सम्पन्न व्यक्ति अपने समाज और देश की शोभा है । चरित्रवान् की सर्वत्र पूजा होती है । जिस व्यक्ति के चरित्र में जितने अधिक गुणों का समावेश होता है, वह व्यक्ति समाज में उतना ही अधिक सम्मान प्राप्त करता है । चरित्र-बल एक महान् शक्ति है, अतः हमें यह जानना परम आवश्यक है कि चरित्र क्या है । अच्छे विचार सद्भाव, उत्तम, गुण, सद्प्रवृत्ति, सदाचार सुन्दर विचार आदि के संगठन को चरित्र-बल का नाम दिया है ।

चरित्र-बल से हमारा अभिप्राय है, मनुष्य में विद्यमान वे शक्तियाँ हैं जो उसकी सभी शक्तियों पर अपना आधिपत्य स्थापित कर शासन के रूप में कार्य करती हैं । यों तो मनुष्य की अनेक इच्छाएँ होती हैं, लेकिन उनमें से बहुत ही कम ऐसी हुआ करती हैं जो उसके जीवन में अपना स्थायी स्थान ग्रहण करती हैं । अपनी इच्छाओं की पूर्ति के समय चरित्रवान् व्यक्ति इस बात का बराबर ध्यान रखता है कि उसकी ऐसी कोई भी इच्छा न हो जाय जो समाज और देश के लिए अहितकर हो ।

मनुष्य में अनेक शक्तियाँ सन्निहित हैं उनमें सर्वोच्च स्थान चरित्र-बल का है । मनुष्य के आचार-विचार, रहन-सहन आदि से उसके चरित्र का पता चलता है । चरित्र-बल का प्रभाव असीम है । मानव-जीवन की तुच्छताओं को समूल विनष्ट करने वाला अकेला चरित्र-बल ही है । चरित्र-बल के सामने सभी शक्तियों को नत-मस्तक होना पड़ता है ।

किसी ने कहा है—"यदि धन नष्ट हो गया तो कुछ नष्ट नहीं हुआ, यदि स्वास्थ्य नष्ट हो गया तो कुछ नष्ट हो गया और यदि चरित्र नष्ट हो गया

तो मानव-जीवन की सम्पूर्ण चीजें नष्ट हो गईं।" अतः चरित्र-बल की महत्ता अपार है। मनुष्य में चरित्र-बल एक ऐसी वस्तु है जो उसे पशुओं की श्रेणी से पृथक कर देवों की पंक्ति में ला खड़ा करती है।

चरित्र के सम्बन्ध में भर्तृहरि का निम्न कथन बहुत सुन्दर है—

"जिसके चरित्र में शील का आलोक प्रकट हो रहा है, उसके लिए अग्नि शीतल हो जाती है, समुद्र नाली के समान हो जाता है, सुमेरु (पर्वत-विशेष) एक शिला के तुल्य हो जाता है, सिंह मृग के सदृश हो जाता है, सर्प माला जैसा बन जाता है तथा विष अमृत के रूप में परणित हो जाता है।" कितनी महत्ता है चरित्र-बल की।

"स्वतन्त्रता हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है।" लोकमान्य तिलक की यह गम्भीर वाणी उनके चरित्र-बल की ओर संकेत करती है। यह उनका चरित्र बल ही था जिसकी शक्ति के भरोसे उन्होंने ऐसे गम्भीर शब्दों का उच्चारण किया। चरित्रवान् व्यक्ति में आत्मिक शक्ति प्रतिक्षण जाग्रत होती रहती है। उसका हृदय सुमेरु पर्वत के समान विशाल तथा समुद्र के समान गम्भीर होता है। यह बापू का चरित्र बल ही था जिसने भारत को स्वतन्त्रता के मन्दिर में लाकर खड़ा कर दिया। चरित्रवान व्यक्ति लाखों मनुष्यों के बीच सूर्य के समान चमका करता है। उसकी शक्ति के सामने बड़े-बड़े शक्तिशाली थर्रा उठते हैं। चरित्रनिष्ठ नवयुवक एवं नवयुवतियाँ ही देश के कर्णधार हैं। उन्हीं के कन्धों पर देश के भविष्य का उत्तरदायित्व है।

चरित्रहीनता व्यक्ति के अधोपतन के मुख्य कारणों में से एक है। जिस व्यक्ति का चरित्र गिर गया, उसका सर्वस्व नष्ट हो गया। नैतिक पतन का प्रमुख कारण चरित्रहीनता है, चरित्रहीन व्यक्ति का सर्वत्र अपमान, अनादर और तिरस्कार हुआ करता है। जो व्यक्ति चरित्र-हीनता के गड्ढे में गिर पड़ता है, उसका उठना फिर सहज काम नहीं। उसका न तो समाज में सम्मान ही होता है और न कोई उसका विश्वास ही करता है। उसका सर्वस्व मिट्टी में मिल जाता है। चरित्रहीन व्यक्तियों में से ही विद्रोही, दुष्ट, लुटेरे आदि अनेक दुर्गुणी व्यक्ति हुआ करते हैं। चरित्रहीन व्यक्ति न केवल अपनी ही अवनति का कारण होता है बल्कि देश तथा समाज के लिए भी वह भयंकर रूप से घातक सिद्ध होता है।

हमारे देश में ऐसे अनेक वीर, साहसी, चरित्रवान् व्यक्तियों का जन्म हुआ है जो देश का कल्याण तथा उन्नति के मार्ग पर बराबर अग्रसर करते रहे हैं। यही कारण है जो श्रीराम, श्रीकृष्ण, गौतम बुद्ध आदि ऐसे अनेक व्यक्तियों के नाम हमारे बीच अमर रहेंगे।

चरित्रवान् व्यक्ति का जीवन पावन तथा अनुकरणीय होता है। प्रतिपल तेज का प्रकाश विकीर्ण होता रहता है। चरित्रवान् व्यक्ति का अन्तःकरण प्रेम, दया, त्याग, क्षमा, परोपकार, स्वावलम्बन एवं निर्भरता का कोष होता है। दुनियाँ का वैभव एवं राजप्रासाद का सुख चरित्रवान् के कदमों को चूमता है। चरित्र के माध्यम से ही मानव स्वयं के समाज का आदर्श, देश का कर्णधार तथा दुनियाँ का उद्धारक बनता है। चरित्र-बल आत्म-शक्ति तथा विकास की कुंजी है।

प्रत्येक मानव के चरित्र के दो पहलू होते हैं। प्रथम व्यक्तिगत तथा दूसरा सामाजिक। मानव व्यक्तिगत जीवन में स्वतन्त्र होने पर भी सामाजिक अस्तित्त्व के कारण पूर्ण रूपेण स्वच्छन्द नहीं है। जीवन में संयम अपेक्षित है। इसके लिए चरित्र-बल एक आधारशिला है। सामान्य मानव नाम मात्र की विपत्ति से स्वयं के विवेक को खो बैठता है लेकिन चरित्रवान व्यक्ति अपने दृढ़ संकल्प से प्रत्येक विरोधी परिस्थिति को स्वयं के मनोनुकूल बना लेता है। दुनियाँ में अनेक माया जाल मानव को अपने जाल में फँसाने के लिए फैले हुए हैं। जो मानव माया-जाल में फँस जाता है वह संसार सागर में गोते लगाता रहता है। वह मुक्ति से कोसों परे हो जाता है। लेकिन जो इस माया-जाल से विलग रहता है वह आलोकित हो उठता है। चरित्रबल इसका प्रमुख तथा दृढ़ आधार है। चरित्र-बल से हम ब्रह्मरूप बनने की ओर अग्रसर होते हैं। चरित्रवान् लोभ तथा भय का शिकार नहीं होता। उसे शोषण में नहीं अपितु पोषण में तोष मिलता है।

वास्तव में चरित्र-बल में सभी सद्गुणों का समावेश होता है। अपने चरित्र को ऊँचा उठाने के लिए हमारे जीवन में कर्त्तव्य-पालन का प्रमुख स्थान होना चाहिए।

44
मित्रता

विचार-तालिका

- मित्र की आवश्यकता
- मित्रता तथा साधारण परिचय में भेद
- सच्चे मित्र के कर्त्तव्य
- अच्छे मित्रों के उदाहरण
- बुरे मित्रों का प्रभाव
- उपसंहार—मित्रों की परख

यह जीवन-यात्रा बड़ी कठोर है। दिवस तथा रजनी के समान सुख तथा दुःख का चक्र घूमता रहता है। किसी मानव के सिर पर विपत्ति के काले बादल मँडराने लगते हैं। इससे मानव चिन्ताओं के जाल में फँस जाता है। कभी हर्ष में इतना मग्न हो जाता है कि अपने कर्त्तव्यों के प्रति ही वह उदासीन हो जाता है। वह चाहता है कि उसे उसकी विपत्ति में सहायता करने वाला कोई सच्चा मित्र मिले। ऐसा मित्र जो उसके सुख-दुःख को अपना सुख-दुःख समझ सके। जो उसे सब प्रकार की बाधाओं में विश्वास के साथ सहायता तथा सहानुभूति निरन्तर प्रदान करता रहे। ऐसा साथ विश्व में मित्र के नाम से पुकारा जाता है। जीवन में किसी को मित्र बनाना परम आवश्यक है।

मित्रता तथा परिचय में पर्याप्त भेद है। जब पहले-पहले किसी से मिलते हैं तो उससे हमारा कुछ परिचय हो जाता है। जब निरन्तर उससे मिलना होता रहता है तो उसके साथ हमारा एक प्रकार का स्नेह बन्धन जुड़ जाता है। यदि उस व्यक्ति का स्वभाव नम्र हुआ तो यही सम्बन्ध प्रगाढ़ हो जाता है; तब इसे मित्रता कहने लगते हैं। इससे सिद्ध होता है कि साधारण परिचय तो किसी मनुष्य के साथ थोड़ी देर तक बातें करने या मिलने से ही हो सकता है; किन्तु मित्रता सतत् मिलते रहने से कुछ समय उपरान्त स्थापित हो पाती है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह कुछ सोचता है, पर उसका सोचना समाज के मध्य न होकर एकाकी-सा रहता है। वह अपना उद्देश्य निर्धारित

करता है, अपने जीवन के पतन तथा उत्थान का चिन्तन करता है। इसके बाद वह यह भी चाहता है कि कोई उसकी बात सुने और अपनी सम्मति प्रदान करे। इसी दिशा में मित्र की आवश्यकता प्रतीत होती है।

इस संसार में सच्चे मित्र थोड़े ही होते हैं। पर यदि किसी को सच्चा मित्र प्राप्त हो जाता है तो उसका जीवन सार्थक हो जाता है। वह सच्चा मित्र जीवन को आनन्दमय बना देता है। वह मित्र से स्वार्थ के नाते आकर नहीं मिलता, उसे इस बात का लोभ नहीं होता कि मित्र से उसे कुछ धन अथवा अन्य कोई वस्तु मिले। उसे तो चाहिए, एक-मात्र अपने मित्र का स्नेह और प्रेम। मित्र अपने प्राणों को संकट में डालकर अपने मित्र की सहायता करता है तथा ऐसा करते समय वह बड़ी प्रसन्नता का अनुभव करता है। संसार में सच्चे मित्र रूपी मल्लाह के सहारे जीवन-नौका संसार-सागर से सुगमता से पार हो जाती है।

मित्र के कर्त्तव्य बड़े महत्त्व रखते हैं। जब हम दुःख के सागर में निमग्न हों, जब हमारे लिए संसार अन्धकारमय हो, जब हमारे लिए संसार सुनसान प्रतीत होता है तब मित्र का कर्त्तव्य है कि वह हमारी सहायता करे। जब दुःख से हमारे पाँव डगमगाने लगें तब वह हमें गिरने न दे। श्री तुलसीदास ने कहा भी है—

"धीरज धरम मित्र अरु नारी।
आपत काल परखिए चारी॥"

वास्तव में मित्र से विपत्ति में महान् सहायता मिलती है। उसे चाहिए कि वह तन, मन और धन से अपने मित्र की मदद करे। मित्र का यह भी कर्त्तव्य है कि वह हमें बुरे मार्गों से हटाकर अच्छे मार्ग पर अग्रसर करे। यदि कोई मित्र हमें ऐसा मिल जाए जो कि बुरे कर्म जैसे—मदिरापान, चोरी, झूठ बोलना आदि दुर्गुणों से बचाने के लिए हमें अपनी सलाह तथा उपदेश न दे तो ऐसे मित्र से हमको क्या लाभ हो सकता है।

जिसे सच्चा मित्र मिल गया, उसे जानो संसार की सबसे बड़ी निधि प्राप्त हो गई। सच्चा मित्र इस धोखे, छल, प्रपंच आदि से भरे संसार में सदा हमारा पथ-प्रदर्शन करता है। संसार में अनेक मित्रों ने अपने मित्रों को पतन के गर्त में गिरने से बचाया है। मित्र का कर्त्तव्य है कि वह विपत्ति में हमें धैर्य प्रदान

करे। जब हम प्रसन्न हों तो उसकी प्रसन्नता असीम हो। इतिहास में अनेक सच्चे मित्रों के उदाहरण मिलते हैं। राम और सुग्रीव की मित्रता को कौन नहीं जानता ? मित्रता में छोटे-बड़े का प्रश्न नहीं उठता। निषादराज को राम ने बिना छोटे-बड़े का भेद किए अपनी छाती से लगाया। सच्ची मित्रता तो विपत्ति आने पर ही जानी जाती है। वैसे तो प्रत्येक व्यक्ति स्वार्थ साधन के समय अपनी मित्रता का ढोंग रचता है और पसीने के स्थान पर रक्त बहाने का दावा करता है, परन्तु मित्र की परख तो उसी समय होती है जब तुमको किसी विपत्ति ने घेर लिया हो। दीन-दुर्बल नर-काल सुदामा एक जनेऊ धारण कर द्वारिका अपने मित्र श्रीकृष्ण से मिलने के लिए जाता है, उसके वहाँ पहुँचने पर श्रीकृष्ण सम्पूर्ण राज-काज को छोड़कर अपने मित्र सुदामा से मिलने के लिए आतुर होकर दौड़ते हैं तथा उसे छाती से लगा कर उसके पैरों को अपने नयनों के नीर से पखारने लगते हैं। फिर उसकी दीन दशा को देखकर बिना माँगे ही उसे सब कुछ दे डालते हैं। यह है, मित्र की मित्रता और सच्चे मित्र की पहिचान।

कुछ लोग ऐसे भी होते है जो मित्रता के पवित्र महत्त्व में कलंक का टीका लगा देते हैं। वे वास्तव में मित्र नहीं, बल्कि मित्र के रूप में स्वार्थी और लम्पट हैं। ऐसे लोगों की मित्रता किसी स्वार्थवश ही होती हैं। जहाँ स्वार्थ निकला वहीं मित्रता का अन्त हुआ।

देखिये गिरधर कवि के शब्दों में—

> "साईं या संसार में, मतलब को व्यौहार।
> जब लगि पैसा गाँठ में, तब लगि ताको यार॥
> तब लगि ताको यार, संग ही संग डोलै।
> पैसा रहा न पास, यार मुख से नहिं बोले॥"

यह मित्रता नहीं। यह तो स्वार्थ का व्यवहार है।

इस प्रकार के मित्र छली तथा कपटी होते हैं। ये चाटुकारी करना जानते हैं। सच्ची तथा हित साधन की बात तो इनसे आती नहीं। ऐसे स्वार्थी मित्र मित्रता के पावन मन्दिर को अपवित्र करते हैं। सच्ची मित्रता में स्वार्थ के लिए स्थान कहाँ ? सच्चे मित्रों की तो आत्मा मित्रों से मिलकर एकाकार हो जाती है।

इतिहास इस बात का प्रत्यक्ष साक्षी है कि स्वार्थी मित्रों की मित्रता से कितने नाशकारी एवं घातक परिणाम निकले हैं। रावण और मारीच की मित्रता के दुष्परिणाम से स्वर्ग की शोभा को भी लज्जित करने वाली लंका क्षण-भर में धराशायी हो गई। इसलिए मनुष्य को मित्रता करने में बड़ी सावधानी रखनी चाहिए। अतः यह परम आवश्यक है कि हम किसी को भी अपना मित्र बनायें तो उसे परख लें। सच्चे मित्र से ही अपना जीवन सुखी हो सकता है।

45
हास्यरस और जीवन

विचार-तालिका

- **आरम्भ**
- **सामाजिक जीवन में हास्य की उपयोगिता**
- **व्यक्तिगत एवं राष्ट्रीय समस्याएँ और हास्य**
- **हास्य एवं साहित्य**
- **प्रस्तावना**

आज मानव का जीवन कलह, द्वेष, दम्भ, पाखंड आदि दुर्गुणों के चक्कर में पड़कर दूषित तथा पीड़ामय हो गया है। प्राचीन काल में जो सुख एवं शान्ति की रेखाएँ मानव के मुख-मण्डल पर दृष्टिगोचर होती थीं, आज वे उससे कोसों दूर चली गई हैं। यही कारण है जो आज के मानव का जीवन दैनिक समस्याओं से बोझिल हो गया है। आज वह मनुष्य बड़ा ही सौभाग्यशाली है जो स्वयं भी हँसता है और दूसरों के हृदय में भी प्रसन्नता का संचार करता है। आशा की मनहरण मुस्कान से दिगदिगन्त को आपूरित कर सकता है क्योंकि हास्य से पूर्ण जीवन ही जीवन है। वह जीवन ही क्या है जो निराशा, दैन्य तथा रोदन से परिपूर्ण हो।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज से पृथक रहकर उसका जीवन उसके लिए अभिशाप है। अतः यह स्पष्ट है कि मनुष्य के लिए

समाज उतना ही आवश्यक है जितना कि शरीर के लिए भोजन। जिस प्रकार कि सन्तुलित भोजन के अभाव में शरीर निर्बल अशक्त एवं रोगग्रस्त हो जाता है और उसकी कार्यक्षमता में कमी आ जाती है, ठीक उसी प्रकार से जीवन की असन्तुलित भावनाओं; जैसे चिन्ता, शोक, कलह आदि से मनुष्य का जीवन भी कष्टमय एवं दुःखमय हो जाता है। आज के वैज्ञानिक एवं साहित्यकारों आदि सभी का यह मत है कि हास्य ही वह परम औषधि है जिसके सेवन से मनुष्य पुनः स्वस्थ होकर भविष्य में वास्तविक लाभ प्राप्त कर सकता है।

हास्य से मनोरंजन होता है जिसके कारण उदासीनता नष्ट होती है, चित्त प्रसन्न होता है और मन की प्रवृत्तियाँ जाग्रत होती हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से भी हास्य हमारे लिए बहुत उपयोगी है, स्वतन्त्र रूप से हँसने से फेफड़ों की दूषित वायु निकल जाती है और शुद्ध वायु स्थान ग्रहण कर लेती है जिससे हमारे हृदय का दूषित रक्त घटने लगता है तथा शुद्ध रक्त की मात्रा में वृद्धि होती है। अनेक गले के ऐसे रोग हैं जो हमारे हँसने मात्र से ही सही हो जाते हैं। हास्य द्वारा न जाने हम कितने रोगों से अपनी रक्षा कर लेते हैं। अतः हास्य का जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। एक अंग्रेजी कवि का कथन है—"Laughing thrice day keeps the doctor away" और यह कथन अक्षरशः सत्य है।

हास्य सामाजिक तथा व्यक्तिगत दृष्टि से भी हमारे लिए अति आवश्यक है। आज हमारे सामाजिक जीवन में अनेक कुरीतियाँ पैर जमाकर बैठी हुई हैं जिनको समाप्त करने के लिए समय-समय पर अनेक समाज-सुधारकों तथा धार्मिक-पुरुषों द्वारा अनेकानेक प्रयत्न किये गये हैं, परन्तु ये अब तक भी यथा-वत् ही नहीं वरन् अपने पूर्ववत् रूप और आधार से भी द्विगुणित और त्रिगुणित रूप में विद्यमान हैं, और जो हमारे जीवन को प्रत्येक प्रकार से क्लेशमय बना रही हैं, परन्तु हम इन सब सामाजिक कुरीतियों का बहिष्कार हास्य द्वारा बड़ी सुगमता से कर सकते हैं। नाटक, ड्रामा और चित्रपट क्या हैं ? जब हास्यरस कला का रूप धारण कर लेता है तब वह हमारे सम्मुख नाटक, ड्रामा और चित्रपट आदि के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। हम समाज में बाल-विवाह और दहेज-प्रथा आदि जैसी घातक कुरीतियों पर नाटक, ड्रामा और चलचित्र या प्रहसनों द्वारा भली-भाँति प्रकाश डाल सकते हैं और उन्हें हृदयस्पर्शी बना

10

सकते हैं। इसके अतिरिक्त यह देश के लिए अति उपयोगी है। उदाहरणार्थ, आज खाद्य-समस्या ने एक जटिल रूप धारण कर लिया है। देश में अन्न का अभाव है और यह अन्नाभाव की समस्या हमारे देश के कर्णधारों को सदैव चिन्तित बनाये रहती है। पर देश में कुछ ऐसे व्यक्ति हैं जिनके घरों में अन्न रखा हुआ सड़ रहा है। यदि हम इस समस्या को सुलझाना चाहते हैं तो उसके सुलझाने का एक मात्र साधन—कार्टून, ड्रामा, नाटक, चलचित्र या व्याख्यानों द्वारा ही हो सकता है, अर्थात् यदि हम उनकी नीति का उपहास करें या उनकी कटु आलोचना करें तो उन्हें अपनी भूल का मार्ग छोड़कर उचित तथा सत्य मार्ग पर आने के लिए निश्चित ही बाध्य होना पड़ेगा। अतः हास्य एक ऐसा दैवीय गुण है जो हमारी व्यक्तिगत और सामाजिक सभी छोटी-बड़ी समस्याओं का समाधान कर सकता है।

पर खेद है, भारतीय साहित्य में हास्य का प्रायः अभाव-सा ही है। इसका प्रमुख कारण भारत के जीवन के सम्बन्ध मे गम्भीर दृष्टिकोण ही है। गम्भीरता गहन और गम्भीर विषयों का उल्लेख कर सकने में समर्थ होती है। यह हास्य से कोसों दूर है। इसी कारण हमारे प्राचीन भारतीय साहित्य में हास्यरस नहीं के बराबर है और जो कुछ थोड़ा-बहुत है भी वह गम्भीरता एवं दार्शनिक जटिलता को ही लिये हुए है। भारतीय साहित्य में हास्यरस के अभाव का एक दूसरा कारण हमारी पराधीनता भी है। इस पराधीनता के वायुमण्डल में हम भारतीय कभी भी स्वतन्त्र जीवन एवं मनोरंजन का अनुभव न कर सके। पर आज जबकि हम स्वतन्त्रता के वायुमण्डल में विचरण कर रहे हैं। ऐसी दशा में भारतीय साहित्य में हास्यरस का अभाव होना केवल हमारी एक कमी नहीं अपितु हमारे लिए लज्जास्पद भी है। अतः आज हिन्दी लेखकों, कवियों, नाटककारों तथा उपन्यासकारों आदि सभी हिन्दी-सेवियों को इस ओर अपना विशेष ध्यान देना चाहिए। उन्हें हिन्दी साहित्य के इस अभाव को शीघ्राति-शीघ्र दूर करने के लिए सक्रिय कदम उठाना चाहिए।

वर्तमान समय में हमें विश्व के समक्ष अपने भारतीय आदर्श को एक ऐसे रूप में प्रस्तुत करना है जिससे कि विश्व का प्रत्येक सुविचारों से पूर्ण राष्ट्र प्रत्येक समाज हमारे भारतीय गौरव का लोहा माने। इस प्रयत्न में हमें अपनी शक्ति को जीवन के विभिन्न पहलुओं में लगा देना है। परन्तु जैसा कि

प्रस्तुत लेख में जीवन के लिए हास्यरस की अनिवार्यता प्रकट की गई है, इस ओर भी हमारे साहित्यकारों को अपनी पिछली भूल की पुनरावृत्ति न करके उसकी वृद्धि में भागीरथ प्रयत्न करना चाहिए। वास्तव में उन्हें एक ऐसे रूप में हास्य को प्रस्तुत करना है जो आदर्श हास्य की कोटि में आता है। आज हमारे साहित्य को अश्लील हास्यरस की आवश्यकता नहीं, उसे तो शुद्ध एवं उच्च कोटि का हास्य अपेक्षित है।

यदि आज हम अपना उत्थान एवं कल्याण चाहते हैं तो हमें अपने साहित्य में ओजपूर्ण हास्य की सृष्टि करनी ही होगी तथा स्वयं इस दैवी गुण को अपनाना होगा तभी हमारा जीवन सुन्दर, सुखमय एवं एक आदर्श जीवन का उदाहरण प्रस्तुत करने में समर्थ हो सकेगा। विलियम वर्ड्सवर्थ के शब्दों में हमारा जीवन "An Ideal happy life" एक आदर्श सुखमय जीवन बन जायेगा।

46

अहिंसा ही विश्व शान्ति का अस्त्र

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना**
- **वर्तमान समय में अहिंसा की आवश्यकता**
- **सच्ची शान्ति स्थापित करने की क्षमता अहिंसा में ही है**
- **अहिंसा के भयंकर परिणाम**
- **उपसंहार**

हिन्दू शास्त्रों में सत्य और अहिंसा का महत्त्व प्राचीन काल से हो रहा था। शतपथ ब्राह्मण का श्लोक है, "अहिंसासत्यांस्तेय ब्रह्मचर्य-परिग्राह यमाः" अर्थात् ईश्वर की उपासना में इन पाँच यमों का होना प्रथम और आवश्यक है। श्लोक में अहिंसा की व्याख्या इस प्रकार है कि किसी से बैर न करना अर्थात् सबसे प्रीतिपूर्वक व्यवहार करना ही अहिंसा है।

सदियों से पूर्व भारतवर्ष में एक महात्मा ने अहिंसा का उपदेश दिया जिनका नाम बुद्ध था। उनके द्वारा प्रचलित अहिंसा का लोप हो गया तो

ईश्वर ने विश्व में अहिंसा का प्रचार करने को एक-दूसरे महापुरुष को जन्म दिया जिनका नाम महात्मा गाँधी था। महात्मा गाँधी का जन्म उस समय हुआ जब सम्पूर्ण संसार हिंसा के पथ पर द्रुत गति से अग्रसर हो रहा था। ऐसे समय में महात्मा गाँधी ने संसार को सत्य और अहिंसा का पाठ पढ़ाया। उन्होंने भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम का संचालन भी अहिंसा द्वारा ही किया। विदेशी राजनीतिज्ञ भी महात्मा गाँधी को राजनीति में सत्य का उपयोग करते देख ताँतों तले उँगली दबाते थे।

वर्तमान समय में विश्व अनेक समस्याओं में उलझा हुआ है। संसार का वातावरण इस प्रकार का बन गया है कि मनुष्य को कुछ दिखाई ही नहीं पड़ता कि वह क्या करे और क्या नहीं, किन्तु महात्मा जी के अनुसार वास्तव में अहिंसा ही विश्व-कल्याण का उत्कृष्ट मार्ग है। महात्मा जी की अहिंसा विश्व-व्यापी थी। उनकी अहिंसा के अनुसार विश्व एक परिवार है जिस प्रकार मनुष्य अपने घर वालों से प्रेम करता है उसी प्रकार विश्व के प्रत्येक व्यक्ति को उस परम पिता की सन्तान समझना चाहिए और स्वयं विश्व-कुटुम्ब का सदस्य। यही विश्व की सम्पूर्ण समस्याओं के निराकरण का मूलमन्त्र है। फिर न तो किसी विश्व-युद्ध का भय रहेगा और न किसी 'वाद' का भय। मनुष्य अपने सब भेद-भावों को त्यागकर जब एक-दूसरे से प्यार करने लगेंगे तभी विश्व की सारी अशान्ति दूर हो जायेगी।

जिस समय द्वितीय विश्व-युद्ध समाप्त हुआ और महात्मा जी से इस विषय में मन्त्रणा की गई कि इस समय क्या करना चाहिए? महात्मा जी ने यही कहा मित्र राष्ट्र यदि विश्व में शान्ति स्थापित करना चाहते हैं तो उन्हें चाहिये कि जितने देशों को उन्होंने जीता है, उन सभी देशों को स्वतन्त्र कर दें। इस प्रकार हम देखते हैं कि यह महात्मा जी की एक अमूल्य मन्त्रणा थी। यदि जर्मनी को स्वतन्त्र कर दिया जाता तो इस प्रकार के व्यवहार से जर्मन जनता पर एक ऐसा प्रभाव पड़ता जो जर्मन जनता को शान्तिप्रिय बनाता और वे विश्व-शान्ति स्थापित करने में सहयोग देते। इस समय विश्व के कौने-कौने में अशान्ति फैली हुई है। कहीं पर हड़तालें हो रही हैं, कहीं पर हड़तालों की धमकी दी जा रही है तथा कतिपय देश परस्पर युद्ध में संलग्न हैं। इसी प्रकार समाचार-पत्र अशान्तिमय समाचारों से पूर्ण रहते हैं। इन सबका मूल

कारण यही है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वार्थ में लिप्त है। वह अपने हितों का ध्यान रखता है और दूसरे के हितों की अवहेलना करता है। इन सब समस्याओं का हल एक-मात्र अहिंसा ही है। यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में सत्य और अहिंसा को स्थान दे तो पृथ्वी स्वर्ग के समान हो सकती है। वर्तमान समय में एक अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय की स्थापना हो चुकी है। किन्तु उसने भी अधिक प्रगति नहीं की है क्योंकि वह भी उन राष्ट्रों के हाथ का खिलौना बना हुआ है जो शक्तिशाली हैं। अन्याय करना अहिंसा नहीं है। इस प्रकार यदि अन्तर्राष्ट्रीय संस्थायें भी महात्माजी द्वारा प्रतिपादित अहिंसा का पालन करें तो विश्व में सच्ची शान्ति स्थापित हो सकती है। इस प्रकार अहिंसा विश्व-शान्ति के लिए एक अस्त्र के समान है। विश्व का कल्याण इसी के द्वारा हो सकता है। इसके विपरीत जो राष्ट्र या देश अहिंसा की अवहेलना करके हिंसा के मार्ग पर अग्रसर होते हैं, उनको परिणामस्वरूप बहुत बुरा फल भोगना पड़ता है। इस पिशाचिनी हिंसा के ही कारण दो विश्व-महायुद्ध हो चुके हैं तथा तीसरे की तलवार सिर पर लटक रही है। इस अहिंसा के ही कारण न जाने कितनी अबलाओं, माँ-बहिनों की माँग का सिन्दूर तलवार की नौकों से पोंछा गया है, न जाने कितने मासूम बच्चों को संगीनों की नौकों पर लटकाया गया है। कितना भयंकर नृत्य है, इस हिंसा का? लेखनी भी हिंसा के परिणामों का वर्णन करने में ग्लानि का अनुभव करती है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि हिंसा से कभी वास्तविक शान्ति स्थापित न हुई है तथा न भविष्य में कभी होगी ही। महाराज अशोक का प्रत्यक्ष उदाहरण हमारे सामने है। विजय के दम्भ में उन्मत्त अशोक कलिंग पर आक्रमण करता है, रक्त की सरिताएँ प्रवाहित हो जाती हैं, विजय भी अशोक को प्राप्त होती है परन्तु इतने मनुष्यों का रक्तपात देखकर अशोक तिलमिला उठता है, उसकी आत्मा छटपटा उठती है। फलतः वह प्रतिज्ञा करता है कि आज से मैं तलवार के बल पर नहीं अपितु प्रेम के बल पर मनुष्य के हृदयों पर विजय प्राप्त करूँगा। परिणामस्वरूप अशोक को उसकी प्रजा हृदय से प्यार करने लगती है। क्या यह सब हिंसा से सम्भव था? उत्तर स्पष्ट है कि हिंसा एक बहाने में भले ही समर्थ हो परन्तु मानव की सुख-समृद्धि में कभी वृद्धि नहीं कर सकती।

यह तो अहिंसा का अनूठा अमर लोक है जिसमें विचरण करता हुआ मानव अमृत रस की वारिधारा से सिंचित होने, काल से कवलित होने वाले यौवन को मधुर बनाने तथा सकल सिद्धियों को अपनी सेवा का सुअवसर देने एवं विश्व में सच्ची शान्ति स्थापित करने में समर्थ होता है तथा इस संसार में अमृत पुत्र बनकर जीवित रहता है।

47
प्रौढ़-शिक्षा

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- भारत की अधिकांश जनता का निरक्षर होना
- प्रौढ़ शिक्षा में बाधाएँ
- समस्या का निराकरण
- उपसंहार

आज दुष्यंत कुमार एवं भरत की यह पावन भूमि शताब्दियों की दासता की शृंखलाओं को तोड़कर स्वतन्त्र वातावरण में साँस ले रही है।

आज भारत में जनतन्त्र का विकास हो रहा है। भारत का बच्चा-बच्चा अपने देश के निर्माण-कार्य में व्यस्त है। मगर फिर भी हम देखते हैं कि देश की वाँछित उन्नति नहीं हो पा रही जितनी कि होनी चाहिए और इसका एकमात्र कारण है, अविद्या। भारत की लगभग 80 प्रतिशत जनता आज भी अशिक्षित है। प्रजातन्त्र की सफलता के लिए जनता का शिक्षित और समझ-बूझ रखने वाली होना आवश्यक ही नहीं अपितु अनिवार्य है। यह परम वाँछनीय है कि उसको अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों का ज्ञान हो। वह इस बात की अभ्यस्त हो कि जाग्रत एवं बौद्धिक विकास में स्वयमेव प्रगति करे तथा उसमें सहायक भी हो। यदि भारतवर्ष राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में पूर्ण भाग लेना चाहता है, यदि भारत राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक आदि

क्षेत्रों में उन्नति करना चाहता है तो देश की सरकार एवं शिक्षित नवयुवकों को चाहिए कि वे हमारे भारतीय-समाज में पैर तोड़कर बैठी हुई निरक्षरता जैसी पिशाचिनी को भगा दें। इसको भगा देने का सर्वप्रथम एवं सुविधापूर्ण माध्यम देश में प्रौढ़-शिक्षा का प्रसार और प्रचार है।

भारतवर्ष की जनसंख्या का अधिकांश प्रौढ़ भाग सामाजिक क्षेत्र में पिछड़ा हुआ है, वह संकुचित दृष्टिकोण तथा अन्धविश्वासों का शिकार बन चुका है। यद्यपि शरीर से वह बीसवीं शताब्दी में है परन्तु उसका हृदय और मस्तिष्क अभी पन्द्रहवीं शताब्दी में घूम रहा है। उसके रहन-सहन का ढंग प्रायः असन्तुलित है, उनका जीवन पूर्णरूपेण आदिमकाल का-सा तथा अन्धकारमय है, उनके जीवन का दृष्टिकोण संकुचित तथा स्वार्थपूर्ण है। अपने पैतृक कार्य को करने की भी उनमें पूर्ण-दक्षता एवं क्षमता नहीं है। फलतः वे अपने आर्थिक पहलू से भी सम्पन्न नहीं हैं। हमारा कृषक वर्ग और श्रमिक वर्ग दोनों ही अयोग्य हैं। दोनों ही उत्थान या औद्योगिक निर्माण के आधुनिक और वैज्ञानिक ढंगों से अनभिज्ञ हैं। यद्यपि वे ऐड़ी-चोटी का परिश्रम करते हैं तथापि उनके जीवन का रहन-सहन तथा स्तर ऊँचा नहीं उठता। वे संसार में साँस अवश्य लेते हैं परन्तु जीवित हुए भी मृतक समान हैं।

और इस घोर अशिक्षा के अनेक कारण हैं—

(1) पूँजीगत प्रौढ़-शिक्षा में कोई सहयोग नहीं देते क्योंकि जब तक श्रमिक-वर्ग अशिक्षित है तभी तक उनको अधिक लाभ हो सकता है।

(2) यद्यपि सरकार ने प्रौढ़ों को शिक्षा देने के लिए संस्थाएँ स्थापित की हैं; परन्तु वे कागजी खाना-पूर्ति करती हैं।

(3) सरकार का अधिकारी वर्ग केवल प्रचार कार्य ही करता है जो बिल्कुल प्रभावी नहीं है।

(4) इस शिक्षा का बोझ केवल अल्प-वेतन-भोगी अध्यापकों पर ही पड़ता है। अतः वे पूर्ण उत्साह से इस ओर कार्य नहीं करते।

(5) लोगों की निर्धनता ने भी इस कार्य में पर्याप्त रोड़ा अटकाया है। उपर्युक्त कारणों के अतिरिक्त और भी छोटे-बड़े अनेक कारण हैं जो प्रौढ़-शिक्षा-प्रसार में बाधक बने हुए हैं परन्तु क्या हमें और हमारी लोक हितकर सरकार को इन बाधाओं से डर कर अपने कर्त्तव्य-पथ से मुख मोड़ लेना

चाहिए। क्या बहुसंख्यक जन समूह की उपेक्षा करनी चाहिए ? नहीं; कदापि नहीं।

अब प्रश्न यह उठता है कि इस समस्या को फिर किस प्रकार सुलझाया जाय ? इस कार्य को कैसे सम्पन्न किया जाय।

आज प्रौढ़-शिक्षा का उद्देश्य अखिल भारतीय आधार पर सन् 1944 की सार्जेंट रिपोर्ट में प्रस्तावित आधार से बिलकुल भिन्न है और होना भी चाहिए। सन् 1943 में तो हमारी परतन्त्रता का समय था। हम उस समय पर मुखापेक्षी थे। अब हम स्वतन्त्र हैं और सामाजिक शिक्षा की हमें परम आवश्यकता है। स्वास्थ्य नियम और यदि सम्भव हो सके तो कृषक वर्ग को कृषि-शास्त्र की और श्रमिक वर्ग को आधुनिक वैज्ञानिक औद्योगिक ढंगों की शिक्षा देनी चाहिए। उन्हें केवल सिखाया न जाय अपितु पूर्ण व्यावहारिक ज्ञान कराया जाय। शिक्षा की योजना में केवल पढ़ना, लिखना और गणित ही नहीं, बल्कि उसमें व्यापक दृष्टिकोण भी होना चाहिए। सबसे मुख्य बात यह है कि उनकी आदतें अच्छी बनें जो कि उनके जीवन को स्वयं उनके लिए तथा समाज के लिए हितकर बनाने में सहयोग दें। ये बातें उनको वाद-विवाद में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करके आत्मबोध द्वारा बताई जा सकती हैं। जैसे वे लोग प्राचीन काल की कथाओं को सुनने के लिए एकत्रित होते हैं। उसी प्रकार आजकल उन्हें राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पहलुओं पर व्याख्यानों द्वारा जानकारी कराई जाय। चलते-फिरते सबल पुस्तकालयों का आयोजन होना चाहिए ताकि प्रौढ़ लोग उनसे समुचित लाभ उठा सकें। साथ ही साथ सामाजिक तथा अन्य पहलुओं का सांगोपांग ज्ञान भी कराया जाय। इस प्रकार उन पर अमिट प्रभाव पड़ेगा और उनका अनुभव दृढ़ आधार को लेकर उच्च से उच्चतर बनता चला जायेगा। प्रौढ़-शिक्षा में व्यावसायिक मार्ग-दर्शन भी कराया जाय ताकि प्रौढ़ लोग अपने व्यवसाय में निपुणता प्राप्त कर सकें और इन्हें अच्छी आय भी हो।

प्रौढ़-शिक्षा के जितने भी कार्य हों, वे सब सौद्देश्य और उसका प्रभाव मनोरंजनात्मक होना चाहिए। प्रौढ़ों के लिए सामाजिक शिक्षा की योजना निम्नलिखित उद्देश्यों को ध्यान में रखकर कार्यान्वित करनी चाहिए—

(1) प्रौढ़ों को समाज में अपने लिए समुचित स्थान प्राप्त करने योग्य बनाना।

(2) उन्हें सामाजिक एवं राजनीतिक क्षेत्र में गतिशील करना।

(3) उनकी आर्थिक दशा उन्नत करना तथा उनके सांस्कृतिक जीवन की प्रगति करना।

(4) उन्हें शारीरिक पहलू से सुदृढ़ और स्वस्थ, नैतिक दृष्टि से उच्च विद्या तथा शिक्षा क्षेत्र में सर्वतोमुखी बनाना।

(5) उनके अन्दर विचार-शक्ति को उत्पन्न करना।

प्रौढ़-शिक्षा का कार्य अत्यन्त कठिन और जटिल है। इसमें सहानुभूति, सहयोग तथा बन्धुत्व की भावना की परम आवश्यकता है। प्रौढ़-शिक्षा के संचालन में वैज्ञानिक ढंग से काम किया जाना चाहिए। प्रौढ़-शिक्षा केन्द्र अधिकतर उन क्षेत्रों में स्थापित किये जाने चाहिए जो ग्रामीण क्षेत्र हैं या फैक्टरी अथवा मिल के क्षेत्रों में हैं, जहाँ पिछड़े हुए, दलित, अविकसित दीन तथा अपने जीवन के ढाँचे से ऊबे हुए व्यक्ति अपने शेष जीवन के नीरस दिनों को काट रहे हैं। हम उन दीन-दुखियों के अन्धकार से आवृत्त जीवन में प्रकाश किरणें पहुँचा सकें, तभी हमारा प्रयत्न सफल कहा जायेगा।

48
भारतीय समाज की प्रमुख समस्याएं

विचार-तालिका

- समाज की प्रगति पर ही देश की प्रगति निर्भर
- विदेशियों के प्रवेश से समाज का अधःपतन
- जातिगत कठोरता
- धन का विषम (असमान) वितरण
- दोषपूर्ण शिक्षा-प्रणाली, अन्धविश्वास
- नारी की दासता, स्वार्थ तथा भ्रष्टाचार
- उपसंहार

किसी राष्ट्र की प्रगति उसके समाज पर निर्भर रहती है, यदि समाज पतनशील है, समाज की व्यवस्था दुर्गुणों से युक्त है तो वह देश भी अधः

पतन के गर्त में गिर जायेगा। इसके विपरीत यदि मानव समाज स्वस्थ है, अच्छे गुणों से युक्त है तो देश उन्नति के पथ पर अग्रसर होता चला जायेगा। समाज का निर्माण व्यक्ति करते हैं, यदि किसी समाज के व्यक्ति चरित्रवान् हैं, उच्च विचार के हैं तो वह समाज भी स्वस्थ तथा उच्च रहेगा परन्तु यदि किसी समाज के व्यक्ति भ्रष्ट, दुर्गुणों से युक्त हैं तो उस समाज का कभी उत्थान नहीं हो सकता।

भारत एक प्राचीन देश है जिसका गौरव अति प्राचीन काल से रहा है। एक समय था जब भारतीय जीवन सुख-सन्तोष से पूर्ण था, परन्तु भारत के वैभव को देखकर मुसलमान आक्रमणकारी चौंधिया गये, गिद्धों की भाँति भारत की सुख-समृद्धि को लूटने के लिए टूट पड़े, भारत माता पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ गई। इसके पश्चात् अंग्रेजी सत्ता के दबाब से हमारे देश की सुख-समृद्धि धूल में मिल गई। अंग्रेजों ने भारत का सब प्रकार से शोषण किया उन्हें विलासी तथा मिथ्याभिमानी बना दिया। साथ ही साथ आज के युग की विषमताओं ने समाज को और भी अधिक दूषित बना दिया है। समाज का पतन होने से हमारा देश भारत भी पतन की खाई में गिर रहा है। समाज के विकार आज देश की उन्नति में रोड़ा बनकर बाधा उत्पन्न कर रहे हैं, भारतीय समाज इन विकारों से त्रस्त होकर कराह रहा है।

आज हमारा परम पावन कर्त्तव्य है कि हम अपने समाज की बुराइयों, कुरीतियों को नष्ट करें। हममें से प्रत्येक मनुष्य का यह कर्त्तव्य होना चाहिए कि हम एक स्वस्थ, प्रगतिशील एवं उन्नतिशील समाज की स्थापना करने में प्राणपण से जुट जायें। क्योंकि जिस देश में हम पैदा हुए, जिसकी धूल में हम लोटे, घुटने के बल सरक-सरक कर खड़े हुए, अमृत के समान पानी का पान किया, मधुर फलों का आस्वादन किया, उसके भविष्य को सुखमय बनाना हमारा पुनीत कर्त्तव्य है। जहाँ तक हमारे भारतीय समाज की प्रमुख समस्याओं का प्रश्न है, वे निम्नलिखित हैं—

(1) **वर्णाश्रम धर्म के कारण जातिगत कठोरता**—आज वर्णाश्रम की व्यवस्था होने के कारण हमारा देश जातियों एवं उपजातियों में विभक्त हो गया है। एकता नाम की वस्तु जो आज हमारे समाज से छूमन्तर हो गई है, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र आज कर्म से नहीं अपितु जन्म से माने जाते

हैं। जाति की व्यवस्था इतनी कठोर हो गई है कि एक ही जाति की उपजातियों में आपस में विवाह नहीं हो सकता। सबसे पहले हमें जातिगत रूढ़िवादिता को समाप्त करना है।

(2) **धन का असमान वितरण**—पूँजीवाद के विकास से यह समस्या आज सभी देशों के सम्मुख खड़ी हुई है। समाज का एक वर्ग तो अपनी तिजोरी में ताला लगाकर धन की राशि को बढ़ाने में बुरी तरह संलग्न है, दूसरी ओर गरीब दिन-प्रति-दिन गरीब होता जा रहा है। अमीर एवं गरीब आज प्रत्येक देश में दो समाज बन गये हैं। समाज का धनिक वर्ग बहुसंख्यक गरीबों का भाग्य बना हुआ बैठा है। जब तक राष्ट्र में धन का वितरण समान रूप से नहीं होगा, वह समाज सुख तथा चैन के सपनों में विहार नहीं कर सकता।

(3) **वर्तमान शिक्षा-प्रणाली**—आज हमारी शिक्षा-प्रणाली पाश्चात्य साँचे में ढली हुई है जो हमारे देश के लिए कभी भी हितकर सिद्ध नहीं हो सकती। हमारे यहाँ की शिक्षा-प्रणाली तो दोषपूर्ण है ही, साथ ही साथ शिक्षा का निम्न वर्ग में समुचित प्रसार भी नहीं है।

आज की शिक्षा बहुत मँहगी हो गई है, भारतीय समाज का अधिकांश भाग आज अशिक्षित है। प्रौढ़ लोगों में शिक्षा का अत्यन्त अभाव है। भारत की जनता का तीन-चौथाई भाग तो पढ़ा-लिखा नहीं है। शिक्षा का प्रसार बच्चे से लेकर वृद्ध तक अनिवार्य है।

(4) **अन्ध-विश्वास**—यह तो सर्वमान्य सत्य है कि जहाँ पर शिक्षा का समुचित प्रसार नहीं होता, वहाँ पर अज्ञान तथा अन्धविश्वास की जड़ें अपने पैर जमाकर बैठ जाती हैं। यंत्र, मंत्र, जादू, टोने, पत्थर पूजन न जाने कितने अन्धविश्वास समाज की जड़ों को खोखला किये डाल रहे हैं। समाज के जागरूक व्यक्ति सदैव से ही इन अन्धविश्वासों पर आलोचना के कठिन प्रहार करते आये हैं।

(5) **परतन्त्रता में जकड़ी नारी**—एक समय था जब नारी को गृह की लक्ष्मी माना जाता था, उसका समुचित आदर होता था, उसकी पूजा होती थी। परन्तु धीरे-धीरे वह इस पद से गिरकर विलास की वस्तु समझी जाने लगी। उसके सम्मान पर समाज के ठेकेदारों ने हरेक आघात किये परन्तु आज नारी अँगड़ाई लेकर जाग उठी है, उसने अपने अधिकारों को पहचान

लिया है। सरोजिनी नायडू, विजयलक्ष्मी पंडित, श्रीमती इन्दिरा गाँधी, सुचेता कृपलानी, दुर्गाबाई देशमुख और रेणु चक्रवर्ती आदि के ज्वलन्त उदाहरण इस बात के उदाहरण हैं कि आज की नारी अपने स्वत्व को पहचान कर गुलामी एवं दासता की जंजीरों को तोड़कर पुरुष के साथ कन्धा से कन्धा भिड़ाकर कर्मक्षेत्र में सक्रिय भाग ले रही है।

(6) **स्वार्थ एवं भ्रष्टाचार का बोल-बाला**—आज हमारे भारतीय समाज में स्वार्थ का पारावार लहरा रहा है। एक घर के व्यक्तियों के भी स्वार्थ आपस में टक्कर खा रहे हैं। भ्रष्टाचार समाज के अन्दर अपनी जड़ों को मजबूत किये जा रहा है, समाज के ठेकेदार इस भ्रष्टाचार को समाप्त करने के बजाय उसे बढ़ावा दे रहे हैं, समाज आज रुग्ण अवस्था में पड़ा कराह रहा है।

आज हम स्वाधीन हैं, स्वाधीनता की सुनहरी ऊषा से भारत के ग्राम, नगर, कानन आलोकित हो रहे हैं। ऐसे समय हमारे राष्ट्र तथा समाज में समस्याएँ भी दायें-बायें में खड़ी होकर अपने हल के लिए उपस्थित हैं। हमारे देश के कर्णधार, समाज-प्रेमी तथा राष्ट्र-सेवी कुछ महापुरुष भारतीय राष्ट्र एवं समाज की कुरीतियों का उन्मूलन करने में जी जान से जुटे हुए हैं, न जाने वह कौन-सा शुभ पर्व होगा जबकि भारतीय समाज की सारी समस्याएँ शान्ति के साथ हल हो जायेंगी, समाज उन्नत एवं स्वस्थ होगा।

आधुनिक भारतीय समाज में जो समस्याएँ व्याप्त हैं वे केवल नगर-निवासियों हेतु ही नहीं अपितु ग्रामीण भी इनसे अछूते नहीं हैं क्योंकि ग्राम-वासियों को इतनी सुविधाएँ प्राप्त नहीं हैं जितनी कि शहर वालों को। ग्रामीण लोगों हेतु कुटीर एवं अन्य उद्योग न होने के कारण वे अपने खाली समय का सदुपयोग नहीं कर सकते हैं एवं खाली रहने के कारण उनके मस्तिष्क में तरह-तरह के गन्दे विचार घर कर जाते हैं। भारतीय समाज में फैली कुरीतियों के निवारण हेतु आज हर नव-युवक का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह इनके विरुद्ध कदम उठाकर समाज को एक स्वस्थ वातावरण प्रदान करे। हमारे देश की भूतपूर्व प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी के 26 सूत्रीय कार्यक्रम एवं स्वर्गीय युवा नेता श्री संजय गाँधी के 5 सूत्रीय कार्यक्रम द्वारा अनेक समस्याओं का समाधान कर दिया गया है जो कि देश में छूत की बीमारी की तरह फैल रही

थी। श्री संजय गाँधी के दहेज विरोधी कदम का सम्पूर्ण भारतवर्ष में ही नहीं अपितु विदेशों में भी स्वागत हुआ है जिससे अनेकों नव-युवतियों एवं नव-युवकों के जीवन का उद्धार हुआ है। शिक्षा प्रणाली में आवश्यक सुधार एवं परिवर्तन किए जाने एवं सस्ते मूल्य की पुस्तकों के उपलब्ध किए जाने के फलस्वरूप शिक्षा को जन-सामान्य हेतु सुलभ बना दिया है। धन की विषमता एवं गरीबी के निवारण हेतु तस्करी एवं मुनाफाखोरों का दमन करके बिक्री कर चोरों का भी मफाया कर दिया गया है। अतः निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि भारतीय समाज में समस्याएँ जितनी भी बढ़ीं उन सभी का आधुनिक प्रशासन ने सफलतापूर्वक निराकरण कर दिया है। आज भारत की फूल-बगिया में कोयलों का निम्न स्वर सुनाई पड़ रहा है :

"सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा,
हम बुलबुलें हैं इसकी ये गुलिस्ताँ हमारा ।।"

49
भूदान-यज्ञ

विचार-तालिका

- भारत में भूमि-समस्या
- भूदान-यज्ञ का सूत्रपात
- भूदान-यज्ञ का तात्पर्य
- भूदान यज्ञ के परिणाम
- प्राप्त भूमि
- उपसंहार

स्वतन्त्र भारतवर्ष के सामने आज अनेक समस्याएँ उनमें से सबसे महत्त्वपूर्ण समस्या भूमि की है। हमारा देश कृषि-प्रधान जब तक यहाँ की कृषि-समस्या हल नहीं होती, भारत में अधिकतम अन्न-उत्पादन नहीं हो सकता। यहाँ भूमि का विभाजन अत्यन्त विषम एवं दोषपूर्ण है। किसी के

पास तो सैकड़ों एकड़ जमीन है और किसी के पास एक भी एकड़ नहीं। यही असमानता भारत की गरीबी की मूल जड़ है। यह समस्या कानून द्वारा हल नहीं की जा सकती। यह तो आपस के प्रेम-भाव से ही हल की जा सकती है। सन्त विनोबा ने अपने 'भूदान-यज्ञ' द्वारा इस समस्या को हल करने का निश्चय किया है।

इस यज्ञ की प्रेरणा देने का श्रेय तैलंगाना के किसान आन्दोलन को है। वहाँ बहुत से किसान भूमिहीन थे। उन्होने बड़े जमींदारों के विरुद्ध आन्दोलन कर दिया। आन्दोलनों में कई स्थानों पर रक्तपात हो जाने पर भी यह समस्या ज्यों की त्यों बनी रही इसी समय आचार्य विनोबा ने वहाँ पदार्पण किया। गरीब किसानों ने सन्त के सामने अपनी समस्या रखी और भूमि की भिक्षा माँगी। उन्होंने भूमिपतियों से भूमिहीन किसानों के लिये भूमि माँगी। उनमें प्रेम, दया, उदारता, त्याग और कल्याण-भावना के बीज बोये और इस प्रकार वहाँ की समस्या को सुलझाया। 18 अप्रैल, सन् 1951 को यज्ञ का कार्य क्रियात्मक रूप में सामने आया। इस दिन 100 एकड़ जमीन दान में आई। भूदान-यज्ञ का उद्देश्य पाँच करोड़ भूमि एकत्रित करने का है तभी देश की यह समस्या हल हो सकेगी।

भूदान-यज्ञ का अर्थ है, 'भूमिहीनों को भूमिदान'। इसमें सम्पूर्ण मानवता के कल्याण की भावना छिपी हुई है। तपस्वी विनोबा बड़े भूमिपतियों से निर्धन किसानों के लिए भूमि दान करने के लिए कहते हैं। इसमें दवाब लेश-मात्र भी नहीं। वड़े स्वामी अपने स्वार्थों के बन्धनों को तोड़कर मानव कल्याण के लिए त्याग करते हैं। गाँधीजी के जीवन का उद्देश्य सत्य और अहिंसा ही था। उनके प्रिय शिष्य विनोबा जी भी भूमि समस्या को अहिंसात्मक तरीके से ही हल करना चाहते थे "सदैव भूमि गोपाल की" ही समझना उनका उद्देश्य है, अन्य प्राकृतिक वस्तुओं की तरह भूमि पर भी किसी व्यक्ति का अधिकार नहीं है। भूदान का मुख्य उद्देश्य दीनता, शोषण और आर्थिक असमानता को दूर करना है।

भूदान के द्वारा गाँवों में जो लोग भूखों मरते हैं, उनको कम से कम भोजन अवश्य मिल जायेगा। जीवन की अनिवार्य आवश्यकताएँ पूरी की जा सकेंगी। यद्यपि भूमि अपर्याप्त होगी फिर भी ग्रामीण व्यक्ति उसी में कठिन

परिश्रम करके अपने परिवार का भरण-पोषण करने में समर्थ होगा। ग्राम के भूखे और नंगे लोग सुख से रहने लगेंगे। आज गाँव का निर्धन और भूखा व्यक्ति धनी वर्ग से ईर्ष्या करता है, भूदान यज्ञ दोनों में प्रेम को बढ़ायेगा। अतः भूदान गाँवों में पाई जाने वाली ईर्ष्या और द्वेष को समूल नष्ट करने में समर्थ होगा। इनके अतिरिक्त भूदान-यज्ञ भारत में साम्यवाद को आने से रोकेगा। भूदान-यज्ञ और साम्यवाद के लक्ष्य में कुछ समानता होते हुए भी उनके तरीके भिन्न-भिन्न हैं। साम्यवाद जिस आर्थिक विषमता को हिंसा द्वारा नष्ट करता है, भूदान यज्ञ उसी लक्ष्य की पूर्ति और अहिंसा और प्रेम के द्वारा करता है।

किन्तु भूदान-यज्ञ में प्राप्त हुई भूमि पर यदि विचार किया जाय तो पत चलता है कि दान में प्राप्त हुई भूमि बंजर है, उसमें उत्पादक शक्ति बहुत कम है। उसको उपजाऊ बनाने में पर्याप्त समय लगेगा। उस भूमि को साफ करने में बार-बार जोतने में, खाद और पानी का प्रबन्ध करने में जो खर्च होगा, वह गरीब किसान द्वारा हो सकेगा; इसमें सन्देह है। जब तक भूमि उपजाऊ बन पायेगी तब तक उसके ऊपर रुपया खर्च करना पड़ेगा।

भूदान-यज्ञ को सफल बनाने के लिए सरकार की सहायता अनिवार्य है। भूदान ने सरकार के सामने आदर्श उपस्थित कर दिया है कि किस प्रकार कृषि समस्या हल करनी चाहिए? खाद, पानी का प्रबन्ध सरकार को अपने हाथों में लेना चाहिए तभी भूदान-यज्ञ अपने सफल रूप में संसार के सामने एक नवीन आदर्श उपस्थित कर सकेगा।

50

भारत में बेकारी की समस्या

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना**
- **मशीनीकरण से बेकारी में वृद्धि**
- **शिक्षा-उद्देश्य—नौकरी**

- सुझाव तथा राष्ट्रीय सरकार का बेकारी दूर करने का प्रयत्न
- उपसंहार—समस्या के हल से देश की उन्नति

बेकारी की समस्या दिन-प्रतिदिन हमारे देश में एक जटिल रूप धारण करती जा रही है। यह एक ऐसी समस्या है जो देश की उन्नति में बाधक नहीं वरन् एक ऐसी भयंकर परिस्थितियों को भी जन्म दे सकती है जिससे देश की वर्तमान सरकार ही धराशायी हो जाये। यह बेकारी की समस्या पढ़े-लिखे वर्ग के समक्ष ही नहीं है अपितु किसानों, मजदूरों, व्यापारियों आदि सबके समक्ष है। आज भारत माँ स्वतन्त्र है, हम सब स्वतन्त्र वातावरण में विचरण कर रहे हैं फिर भी हमारे देश के सामने कुछ ऐसी समस्याएँ हैं जिनका हल शीघ्र ही होना अनिवार्य क्योंकि ये विकास के मार्ग में रोड़ा अटकाती हैं। हमारी राष्ट्रीय सरकार भिन्न-भिन्न योजनाओं को कार्यान्वित करके इस समस्या का हल करने का भागीरथ प्रयत्न कर रही है। सफलता अथवा असफलता तो भविष्य पर निर्भर है।

भारतवर्ष के समाज संगठन के अन्दर इस वैज्ञानिक युग से बड़ी करारी चोट पहुँची है। व्यक्ति अपने-अपने स्वार्थों में लीन है। धन, गहनों के रूप में अथवा पृथ्वी में जंग लगने के लिए गाढ़ दिया जाता है, चाहे देश की करोड़ों निर्धन जनता भूख से विलख-विलख कर अपने प्राणों को ही क्यों न त्याग दे ? शिक्षा की कमी के कारण भी मानव का पूर्ण रूप से विकास सम्भव नहीं है। संगठन की कमी के कारण संस्थाओं का नितान्त अभाव है। व्यापारिक ज्ञान पैदा करने के लिए सफल साधन उपलब्ध नहीं है। वर्तमान शिक्षा-पद्धति भी युवक को नौकरी की तरफ खींचती है।

देखिए, इस विषय में राष्ट्र कवि डाक्टर मैथिलीशरण गुप्त की निम्न पंक्तियाँ—

> 'श्रीमान् शिक्षा दें उन्हें तो श्रीमती बोली वहीं।
> घेरो न लल्ला को हमारे नौकरी करनी नहीं॥
> शिक्षे ! तुम्हारा नाश हो तुम नौकरी के हित बनी।
> लो मूर्खते ! जीती रहो रक्षक तुम्हारे हैं धनी॥

शिक्षा पाकर नौकरी पाने की अभिलाषा ने बड़ा ही कुप्रभाव डाला है। वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में हाथ के कला-कौशल तथा दस्तकारी की अवहेलना

से बड़े घातक परिणाम सामने आये हैं। इसके अतिरिक्त द्वितीय महायुद्ध के बाद बढ़ती हुई जनसंख्या से आज बेकारी की समस्या हमारे राष्ट्र में निरन्तर बढ़ती ही जाती है। आज हमारी राष्ट्रीय सरकार पंचवर्षीय-योजनाओं को देश के अन्दर लागू कर रही है, परन्तु जब तक जनता में बेकारी की समस्या का प्रश्न खड़ा रहेगा तक तक योजना की सफलता संदिग्ध है।

मशीनी-सभ्यता में गाँव के उद्योग-धन्धों को बड़ा धक्का लगा है। इससे लोग भूखों मरने के लिए बाध्य हो गए हैं जिनका जीवन उन उद्योग-धन्धों पर निर्भर था। शहरों में भी लाखों की संख्या में बेकार लोग मौजूद हैं। हाँ, यह तो सत्य है कि देशीय सरकार ने कृषि के क्षेत्र में पर्याप्त विकास किया है। इसके अतिरिक्त देश के दो टुकड़े होने से भी बेकारी की समस्या को अधिक जटिल बना दिया है, यद्यपि उन लाखों-भाइयों को जो कि देश के बँटवारे के कारण बेकार हो गए हैं, काम दिलाने के लिए सरकार पूर्ण-रूपेण प्रयत्न में लगी हुई है। शिक्षा के प्रसार का भी कुछ ऐसा ही परिणाम निकला है जो ग्रामीण नवयुवक खेती करके अपने जीवन को प्रसन्नतापूर्वक व्यतीत कर सकते थे, आज खेतीबाड़ी को छोड़कर शहरों में नौकरी करने के लिए दौड़ रहे हैं। हमारी सरकार भी बेकारी की समस्या को हल करने के लिए अनेक योजनायें चला रही है जो निम्न प्रकार हैं—

हमारी राष्ट्रीय सरकार बेकारी की समस्या को हल करने के लिए जन-संख्या की वृद्धि को रोकने का भी पर्याप्त प्रयास कर रही है। ग्रामों में कुटीर उद्योग-धन्धों का विकास करने में प्रयत्नशील है। मशीनी उद्योगों का ठीक प्रकार से विकास किया जा रहा है। कृषि की उन्नति के लिए तो सरकार प्राणपन से संलग्न है, क्योंकि भारतवर्ष कृषि-प्रधान देश है। यहाँ की भूमि कभी सोना उगलती थी। यदि कृषि की उन्नति होगी तो रोटी की समस्या का प्रश्न जटिल नहीं रहेगा तथा साथ ही साथ अनेक बेकारों को ग्रामों में आसानी से खपाया जा सकेगा। बंजर भूमि को वैज्ञानिक ढंग पर उपजाऊ बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है। हमारी पंचवर्षीय योजना में करीब 1 करोड़ बेकारों को काम देने की व्यवस्था की गई है। देश के नेता, युवकों को व्यवहारिक और व्यावसायिक कार्यों में प्रोत्साहन दें, उन्हें ठीक प्रकार से शिक्षित करने के

लिए धन का समुचित प्रबन्ध भी करें । भारतीय लोगों में संगठित होकर काम करने की रुचि को बढ़ावें जिससे किसी कार्य को करने में असुविधा न हो । खेतों का काम जो कि अशिक्षित जनता के हाथ में है, वह पढ़े-लिखे लोगों के हाथ में आये ताकि आधुनिक कृषि की समुचित उन्नति हो सके । अमरीका में यह कार्य शिक्षित जनता के हाथ में है, इसी कारण वहाँ की उपज भी संसार के अन्य देशों से बड़ी-चढ़ी है ।

हर्ष का विषय है कि समय-समय पर हमारी केन्द्रीय सरकार प्रान्तीय सरकारों की सहायता कर रही है ताकि हमारे देश से बेकारी की समस्या दूर-हो जाये । परन्तु बड़े खेद का विषय है कि भारत देश में प्राकृतिक साधनों के उपलब्ध होते हुए भी बेकारी की समस्या अभी तक पनप रही है । हमें विश्वास है कि यदि पंचम पंचवर्षीय योजना में जनता सच्चे हृदय से सरकार को सहयोग देगी तो समस्या बहुत अंशों में हल हो जायेगी । अतः देश के प्रत्येक युवा एवं वृद्ध का यह पुनीत कर्त्तव्य है कि वह सरकार को सहयोग दे जिससे जो बेकारी की समस्या हमारे राष्ट्र की प्रगति में बाधक है, वह बाधक न रहे और राष्ट्र उत्थान के मार्ग पर अग्रसर हो सके । नजीर अकबरावादी के शब्दों में—

"मुफलिस की नजर नहीं रहती है आन पर,
देता है अपनी जान तक वो एक-एक तान पर,
हर आन टूट पड़ता है रोटी के ख्वान पर,
जिस तरह कुत्ते लड़ते हैं एक दुस्तर ख्वान पर ।"

51
संयुक्त राष्ट्र संघ

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- संघ का उद्देश्य
- संघ का संगठन
- राष्ट्र संघ की सफलता
- उपसंहार

युद्ध की धू-धू करके जलती हुई ज्वाला से परित्राण पाने के लिए मानव सदैव प्रयत्नशील रहा है। 19वीं शताब्दी में इस प्रकार के अनेक शान्तिपूर्ण प्रयत्न किये गये हैं। 1914-48 के प्रथम विश्व-युद्ध के पश्चात् पारस्परिक समझौते द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय युद्धों को रोकने के लिए 'लीग ऑफ नेशन्स' की स्थापना हुई थी। किन्तु राष्ट्रों के स्वार्थों में पुनः टक्कर हुई और राष्ट्र-संघ सदस्यों ने उसके निर्णयों को न माना, प्रथम राष्ट्र-संघ का अन्त हुआ। परिणाम-स्वरूप द्वितीय महायुद्ध का सूत्रपात हुआ। इसकी क्रूरता, निर्दयता को देखकर पुनः एक बार मानवता थर-थर काँप उठी। सब लोग इन अत्याचारों से शान्ति पाने की कामना करने लगे। फलस्वरूप तीन नेताओं—चर्चिल, रूजबेल्ट, स्टैलिन के सहयोग से 24 अप्रेल, 1945 को संयुक्त-राष्ट्र-संघ का जन्म हुआ, जिसका प्रथम अधिवेशन सेनफ्रांसिस्को में किया गया।

संयुक्त राष्ट्र-संघ का उद्देश्य विश्व के राष्ट्रों के मध्य प्रेम तथा मित्र भाव का प्रसार तथा आपसी झगड़ों को शान्तिपूर्ण उपायों से निपटाना है। इस उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए संघ ने चार आदर्श निश्चित किए हैं, जो निम्न प्रकार हैं—

1. शान्ति को स्थापित करना।
2. राष्ट्रों के मध्य समानता तथा मित्रता की भावना विकसित करना।
3. निर्बल राष्ट्रों के हितों की रक्षा करना ताकि शक्तिशाली राष्ट्र उनका शोषण न कर सकें।
4. देश के सामान्य रहन-सहन में उन्नति करना।

इस प्रकार के विचार बड़े ही सुन्दर हैं तथा मनुष्य-मात्र का हित करने वाले हैं। उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संयुक्त राष्ट्र-संघ का कार्य अनेक भागों में निम्न प्रकार विभक्त है—

साधारण-परिषद्

विश्व के 80 देशों के प्रतिनिधि इस परिषद् में शामिल हैं। इसका प्रमुख काम विश्व-शान्ति पर विचार करना है। यदि विश्व का कोई राष्ट्र दूसरे निर्बल राष्ट्र पर आक्रमण करता है तो यह परिषद् उस पर विचार करती है। अपनी सिफारिशों को राष्ट्र-संघ की कार्य-कारणी में भेज देती है और सुरक्षा परिषद उसकी सिफारिशों को कार्य-रूप में परिणत करती है।

सुरक्षा-परिषद्

संघ की साधारण परिषद् की सिफारिशों को कार्य रूप में परिणत करना तथा आवश्यकता अनुभव हो तो सैनिक शक्ति का भी उपयोग करना। इसके सदस्यों की संख्या 11 है। परिषद् के 5 स्थायी सदस्यों को निषेध का अधिकार प्रदान किया गया है। यह सुरक्षा परिषद् ही राष्ट्र-संघ का महत्त्वपूर्ण अंग है जो विरोधी राष्ट्रों के झगड़ों को शान्त करने का प्रयत्न करती है।

अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय

दो राष्ट्रों की उलझनों, झगड़ों, ऋण, सीमा के झगड़ों आदि के निबटारे के लिए अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय की स्थापना की गई है। इसके न्यायाधीश बड़े ही कुशल तथा अनुभवी हैं। यह न्यायालय प्रत्येक झगड़े पर गम्भीरता पूर्वक विचार करना है तथा भेदभाव से रहित अपना निर्णय देता है जो सब राष्ट्रों को मान्य होता है।

संरक्षण-परिषद्

इसका कार्य पिछड़े हुए देशों में शिक्षा की व्यवस्था करना, इनके आर्थिक ढ़ाँचे को उन्नत करना है। निर्बल राष्ट्र संरक्षण-परिषद् के अधीन रहते हैं। इससे विश्व-युद्धों पर रोक लगती है।

आर्थिक व सामाजिक परिषद्

साधारण परिषद् इनके सदस्यों को चुनती है जिनकी संख्या 24 है। यह परिषद् संसार के सारे देशों में मनुष्यों के रहन-सहन को ऊँचा उठाना, बेकारी दूर करना, आर्थिक व सामाजिक उन्नति करना, मानवीय अधिकारों तथा स्वतन्त्रता के प्रति आदर उत्पन्न करने का बड़ा ही गौरवपूर्ण कार्य करती है।

मुख्य कार्यालय

संघ का मुख्य कार्यालय न्यूयार्क में स्थापित किया है। लगभग तीन हजार व्यक्ति इस कार्यालय में काम करते हैं। कार्यालय का सारा कार्य एक प्रमुख अधिकारी के निरीक्षण में होता है।

उपर्युक्त विभागों के अतिरिक्त संघ के लगभग एक दर्जन से अधिक अन्य विशेष संगठन हैं जिनमें, (1) खाद्य एवं कृषि संघ, (2) श्रम, (3) विश्व स्वास्थ्य संगठन, (4) मुद्रा कोष, (5) व्यवसाय संगठन आदि प्रमुख हैं।

किन्तु दुःख का विषय है कि संयुक्त-राष्ट्र-संघ भी जटिल समस्या का सामना कर रहा है। सबल राष्ट्रों से निर्बल राष्ट्रों की रक्षा नहीं हो पा रही

है। संयुक्त राष्ट्र-संघ शक्तिशाली राष्ट्रों के हाथ का खिलौना बना हुआ है। राष्ट्र-संघ ने कोरिया की समस्या का हल शीघ्रताशीघ्र किया क्योंकि इसमें अमरीका का हाथ था, मगर उतनी ही शीघ्रता से कश्मीर की समस्या को नहीं हल किया क्योंकि इसमें अमरीका का कोई भी स्वार्थ नहीं था। कई देशों ने संयुक्त राष्ट्र संघ के निर्माण की उपेक्षा की है। पाकिस्तान को कश्मीर में आकांत घोषित किया गया किन्तु वह आज भी वहीं का वहीं है। यही कारण है कि कभी-कभी मनुष्य इसे असंयुक्त राष्ट्र संघ भी कह बैठते हैं। कारण स्पष्ट है क्योंकि शक्तिशाली राष्ट्रों के ऊपर इनका अंकुश नाम मात्र को भी नहीं है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के आलोचकों का कहना है कि सात सदस्यों के प्रस्तावों को पाँच स्थायी सदस्यों द्वारा न माना जाना प्रजातन्त्र के सिद्धान्तों के विपरीत है।

उपर्युक्त विचार-विमर्श से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि विश्व में सबल राष्ट्र संयुक्त राष्ट्र संघ की आड़ में अपने निजी स्वार्थों की पूर्ति कर रहे है। आज विश्व के कोने-कोने में एक मानव दूसरे मानव के रक्त का प्यासा है, एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को हड़प जाना चाहता है। कहने का अभिप्राय है कि विश्व में हिंसा का ताण्डव नृत्य हो रहा है, मानवता विश्व के प्रांगण में पशुता का नग्न नृत्य देखकर कराह रही है तो कम से कम इस भीषण परिस्थिति में शान्ति और संयुक्त राष्ट्र संघ का सफल अथवा असफल कैसा भी प्रयत्न हो, प्रशंसनीय ही कहा जायेगा संयुक्त राष्ट्र संघ का एकमात्र उद्देश्य होना चाहिए कि वह विश्व के प्रत्येक राष्ट्र के लिए उन्मुक्त वातावरण की व्यवस्था करे। इसी से विश्व-कल्याण सम्भव है।

52
विज्ञान से हानि-लाभ

विचार-तालिका

- (अ) साधारण जीवन में विज्ञान का प्रयोग
- (ब) विद्युत रूप में
- (स) कृषि के लिए

- (द) अन्य लाभ
- (य) अणु व उद्जन बम के रूप में
- (र) उद्योग-धन्धों के लिए—बेकारी की समस्या
- (ल) भौतिकवाद की ओर
- उपसंहार

किसी कवि के शब्दों में—

"आज भी बन गया और भी बन गया है कान।
आधुनिक युग का विधाता बन गया विज्ञान।"

आधुनिक युग विज्ञान का युग है। विज्ञान ने संसार में बड़ा परिवर्तन उपस्थित कर दिया है। विज्ञान के चमत्कार ने प्रकृति को बहुत पीछे खदेड़ दिया है। विज्ञान की सहायता से मानव ने समय और दूरी पर विजय प्राप्त कर ली है।

विज्ञान ने मनुष्यों के जीवन को अधिक से अधिक आनन्द देने का प्रयत्न किया है। अन्धों को देखने के लिए आँखें दी हैं, बहरों को सुनने के लिए कान दिये हैं, पंगु को चलने के लिए पैर प्रदान किये हैं, मनुष्यों को पक्षियों के समान आकाश में उड़ने की शक्ति दी है, मछलियों की तरह सागर में तैरने तथा पृथ्वी पर द्रुत गति से चलने में समर्थ बनाया है। आज मनुष्य सैकड़ों मील की दूरी पर बैठे हुए अपने मित्र से बातचीत कर सकता है। सारांश यह है कि विज्ञान ने जीवन के प्रत्येक पहलू में एक महत्त्वपूर्ण क्रान्ति उपस्थित कर दी है।

विज्ञान ने मनुष्य को विद्युत देकर उसे सार्वशक्ति सम्पन्न बनाया है। विद्युत द्वारा हम अपने घरों में प्रकाश प्राप्त करते हैं, भोजन बनाते हैं, रेडियो, सिनेमा व निर्माण के काम में लगी हुई मशीनों का संचालन करते है। आवश्यकतानुसार अपने घरों को गर्म व शीतल करते हैं। टेलीविजन द्वारा सैकडों मील की दूरी पर बैठे हुए लोगों को हम देख सकते हैं।

औषधि और प्राणियों की चिकित्सा के क्षेत्र में विज्ञान ने बहुत उन्नति की है। विज्ञान द्वारा अनेक ऐसे रोगों पर विजय प्राप्त कर ली गई है जिनका उपचार (इलाज) अब तक असम्भव था। इन्जेक्शन द्वारा रोगों का इलाज बहुत ही शीघ्रता से किया जाता है। एक्स-रे एवं रेडियम ने चिकित्सा के क्षेत्र में अपूर्व चमत्कार दिखाया है। मनुष्य के शरीर के भीतरी भागों में छिपे हुए

रोगों का पता एक्सरे द्वारा लगाया जाता है। हड्डियों में आई असाधारण चोट भी इसी के द्वारा मालूम की जाती है।

भारत कृषि-प्रधान देश है। कृषि की उन्नति के अभाव में देश की उन्नति नहीं हो सकती। विज्ञान ने कृषि की उन्नति के लिए नलकूप, ट्रैक्टर, वैज्ञानिक खाद आदि अनेक ऐसी वस्तुओं का आविष्कार किया है जिसके द्वारा कृषि की उन्नति में बहुत सहायता मिलती है। मशीनों की सहायता से मनुष्य अपनी शक्ति से कई गुना अधिक कार्य करने में समर्थ हुआ है। विज्ञान ने भूखों को भोजन, नंगों को वस्त्र और दुःखी मनुष्यों को सुख देने का भरसक प्रयत्न किया है।

विज्ञान के द्वारा मनोरंजन के नये-नये साधन उपलब्ध हुए हैं। सिनेमा विज्ञान की देन है। दिन-भर के परिश्रम से थक जाने के पश्चात् जनता के लिए यही एक सुन्दर मनोरंजन का साधन है। विज्ञान ने आने-जाने के साधनों का विकास कर दिया है। मोटर, रेल, जलयान और वायुयान का आविष्कार कर सम्पूर्ण विश्व को एक छोटा-सा देश बना डाला है। आज सारा संसार एक बाजार के रूप में परिवर्तित है। तार और टेलीफोन के द्वारा हम अपने सन्देश को संसार के एक कोने से दूसरे कोने तक पहुँचा सकते हैं।

कवि के शब्दों में—

रसवती भू के मनुज का श्रेयु।
श्रेय यह विज्ञान का वरदान॥"

किन्तु विज्ञान ने जहाँ मनुष्य के कल्याण के लिए अनेक वस्तुओं का निर्माण किया है, वहाँ अहितकर पदार्थों को भी जन्म दिया है। आज अणु और उद्जन बमों के परीक्षणों को देखकर विज्ञान को वरदान न कहकर अभिशाप ही कहा जाता है। इन उद्जन बमों के द्वारा सम्पूर्ण संसार क्षण-भर में नष्ट किया जा सकता है। मशीनगनों के द्वारा सैकड़ों मनुष्यों की जान ली जा सकती है।

इसके अतिरिक्त विज्ञान ने मशीनों का निर्माण कर मनुष्य की कार्यक्षमता को बढ़ाकर बेकारी की समस्या को और भी अधिक जटिल कर दिया है। मशीनों की प्रतियोगिता में घरेलू उद्योग नष्ट हो चुके हैं और असंख्य लोग बेकारी का सामना कर रहे हैं।

विज्ञान के युग में पला हुआ मनुष्य पूर्णतः भौतिकवादी बन चुका है। उसकी आत्मा छटपटा रही है। विज्ञान के चमत्कारों ने मनुष्य के शारीरिक आनन्द के साधन जुटाये हैं। उसे विलासी बनाने में ही अधिक सहयोग प्रदान

किया है। आज मनुष्य धर्म के विरुद्ध आचरण करने लगा है। विज्ञान-युग नास्तिकता को प्रोत्साहन दे रहा है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विज्ञान ने मानव को जहाँ सुख दिया है वहाँ दुःख के साधन भी उपलब्ध हैं। यह पूर्णतः मनुष्य के ऊपर निर्भर है कि हम उन साधनों का सदुपयोग ही करें, दुरुपयोग नहीं। विज्ञान का अच्छा बुरा परिणाम उसके सदुपयोग पर निर्भर है। यदि संसार विज्ञान का सदुपयोग कराता गया तो वह दिन दूर नहीं जबकि सम्पूर्ण विश्व स्वर्ग बन जायेगा।

अतएव निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि एक ओर जहाँ विज्ञान ने मानव को चन्द्रमा पर पहुँचाया है, वहाँ दूसरी ओर इसकी संहारक शक्ति ने विभिन्न अस्त्रों का आविष्कार करके जन-जीवन की शान्ति को भंग कर दिया है। कुटिल राजनीतिज्ञों ने विज्ञान को अपने हाथ की कठपुतली बना लिया है एवं अपनी इच्छानुसार वे इसे नचाते हैं। आधुनिक सभ्यता की दौड़ में मानव इतना पागल हो उठा है कि एक-दूसरे के प्रति अपनी पाशविक प्रवृत्तियों के फलस्वरूप नीचा दिखाने की कोशिश कर रहा है। इन निम्न कोटि की भावनाओं के परिणामस्वरूप ही विज्ञान वरदान के स्थान पर अभिशाप रूप में परिणित हो गया है। विज्ञान के अणु शक्ति के आविष्कारों के द्वारा ऐसे-ऐसे अस्त्रों का आविष्कार किया है जिनके द्वारा विश्व को कुछ ही क्षणों में भस्म किया जा सकता है। यही नहीं, विभिन्न प्रकार की सुख सुविधाएँ प्रदान करके विज्ञान ने मानव को आलसी एवं निष्क्रिय बना दिया है, वह कठोर शारीरिक परिश्रम से भागने लगा है। हर काम के लिए मशीनों के आविष्कार हो जाने के फलस्वरूप घरेलू उद्योग एवं कुटीर उद्योग धन्धे चौपट हो गये हैं। जिससे अकर्मण्यता एवं बेकारी की समस्या उत्पन्न हो गई है। एक ओर जहाँ तेज चलने वाले वाहनों से यात्रा करने में सुविधा होती है वहीं दूसरी तरफ वे जीवों के संहारक अस्त्र भी हैं। अतएव विज्ञान जितना लाभदायक है उससे कहीं अधिक हानिकारक भी है। यदि स्वार्थी राजनीतिज्ञ एवं राष्ट्र अपनी पाशविक प्रवृत्तियों का त्याग कर दें तो विज्ञान मानव के लिए सच्चे अर्थों में वरदान सिद्ध हो सकता है।

53
चित्रपट या सिनेमा

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—विज्ञान का महत्त्व
- सिनेमा का स्थल तथा संचालन
- सिनेमा का प्रचार एवं प्रसार
- सिनेमा से लाभ-हानि
- उपसंहार

आज विश्व के प्रत्येक कोने में विज्ञान की दुन्दुभी बज रही है। जगत् के कोने-कोने में विज्ञान का बोलबाला है। जिधर दृष्टि डालिए उधर ही विज्ञान की तूती बोल रही है। इन विस्मय में डालने वाले आविष्कारों में चित्रपट भी एक विचित्र और उपयोगी आविष्कार है। आधुनिक चित्रपट मैजिक लैण्टर्न का ही विकसित रूप है। इसके आविष्कार का श्रेय अमरीका के निवासी एडीसन महोदय को है। पहले ये छायाचित्र मूक होते थे परन्तु आधुनिक काल में इसमें वाणी का समावेश हो गया है। इन चलती-फिरती तस्वीरों को इंगलैण्ड वाले 'पिक्चर्स', अमरीका निवासी 'मूवीज' और फ्रांसीसी 'सिनेमा' नाम से पुकारते हैं। भारतीय इन्हें 'वायस्कोप' कहते हैं।

चित्रपट एक ऐसी मशीन द्वारा संचालित किये जाते हैं जो चित्रों को चित्र-पट पर फेंकने का कार्य बड़ी तीव्र गति से करती है। इस यन्त्र में एक तीव्र प्रकाशवर्ती लालटेन लगी रहती है। इसके पीछे एक रिफ्लैक्टर लगा होता है। पर्दे के ऊपर चित्र फेंकने का कार्य जिस यन्त्र से होता है उसे प्रोजेक्टर कहते हैं। एक-एक मानव चेष्टा को चित्रित करने के लिए अनेक चित्र लिए जाते हैं। एक साधारण-सी घटना दिखाने को भी हजारों ही चित्र चित्रित करने पड़ते हैं। इन चित्रों का सामूहिक नाम ही फिल्म है। एक-एक फिल्म को तैयार करने में करोड़ों रुपये खर्च करने पड़ते हैं।

प्राचीन काल में हमारे देश में छोटी-छोटी नाट्य-मंडलियाँ नाटकों का अभिनय करके मनुष्यों का मनोरंजन का साधन थीं। आज उन नाट्य-मंडलियों का स्थान चित्रपट ने ग्रहण कर लिया है जिससे इन नाट्य-मंडलियों

को बहुत भारी धक्का लगा और वे आज लगभग समाप्तप्रायः सी हैं। छाया-चित्रों ने जगत में क्रान्ति पैदा कर दी है। बड़े-बड़े संगीतघर और अभिनय-शालाओं के ताले बन्द करा दिए हैं।

यूरोप और अमरीका में सिनेमा इतनी उन्नति कर गया है कि रात-दिन सिनेमा कम्पनियाँ अपना काम करती रहती हैं। भारत में लगभग 30 वर्ष पहले यह प्रचलित हुआ। आजकल संसार में कोई ऐसा मुख्य नगर न होगा जहाँ इसका प्रचार न हो। धनी-निर्धन, विद्वान्-मूर्ख और छोटे-बड़े सबको आजकल सिनेमा देखने का चाव है। विद्यार्थियों की तो यह दशा है कि उन्हें सिनेमा भोजन से भी अधिक प्रिय है। हमारे प्राचीन मनोरंजन के साधन चित्रपट के सम्मुख आज अपनी उपयोगिता खो चुके हैं। प्राचीन मनोरंजन आज के असंख्य मानवों को सन्तुष्ट भी नहीं कर सकते। शहरों में दर्जनों सिनेमा भवन एक दिन में तीन चार बार चित्रों का प्रदर्शन करते हैं।

चित्रपट के आविष्कार से सबसे बड़ा लाभ यह है कि इससे भरपूर मनोरंजन होता है। दिन भर का काम समाप्त करने के बाद प्रत्येक व्यक्ति मनोविनोद चाहता है। यों तो खेलकूद, उद्यान की सैर आदि मनोरंजन के अनेक साधन हैं किन्तु सिनेमा की तुलना एक भी नहीं कर सकता। थके माँदे व्यक्तियों के लिए सिनेमा अत्यधिक सुखदायक होता है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इससे निर्धन धनिक सभी मनोरंजन कर सकते हैं।

विदेशों तथा अपने देश की घटनायें भी समाचार चित्रों के द्वारा हमारे समक्ष उपस्थित की जाती हैं। युद्ध के भयानक दृश्य भी हम देखते हैं। साथ ही हम संसार की जिस किसी भी प्रमुख भाषा का चित्र देखना चाहें, देख सकते हैं। साधारणतया अंग्रेजी, बंगला, हिन्दी तथा पंजाबी भाषा के चित्र नित्य ही हमारे सिनेमा भवनों में प्रदर्शित होते हैं।

चित्रपट ने शिक्षा के कार्य में भी अद्भुत सहायता पहुँचाई है। इतिहास, भूगोल तथा विज्ञान आदि विषयों को पढ़ाने में सिनेमा से महती सहायता मिलती है। चित्रों के द्वारा पाठ्य विषय का स्पष्टीकरण हो जाता है तथा विद्यार्थियों के लिए कठिन से कठिन विषय सुबोध हो जाते हैं। इनके उपयोग से विषय स्पष्ट हो जाता है।

सभ्यता तथा स्वच्छता आदि विषयों की सफल शिक्षा चित्रपट के द्वारा ही सम्भव है, किसी अन्य साधन से नहीं। अतीत की घटनाएँ भी हमारे

सामने चित्रपट के द्वारा सजीव रूप में आती हैं। समाज-सुधार के कार्य में भी चित्रपट से काम लिया जाता है। हजारों समाज-सुधारक भी जनता पर उतना प्रभाव नहीं डाल सकते जितना अकेला चित्रपट। तुलसीदास, जाग्रति, अमरसिंह राठौर आदि फिल्मों ने जनता के हृदय में उथल पुथल मचा दी है। सिनेमा से विज्ञापन भी होते रहते हैं जिससे व्यापार के प्रसार में सहायता मिलती है।

सिनेमा से जहाँ लाभ हुए हैं, वहाँ इनसे होने वाली हानियाँ भी किसी की दृष्टि से ओझल नहीं हैं। भारत में अधिकतर चित्रों के निर्माता बड़े-बड़े पूँजी-पति हैं। उनका लक्ष्य इसके द्वारा अधिक धन अर्जित करना है। देश तथा समाज पर क्या प्रभाव पड़ेगा। इस ओर उनका कुछ भी ध्यान नहीं रहता। अबोध छात्र सिनेमा भवनों में उन कुरूपताओं का दर्शन करते हैं जो उनके विनाश का कारण हैं। इन अश्लील चित्रों के विचार ने जनता के मान-सिक स्वास्थ्य पर कुठाराघात किया है। रात दिन सिनेमा देखने वालों की नेत्र ज्योति क्षीण होने लगती है। सिनेमा से दिनों-दिन जनता का नैतिक पतन होता जा रहा है। सिनेमा भवनों में कितने ही दोष हैं। धूम्रपान का सिनेमा भवन में निषेध होना और लोगों को थूकने से भी मना किया जाना भी आवश्यक है। स्वच्छ वायु के लिए नवीन ढंग के यन्त्रों और साधनों का प्रयोग होना चाहिए।

इस प्रकार अभी तक हमारे देश में चित्रपट अत्यन्त अनर्थकारी सिद्ध हुआ है, फिर भी सिनेमा हमारे जीवन का एक ऐसा अभिन्न अंग बन गया है कि उससे दूर रहना हमारे लिए असम्भव है। सरकार को चाहिए कि वह चित्रपट पर अश्लील और गन्दे अभिनय की कदापि आज्ञा न दे। न जाने वह शुभ दिन कब आयेगा जब चित्रपट से हमारे देश को अधिकाधिक लाभ पहुँचेगा। क्योंकि आज चित्रपट के सन्दर्भ में निम्न कथन द्रष्टव्य हैं—

"जिधर देखता हूँ उधर तू ही तू है।।"

54
आधुनिक शिक्षा

विचार-तालिका

- वर्तमान शिक्षा-पद्धति का विवेचन
- आधुनिक शिक्षा से हानि

- वर्तमान शिक्षा-प्रणाली के गुण
- उपसंहार

हमारे प्राचीन मनीषियों ने विद्या के विषय में अपने विचार प्रकट करते हुए कहा है—विद्या वह है जो मनुष्य को अज्ञान से मुक्त कराती है, उसे अन्धकार से निकालकर प्रकाश दिखाती है। वह मनुष्य के नेत्रों के सम्मुख छाई धुन्ध को साफ कर उन्हें जीवन को उसके सम्पूर्ण रूप में देखने की प्रेरणा देती है। जो विद्या ऐसा नहीं करती, वह वास्तविक अर्थों में विद्या नहीं। शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार की विद्या का अध्ययन कर उन दुर्गुणों से मुक्ति पाना है जो जीवन को अन्धकारमय बनाये हुए हैं। अब हमें यह देखना है कि आधुनिक शिक्षा प्राचीन ऋषियों के इन आदर्शों को प्राप्त करवाने में कहाँ तक सहायक सिद्ध हुई है।

कौन नहीं जानता कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली हमारे देश के लिए घातक सिद्ध हुई है। इसका उद्देश्य है, पेट भरने के लिए क्लर्क, वकील एवं डॉक्टर आदि उत्पन्न करना। लार्ड मैकाले ने भारतवासियों को ईसाई मजहब के साँचे में ढालने के लिए और दफ्तरों में अँग्रेजी पढ़े लिखे क्लर्क पैदा करने के लिए इस शिक्षा को प्रचलित किया था। तब से लगाकर आज तक शिक्षा का यही उद्देश्य बराबर चला आ रहा है। आज की शिक्षा हममें उन गुणों का समावेश नहीं करती जो शिक्षा का लक्ष्य है। जो शिक्षा केवल एक निम्न कोटि के आधार पर आरम्भ की गई हो, उससे देश के उद्धार की आशा करना निराशा मात्र है। आज के नवयुवक अपना बहुमूल्य समय देकर तथा अपने माता-पिता की गाढ़ी कमाई का हजारों रुपया खर्च करके जिस शिक्षा को प्राप्त करते हैं, वह उनके जीवन में किस काम आती है? वर्तमान शिक्षा की यह अधोगति देखकर ही महात्मा गाँधी ने वर्धा शिक्षा योजना का सूत्रपात किया। श्री रवीन्द्र नाथ ठाकुर भी आधुनिक शिक्षा पद्धति के घोर विरोधी थे। उन्होंने शान्तिनिकेतन की प्रतिष्ठा करके शिक्षा सम्बन्धी अपनी मान्यताओं को मूर्त रूप प्रदान किया।

शिक्षा का माध्यम विदेशी भाषा है और वह भाषा इतनी अवैज्ञानिक है कि उसके सीखने में पर्याप्त समय लग जाता है। फिर भी उससे अपने देश-वासियों को कुछ भी लाभ नहीं होता। शिक्षा समाप्ति पर युवकों को किसी

कार्यालय में कार्य करने के अतिरिक्त अपनी जीविका के लिए कोई अन्य मार्ग नहीं दीखता। कार्यालय में थोड़े वेतन से कार्य न चलता देखकर हमारे नवयुवक घूँस तथा चोरी की शरण लेते हैं। आधुनिक शिक्षा में लड़के-लड़कियों के स्वास्थ्य की ओर जरा भी ध्यान नहीं दिया जाता। परीक्षाओं को सबसे अधिक महत्त्व दिया जाता है, जिसका परिणाम यह होता है कि विद्यार्थी रात दिन पुस्तकें रटते हैं और परीक्षा में उत्तीर्ण होकर अपने जीवन को सफल समझते हैं।

वर्तमान शिक्षा में विद्यार्थियों के चरित्र का विकास कोई स्थान नहीं है विकास होना तो दूर रहा, उल्टे उसमें चरित्रहीनता आ जाती है। लड़के और लड़कियाँ फैशन के गुलाम होते जा रहे हैं। वे बीड़ी, सिगरेट, चाय, पान आदि का सेवन में गर्व समझते हैं। विद्यार्थियों में धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा का कोई प्राविधान नहीं रखा जाता।

आजकल विश्वविद्यालयों के स्नातक अपनी शिक्षा को समाप्त कर लेने के उपरान्त अपने को समाज के अयोग्य और स्वयं के जीवन को असफल पाते हैं। वर्तमान शिक्षा से वे ही लोग लाभ उठा सकते हैं जो अमीर हैं। प्रायः देखा जाता है कि बच्चे की पढ़ाई में सैकड़ों रुपये खर्च हो जाते हैं।

आधुनिक शिक्षा इसलिए भी निम्न कोटि की है कि उसका उद्देश्य केवल उदर पूर्ति की साधना है। मैथिलीशरण गुप्त के शब्दों में—"अब नौकरी के लिए विद्या पढ़ी जाती यहाँ।" वर्तमान शिक्षा ही ऐसी है कि इससे नागरिकता के भावों का विकास नहीं होता है। आधुनिक शिक्षा-प्रणाली के अन्तर्गत क्रियात्मक शिक्षा को पर्याप्त प्रोत्साहन नहीं मिलता, इसलिए देश में कृषि तथा अन्य उद्योगों की दयनीय दशा है।

वर्तमान शिक्षा-प्रणाली के जहाँ हमने अवगुणों को देखा, वहाँ अब हमें यह देखना है कि इस आधुनिक शिक्षा के गुणों का कहाँ तक समावेश है ? वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में एक बहुत बड़ा गुण यह है कि इससे बालक-बालिकाओं में देश प्रेम खूब जाग्रत हुआ है पाश्चात्य साहित्य ने स्वतन्त्रता के प्रति एक नया भाव उत्पन्न कर दिया है। वर्तमान शिक्षा-पद्धति ने ही हमारे देश में महात्मा गाँधी, पंडित जवाहरलाल नेहरू, पण्डित गोविन्दबल्लभ पन्त, श्री लालबहादुर शास्त्री आदि उच्चकोटि के देशभक्त पैदा किये जिन पर हमें व देश को गर्व है।

प्रचलित शिक्षा-प्रणाली की दूसरी विशेषता यह है कि इसके पढ़ने से मानसिक विकास में अच्छी सहायता मिलती है। हर एक कक्षा के विद्यार्थियों को अनेक विषयों की अनिवार्य शिक्षा दी जाती है। विविध विषयों को दिन-रात पढ़ते रहने से छात्रों का ज्ञान-कोष खूब बढ़ जाता है तथा इस प्रकार उनका बौद्धिक स्तर अधिक उन्नत हो जाता है।

हम ऐसी शिक्षा-प्रणाली को चाहते हैं जो हमें मानसिक दासता से मुक्ति दे सके। हम मातृ-भाषा में ही शिक्षा दिये जाने के पक्ष में हैं। शिक्षा का सर्वसाधारण तक प्रसार होना चाहिये तथा शिक्षितों व अशिक्षितों के बीच की खाई भी पट जानी चाहिये। हमारी शिक्षा इतनी सस्ती होगी कि प्रत्येक नवयुवक को उच्च शिक्षा सरलता से सुलभ हो। पाश्चात्य साहित्य की शिक्षा के साथ-साथ भारतीय साहित्य पर विशेष बल दिया जाय। शिक्षा-क्षेत्र सीमित न हो। परीक्षा लेने की वर्तमान प्रणाली का बहिष्कार हो।

अस्तु, जब तक हमारी शिक्षा का स्वरूप परिवर्तित नहीं होता, हम शिक्षा के वास्तविक महत्त्व से परिचित नहीं हो सकते और न ही देश का कल्याण कर सकते हैं। आज भारत स्वतन्त्र है। देश के विकास के लिए आज की इस दोषपूर्ण शिक्षा-प्रणाली के स्थान पर नवीन शिक्षा-पद्धति का आश्रय प्रदान करना हितकर होगा। हम आशा करते हैं कि हमारी राष्ट्रीय सरकार हर सम्भव उपायों द्वारा शिक्षा की वर्तमान प्रणाली के स्थान पर एक सर्वमान्य शिक्षा-प्रणाली का सूत्रपात करेगी।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने सन् 1937 से बेसिक शिक्षा का श्रीगणेश किया। लेकिन यह योजना व्यवहार जगत् की न होकर भावना लोक तक सीमित रह गई। भारत सरकार ने सन् 1952 में 'मुदालियर माध्यमिक आयोग' की गठन किया। लेकिन इसकी संस्तुतियों (सिफारिशों) को रद्दी की टोकरी में डाल दिया गया। प्राइमरी एवं माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा तक तो कुछ सन्तोष किया जा सकता है लेकिन जहाँ तक विश्वविद्यालयों की शिक्षा का प्रश्न है वह थोथी सिद्ध हो रही है। विश्वविद्यालय की शिक्षा में सुधार हेतु विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की प्रतिष्ठा की गई है लेकिन इसके कोई प्रभावकारी परिणाम नहीं हैं। हमारे देश में शिक्षा पर केवल बजट का चार प्रतिशत ही खर्च किया है जोकि अत्यल्प है। यह परमावश्यक है कि अपने देश में राष्ट्रीय

शिक्षा-पद्धति का गठन तथा आयोजन करें। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो कि मानव के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करने में समर्थ हो। वही शिक्षा उत्तम तथा श्रेष्ठ ठहराई जायेगी जो मानव को कर्त्तव्यनिष्ठ, न्यायप्रियता, सहयोग, परिश्रम, बुद्धि विकास एवं उत्तम नागरिक बनने में सहायक हो। यदि मानव को अपने जीवन को उन्नत, सरस तथा मधुर बनाना है तो शिक्षा के सुधार का उत्तरदायित्व अपने कन्धों पर सम्भालना होगा। तभी भारत की फूल-बगिया में कोयलें निम्न तराना गायेंगी—

"सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा।"

55

समाचार पत्र और उनकी उपयोगिता

विचार-तालिका

- समाचार पत्र की आवश्यकता
- समाचार पत्र का विकास
- समाचार पत्रों के भेद
- समाचार पत्रों से लाभ
- समाचार पत्रों से होने वाली हानियाँ
- समाचार पत्रों का महत्त्व
- उपसंहार

विदेशों के अनुसार भारत में भी पाश्चात्य संस्कृति का प्रचार होता रहा है। अंग्रेजों के सम्पर्क में रहने से बहुत-सी बातें भारतीयों ने उनसे सीखीं तथा बहुत-सी नवीन बातें भारत में आईं और आ रही हैं। समाचार पत्र भी उनमें से एक है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज में ही बड़ा होता है तथा समाज में ही रहकर अपनी जीवन-लीला समाप्त करता है। समाज में रहकर मनुष्य अपनी बात कहना चाहता है तथा दूसरों की सुनना चाहता है। इसकी पूर्ति समाचार पत्र ही कर सकते हैं। हम अपने घर बैठे हुए विश्व के प्रत्येक राष्ट्र का समाचार बिना किसी उलझन के जान सकते हैं।

समाचार पत्रों का आरम्भ अभी नया ही कहा जायेगा क्योंकि इसके विकास में प्रेस ही सहायक सिद्ध हुए हैं। भारत में 100 वर्ष पूर्व समाचार पत्रों का नाम तक नहीं था। हिन्दी भाषा में उन्नीसवीं शताब्दी में समाचार पत्रों का प्रचलन हुआ। आज भारत की अनेक भाषाओं में प्रचुर मात्रा में दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्र निकल रहे हैं। सन् 1835 से पूर्व भारत में एक सरकारी पत्र प्रकाशित होता था यह अंग्रेजी भाषा में था। सबसे प्रथम भारतीय भाषा का समाचार पत्र 'कैटी', 'माशमन' और 'वार्ड' की देखरेख में रामपुर से धर्म का प्रचार करने के हितार्थ प्रचलित हुआ था। आज तो संसार में चारों तरफ समाचार पत्रों की बाढ़-सी आ गई है। अंग्रेजी के साथ-साथ प्रायः देश की समस्त प्रमुख भाषाओं में समाचार पत्र प्रकाशित होते हैं।

समाचार पत्रों के अनेक भेद हैं; जैसे धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक, व्यापारिक आदि। जो समाचार पत्र जिस उद्देश्य को ध्यान में रखकर प्रचलित हैं, उसमें उसी विषय के समाचारों की भरमार होती है प्रत्येक राष्ट्र में प्रत्येक प्रकार के समाचार पत्रों की आवश्यकता है।

यह बात ठीक है कि समाचार पत्रों के पढ़ने से अनेक लाभ हैं। सभ्य राष्ट्र और जातियों में समाचार पत्रों का होना आवश्यक है। समाचार पत्र विश्व के मनुष्यों की आवाज है। राष्ट्र जीवन को ऊँचा उठाना बहुत कुछ समाचार पत्रों के ऊपर ही निर्भर है। वास्तव में समाचार पत्रों ने आज के विश्व को कुटुम्ब-सा बना दिया है। इन समाचार पत्रों के प्रतिदिन पढ़ने से मनुष्य संसार की गतिविधियों से पूर्ण रूप से परिचित हो जाता है। समाचार पत्र थोड़ी ही देर में मनुष्यों की विचारधारा में परिवर्तन ला सकता है। किसी भी आन्दोलन का यदि समाचार पत्र प्रचार करें तो कोई भी शक्ति उस आन्दोलन की सफलता को नहीं रोक सकती है। अधिकारियो के कानों में उनके गुण-दोषों को पहुँचाने का माध्यम केवल समाचार पत्र ही है।

व्यापार के क्षेत्र में भी समाचार पत्रों की उपादेयता किसी से कम नहीं है। प्रत्येक व्यापारी यह चाहता है कि अधिक से अधिक उसके माल का विज्ञापन हो जिससे जनता उसे जी भरकर अपनाये। इस काम के लिए समाचार पत्र सर्वश्रेष्ठ साधन हैं। व्यापार से सम्बन्ध रखने वाली बाजार की प्रमुख वस्तुओं के दाम भी समाचार पत्रों में प्रकाशित होते रहते हैं। सिनेमा आदि में प्रयोग होने वाले चित्रों की सूचना भी मोटे रूप में इनमें मिल जाती है।

देश में जातीय और राष्ट्रीय विचारों की जागृति भी समाचार पत्रों के द्वारा होती है। अन्य देशों की प्रगति के विषय में पढ़कर पाठक के हृदय में स्वयं राष्ट्र के उत्थान के विषय में भी भाव जागृत होते हैं। यदि समाचार पत्र न हों तो हमें विश्व के समाचारों से हाथ धोना पड़ेगा। सच तो यह है कि समाचार पत्र एक ऐसा साधन है जो खुले तौर पर चिल्ला-चिल्लाकर जनता के संघर्ष, उत्साह तथा सहानुभूति को हमारे निकट पहुँचाता है।

समाचार पत्र प्रचार के कार्य में भी बहुत लाभकारी सिद्ध होते हैं। जब देशों में नये चुनाव लड़े जाते हैं तब वे बड़े काम आते हैं। ऐसेम्बली कौंसिल, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, म्यूनिसिपैलिटी आदि के चुनाव होते हैं तब हर एक सदस्य समाचार पत्रों का आश्रय पकड़ता है। समाचार पत्रों के द्वारा सदस्य लोग मतदाताओं को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए इसका उपयोग कर सकते है। यह बात भी बिल्कुल ठीक है कि जिस उम्मीदवार का समाचार पत्र उचित रूप से प्रचार करता है उसे चुनाव में अवश्य ही सफलता मिलती है।

यह बात ठीक है कि प्रत्येक वस्तु में गुण तथा दोष दोनों ही का सम्मिश्रण होता है। मानव की कोई भी रचना ऐसी नहीं है जो दोषों से पूर्ण न हो। जहाँ समाचार पत्र जनता का इतना हित करते हैं, वहाँ इनका ठीक प्रयोग न होने पर ये नाश का कारण भी बनते हैं। समाचार पत्र जब सत्य पर पर्दा डालकर असत्य का प्रचार करने लगते हैं, अथवा न्याय का गला घोंटकर अन्याय का समर्थन करने लग जाते हैं तब जनता को बड़ी भारी हानि होती है। भोली-भाली जनता सत्य और असत्य, न्याय तथा अन्याय के पथ पर भटककर उचित मार्ग को नहीं खोज पाती है।

बहुत-से समाचार अश्लील विज्ञापन निकालते हैं जिनको पढ़ने से पाठकों पर बहुत ही अवांछनीय प्रभाव पड़ता है। बड़े-बड़े साम्प्रदायिक दंगे खड़े करना तो समाचार पत्रों के लिए सहज हैं। झूठे और धोखेबाजी के विज्ञापनों से जनता के धन की हानि होती है। राजा और प्रजा में सद्भावना एवं प्रेम के पथ पर मतभेद पैदा करना इन्हीं का काम है।

आज का विश्व समाचार पत्रों का विश्व है विश्व के कोने-कोने में समाचार पत्रों की धाक जमी हुई है। यदि सम्पादक अपने उत्तरदायित्व को समझ

लें तो समाचार पत्र जनता के लिए लाभप्रद सिद्ध हो सकते हैं । समाचार पत्र जन-कल्याण के प्रकाशक हों । उनका दृष्टिकोण उदार हो । उनके द्वारा जनता को असत्य के स्थान पर सत्य, अन्याय के स्थान पर न्याय के पथ का दर्शन हो। जनता के मनोबल को उच्च करने के लिए उनमें समय-समय पर विद्वानों के लेख हों तो अवश्य ही निकट भविष्य में विश्व में शान्ति तथा प्रेम का साम्राज्य आ जायेगा ।

आज विश्व में समाचार पत्रों की इतनी धूम मची हुई है कि समाचार पत्रों के प्रकाशक प्रधानमन्त्री भवन से लेकर आम चौराहों पर देखे जा सकते हैं । यदि आज इन्हें आधुनिक युग के नारद की संज्ञा से विभूषित करें तो इसमें तनिक भी हास एवं अतिशयोक्ति नहीं होगी । शिक्षित जो बेकारी के शिकार हैं वे समाचार पत्रों में अपनी रोजी खोजते हैं, अविवाहित समाचार पत्रों के माध्यम से अपनी जीवन संगिनी तलाश करने का प्रयत्न करते हैं, पिता अपनी बेटी के लिए समाचार पत्रों के द्वारा वर खोजते हैं, रूठे हुए पुत्र को समाचार पत्र के विज्ञापन द्वारा ही बुलाया जाता है । चलचित्र भी इन्हीं के बलबूते पर फल फूल रहे हैं । अतः वर्तमान युग की सबसे बड़ी माँग यह है कि समाचार पत्रों को शुभ, न्यायपूर्ण एवं देश को प्रगति की ओर ले जाने वाले समाचारों को प्रकाशित करने की पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान कर देनी चाहिए । लेकिन साथ ही यह भी आवश्यक है कि कहीं पथ से भटक कर समाचार पत्र मानव की भावनाओं को दूषित न कर दें । अतः उन पर न्यूनाधिक अकुश होना परमावश्यक है ताकि वे निरंकुशता के शिकार न होकर मानव जीवन के साथ खिलवाड़ न कर बैठें ।

56

अल्प-बचत-योजना

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- सरकार के समक्ष भिन्न-भिन्न कार्य

- **सरकार द्वारा गरीबों की सहायता**
  - **(अ) व्यक्ति के लिए**
  - **(ब) सरकार के लिए**
- **उपसंहार**

(राष्ट्रीय बचत-संगठन की स्थापना अक्टूबर 1943 में हुई। 1944 में "एम० एस० एस० बुलेटिन" नामक एक त्रैमासिक पत्रिका जारी की गई जो कि 1947 तक प्रकाशित होती रही।)

बचत आन्दोलन का एक यथार्थ महत्त्व यह है कि प्रत्येक भारतीय के (विशेषतया ऐसे व्यक्ति जिनकी आय साधारण है) हृदय में बचत के लाभ भली प्रकार अंकित कर दिये जायें और उनमें नियमपूर्वक बचत करने की आदत डाल दी जाय। भारत गरीब देश है, अतः यह अभीष्ट है कि गरीब भारतीयों के हृदय में बचत आन्दोलन गहरी जड़ पकड़ लें। अल्प-बचत आन्दोलन जनता का आन्दोलन है", "एक पैसा रोज बचाइये" यह स्वतन्त्र भारत का एक नया नारा है।"

अल्प-बचत-योजना (Small Saving Scheme)

एक नई योजना को स्थायी तथा जनसाधारण के जीवन को पूर्ण सुखी बनाने में देशवासी सभी क्षेत्रों के विकास के महान् कार्यों में जुटे हुए हैं। स्वतन्त्र भारत भविष्य का सामना दृढ़ संकल्प और विश्वास के साथ करने को उद्यत है। गरीबी और बेरोजगारी दूर करने का उसने संकल्प ले लिया है। देहातों में नये जीवन की ज्योति जगमगाने लगी है। सामूहिक विकास योजनाओं और विस्तृत सेवा-खण्डों ने हमारे ग्रामवासियों की शक्ति को जगा दिया है तथा इनके दबे हुए उत्साह में जागृति पैदा की है। स्व-सहायता में दृढ़ विश्वास रखते हुए वे बाँध, तालाब, सिंचाई सम्बन्धित नालियाँ व नहरें, शालायें सामुदायिक केन्द्र, सड़क आदि के निर्माण के लिए स्वेच्छा से आगे आये हैं। इन कार्यों ने केवल उनकी बहुत दिनों की उदासीनता को ही दूर नहीं किया है, अपितु देश के रचनात्मक कार्यों में उन्हें भागीदार बना दिया है।

पंचवर्षीय योजनायें आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने और जनता को समृद्ध बनाने के महान् प्रयास हैं। इन योजनाओं के पूरा होने पर न केवल वर्तमान वरन् आगे आने वाली पीढ़ियाँ भी पूर्ण सुखी व समृद्ध होंगी। परन्तु नये उद्योग

व विभिन्न योजनाएँ, शालाएँ व औषधालय, सड़कें व रेल आदि के लिए भारी पूँजी की आवश्यकता है और इस पूँजी के लिए धन-व्यवस्था के सम्बन्ध में प्रत्येक भारतीय को अपने व्यय में कमी करनी चाहिये और बचाई हुई रकम सरकार को कर्ज के रूप में दे देना चाहिए। जिनके पास धन-प्राप्ति के बड़े साधन हैं, वे सरकारी कार्यों में, जो समय-समय पर किये जाते हैं, रुपया लगा सकते हैं। जो लोग अपेक्षाकृत कम बचा पाते हैं, उनकी सुविधा के लिए सरकार ने अल्प-बचत योजना बनाई है। यह रुपया लगाने की एक ऐसी लाभदायक योजना है जिसमें मूलधन कम हो जाने का भय नहीं वरन् ब्याज की दर ऊँची और आय-कर से मुक्त है।

समृद्धि के मार्ग में देश को अग्रसर होने के लिए, धन और श्रम दोनों की आवश्यकता है। सर्वसाधारण स्त्री-पुरुष के द्वारा अधिक श्रम और रुपया बचा कर अधिक उत्पादन करने, भविष्य के लिये बचाकर रखने तथा बचाये हुये धन को राष्ट्र की उन्नति में लगाने पर ही सफलता निर्भर है। अल्प-बचत योजना से कृषि एवं उद्योग द्वारा उत्पादन का स्तर ऊँचा उठेगा, बिजली और सिंचाई की सुविधाएँ बढ़ेंगी, सामाजिक एवं जन-कल्याणकारी कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायता मिलेगी, शिक्षा और स्वास्थ्य के साधनों का प्रसार होगा और यातायात के लिए सड़कों, रेलों एवं वायुयानों आदि का विस्तार होगा। ये महान् कार्य सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए श्रेष्ठ, समृद्ध एवं सुखी जीवन के साधन होंगे।

प्रत्येक नागरिक भारत सरकार की इन बचत-योजना में धन लगाकर देश के इस महान् ऐतिहासिक कार्य (नवीन भारत के निर्माण) में सक्रिय योग दे सकता है। साथ ही अपने भविष्य की आवश्यकताओं के लिए एक निश्चित रकम सुरक्षित रख सकता है। अनवरत बचत और बुद्धिमानी से रुपया लगाकर हम अपनी दो प्रकार से सहायता करते हैं—प्रथम तो हम अपने स्वयं के लिए मूलधन एकत्रित करते हैं और दूसरे अप्रत्यक्ष रूप से जनता के आर्थिक स्तर तो उन्नत करने में शासन की सहायता करते हैं।

पहले जो मनुष्य किसी बिना पेंशन वाली नौकरी में होते थे, बुढ़ापे में उन्हें कई प्रकार के कष्टों का सामना करना पड़ता था, पर भारतीय सरकार ने इस योजना के द्वारा बुढ़ापे में मनुष्यों को आराम पहुँचाने का एक नवीन

साधन खोज निकाला है। अपनी वृद्धावस्था के लिए यदि थोड़ा पैसा अलग रख दिया जाएगा तो जीवन के दिन अत्यन्त ही सुख के साथ व्यातीत होंगे। जो व्यक्ति प्रोवीडेण्ट फण्ड के साथ अवकाश ग्रहण करते हैं, उनको अपना प्रोवीडेण्ट फण्ड का रुपया इन सर्टीफिकेटों में लगाने में और भी प्रसन्नता होगी क्योंकि इस योजना से कुछ न कुछ मूल में वृद्धि होती है जोकि हमारे परिवार को भी आराम देती है।

भारत में शिक्षा का अभाव है, क्योंकि आधुनिक शिक्षा अत्यन्त मँहगी है। जन-साधारण के पास इतना पैसा नहीं है कि वह अपने बच्चों को उचित रूप से शिक्षा दिला सकें। इन सर्टीफिकेटों में लगाया हुआ रुपया उनकी शिक्षा के लिए सुरक्षित आधार सिद्ध होगा।

यदि अकस्मात् किसी इन्युइटी की अवधि से पूर्व खरीदने वाले की मृत्यु हो जाये तो बाकी समय की किश्तें उसके कानूनी उत्तराधिकारियों को मिलेंगी। वे सर्टीफिकेट कोई भी वयस्क अकेले नाम पर या किसी दूसरे के साथ संयुक्त रूप से खरीद सकता है।

भारत सरकार के भूतपूर्व अर्थमन्त्री श्री सी० डी० देशमुख के अनुसार 'सरकार के प्रयत्न तो तभी सफल होंगे जब लोग यह अनुभव करेंगे कि बचत करना देशभक्ति से ओत-प्रोत उनका एक कर्त्तव्य है, जिसके पालन करने से देश अपने वैभव के राजपथ पर अग्रसर होगा। आवश्यकता है कि प्रत्येक नागरिक निरन्तर नियमपूर्वक बचत करने की प्रतिज्ञा करे। यह बचत चाहे, एक पैसा प्रतिदिन, जितनी अल्प ही क्यों न हो।

श्री सम्पूर्णानन्द के अनुसार, "देश की आर्थिक स्थिति की दृष्टि से राज्य के प्रत्येक नागरिक के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि वह सबकी खुशहाली तथा समृद्धि के लिए राष्ट्रीय साधनों को बढ़ाने तथा विकास योजनाओं को प्रगति देने के लिए अपनी जिम्मेदारी का जुआ उठाये। भारत सरकार द्वारा संचालित राष्ट्रीय बचत योजना ने इस महान् कार्य में भाग लेना गरीब से गरीब व्यक्ति के लिए भी सम्भव बना दिया है। यह जनता की अपनी योजना है। निस्संदेह हर व्यक्ति इसका स्वागत करता है। नेशनल सेविंग सर्टीफिकेट में रुपया लगाने का मतलब न तो किसी फण्ड में चन्दा देना है और न किसी प्रकार का उपहार भेंट करना है। यह तो वास्तविक बचत है। राष्ट्र की भावी

उन्नति के लिए साधन निर्माण करने में जहाँ बचत सहायक होगी वहाँ रुपया लगाने वालों का स्वत्व भी इसी प्रकार बना रहेगा। यह योजना विनियोजकों के लिए वास्तव में एक महानतम प्रतिभूति है और यह आयकर से मुक्त ब्याज की आकर्षक दरें प्रस्तुत करती है।

ऐसे देश में जहाँ स्वतन्त्रता की भावना प्रत्येक व्यक्ति के चित्त को उल्लसित कर रही हो, वहाँ देशभक्ति चन्द चुने हुए लोगों का ही स्वप्न नहीं बनी रह सकती, बल्कि सभी इसका रसास्वादन करते हैं। निरन्तर बचाना और बचत को सरकारी प्रतिभूतियों में लगाते रहना गरीब से गरीब व्यक्ति के लिए अपनी देशभक्ति प्रदर्शित करने का एक अनुपम मार्ग है। इस उपक्रम में कदाचित् उसे जीवन की आवश्यकताओं पर किए जाने वाले अपरिहार्य काम को भी स्थगित करना पड़े परन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जितना महान् त्याग किया जाएगा, देशभक्ति से प्रेरित कार्य का उतना ही गौरव बढ़ेगा।

अतः स्वतन्त्र भारत के उत्तरदायी नागरिकों की दृष्टि से हमारा कर्त्तव्य है कि हम देश की उन्नति और विकास के लिए सरकार को अपने बचाए हुये रुपयों का उपयोग करने दें तभी विकास का रथ आगे बढ़ सकता है।

57
हमारे कुटीर-उद्योग

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- कुटीर-उद्योग प्राचीन तथा मध्य काल में
- कुटीर-उद्योग धन्धों के विषय में गाँधीजी का योगदान
- कुटीर-उद्योग धन्धों की अवनति के कारण
- गाँवों में कुटीर-उद्योग धन्धों का महत्त्व
- उपसंहार—जनता तथा सरकार की सहायता से कुटीर-उद्योग-धन्धों का विकास

बहुत काल पूर्व जब मनुष्य जंगली जीवन बिताता था, उस समय उसे किसी बात का विवेक नहीं था। उस काल में मानव की आवश्यकताएँ सीमित थीं। प्यास का अनुभव होने पर वह कल-कल करती तथा अबाध गति से प्रवाहित होने वाली सरिताओं के जल से अपनी प्यास बुझाता था। भूख लगने प्रवामाँ वसुन्धरा के वक्षस्थल पर पल्लवित हरे-वृक्षों के मधुर तथा अमृत-सम फलों से अपनी भूख की ज्वाला शान्त करता था। परन्तु शनैः-शनैः मानव की बुद्धि का विकास हुआ तो उसने निश्चित स्थान पर रह कर कृषि एवं पशु-पालन का व्यवसाय आरम्भ किया। कपास की उपज ने विकास के पथ पर अग्रसर होते मानव को कपड़े का निर्माण करने की ओर प्रेरित किया। अब सभ्य मानव के समक्ष नित्य नई-नई आवश्यकताएँ आकर नाचने लगीं। इसी कारण नये-नये घरेलू धन्धे अथवा कुटीर-उद्योग धन्धे पनपने लगे। कुटीर-उद्योग-धन्धों से हमारा तात्पर्य उन उद्योगों से है जिन्हें मनुष्य अपने घर या झोंपड़ी में ही बैठकर अपनी जीविका के लिए करता है, जैसे चटाई बुनना, बर्तन बनाना, मुर्गी पालना एवं चमड़े का कार्य करना आदि।

भारतीय इतिहास का वह स्वर्ण युग था जब हमारे देश में कुटीर-उद्योग-धन्धे उन्नति की चरम सीमा पर थे। उस समय कुटीर-उद्योग-धन्धों की सहायता से निर्मित पदार्थों से केवल हमारे देश के मनुष्यों की ही आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती थी वरन् उदार भारतवासी खुले हृदय से लाखों रुपये के सामान को विदेशों को भेजते थे। ढाका की मलमल को कौन नहीं जानता? सम्पूर्ण थान बाँस के टुकड़े की नली में आ जाता था। कितना गजब का था, उस काल में कुशल कारीगरों के हाथ का यह कमाल! हमारे देश का व्यापारी वर्ग भी विदेशों में अपने सामान को ले जाकर बेचता था। इस प्रकार उस काल में कुटीर उद्योग-धन्धों का बहुत ही महत्त्व था।

अशिक्षा के कारण भारत की जनता में एक-उदासीनता-सी छाई हुई है। मध्य युग में भी घरेलू उद्योग-धन्धों की दशा ठीक रही। उस काल में ऐसा कोई स्थान नहीं था जहाँ कुटीर-उद्योग-धन्धे नहीं पनप रहे हों। बड़े-बड़े स्थानों पर बड़े-बड़े कारखानों में लोहा, बर्तन, चमड़े का सामान, नाव बनाना, भवन बनाना आदि धन्धे बड़ी कुशलता के साथ किए जाते थे।

परन्तु जब हमारे देश पर ब्रिटिश सरकार का सिक्का जम गया तो कुटीर उद्योग-धन्धों को बड़ा भारी धक्का लगा। विदेशों से करोड़ों रुपये का सामान स्वावलम्बी भारत में आकर बिकने लगा। फलतः हमारे देश के कुटीर उद्योग-धन्धों का ह्रास होने लगा। जो भारत विदेशों में अपने हाथ से बनाये हुए माल को भेजता तथा विदेशी भी जिस भारत के कुशल सुयोग्य कारीगरों के हाथ के द्वारा बने हुए माल को पाकर अपने को धन्य समझते थे वही कर्त्तव्यपरायण भारत अपनी आवश्यकताओं के लिए विदेशों की ओर आशा भरी नजर से देखने लगा। कितना घोर हो गया, स्वावलम्बी भारत का पतन ! कवि के शब्दों में—

"लेकिन प्रतिकूलता ही सदा भाग्य भारत के रही,
कहते रहेंगे और कुछ, करते रहेंगे और ही।"

यह ठीक है कि समय बदल गया है और युग के साथ कुटीर-उद्योगों के लिए कुछ न कुछ कदम उठाया जाता रहा है। हमारे गाँव में चरखा चलाकर सूत कातना, तेल पेरना, लकड़ी तथा चमड़े का काम करना आदि उद्योग धन्धे जारी है। देश की परतन्त्रता की बेड़ी छिन्न-भिन्न के बाद आज का भारत पूर्णतः बदल चुका है, उसने जागृति के प्रभात में अपनी आँखें खोली हैं। आज के भारतवासी पूर्णतः प्रमाण हैं कि यदि हम अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विदेशों के ऊपर निर्भर रहते हैं तो यह हमारी मानसिक गुलामी का है। अतः धरती के बेटे कुटीर उद्योग-धन्धों की उन्नति करने में लग रहे हैं। भारतीय किसान भी अपने अवकाश के क्षणों में बेकार की बात न करके कुटीर-उद्योग-धन्धों के विकास में पर्याप्त योगदान दे रहे हैं। यही कारण है कि आज किसान की आर्थिक दशा में घरेलू उद्योगों के कारण पर्याप्त विकास हो रहा है अब उसे अपनी आवश्यकताओं के लिए पहले की भाँति सूदखोरों पर निर्भर नहीं रहना पड़ता।

यहाँ यह कहना असंगत नहीं होगा कि जब कुटीर-उद्योग-धन्धों का विकास भारत में ही रुकने लगा तो पूज्य बापू की आत्मा इसे सहन न कर सकी। पूज्य बापू कहा करते थे कि भारत एक कृषि-प्रधान देश है। भारत की उन्नति भारत के गाँवों पर ही निर्भर है। अतः बापू ने गाँवों को 'भारत की आत्मा' कहकर पुकारा। गाँधीजी का कहना था कि जब तक भारत के किसान कुटीर-

धन्धों अथवा घरेलू-उद्योग-धन्धों को नहीं अपनायेंगे तब तक देश में आर्थिक स्वतन्त्रता की स्थिति नहीं आ सकती। इसी कारण आर्थिक स्वतन्त्रता का अभाव देश में भुखमरी को जन्म देता है। देश की अधिकांश जनता परिणाम-स्वरूप तड़पा करती है जबकि एक छोटा-सा वर्ग ऐश आराम करता है, मजे उड़ाता है, अपनी तिजोरियाँ भरता है। इस आर्थिक स्वतन्त्रता के अभाव ने विश्व की शान्ति को नष्ट किया है मानवता की प्रगति में रोड़े अटकाए हैं, उसे कलंकित किया है। अस्तु, गाँधीजी ने आर्थिक स्वतन्त्रता की पूर्ति के लिए "अखिल भारतीय चरखा संघ तथा "ग्रामोद्योग संघ" की स्थापना की थी। वे स्वयं खादी एवं चरखे का महत्त्व स्वीकार करके अपने प्रतिदिन के कार्यक्रम में कताई को भी स्थान देते थे। उन्हें निर्धन भारत की उन्नति कुटीर उद्योग-धन्धों के बल पर ही होती दिखाई देती थी।

आज देश की और हमारी आवश्यकताओं को देखने पर यह स्पष्ट विदित होता है कि वह कुटीर उद्योग धन्धों को प्रोत्साहन दिया जाय। सरकार का भी कर्त्तव्य है कि वह मजदूरों को कच्चा माल एवं रुपया देकर तथा उसके द्वारा बने हुए माल को विक्रय करने में उनकी सहायता करके, उन्हें प्रोत्साहन दे। सरकार का यह भी कर्त्तव्य है कि कारीगरों को नवीन वैज्ञानिक औजारों से परिचित कराये। हमें आशा है कि जनता का सहयोग तथा सरकार की कार्य कुशलता-कुटीर-उद्योग धन्धों को अवश्य ही सफल बनायेगी। आज देश अपनी जनता से उसका श्रम और सहयोग कुटीर उद्योग-धन्धों के रूप में माँग रहा है। यदि जनता ने योग दिया तो निश्चय ही एक नये भारत के निर्माण की घोषणा होगी। देश को जन साधारण से बड़ी-बड़ी आशाएँ हैं।

साथ ही कुटीर उद्योग-धन्धों तथा लघु-उद्योगों का विकास होना देश के उत्थान की दृष्टि से बहुत ही आवश्यक है, इसके लिये परम्परा से चली आने वाली तकनीकों में आमूल क्रान्तिकारी परिवर्तन परमावश्यक है। इस दृष्टि-कोण को साकार रूप देने के लिए यत्र-तत्र प्रशिक्षण केन्द्र खोले जाने आवश्यक हैं, जहाँ तकनीकी शिक्षा प्रदान की जाये। साथ ही ग्रामीण अंचल में कुटीर उद्योगों के विकास के लिए विद्युत का पहुँचना परमावश्यक है। वैसे सरकार प्रयत्नशील है लेकिन उतनी मात्रा से ग्रामीण अंचलों में विद्युत की सुविधा नहीं है जितनी कि होनी चाहिए। इसके साथ विपणन व्यवस्था में सुधार होना

आवश्यक है ताकि श्रमिकों को अधिकाधिक लाभांश प्राप्त हो सके। लघु उद्योगों का विकास प्रतिद्वन्द्वी भावना के रूप में न होकर एक सहयोगी के रूप में होना देश के हित की दृष्टि से परमावश्यक है। अतः यह परमावश्यक है कि देश की उन्नति, समृद्धि तथा उत्थान के लिए कुटीर-उद्योग-धन्धों एवं लघु-उद्योग धन्धों का समानान्तर विकास होना चाहिए तथा इस विषय में तनिक भी शंका को जन्म देना बुद्धिहीनता तथा मूर्खता का परिचायक है।

58
भारतीय समाज और नारी

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना—प्राचीन काल में नारियों की दशा**
- **वर्तमान काल में नारियों की दशा**
- **स्त्रियों के स्वत्वों की अपेक्षा**
- **सुधार की आवश्यकता**
- **उपसंहार**

प्राचीन काल में हिन्दू-समाज में नारी का स्थान अत्यन्त सम्मानपूर्ण था। उन्हें पुरुषों के साथ समानता का अधिकार प्राप्त था। मनु की इस युक्ति "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:' से स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय विचार-धारा में नारी को कितना गौरवपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है? हमारे देश की नारियाँ सर्वथा देश और जाति के लिए बलिदान हुई हैं। प्राचीन काल में भारतीय नारियाँ शिक्षित एवं विदुषी होती थीं। गार्गी, मैत्रेयी आदि के नाम इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं।

परन्तु समाज बदला। जहाँ नारी को देवी तथा लक्ष्मी के समान पूजा जाता था, वहाँ अब उसे पुरुषों की भोग्य वस्तु समझा जाने लगा। आज जब हम समाज में नारी की दशा का अवलोकन करते हैं, तो हमारा मस्तक लज्जा से झुक जाता है। आज की नारी अपने अंक में दासता को छिपाए हुए है, उसे प्रताड़ित तथा पीड़ित किया जाता है। उसके आत्म-सम्मान को भी महत्त्व नहीं

दिया जाता, पुरुष-वर्ग नारी के साथ खिलवाड़ कर रहा है। वैदिक युग के बाद नारी-समाज का इतिहास शनैः-शनैः पुरुषों की बेड़ियों, सामाजिक बन्धनों में जकड़ी जाने वाली नारी का इतिहास है।

हिन्दू समाज में आज नारी की कारुणिक दशा है अभिभावक छोटी आयु में लड़कियों का विवाह कर देते हैं। उस समय उनको विवाह का वास्तविक ज्ञान तक नहीं होता। इस प्रकार पुरुष उसके बाल्यकाल में ही उसे भोग की वस्तु बना लेते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि सन्तान दुर्बल उत्पन्न होती है जो देश और जाति का नाममात्र को भी हित नहीं कर सकती। वह रोगी सन्तान असमय ही मृत्यु के मुँह में चली जाती है। कभी-कभी तो यहाँ तक देखा जाता है कि चौदह वर्ष की कन्या का विवाह चालीस वर्ष के पुरुष के साथ कर दिया जाता है जिससे उसका जीवन नष्ट हो जाता है। वृद्ध पति उस अबोध वधू को छोड़कर मृत्यु की गोद में समा जाता है और वह बेकार असहाय दर-दर ठोकर खाती फिरा करती है।

हिन्दू-समाज में विधवाओं की बड़ी दुर्दशा है। उन्हें आभूषण, सुन्दर वस्त्र तक पहनने की आज्ञा अथवा स्वतन्त्रता नहीं। मुस्कराना उनके लिए अभिशाप है। उनका दर्शन तक अशुभ माना जाता है। उन्हें जीवन के समस्त आनन्द से वंचित कर दिया जाता है। कितना खेद का विषय है कि पुरुष तो अपनी इच्छानुसार कितनी तथा कभी भी शादी कर सकता है परन्तु विधवा होने पर बेचारी नारी को उसी हीनावस्था में सिसकने के लिये छोड़ दिया जाता है। मैथिलीशरणजी की निम्न पंक्तियाँ जहाँ एक ओर नारी जाति की दासता का ज्ञान कराती हैं वहाँ दूसरी ओर पुरुषों के अत्याचारों को बताती है:—

"नरकृत शास्त्रों के बन्धन हैं सब नारी ही को लेकर,
अपने लिए सभी सुविधायें पहले ही कर बैठं नर।"

आज नारी पुरुष की अर्द्धांगिनी न रहकर उसकी गुलाम बन गई है, उसकी प्रेमिका न रहकर उसके भोग का साधन बन गई है। उसका सारा जीवन पराधीनता में बीत रहा है। पुरुष शायद भूल गया है कि नारी को सम्मान न देकर अपने पैरों पर ही कुल्हाड़ी मार रहा है।

हिन्दुओं में नारियों के लिए पर्दा आवश्यक है। जो स्त्रियाँ पर्दा नहीं करतीं, वे समाज में धर्महीन समझी जाती हैं। शोक के साथ कहना पड़ता है

कि पर्दे में रहने वाली नारियाँ भीरु एवं उत्साहहीन हो जाती हैं। उनके स्वास्थ्य का नाश हो जाता है।

गोस्वामी तुलसीदास ने अपने 'रामचरितमानस' नामक ग्रन्थ में नारी के विषय में कहा है कि—

"ढोल, गंवार, शूद्र, पशु नारी।
ये सब ताड़न के अधिकारी॥"

स्त्री के लिए उनके द्वारा इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग करना तत्कालीन समय की पुकार थी क्योंकि उस समय नारी को समाज में हेय दृष्टि से देखा जाता था। भारतीय समाज में अन्धविश्वास, कुबुद्धि एवं अशिक्षा आज भी नारी के मस्तक से पूर्ण रूपेण धुले नहीं हैं। स्त्री शिक्षा आज नाममात्र के लिए रह गयी है जो शिक्षा आज दी जाती है वह भी अपने उद्देश्य की पूर्ति करने में असमर्थ है। आधुनिक शिक्षा ने नारी को गृहलक्ष्मी न बनाकर उसे फैशन की तितली बना दिया है एवं पाश्चात्य सभ्यता के रंग में रंगकर उसने भारतीय नारी के आदर्श को भुला दिया है। आज हमारे समाज में नारी पर इतने प्रतिबन्ध लगाये गये हैं परन्तु ये प्रतिबन्ध नारी के सुधार हेतु अनावश्यक हैं एवं इनसे किसी भी प्रकार का सुधार होना उचित प्रतीत नहीं होता है। गोस्वामीजी ने अपने रामचरितमानस में एक स्थान पर कहा है कि—

"जिमि स्वतन्त्र होहि बिगरहिं नारी।"

इतना ही नहीं नारी को अनेक प्रकार के अवगुणों से युक्त भी बताया गया है। कवि तुलसीदासजी ने तो नारी के अन्दर आठ अवगुण बतलाये हैं—

साहस, अमृत, चपलता, माया,
भय, अविवेक, असौच, अदाया।"

परन्तु नारी के विषय में जब तक इन सभी असंगतियों को दूर नहीं किया जाएगा तब तक भारतीय नारी के जीवन को सुधारा नहीं जा सकता है।

हिन्दू-समाज में नारियों में शिक्षा का नितान्त अभाव है। कुछ लोग अब भी यह कहते सुने जाते हैं कि स्त्रियाँ पढ़ने से कुमार्गगामी हो जाती हैं। शिक्षित स्त्रियों का आचरण संदेहात्मक हो जाता है। जो शिक्षा पुरुषों की शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियों का विकास करती है वही नारियों के लिये

हानिप्रद कैसे हो सकती है ? यदि हम स्त्री को बच्चों का निर्माता मानते हैं तो स्त्री-शिक्षा का होना आवश्यक हो जाता है ।

हिन्दू-समाज में बालिकाओं को आभूषण पहनने का बड़ा चाव होता है । परिवार में आये दिन नारियाँ आभूषणों के लिए अपने पति को परेशान करती हैं । चाहे खाने को सुन्दर भोजन की व्यवस्था न हो, परन्तु उनके लिए आभूषणों का होना उनसे अधिक आवश्यक है । उन्हें चिन्ता नहीं, चाहे उनके पुत्र शिक्षा प्राप्त करें या नहीं, उन्हें आभूषण चाहिये ।

हिन्दुओं में स्त्रियों पर अनेक अत्याचार किये जाते रहे हैं । विवाह के विषय में कन्या की राय का कोई महत्त्व नहीं होता । वह तो उस मूक गाय के समान है जो कसाई के हाथ कटने जाती है । पिता उसे जहाँ धकेलता है उधर ही वह चली जाती है । प्रायः बेमेल विवाहों का प्रधान कारण यही है कि विवाह के समय कन्या की सलाह नहीं ली जाती । पैतृक सम्पत्ति पर भी कन्या का कानूनी रूप से अधिकार होते हुए भी कन्या के विवाह के समय जो कुछ दहेज में दिया जाता है, वह एकमात्र उसका भाग समझा जाता है । इसके अतिरिक्त वह कुछ नहीं प्राप्त कर पाती । इसी का परिणाम है कि नारी अबला बनकर जीवन भर आँसू बहाती है—

"अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी ।
आँचल में है दूध और आँखों में पानी ॥"

परन्तु नारी की इस दयनीय दशा का परिणाम देश को भोगना पड़ रहा है । जिस देश की नारी परतन्त्र होती है, वह देश मृतक के समान है । नारी ही नर को जन्म देने वाली जननी है । यदि वह जर्जर है तो उसके स्तनों में पुष्ट दूध कहाँ जो उनकी सन्तानों को वीर तथा साहसी बना सके । देश का उत्थान नारियों पर आधारित है । हर्ष का विषय है कि हमारी सरकार भी नारी-कल्याण के लिए सक्रिय ठोस कदम उठा रही है । भारत के नये संविधान में नारियों के अधिकार और कर्त्तव्यों पर उदार दृष्टिकोण से विचार किया गया है । आशा है, निकट भविष्य में नारी जाति का उत्थान अवश्यमेव होगा । वे पुनः अपने प्राचीन गौरवपूर्ण स्थान को प्राप्त कर देवी तथा लक्ष्मी समझी जायेंगी ।

59

जहाँ सुमति तहँ सम्पत्ति नाना

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- एकता की सार्वभौमिकता
- एकता से प्रेम तथा स्नेह का प्रसार
- एकता सफलता की कुँजी
- कुछ उदाहरण
- उपसंहार

हमारे देश में जब कभी संकट के बादल उमड़े एवं आन्तरिक एवं कलह से भारत देश में अव्यवस्था एवं अन्याय का बोलबाला हुआ ऐसी परिस्थितियों में समय-समय पर महान् विभूतियों ने जन्म लेकर देश को एक नया मोड़, नयी दिशा प्रदान करके विश्व में आदर्श उपस्थित किया है। ऐसे ही थे महान् समाज सुधारक एवं भक्त कवि तुलसीदास जिनके रामचरितमानस से विश्व का हर मानव परिचित है उन्होंने एक स्थान पर कहा है—

"जहाँ सुमति तहँ सम्पत्ति नाना।
जहाँ कुमति तहँ विपत्ति निधाना॥"

शाब्दिक अर्थ की दृष्टि से भी उपर्युक्त पंक्तियाँ अक्षरशः सत्य है। अर्थात् जहाँ पर चार भाइयों में यदि आपस में मेल है तो उन्हें कोई छू भी नहीं सकता। यदि उनमें आपस में मेल नहीं एवं परस्पर लड़ते-झगड़ते हैं। सुमति एवं एकता के महत्त्व पर बल देते हुए किसी संस्कृत के विद्वान् के शब्द भी अनुकरणीय हैं—

"संघे शक्तिः कलौयुगे।"

अर्थात् कलियुग में एकता में ही बल है। अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता। जब तक मनुष्य के पास एक सूत्रबद्ध शक्ति नहीं है तब तक वह किसी भी प्रकार के छोटे एवं बड़े कार्य में सफल नहीं हो सकता है। यही नहीं कलह युक्त घर भी दरिद्रता से परिपूर्ण होते हैं। इसके विपरीत; जिस घर के

सदस्यों में आपस में मेलजोल एवं प्रेम है वह घर उत्तरोत्तर उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होता चला जाता है।

चौरासी लाख योनियों में मनुष्य ही सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। मनुष्य की श्रेष्ठता इसी कारण है कि वह बुद्धि-प्रधान प्राणी है अन्य प्राणियों की अपेक्षा उसमें सोचने विचारने की शक्ति है। वह अपने हित तथा अनहित को भली प्रकार समझता है, वह अपने जीवन का पूर्ण रूप से सर्वेसर्वा है, वह चाहे तो अपने जीवन को उज्ज्वल बना सकता है, चाहे उसे अन्धकार के कूप में गिरा सकता है। हाँ, उसे जीवन को उन्नत बनाने के हेतु कुछ साधनों की आवश्यकता होती है। शिक्षा, सदाचार, शिष्टाचार आदि ऐसे साधन हैं जिनसे मनुष्य का जीवन उच्च तथा महान् हो जाता है। उसे सहानुभूति और पारस्परिक सहायता की भी आवश्यकता होती है। इस कार्य की सिद्धि के लिए उसे ईर्ष्या, द्वेष का परित्याग करना पड़ेगा। परस्पर ऊँच-नीच के भाव को दिल से निकालना पड़ेगा। उन्नति के लिए मानव-समाज में एकता, सहृदयता और एकाग्र मन होकर कार्य करने की मनोवृत्ति जाग्रत करनी पड़ेगी।

हम अपने दैनिक जीवन में देखते है कि प्रकृति के प्रत्येक कार्य में एक-रूपता तथा एकता दृष्टिगोचर होती है। यदि प्रकृति के अन्दर एकता का अभाव हो जाय तो सम्भवतः विश्व को प्रलयकाल के दर्शन करने पड़ेंगे। एकता के बिना विश्व की किसी भी वस्तु की स्थिति असम्भव है। प्रकृति का निर्माण असंख्य परमाणुओं के संयोग से हुआ है। मानव शरीर की रचना भी अनेक अवयवों के पारस्परिक मेल से ही हुई है। बड़े-बड़े विशाल तथा आलीशान महलों की रचना भी अनेकों ईटों के मेल से ही होती है।

क्या बिना ईटों के मेल के इतना बड़ा भव्य भवन बनाना सम्भव है? आज विज्ञान के युग में जब हम बड़े-बड़े पुलों पर दृष्टिपात करते हैं तो मानव के इस कौशल को देखकर ठगे से रह जाते है। मगर अनगिनत लकड़ी के तख्तों, लोहे की कीलों आदि के संयोग से बने इन विशालकाय पुलों का रहस्य हमारी समझ में सहज भाव से ही आ जाता है। सन् के छोटे-छोटे रेशे अलग-अलग किसी भी कार्य के नहीं होते, परन्तु जब वे परस्पर मिलकर एक रस्सी का रूप धारण कर लेते हैं तो उस रस्सी में बड़े-बड़े भीमकाय हाथियों को भी

बाँधा जा सकता है । व्यक्तियों की एकता समाज और राष्ट्र का निर्माण करती है । बड़े-बड़े साम्राज्य एकता के अभाव में क्षण भर में ही नष्ट-भ्रष्ट हो जाते हैं, जिन समाज अथवा राष्ट्रों में द्वेष, कलह, फूट आदि के बीज रहते हैं, वे कभी भी उन्नति तथा सम्पत्ति का मुँह नहीं देख सकते । कहने का तात्पर्य यह है कि बिना एकता के विश्व का कोई भी कार्य होना असम्भव-सा ही है ।

जिस देश में परस्पर प्रेम तथा एकता है वही समाज या देश संसार के अन्य देशों का सिरमौर बनता है । कभी देश का व्यापार, उसकी शिक्षा, कला-कौशल समस्त विश्व को अचम्भे में डाल देता है । छोटे से छोटे राष्ट्र भी एकता के बल पर बड़े राष्ट्रों का सामना बड़ी सरलता से कर लेते हैं । विश्व आज ब्रिटिश जाति का लोहा क्यों मानता है ? आज वे सभ्यता के उच्च शिखर पर क्यों आरूढ़ हैं ? आज वे प्रगति पर अग्रणी क्यों बने हुए हैं ? उत्तर स्पष्ट है कि उनमें एकता है ।

कुमति अथवा फूट, अशान्ति, अपयश दुःख तथा विनाश को लाती है विश्व का इतिहास इस बात का साक्षी है कि इस कुमति तथा एकता के अभाव ने विश्व की महान् शक्तियों को पल-भर में धूल में मिला दिया । राजपूत—जिनका कि प्रण था—

"रघुकुल रीति सदा चलि आई ।
प्राण जाय पर वचन न जाई ।।"

निरन्तर असफलता का मुँह क्यों देखते रहे, क्योंकि उनमें एकता का अभाव था, वे एक झण्डे के नीचे कभी नहीं लड़ सकते थे । क्या पृथ्वीराज तथा जयचन्द के एक रहते हुए मुहम्मद गौरी को विजय प्राप्त हो सकती थी ? यदि देश के सारे-महाराजा मिलकर पुरु का साथ देते तो क्या सिकन्दर, वीर पुरु को पराजित कर सकने में समर्थ होता ? आपसी फूट ने ही तो मराठों तथा राजपूतों को कभी पनपने नहीं दिया । आज भी मुसलमानों तथा हिन्दुओं के पारस्परिक धार्मिक झगड़े भारत की संघ शक्ति में बाधक सिद्ध हो रहे हैं ।

जीवन में एकता का महत्त्व महान है, इसे कौन अस्वीकार कर सकता है ? प्रत्येक राष्ट्र में एकता की महत्ता मानी गई है । क्या ईसाई, क्या बौद्ध, क्या यहूदी; सब एकता के नियम को मुक्त कंठ से स्वीकार करते हैं, विधाता

इस विचित्र जीवमयी वसुन्धरा में एकता की भावना ही हममें 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना जाग्रत करती है। हमें ईश्वर के सच्चे स्वरूप की ओर आकर्षित करती है। हमारा ध्यान इस सत्य की ओर जाता है कि हम सब एक ही परमपिता भगवान् की सन्तान हैं। अतः क्या ही अच्छा हो कि हम एक ही पिता की सन्तान होने का दावा कभी-कभी परस्पर मनोमालिन्य तथा फूट को अपने पास तक नहीं फटकने दें।

किसी राष्ट्र को ऊँचा एवं उन्नत करने के लिए एकता की महान् आवश्यकता है व्यक्तिगत मनोमालिन्य नाशकारी सिद्ध होता है। व्यक्तिगत स्वार्थ की कब्र खोदनी पड़ेगी। जातिगत भेद-भाव मिटाने पड़ेंगे। प्रेम तथा स्नेह के बन्धन में सबको बँधना पड़ेगा। प्रत्येक एकता के पुजारी को अपने हृदय को विशाल तथा सहृदय बनाना पड़ेगा। तभी जातियाँ और राष्ट्र सबल होंगे, तभी बड़ी से बड़ी शक्ति का सामना करने में राष्ट्र समर्थ होंगे। एक सूत की आटी का उदाहरण इसके लिए पर्याप्त होगा, क्योंकि जब सूत के धागे अलग-अलग रहते हैं तो कोई भी उन्हें तोड़ सकता है। परन्तु जब उनको एकत्रित कर दिया जाता है तब वे ही धागे टूटने में नहीं आते। एक-एक बूंद से घट भर जाता है। परस्पर मिले हुए नक्षत्र आकाश-मण्डल में कितने मनोहारी प्रतीत होते हैं। अतः जहाँ एकता है वहीं जीवन है और वहीं सौन्दर्य है।

दुःख का विषय है कि भारतवर्ष में एकता का अभाव जैसा आज दृष्टिगोचर है, वैसा कभी देखने में नहीं आया। इस कुप्रवृत्ति के कारण प्रत्येक स्थान पर फूट, कलह, द्वेष, दलबन्दी तथा अनैतिक दुराचार बढ़ते जा रहे हैं। इस समय हमको एकता का विस्तार करके त्यागी, तपस्वी, सेवाव्रती, सत्यवादी बनना है कि हम पथ-भ्रष्ट मानव को राह दिखा सकें। जब तक भारतवासी पुनः एकता को नहीं अपनायेंगे तब तक राष्ट्रोत्थान का प्रश्न एक पहेली बना रहेगा। अतः वे ही समाज और राष्ट्र धन्य हैं जो एकता के सूत्र में बँधे हैं। हमारी भगवान् से प्रार्थना है कि वे प्रत्येक भारतीय के मानस में एकता के भाव उदय करें जिससे भारत में एकता की सरिता प्रवाहित हो जाय।

जहाँ सुमति होगी वहाँ सफलता मानवों के कदमों का चुम्बन करेगी तथा वहीं पर सुख, वैभव, शान्ति और प्रेम की मंदाकिनी प्रवाहित होती रहेगी क्योंकि इंसान अपने क्रिया-कलापों द्वारा ही स्वर्ग तथा नरक का निर्माता होता

है। क्योंकि विश्व में जनशक्ति एवं सम्पत्ति शक्ति महान् शक्ति के रूप में आँकी जाती है और साथ ही 'संघे शक्तिः कलौयुगे' वाली कहावत भी सत्य है। इस संदर्भ में महाकवि श्रीधर पाठक द्वारा लिखित पंक्तियाँ दृष्टव्य है—

"जन-जन सरल सनेह, सुजन व्यवहार व्याप्त नहिं,
निर्धारित नर-नारि उचित उपचार आप्त नहिं।
कलिमल मूलक कलह कभी होवै समाप्त नाहि,
वह देश मनुष्यों का नहीं प्रेतों का उपवेश है।
नित नूतन अघ उद्देश्य थल, भूतल नरक निवेश हैं।"

60

सबै दिन जात न एक समान

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—उक्ति का अर्थ
- समय की परिवर्तनशीलता
- व्यक्ति, समाज, राष्ट्र तथा कतिपय ऐतिहासिक उदाहरण
- प्राकृतिक एवं राजा-महाराजाओं के उदाहरण
- उपसंहार—मनुष्य का कर्त्तव्य

इस पंक्ति का सीधा-सादा अर्थ है, सब दिन एक समान व्यतीत नहीं होते। प्रकृति की प्रत्येक वस्तु में अज्ञात रूप से प्रतिक्षण परिवर्तन होता रहता है। इसी परिवर्तन में जीवन तथा गति का समावेश है। जीवन के कोई दो क्षण एक से नहीं होते। हमारा जीवन प्रतिक्षण बदलता रहता है। हम प्रतिदिन अपने को एक नवीन स्थिति में पाते हैं। कभी जब समय की चाल हमारे अनुकूल होती है तो हम प्रसन्नता के हिंडोले पर झूलने लगते हैं, परन्तु यदि हमारे विपरीत हुआ तो हम दुःख के अगाध सागर में निराशा के साथ डूबने लगते हैं। आज जो व्यक्ति पूर्ण आराम एवं विलासिता का जीवन बिता रहा है, कल वही दर-दर की ठोकर खा सकता है। आज जिसके मुखमण्डल पर हास्य तथा प्रसन्नता की रेखायें दिखाई पड़ रही हैं, कल उसी के मुख पर विषाद की गहरी

काली छाया दिखाई देती है। कहने का तात्पर्य यह है कि जीवन में आशा-निराशा, सुख-दुःख बारी-बारी से आते रहते हैं। किसी का जीवन सफलता-असफलता, आशा-निराशा, जय-पराजय, उत्थान-पतन के द्वन्द्वों से बचा नहीं। समय का चक्र अपनी गति से घूमता रहता है। इसी प्रकार मनुष्य का भाग्य भी परिवर्तित होता रहता है। जीवन के सब दिन एक समान व्यतीत नहीं होते।

समय परिवर्तनशील है। चक्र के समान ही भाग्य भी परिवर्तित होता रहता है। परन्तु समय का यह परिवर्तन सबके लिए समान नहीं होता।

यह प्रवाह किसी का निर्माण करता है और किसी का विनाश। आज जो राजा है वह कल रंक हो सकता है आज जो उन्नति के उच्चतम शिखर पर विराजमान है, कल वह अवनति के गहरे गर्त में गिर सकता है। आज विश्व जिसका लोहा मानता है, कल वही दूसरों के सम्मुख नतमस्तक हुआ दीख पड़ता है समय बड़ा बलवान होता है जिसके यह पक्ष में होता है उससे, विश्व भय खाता है तथा जिसके यह विपरीत होता है, उसके लिए विश्व में जीवित रहना भी दुर्लभ हो जाता है। समय की गति को कोई नहीं रोक सकता। जो समय की गति या चाल को पहचान लेते हैं, वे सदैव जीवन में सफलता की देवी के दर्शन करते हैं और जो समय के साथ-साथ उसकी गति को पहचान कर नहीं चलते, वे नष्ट हो जाते हैं अथवा अवनति के गर्त में पड़े कराहते रहते हैं।

इन्हीं कारणों से हम प्रायः यह कहा करते हैं कि हम अज्ञात या अनन्त की ओर अग्रसर हो रहे हैं सभी अपने भविष्य के विषय में कल्पना करते हैं, विचार करते हैं और आनन्द की लहरों के साथ नाचने लगते हैं। पर उन्हें कल का क्या पता? उन्हें आने वाले भविष्य का क्या ज्ञान? विश्व का इतिहास घटनाओं से आपूरित वरन् समय-परिर्तन की एक लम्बी कथा है। कितनी ही सम्भव बातें असम्भव हो जाती हैं और असम्भव बातें संभव बन जाती हैं। हम आँखें फाड़कर देखते रह जाते हैं।

कौन कल्पना करता था सोने की चिड़िया भारत देश को एक दिन यवनों द्वारा पराजित होना पड़ेगा। सोमनाथ के मन्दिर का निर्माण करते-करते यह विचार बनाने वालों के मस्तिष्क में भी नहीं आया होगा कि एक दिन यही मन्दिर नष्ट कर दिया जायेगा। मोहनजोदड़ो, सारनाथ के नष्टप्रायः स्तूप

चिल्ला चिल्लाकर कह रहे हैं कि उनकी इस बुरी गति का एकमात्र कारण समय की चाल ही है। आगरे का ताज तथा फतेहपुरसीकरी की शेख सलीम चिश्ती की दरगाह आज भी है, परन्तु इनका निर्माण करने वाले न जाने कौन सी कब्र में पैर फैलाये लेटे हैं। जो जमींदार किसानों से मनमानी बेगार लेते थे, आज वे ही जमींदार समय के तीव्र प्रवाह में पड़कर कहाँ से कहाँ पहुँच गए हैं। अवनति के गर्त में पड़े हुए राष्ट्र उन्नति के शिखर पर आरूढ़ हो गये तथा अपने को सभ्य तथा उच्च समझने वाले राष्ट्र पतन की गहरी खाई में गिर पड़े।

परिवर्तनशीलता प्रकृति में भी दृष्टिगोचर होती है। दिवस के बाद रात और रात के बात दिवस आते रहते हैं। वसन्त की मधुर पवन के पश्चात् ग्रीष्म की शरीर पर कोड़े मारने वाली प्रचण्ड लुएँ चलने लगती हैं। इसके पश्चात् ग्रीष्म की कड़कती हुई धूप से तपती हुई धरती को शान्त तथा कोमल बनाने के लिए वर्षा की रिमझिम-रिमझिम फुहारें मन्द-मन्द गति से पड़ने लगती हैं। शीतकाल के आगमन पर सर्दी शरीर पर बर्फ का-सा छिड़काव करने लगती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रकृति की वस्तुओं की गति अथवा दशा समान नहीं रहती, उनमें भी क्रमशः परिवर्तन देखने को मिलता है। प्रकृति प्रतिक्षण बदलती रहती है—

"चढ़त-चढ़त मध्यान लों, अस्त होत हैं भानु।"

इसी भाँति जीवन में सब दिन एक समान नहीं जाते। कभी जीवन में सुनहरी घड़ियाँ आती हैं तो कभी विपत्ति के काले बादल मँडराने लगते हैं। महाराज हरिश्चन्द्र एक दिन राजा थे दूसरे दिन चाण्डाल के दास बने। कहाँ रामचन्द्रजी को राजा बनाने की तैयारियाँ की जा रही थीं, कहाँ कैकेयी द्वारा बनवास मिला जिन महाराज युधिष्ठिर के राज्य में सूर्य अस्त नहीं होता था उन्हें जंगल की खाक छाननी पड़ी। राणा प्रताप सोने के बर्तनों में भोजन करते थे, फूलों की शैय्या पर शयन करते थे, हजारों दास हर समय सेवा के लिए उपस्थित रहते थे। समय के फेर से फिर उन्हें ही जंगल की घास पर सोना पड़ा, भोजन के अभाव में घास की रोटियाँ खानी पड़ीं। पूज्य बापू जो कि भारत की स्वतन्त्रता के अग्रदूत थे तथा जिन्होंने हमारे राष्ट्र को उन्नत बनाने के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया, वे अपने परिश्रम का फल

भोगने भी न पाये थे कि उन्हें कराल काल ने हमसे छीन लिया । जो बात व्यक्तियों के लिए सत्य है, वही समाज के लिए भी सत्य है । वैदिक काल के आर्य सब प्रकार से महान् तथा मेधावी थे तथा बौद्ध युग में उनका पतन हुआ । संसार में जो संघर्ष और कोलाहल है, उन सभी के मूल में एक आशा है—किसी न किसी दिन समय अवश्य बदलेगा । गरीबी की अवस्था में भूखों रहकर पढ़ने वाला विद्यार्थी यह विश्वास रखता है कि भविष्य में उसकी स्थिति अवश्य ही सुधरेगी ।

अगर एक व्यक्ति ऊँची स्थिति से पतित होता है तो उसे हताश नहीं होना चाहिए अपितु 'सबै दिन जात न एक समान' का आदर्श सामने रखकर नए उत्साह से आगे बढ़ना चाहिए ।

61

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना—जन्म व बाल्यकाल**
- **रचनाएँ**
- **भाषा**
- **शैली**
- **विचारधारा**
- **उपसंहार—राष्ट्रकवि के रूप में**

श्री मैथिलीशरण गुप्त का जन्म श्रावण शुक्ला द्वितीय चन्द्रवार संवत् 1943 को चिरगाँव जिला झाँसी में हुआ था । इनके पिता का नाम श्री राम चरण जी थीं । श्री रामचरण जी को कविता से बहुत प्रेम था । इसलिए बालक मैथिलीशरण का पालन-पोषण एक काव्यमय वातावरण में हुआ था ।

गुप्तजी प्रारम्भ में अँग्रेजी शिक्षा प्राप्त करने के लिए झाँसी गये पर वहाँ उनका मन नहीं लगा और घर लौट आये । घर पर ही सेठजी ने इनको शिक्षा दिलाने का कार्य प्रारम्भ कर दिया । सेठजी के प्रभाव से इनके हृदय में काव्य

के प्रति अनुराग उत्पन्न हो गया। एक दिन गुप्तजी ने एक छप्पय लिखा जिसे पढ़कर पिता ने आशीर्वाद दिया कि तुम भविष्य में एक अच्छे कवि होगे। गुप्तजी की प्रारम्भिक कवितायें कलकत्ते के एक सामाजिक पत्र में प्रकाशित होती थीं, बाद में द्विवेदीजी के सम्पर्क में आने पर उनकी कविताएँ 'सरस्वती' में प्रकाशित होने लगीं। द्विवेदीजी ने गुप्तजी की काव्य-प्रतिभा से प्रभावित होकर उनकी रचनाओं को शुद्ध किया। इससे गुप्तजी को बड़ा उत्साह किया। 'साकेत' उनका महाकाव्य है जो मंगलाप्रसाद पारितोषिक से विभूषित हो चुका है। गुप्तजी की रचनाएँ दो प्रकार की हैं अनूदित और मौलिक। विरहिणी ब्रजांगना, बंगला रचना का हिन्दी अनुवाद है, मधुप उपनाम से उन्होंने वीरांगना, मेघनाद वध तथा प्लासी का युद्ध बंगला से अनुवाद किया है। उमरखय्याम को रुबाइयों का अनुवाद भी हिन्दी रूप में किया है। अनघ, चन्द्रहास और तिलोत्तमा उनके पद्यबद्ध रूपक हैं। मौलिक काव्य-ग्रन्थों में रंग में भंग, जयद्रथ वध, भारत-भारती, शकुन्तला, पत्रावली, वैतालिक, किसान, पंचवटी, विष्णुप्रिया, जय-भारत, गुरु तेगबहादुर, हिन्दू-शक्ति, सैरन्ध्री, वन-वैभव, झंकार और साकेत की गणना की जाती है। यशोधरा, द्वापर, सिद्धराज इनके बाद के प्रकाशन हैं। इनके अतिरिक्त विकट भट, गोपिका, अनघ, त्रिपथगा और गुरुकुल भी इनके काव्य-ग्रन्थ हैं। इस प्रकार गुप्तजी ने साहित्यकोष को अपनी कृतियों में भरा है। दुःख है कि आज गुप्तजी हमारे बीच नहीं हैं, अपितु उनकी स्मृतियाँ मात्र ही शेष हैं।

गुप्तजी की काव्य भाषा खड़ी बोली है। भाषा पर उन्हें पूरा अधिकार है। भारतेन्दु के समकालीन कवियों में जो दोष पाये जाते हों, गुप्तजी की भाषा उन सभी दोषों से मुक्त है। 'सरस्वती' में प्रकाशित होने वाली प्रारम्भिक कविताओं में कहीं-कहीं तद्भव शब्द आ गए हैं, किन्तु प्रधानता तत्सम शब्दों की ही है। गुप्तजी की भाषा में क्रमानुसार विकास हुआ है। 'भारत-भारती' में जो रूखापन है, वह पंचवटी तक पहुँचते-पहुँचते समाप्त हो गया है। गुप्तजी की कविता पर संस्कृत का भी प्रभाव है। गुप्तजी की भावना और विचारों का संस्कृत साहित्य से घनिष्ठ सम्बन्ध है। कुछ शब्दों की उन्होंने संस्कृत व्याकरण के अनुसार रचना भी की है। गुप्तजी की भाषा पर प्रान्तीयता का भी प्रभाव पड़ा है। कहीं-कहीं उर्दू भाषा के शब्द भी तुकबन्दी के लिए लाए गए

हैं । वाक्य पूरे उलझे हुए हैं । नाटकों में संवादों की भाषा पर अंग्रेजी भाषा का प्रभाव पड़ा है । लोकोक्तियों और मुहावरों का भी खूब प्रयोग हुआ है । उनकी भाषा सर्वत्र ही भावानुकूल, पात्रानुकूल और प्रसंग के अनुसार चलती है । इस प्रकार आपकी भाषा सरल, मधुर, व्याकरण-सम्मत एवं साहित्यिक रागों से परिपूर्ण है । वह रसानुकूल तथा संस्कृत-गर्भित होते हुए भी अधिक क्लिष्ट नहीं है । इस कारण आपकी रचनाएँ हिन्दी जगत् की सर्वमान्य एवं रुचिकर हैं ।

गुप्तजी की काव्यक्षेत्र में प्रतिभा चतुर्मुखी थी । वे प्रबन्धकाव्यकार, गीतकार, नाटककार सभी रूप में दिखाई देते हैं । उनकी शैली भी उसी के अनुरूप चलती है । गुप्तजी के अधिकांश काव्य प्रबन्ध शैली के अन्तर्गत आते हैं । 'रंग में भंग' और 'जयद्रथ-वध' इसी शैली में लिखे गये हैं । उपदेशात्मक शैली का प्रयोग भी गुप्तजी ने 'गुप्तकुल' और 'भारत-भारती' में किया है । गुप्तजी की शैली प्रभावोत्पादक संयत, गम्भीर, प्रसाद, माधुर्य और ओज से परिपूर्ण है ।

गुप्तजी की प्रत्येक रचना सोद्देश्य थी । उनका लक्ष्य सदैव मानव-कल्याण का रहा है । दूसरी विशेषता उनका समाजवाद है । वे व्यक्ति के पक्षपाती नहीं हैं । अछूतों के प्रति वे सहानुभूति प्रकट करते हैं । हिन्दू-मुस्लिम एकता पर उन्होंने बड़े गम्भीर विचार प्रकट किए हैं । वे विधवा विवाह का समर्थन करते हैं । गुप्तजी पर भारतीय संस्कृति का अमिट प्रभाव है । उनका समस्त साहित्य राष्ट्र-प्रेम में डूबा हुआ मिलता है । राष्ट्र के लिए वे दृढ़ कर्त्तव्यों का सन्देश देते हैं । गुप्तजी की समाज-सेवा, राष्ट्र-सेवा, देश-सेवा समस्त विश्व के लिए आदर्श है ।

गुप्तजी समन्वयवादी कलाकार थे । आपकी रचनाओं में नवीनता, नवीन आदर्श, नवीन छन्द शैली, संस्कृति एवं समस्या की रक्षा का दृष्टिकोण और भारत उत्थान भावना से ओतप्रोत है । राष्ट्रीयवाद, साम्यवाद, छायावाद, मर्यादा, मानवता, उपयोगिता सभी पर आपका समानाधिकार है । आपकी रचनाओं में वर्तमान युग की प्रायः सभी प्रवृत्तियों का दिग्दर्शन हुआ है । इसी से आप अपने समय के प्रतिनिधि राष्ट्रकवि कहे जाते थे । दिसम्बर 1964 में आपका स्वर्गवास हो गया । यदि गुप्तजी अभी हमारे बीच होते तो निश्चित

ही वे हिन्दी काव्य-साहित्य की श्रीवृद्धि करते । 'गोपिका' उनकी अन्तिम काव्य कृति है ।

गुप्तजी ने द्विवेदी युग से अपनी रचनाएँ करना प्रारम्भ किया था । वह समय हिन्दी का शैशव काल था । गुप्तजी ने खड़ी बोली में काव्य रचना करके युगान्तर तो उपस्थित किया ही साथ ही वे युग प्रवर्त्तक के आसन पर भी प्रतिष्ठित किए जाने योग्य हैं । आपने जहाँ एक ओर पुराण-विषयक आख्यानों पर महाकाव्यों की रचना करके भारतीय आदर्शों को मूर्तिमान रूप प्रदान किया वहाँ दूसरी ओर आलम्बन रूप में प्रकृति का चित्रण करके पाठकजी की रीति को पल्लवित किया । राष्ट्रीय काव्य लिख करके जहाँ युवकों की धमनियों में उत्साह का संचार किया वहीं दूसरी ओर साहित्य एवं समाज का ताल-मेल स्थापित किया । यदि साहित्य में कहीं भी सर्वाधिक मानवीय भावनाओं का अवलोकन करना है तो उसके निमित्त पाठक की दृष्टि सहसा गुप्तजी के काव्य पर आ टिकती है । आपका काव्य उद्देश्यपूर्ण है । 'साकेत' काव्य में राम के शब्दों के माध्यम से कवि के स्वयं के आदर्श को व्यक्त किया है—

"संदेश नहीं मैं यहाँ स्वर्ग का लाया ।
इस पृथ्वी को ही स्वर्ग बनाने आया ।।"

यथार्थ में गुप्तजी इस धरती को स्वर्ग की श्री, शोभा तथा सुषमा में परिवर्तित करना चाहते थे तथा जीवन के अन्तिम क्षणों तक अपनी कला के माध्यम से इस उद्देश्य को प्राप्त करने में जुटे रहे । गुप्तजी मरकर भी अमर हैं । उनकी वाणी युग-युगों तक जन मानस में नवीन चेतना तथा देशभक्ति का संचार करती रहेगी ।

62
श्री लालबहादुर शास्त्री

विचार-तालिका

- बाल्यकाल और शिक्षा
- राजनैतिक जीवन

- प्रधान-मन्त्री के रूप में
- पाकिस्तानी आक्रमण
- ताशकंद समझौता
- महाप्रयाण

ठिगना कद, धोती, कुर्ते और गांधी टोपी में मुखरित सौम्य मुद्रा, इकहरा बदन और पाँव में चप्पल—यही था श्री लालबहादुर शास्त्री का मधुर एवं अविस्मरणीय व्यक्तित्व जो सदैव उनके विनम्र, शान्त और मधुर स्वभाव की याद दिलाता रहेगा। शास्त्रीजी में लौह पुरुष पटेल की दृढ़ता, पंतजी की विवेक-बुद्धि, लाला लाजपतराय की राजनैतिक सूझ-बूझ, गाँधीजी की सादगी और नेहरूजी की ईमानदारी तथा देशभक्ति का जैसे एक स्थान पर समन्वय हो गया हो ये सभी गुण शास्त्रीजी में विद्यमान थे। इस कारण ही वे 1965 में हुए पाकिस्तानी आक्रमण को अपनी गहरी सूझ-बूझ और कर्मठता के आधार पर विफल कर सके थे। उनके शब्द थे—'हम रहें या न रहें देश रहेगा हमारा तिरंगा रहेगा।'

श्री शास्त्री का जन्म 2 अक्टूबर, 1904 को वाराणसी (उ० प्र०) के मुगलसराय नामक स्थान में हुआ। पिता श्री शारदाप्रसाद सरकारी नौकरी में थे। डेढ़ वर्ष की अवस्था में ही पिता की छत्रछाया सिर से उठ गई। अपनी दो बहिनों के साथ ननिहाल में इन्हें पालन-पोषण मिला। माता रामदुलारी देवी पति की मृत्यु के पश्चात् अपने पिता के यहाँ रहने लगी थीं। वहीं लालबहादुर को सबका स्नेह और प्यार मिला। प्रारम्भिक शिक्षा वाराणसी के हरिश्चन्द्र स्कूल में हुई। सत्तरह वर्ष तक स्कूल में पढ़ने के पश्चात् गाँधीजी की स्कूल-कॉलेज बहिष्कार करने की अपील से प्रभावित होकर आपने अध्ययन छोड़कर असहयोग आन्दोलन में भाग लेना आरम्भ किया और यहीं से आपकी जेल यात्रा आरम्भ हो गई।

सन् 1921 में जेल से विदा होकर काशी विद्यापीठ वाराणसी में पढ़ाई प्रारम्भ की। आचार्य नरेन्द्रदेव, डॉ० सम्पूर्णानन्द, श्री प्रकाश एवं डॉ० भगवान दास के मार्ग-दर्शन में शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण की। आपका विवाह 23 वर्ष की आयु में हुआ था। आपकी पत्नी का नाम श्रीमती ललिता शास्त्री है। आपके चार पुत्र और दो पुत्रियाँ हैं।

विवाह से पूर्व ही शास्त्रीजी स्वतन्त्रता आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने लगे थे। 1926 में आप 'लोकसेवक सभा' के सदस्य बने। प्रारम्भ में इन्होंने अपना कार्य क्षेत्र इलाहाबाद बनाया। सात साल तक इलाहाबाद नगरपालिका के सदस्य भी रहे। काँग्रेस में शामिल होने पर शास्त्रीजी ने अल्पावस्था में ही महत्त्वपूर्ण पदों का सफलता के साथ निर्वाह किया। 1937 में काँग्रेस की ओर से उ० प्र० विधान सभा के सदस्य चुने गये। 1921 से 1945 तक शास्त्रीजी ने काँग्रेस के सभी आन्दोलनों में भाग लिया और कुल सात बार जेल यात्रा की। आपने अपने जीवन के कुल नौ वर्ष जेल में व्यतीत किए। 1946 में पुनः उ० प्र० विधान सभा के सदस्य चुने जाने पर आप मुख्यमन्त्री स्व० श्री गोविन्द बल्लभ पंत के संसदीय सचिव नियुक्त हुए। 1957 में स्वतन्त्र भारत की उ० प्र० सरकार के गृह और परिवहन मन्त्री बने और लगातार 5 वर्ष तक सफलता के साथ कार्य-संचालन किया। 1957 में आपकी कार्यक्षमता से प्रभावित होकर नेहरू जी ने आपको काँग्रेस पार्टी का महामन्त्री पद का कार्यभार विशेष आग्रह के साथ दिया। शास्त्रीजी की सूझ-बूझ और कुशल संगठन के कारण प्रथम आम चुनाव में कांग्रेस को भारी बहुमत से विजय मिली।

1952 में आम चुनावों के बाद भारत की नई संसद में आप राज्यसभा के सदस्य चुने गये। मई 1952 में ही आप केन्द्रीय परिवहन एवं रेल मन्त्री नियुक्त हुए। चार वर्ष पश्चात् एक रेल दुर्घटना हो जाने के कारण आपने संवैधानिक आचरण का आदर्श प्रस्तुत करते हुए अपना त्याग पत्र दे दिया। 1957 में लोक सभा के सदस्य चुने जाने पर आप परिवहन एवं संचार मन्त्री नियुक्त हुए, 1958 में विभागों का परिवर्तन होने पर वाणिज्य और उद्योग मन्त्री बने। बाद में अप्रैल 1961 में तत्कालीन गृह मन्त्री पं० गोविन्दवल्लभ पन्त का निधन हो जाने पर आपको गृह मन्त्रालय का कार्यभार सौंपा गया। भारत के गृह मन्त्री के पद पर आपने जिम्मेदार और कुशलता के साथ अनेक महत्त्वपूर्ण विवादों को सुलझाया। 9 जून 1965 को शान्ति-दूत नेहरू के असामयिक निधन के बाद आपको स्वतन्त्र भारत के द्वितीय प्रधान-मन्त्री का गौरवमय पद प्राप्त हुआ और आप भारत की कोटि-कोटि जनता की महत्त्वाकांक्षाओं को पूरा करने तथा जवाहर द्वारा देखे गये भारत की समृद्धि के सपने पूरे करने में प्राणपण से जुट गये।

प्रधानमन्त्री पद का कार्यभार सम्हालने के बाद शास्त्रीजी ने भारतवासियों की दशाओं के अनुरूप कुशलता और कर्मठता से बहुत जल्दी ही ख्याति प्राप्त कर ली। अनेक विवादों और झगड़ों को आपने अपनी विलक्षण बुद्धि और दूरदर्शी दृष्टि से सुलझाया। प्रधानमन्त्री बनने से पूर्व ही भारत की सीमाओं पर चीन और पाकिस्तान का आक्रमण का भय बना हुआ था। 30 जून 1965 को आपने कच्छ के रन के सम्बन्ध में पाकिस्तान सरकार के साथ समझौता करके भारत और पाकिस्तान दोनों की जनता को युद्ध की विभीषिका से बचा लिया, किन्तु पाकिस्तान चीन की सहायता प्राप्त करके युद्ध करना चाहता था। उसकी कश्मीर पर वक्र दृष्टि थी। अत: अगस्त 1965 में पाकिस्तान ने चोरी-छिपे हजारों घुसपैठिये भारतीय सीमा में भेजकर युद्ध प्रारम्भ कर दिया। पाकिस्तान की योजना थी कि उसके घुसपैठिये भारत में अव्यवस्था पैदा कर देंगे और यहाँ की शान्ति भंग कर देंगे। इधर सीमाओं पर पाकिस्तानी सेना आक्रमण करेगी। इस प्रकार भारत को आन्तरिक और बाह्य दोनों हमलों का सामना करना पड़ेगा और पाकिस्तानी सेनाएँ इस स्थिति का लाभ उठाकर कश्मीर पर अपना अधिकार जमा लेंगी। भारतीयों में संकटकाल में संगठित होकर, अपने मतभेद भुलाकर एकता बनाये रखने और शत्रु को पराजित करने की परम्परा रही है। भारतीय इतिहास के पृष्ठ वीरता से रंजित हैं, राजपूती राजाओं के शौर्य की गाथाएँ और आन पर मर-मिटने की कथाएँ संभवत: पाकिस्तानी शासकों ने नहीं पढ़ी थीं तभी वे सोचते थे कि भारत में रहने वाले मुसलमान पाकिस्तान का साथ देंगे किन्तु ऐसा नहीं हो सका। भारत का प्रत्येक मानव चाहे वह किसी जाति या वर्ग का हो, एक है और उसने एक होकर पाकिस्तानी हमलावरों का मुकाबला किया। हमारे जवानों ने अद्‌भुत शौर्य, वीरता प्रदर्शित की। जवानों का हौसला बनाये रखने और उन्हें उत्साहित करने के लिए नागरिकों ने यथासम्भव सभी कार्य किये। श्री लाल-बहादुर शास्त्री ने सेनाओं को आदेश दिया कि हमलावर को खदेड़ दिया जाय और जवान बढ़ते जायँ। शास्त्रीजी के इस आदेश से पूरे भारत में एक नया जोश भर गया। शास्त्रीजी ने उन लोगों का भ्रम दूर कर दिया जो शास्त्रीजी के कद के प्रभाव में आकर उन्हें शङ्का की दृष्टि से देखते थे और उनके नेतृत्व

को कमजोर समझते थे। पाकिस्तानी आक्रमण के दौरान शास्त्रीजी की कठोरता और कर्मठता देखकर पूरे भारत में हर्ष और उत्साह भर गया, फलत: पाकिस्तान को मुँह की खानी पड़ी। उसके हजारों टैंक नष्ट हुए और सैंकड़ों विमान मार गिराये गये।

मित्र-राष्ट्रों के अनुरोध पर शास्त्रीजी ने पाकिस्तान के साथ वार्ता करने का सुझाव स्वीकार किया। रूस के प्रधानमन्त्री श्री कोसीगिन के प्रयत्न से ताशकन्द (रूस) में दोनों शासनाध्यक्षों की वार्ता प्रारम्भ हुई। पर्याप्त विवाद के पश्चात् दोनों नेता एक समझौता करने में सफल हुए। यह समझौता 'ताशकंद समझौता' कहा गया। इसमें प्रमुख रूप से यह स्वीकार किया गया कि भारत और पाकिस्तान किसी भी विवाद के लिए बल प्रयोग नहीं करेंगे और सारे मतभेद बातचीत द्वारा सुलझाये जायेंगे। दोनों देशों की जनता को विनाश से बचाने के लिए यह समझौता श्री कोसीगिन के प्रयत्नों से जनवरी 1966 ई० में हुआ। हस्ताक्षर करने के बाद दोनों नेताओं ने सौहार्द्रपूर्ण वातावरण में एक दूसरे से विदाई ली।

सम्पूर्ण राष्ट्र उनके स्वागत की तैयारी कर रहा था कि अचानक समाचार मिला—'हृदय की गति रुक जाने से श्री लालबहादुर शास्त्री का ताशकंद में देहान्त हो गया।' सारा देश इस समाचार को सुनकर स्तब्ध रह गया। पूरा विश्व रो पड़ा। अभी ताशकंद समझौते पर हस्ताक्षर किये नौ घण्टे ही बीते थे। रात्रि 11 बजे वे सोने गये। एक बजकर बीस मिनट पर उन्हें खाँसी आई और वे बेहोश (अचेतन) हो गये। यह समाचार सम्पूर्ण विश्व के लिए वज्रघात-सा प्रतीत हुआ। मृत्यु से कुछ घण्टे पूर्व उन्होंने टेलीफोन पर भारतवासियों के लिए सन्देश दिया था कि समझौता हो गया है। "अब हमें शान्ति के लिए भी उसी साहस और संकल्प के साथ संघर्ष करना है जिस तरह हमने आक्रमणकारी का मुकाबला किया।"

शास्त्रीजी को शान्ति और युद्ध का पुजारी कहा जाता है। वे जितने नम्र थे, उतने कठोर भी थे। जिस उत्साह और प्रेरणा से उन्होंने ताशकंद समझौता किया, उतने ही उत्साह और वीरता से उन्होंने युद्ध किया। उन्होंने अपना हर वचन प्राणों की बाजी लगाकर पूरा किया जितनी खुशी उन्होंने समझौता होने के बाद भारतवासियों को दी और उनके स्वागत के लिए आतुर किया,

उसी के समान दुःख और वज्राघात उनकी मृत्यु के समाचार से हुआ। श्रीमती ललिता शास्त्री का मुस्कराता चेहरा उस समय फूट-फूटकर रो रहा था जिस समय शास्त्रीजी का शव तिरंगे में लपेटा जा रहा था, उस समय श्रीमती शास्त्री का बिलख-बिलख कर रोना सभी को द्रवित कर रहा था। कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं था जिसकी आँखों में आँसू न हों। शवयात्रा के मार्ग पर लाखों लोगों की भीड़ उनको अश्रुपूरित नेत्रों से श्रद्धांजलि अर्पित कर रही थी प्रत्येक के मुँह पर ये शब्द थे—शास्त्रीजी, काश ! तुम्हारे स्थान पर हम जा सकते और तुम देश की इसी प्रकार सेवा करते रहते।

शास्त्रीजी ने केवल 20 माह के कार्यकाल में ही भारत की जनता का हृदय जीत लिया था। उनके सौम्य, सरल स्वभाव तथा मुस्कराते चेहरे की आकृति प्रत्येक भारतीय हृदय मेंअङ्कित है। उनकी स्मृतियाँ अमर हैं। वे भारतीय जनता के लिए अपनी अमूल्य निधि, ताशकंद समझौते के रूप में छोड़ गये हैं। भारत ताशकंद समझौते को अपनी अमूल्य निधि मानता है और उसका सम्मान करता है। शास्त्रीजी का 'ताशकंद समझौता' हमारे लिए शास्त्री जी की स्मृति के समान पवित्र है। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के अमर प्रतीक इस प्यारे लालबहादुर शास्त्री के लिए भारतीय जनता सदैव स्मरण करती हुई निम्नलिखित श्रद्धा सुमन अर्पित करती रहेगी, क्योंकि वह देश-प्रेम के दीवाने थे।

> "जिसे दीवानगी कहते हैं वो उल्फत की नौबत है।
> गनीमत है जो सदियों में कोई दीवाना हो जाय।"

63

भारत में लोकतन्त्र का भविष्य

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना**
- **लोकतन्त्र की परिभाषा**
- **प्रजातन्त्र (लोकतन्त्र) के गुण-दोषों का विवेचन**

- **भारत में प्रजातन्त्र**
- **भारत में लोकतन्त्र की आधुनिक स्थिति**
- **भारत देश में प्रजातन्त्र का भविष्य**
- उपसंहार

कल्पना कीजिए उस आदि युग की जब मानव जंगली पशुवत् जीवन व्यतीत करता था। लेकिन जैसे-जैसे मानव सभ्यता के शिखर पर चढ़ता गया, ज्ञान रश्मियों ने उसके मस्तिष्क तथा हृदय को आलोकित किया। उसी क्षण उसके मन-मानस में व्यवस्था के प्रति रुझान उत्पन्न हुआ, इसी के परिणाम स्वरूप समाज तथा राज्य का उद्‌भव तथा आविर्भाव हुआ। राज्य का सर्वोत्तम लक्ष्य यही है कि वह जनसाधारण को समान, सुव्यवस्थित एवं न्याय की आधारशिला पर टिकी हुई शासन-व्यवस्था प्रदान करे। इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर यथासमय विविध प्रकार की शासन-प्रणालियाँ विश्व रंगमंच पर प्रयोग की जाती रही हैं। उत्तम शासन-प्रणाली के विषय में विद्वानों में भी परस्पर मत-भेद हैं लेकिन विचार की कसौटी पर कसने पर आज के साम्राज्यवादी युग में प्रजातन्त्र अथवा लोकतन्त्र प्रणाली खरी उतरती है।

प्रजातन्त्र शासन की परिभाषा पर प्रकाश डालते हुए अमेरिका के राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन ने कहा था कि, "प्रजातन्त्र वह शासन है जिसमें जनता द्वारा जनता के हित के लिए जनता की सरकार की स्थापना की जाती है।" (Government by the people, of the people and for the people.) इस परिभाषा से यह बात भली प्रकार स्पष्ट हो जाती है कि प्रजातन्त्र शासन में जनसाधारण की राय को प्रमुखता दी जाती है और साथ ही जनता के मत से चयन किए गए प्रतिनिधि ही जनता की भलाई को ध्यान में रखकर शासन सूत्र का संचालन करते हैं। यह प्रणाली सबसे पहले यूनान की धरती पर पल्लवित हुई। वैसे वहाँ शासन पर प्रभुत्व तो राजा का ही था। लेकिन अनेक समस्याओं के निवारण हेतु सभ्य पुरुषों को बुला लिया जाता था। धीरे-धीरे स्पेन तथा फ्रांस आदि देशों में राजतन्त्र को दफना दिया गया और उसके स्थान पर प्रजातन्त्र का आविर्भाव हुआ। आज सभी बड़े देशों में प्रजातन्त्र शासन-प्रणाली पल्लवित, पुष्पित तथा विकसित हो रही है।

प्रजातन्त्र शासन में भी अनेक गुण और दोष विद्यमान हैं। सबसे पहले हम प्रजातन्त्र शासन-पद्धति के गुणों का विवेचन करेंगे इस शासन में सबसे बड़ा गुण यह है कि इसमें राज्य के स्थान पर व्यक्ति को प्रधानता दी जाती है अर्थात् मनुष्य को साध्य माना जाता है तथा इसके विपरीत राज्य को साधन माना जाता है। इस पद्धति में मनुष्य अपने मत द्वारा किसी भी पुरुष को अपने प्रतिनिधि के रूप में चयन कर सकता है। भाषण, लेख तथा विचार में व्यक्ति की स्वतन्त्रता रहती है। इस पद्धति में सरकार जनता को अन्याय, अत्याचार एवं शोषण की चक्की में नहीं पीस सकती है ? इस शासन में जनता के प्रतिनिधि शासन करते हैं। चुनाव में जो दल बहुमत प्राप्त करता है उसी दल का मुखिया मन्त्रिमण्डल का निर्माण करना है और साथ ही मन्त्रिमण्डल को संसद के समक्ष उत्तरदायी होना पड़ना है। यह दल संसद में अपना बहुमत खो बैठना है तो मन्त्रिमण्डल को अपने पद से हटना होता है।

'प्लेटो' ने शासन को मूर्खों का शासन ठहराया है; उनका यह मत है कि विश्व में बुद्धिमानों की अपेक्षा मूर्खों की संख्या अधिक है, जब मूर्ख बहुमत में होते हैं तो बहुमत का शासन भी मूर्खो द्वारा संचालित होगा। मूर्ख तथा अशिक्षित जनता को अपने और शासन के अधिकारों का रंचमात्र भी ज्ञान नहीं होता है। चुनाव में विजयी दल अपने समर्थकों को खुश करने के लिए उच्च से उच्च पद देता है और साथ ही लाभ भी पहुँचाया जाता है। यह सारी बातें पक्षपात को जन्म देती हैं। प्रजातन्त्र का एक बड़ा दोष कार्य-संचालन में मन्द गति होना है क्योंकि संसद में लम्बी अवधि तक बहस चलती रहती है।

आज भारत देश स्वतन्त्र है, स्वतन्त्रता की सुनहली उषा से भारत के ग्राम, नगर तथा कानन आलोकित हो रहे हैं। स्वतन्त्र भारत में देश के शासन को संचालित करने वाले कर्णधारों ने हमारे देश के लिए प्रजातन्त्र शासन पद्धति को अपनाया है। हर एक वयस्क भारतीय को वोट देने का अधिकार मिला हुआ है। जनता द्वारा चुने गए विधायक तथा संसद सदस्य मन्त्रिमण्डल की रचना करते हैं। यह विधायक तथा संसद सदस्य ही भारत के सर्वोच्च अधिकारी राष्ट्रपति का भी चयन करते हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से लेकर अब तक हमारे देश की धरती पर पाँच महानिर्वाचन सम्पन्न हो चुके हैं और प्रारम्भ से ही केन्द्र शासन पर काँग्रेस दल का अधिकार रहा है।

भारत में आज भी अविद्या का अँधेरा छाया हुआ है, क्षुद्र स्वार्थ तथा दलबन्दी के दलदल में जनसाधारण फँसा हुआ है। प्रजातन्त्र में जो अवगुण होते हैं वह भारत में विद्यमान हैं। विपक्ष भी कमजोर है। राष्ट्रीय जाग्रति तथा शिक्षा के अभाव में जनसाधारण भटक रहा है। जनता के मतों से चुने गए विधायक संसद सदस्य कुर्सी को पाकर जनता से कोसों दूर हो जाते हैं। आज शासक भोग-विलास में निमग्न हैं। साधारण जनता भूखी-नंगी रह कर गंदे, घिनौने घरों में कीड़े-मकोड़ों की तरह जीवनयापन कर रही है। आज के चुनाव भी अत्यन्त ही व्ययसाध्य हैं। चुनाव में व्यक्ति की योग्यता के स्थान पर जाति-सम्बन्धी, स्वार्थ तथा संकीर्ण भावना को प्रश्रय दिया जाता है। योग्य व्यक्ति का निष्पक्ष चुनाव होना भारत देश के प्रजातन्त्र में बालू में तेल निकालने के समान हो गया है। सत्ता के मद में राजनैतिक दल मर्यादा का गला घोंट देते हैं। हड़ताल, प्रदर्शन, गोली प्रहार एवं आन्दोलन साधारण सी बात हो गए हैं।

भारतवर्ष के स्वतन्त्र होते ही उसकी प्रगति हेतु अनेक योजनाओं का क्रियान्वयन किया गया। देश की प्रगति हेतु अनेक प्रकार के आर्थिक कार्य-क्रमों का सृजन हुआ जिसके द्वारा देश समृद्धि एवं सुख के मार्ग पर अग्रसर हुआ। परन्तु इसके साथ-साथ जैसे-जैसे समय व्यतीत होता गया वैसे ही देश के अन्दर विघटनकारी एवं समाज विरोधी तत्त्व भी पनपते चले गए। उन्होंने देश की आर्थिक स्थिति पर आघात किया। अधिकांश लोगों ने स्वतन्त्रता शब्द का भ्रांतिपूर्ण अर्थ लगाया एवं देश को बरबादी के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया। तस्कर एवं जमाखोरों ने वस्तुओं का नकली अभाव बनाकर उनकी कीमतें बढ़ाकर तथा मनमानी करके जनता को लूटने लगे। उन्होंने उपभोक्ता वस्तुओं की मनमानी कीमतें वसूल करना प्रारम्भ कर दिया। आयकर चोरों ने कर चोरी के नए-नए ढंग अपना लिए थे जिससे देश की आर्थिक स्थिति पर भी कुठाराघात हुआ। विरोधी दल श्री जयप्रकाश नारायण की अध्यक्षता में अशान्ति एवं हिंसात्मक वातावरण उपस्थित करने पर तुले हुए थे। यही नहीं विभिन्न कम्पनियों के मजदूर एवं कर्मचारियों को हड़ताल एवं काम बन्द करने के लिए भड़काया गया। समाज एवं देश-द्रोही लोग मनमानी करने लगे एवं अनुचित साधनों से धन कमाकर अपनी तिजोरियों को भरने लगे। यही

नहीं इन देश-द्रोहियों ने भूतपूर्व रेलमन्त्री श्री ललित नारायण मिश्र की हत्या की एवं भारत के मुख्य न्यायाधीश की हत्या के असफल प्रयास किए गए

यह बात आज भारतवर्ष ही नहीं अपितु विश्व भी भली प्रकार से जानता है कि लोकतन्त्रात्मक शासन प्रणाली ही जनता एवं राष्ट्रीय हितों के लिए सर्वोत्तम है। इस शासन पद्धति में व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास पर अधिक बल दिया जाता है। इस शासन प्रणाली के द्वारा आपस में सहयोग से कार्य करने एवं देश प्रेम की भावना जाग्रत होती है। एक दूसरे के प्रति सहानुभूति की भावना उत्पन्न होकर जन-जन में आपस में प्रेम का साम्राज्य उपस्थित हो जाता है। जनता अपने अधिकारों एवं कर्त्तव्यों को पूर्णरूपेण पालन करना सीख जाती है जिससे एक सुव्यवस्थित ढंग से शासन चलने में सहयोग प्राप्त होता है। प्रस्तुत शासन-प्रणाली में हर जन-साधारण को शासन कार्यों में भाग लेने की पूर्ण स्वतन्त्रता है। लोकतन्त्र शासन में समस्त कार्य जनता के हाथ में होता है। जहाँ शासन की बागडोर केवल मात्र एक दो आदमियों के हाथ में होता है वहाँ स्वेच्छाचारिता होती है एवं यह स्वेच्छाचारिता धीरे-धीरे तानाशाही का रूप धारण कर लेती है। यद्यपि कतिपय विद्वानों ने लोकतन्त्र को मूर्खों की सरकार कहा है क्योंकि उन्होंने जन साधारण को मूर्ख की संज्ञा से विभूषित किया है यह कथन अतिरंजित प्रतीत होता है।

लोकतन्त्र की सफलता के लिए सबसे जरूरी यह बात है कि जनता में राष्ट्रीय चेतनाओं, स्वस्थ आदर्शमय राजनैतिक दल हों और साथ ही विरोध पक्ष भी प्रबल हो। इस बात में तनिक भी सन्देह नहीं है कि पहले से आज भारत की जनता अधिक जाग्रत हो गयी है। फिर भी जाति के विषैले बीज ने, गन्दी दलबन्दी, प्रान्तीयता एवं साम्प्रदायिकता ने और साथ ही भ्रष्टाचार ने भारत के प्रजातन्त्र को खोखला तथा बदनाम कर दिया है। यह बात निश्चित है कि यदि भारत में लोकतन्त्र असफल हो जाता है तो सम्पूर्ण विश्व में प्रजातन्त्र की जड़ें हिल जायेंगी। हमारे देश में जिस सीमा तक राष्ट्रीय चरित्र का विकास होना चाहिए वह दिखाई नहीं दे रहा। हमारे देश का यह दुर्भाग्य रहा है कि हम आग लगने पर कुआँ खोदते हैं। यदि सभी विरोधी दल मिलकर देश के उत्थान के लिए एक चारित्रिक पंजिका तैयार कर सकें

तो उससे प्रजातन्त्र का भविष्य आलोकित हो जायगा और यदि इसके विपरीत चले तो किसी शायर के शब्दों में—

"न तुम ही बचोगे न साथी तुम्हारे।
जो डुबेगी किश्ती तो डुबोगे सारे।।"

इस बात में नाममात्र का भी सन्देह नहीं होना चाहिए कि लोकतन्त्र की अपेक्षा अन्य कोई भी शासन-प्रणाली सर्वसाधारण का हित-सम्पादन नहीं कर सकती है और यह भी अपने स्थान पर ध्रुव-सत्य है कि भारत लोकतन्त्र के अतिरिक्त अन्य किसी भी प्रणाली में जीवित नहीं रह सकता है। लोकतन्त्र की रक्षा में ही देश का तथा जनसाधारण का हित निहित है। दृढ़-संकल्प ही सफलता का आलिंगन कराता है। भारत के लोगों की आत्मा जनतन्त्र के साथ घुल-मिल गई है इसलिए यह ध्रुव सत्य है कि रिश्वत, बेईमानी तथा भ्रष्टाचार धराशायी होंगे और इस भारत देश के विस्तृत क्षितिज पर प्रकाश का ऐसा पुँज लहरायेगा जो भारत देश की वसुधा के कण-कण को तो आलोकित करेगा, ही, साथ ही विश्व के अन्य राष्ट्रों को आलोकित करके जगत्गुरु के अपने गौरव को प्राप्त करेगा और भारत की फूलबगिया में कोयलें निम्न तराना गाती हुई सुनाई पड़ेगीं।

"भारत सबसे बड़ा रहेगा,
सबसे ऊँची लिए पताका
सदा हिमालय खड़ा रहेगा।"

64

पंजाब समस्या

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- भाषा के आधार पर पंजाब का विभाजन
- अकाली दल का गठन
- फतेसिंह तथा तारासिंह का आगमन
- आनन्दपुर प्रस्ताव की माँगें

- **सरकारी प्रयास**
- **सैनिक हस्तक्षेप**
- **सिक्खों के शौर्यपूर्ण कार्य**
- **उपसंहार**

आज भारत माता पराधीनता की काली जंजीरों को तोड़ करके स्वतन्त्र वायुमण्डल में सांस ले रही है। आज अपना देश तथा अपना राज्य है। सोचने, विचार व्यक्त करने, भाषण देने तथा किसी भी पद पर योग्यता के आधार पर हमें प्रतिष्ठित होने का संवैधानिक अधिकार है। भारत माता स्वतन्त्र होने पर भारत तथा पाक दो भागों में विभक्त हो गई। विभाजन के समय पंजाब पूर्वी तथा पश्चिमी दो भागों में बँट गया। उस समय खालिस्तान का नारा देश के किसी भी कोने में सुनाई नहीं देता था। पांचवें-छठवें दशक के मध्य प्रतापसिंह कैरों पंजाब के मुख्यमन्त्री पद को सुशोभित कर रहे थे। उस समय पंजाबी सूबा बनाने की मांग बुलन्द हो गई। माँग का नेतृत्व मास्टर तारासिंह कर रहे थे।

भाषा को पुनर्गठन का आधार मानकर पंजाब को तीन भागों में बाँटा गया। पंजाबी भाषा बहुसंख्यक क्षेत्र को पंजाब, हिन्दी भाषा बहुल को हरियाणा तथा चण्डीगढ़ राजधानी के रूप में मान्यता प्रदत्त की गई।

समय तथा परिस्थितियों के अनुकूल लोग दल गठित कर लिया करते हैं। पंजाब में सिक्खों की जनसंख्या 54 प्रतिशत है। सिक्खों ने भी अकाली दल के रूप में स्वयं का एक राजनीतिक संगठन गठित किया। ये संगठन पंजाब, में मिली-जुली सरकार बनाने में सफल हुआ। 1966-71 के मध्य मिली-जुली सरकार पदच्युत कर दी गई। इसके पश्चात् समस्या को धार्मिक आवरण से आवृत्त कर दिया गया। शिरोमणि अकाली दल की समिति ने 17 अक्टूबर 1973 में आनन्दपुर साहिब, नामक प्रस्ताव पारित किया गया। इस प्रस्ताव में विशेषाधिकार सम्पन्न पंजाबी सूबे की माँग प्रस्तुत की गई।

आनन्दपुर प्रस्ताव के अन्तर्गत अकालियों की माँगें निम्नवत् थीं—

राजनीतिक माँगें—

(1) एक ऐसे संवैधानिक ढाँचे का पुनर्गठन किया जाय जिसमें केन्द्र को प्रतिरक्षा, विदेश विभाग, मुद्रा एवं रेल-डाकतार विभाग सौंपा जाये। अन्य समस्त शक्तियाँ राज्यों को हस्तान्तरित करदी जायें।

(2) चण्डीगढ़ सहित हरियाणा एवं हिमाचल प्रदेश के पंजाबी बहुल क्षेत्र को पंजाब को प्रदत्त कर दिया जाय।

(3) पंजाब को हरियाणा एवं हिमाचल प्रदेश की द्वितीय सरकारी भाषा के रूप में मान्यता प्रदान की जाय।

(4) रावी-व्यास सरिताओं के जल बँटवारे के प्रश्न को निराकरण करने के लिए संविधान के अन्तर्गत एक न्यायाधिकरण का गठन किया जाय।

(5) रावी-व्यास नदियों के जल बँटवारे के विषय में दिसम्बर 1981 में पंजाब, हरियाणा एवं राजस्थान के मध्य सम्पन्न करार को अविलम्ब अमान्य घोषित कर दिया जाय।

राजनीतिक-माँगों के अतिरिक्त धार्मिक माँगों का प्रारूप निम्नवत् है—

(1) गुरुवाणी का आकाशवाणी से प्रसारण किया जाय।

(2) सम्पूर्ण भारतीय गुरुद्वारों के निमित्त एक अखिल भारतीय गुरुद्वारा अधिनियम का आयोजन किया जाय।

(3) सिक्खों को 9-इंच लम्बी कृपाण को लेकर यात्रा करने की आज्ञा प्रदान की जाय।

(4) अमृतसर के स्वर्ण-मन्दिर के निकटवर्ती क्षेत्र को सरकारी रूप में पवित्र घोषित किया जाय। साथ ही क्षेत्र में मादक वस्तुओं के विक्रय पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया जाय।

अकालियों ने केन्द्र के समक्ष स्वयं की उपर्युक्त माँगों को प्रस्तुत किया। केन्द्र ने अकालियों की तीन धार्मिक माँगों को स्वीकार कर लिया। 27 फरवरी 1983 को इस सम्बन्ध में विधिवत् घोषणा भी कर दी। इसके साथ ही "अखिल भारतीय गुरुद्वारा अधिनियम" की माँग पर समवेदना पूर्वक विचार करने का आश्वासन भी दिया।

धार्मिक माँग तो मात्र अकालियों तक ही सीमित थीं। लेकिन जहाँ तक राजनीतिक माँगों का प्रश्न है तो इस सन्दर्भ में यह कहना समीचीन है कि इन माँगों से अन्य राज्यों का हित भी जुड़ा हुआ है। अकाली हठवादिता का प्रश्रय ले रहे थे। वे किसी भी सुझाव तथा संशोधन को मानने के लिए उद्यत नहीं हुए। रेल डाक-तार, मुद्रा एवं प्रतिरक्षा को केन्द्र ग्रहण करके यदि अन्य समस्त अधिकार राज्यों को प्रदान कर देता तो इससे केन्द्र के अधिकारों में अत्यधिक कमी आ जाती।

पंजाब की समस्या को सुलझाने के लिए सरकारी एवं गैर-सरकारी अनेक प्रयास किये गये। इसी मध्य एक ऐसे सन्त नाम को कुत्सित करने वाले व्यक्ति का आविर्भाव हुआ जो कि जनरैलसिंह भिंडरावाला के नाम से विख्यात हुआ। ये व्यक्ति पंजाब के लिए एक अभिशाप सिद्ध हुआ। इसने सिक्खों की भावनाओं को उत्तेजित किया। पंजाब में चहुँओर हिंसा, लूट तथा अराजकता का वातावरण व्याप्त हो गया। अनेक व्यक्ति गोली के शिकार हुए। सन्त लोंगोवाल तथा गुरुचरणसिंह टोहरा सिक्खों के नम्र दल से सम्बन्धित हैं। लेकिन दुर्भाग्य की बात यह है कि ये दोनों सन्त भी मौन-रूप से उग्रवादियों को स्वयं का समर्थन दे रहे थे। पावन स्वर्ण-मन्दिर देशी-विदेशी घातक हथियारों, मादक पदार्थों तथा आग्नेय अस्त्रों का भण्डार बन गया। स्वर्ण-मन्दिर में शरण लेकर हत्यारे कानून की पकड़ से बच जाते थे। पवित्र तथा धार्मिक-स्थलों में पुलिस के प्रवेश को निषेध ठहराते थे। सरकार भी दीर्घ समय तक मूक दर्शक की तरह सम्पूर्ण काण्ड को निहारती रही। केन्द्रीय सरकार ने विवश होकर पंजाब में राष्ट्रपति शासन लागू कर दिया। इससे भी समस्या का निराकरण दृष्टि-गोचर नहीं हुआ। फरवरी 1984 में संविधान के अनुच्छेद 25 की प्रतियाँ जलाई गईं। इस अनुच्छेद में वर्णित हिन्दू शब्द के अनुरूप सिक्ख स्वयं को समाहित करना उपयुक्त नहीं ठहराते थे।

अन्त में विवश होकर 6 जून 1984 को सेना स्वर्ण-मन्दिर में प्रविष्ट हुई। दोनों ओर के अनेक मनुष्यों को मौत के घाट उतरना पड़ा। सैनिकों ने स्वयं के प्राणों की आहुति देकर उग्रवादियों को वश में किया। सैनिक अब भी स्वर्ण-मन्दिर परिसर में किसी भी परिस्थिति को सम्हालने के लिए डटे हुये हैं। स्वर्ण-मन्दिर में सैनिक कार्यवाही से सिक्खों में आक्रोश व्याप्त है। अभी उनके घाव हरे हैं जो कि समय ही भरेगा। पंजाब में दुकानों तथा कारखानों में पूर्ववत् कार्य प्रारम्भ हो गया है। नये राज्यपाल पंजाब में आर्थिक स्थिति को सम्हालने में प्रयासरत हैं।

अमृतसर के निवासियों ने विगत महीनों में आतंकवाद एवं करफ्यू के अन्दर जैसा दुःख पूर्ण जीवन व्यतीत किया है, उसका स्मरण मात्र भी भयंकर तथा रोमांचकारी है। अकाली दल प्रारम्भ से ही गुटबाजी का शिकार रहा है। दल किस गुट का नेतृत्व स्वीकार करेगा ये भविष्य के गर्भ में है। दल के प्रमुख

नेता इस समय नजरबन्द है। द्वितीय श्रेणी के नेताओं द्वारा जो भी मोर्चे स्थापित किये जायेंगे वे शायद ही किसी समस्या के निराकरण की ओर अग्रसर हो सकें। एक बात स्मरणीय है कि अकालीदल का कोई विरोधी दल कठिनता से ही स्थान ग्रहण कर पायेगा। जहाँ तक काँग्रेस (आई) का प्रश्न है वह तो अभी सिक्खों के आक्रोश का ही सामना कर रही है। अभी पंजाब में दोनों समुदायों के मध्य प्रेम तथा सहयोग स्थापित करने के लिए व्यापक अभियान प्रारम्भ नहीं किया गया है। सम्भवतः समय आने पर यह अभियान प्रारम्भ किया जाय।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि भारतीय सिक्ख जनता बलिदान एवं सेवाओं में किसी भी जाति से पीछे नहीं रही है। 1965 एवं 71 के भारत पाक युद्ध के दौरान सिक्ख रेजीमेण्ट ने जो बहादुरी तथा शौर्य का प्रदर्शन किया वह भारतीय इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में अंकित है। सिक्ख रेजीमेण्ट 27 युद्ध आनर्स तथा 521 गैलटरी पुरस्कार प्राप्त कर चुका है। सिक्खों पर भारत-वासियों को गर्व है।

जहाँ तक सैनिक कार्यवाही का प्रश्न है उसके सन्दर्भ में मात्र इतना ही कहना है कि सरकार के पास इसके अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प ही नहीं रह गया था। सैन्य कार्यवाही देश की अखण्डता तथा एकता के हित के निमित्त की गई। काँग्रेस (आई) के कार्य समिति के प्रस्ताव के अनुसार—"यह कार्यवाही हिन्दू या सिक्खों या सरकार या सिक्खों के बीच नहीं थी बल्कि इसका उद्देश्य देश को विध्वंसकारी ताकतों से रक्षा प्रदान करना था।"

× × ×

हिन्दू तथा सिक्खों की परम्परा तथा संस्कृति समान है तथा आक्रमणों तथा खतरों का सामना सदैव से ही दोनों ने कंधे से कंधा मिलाकर किया है। दुःख का विषय है कि उग्रवादियों पर विदेशी प्रभाव है। कुछ तत्त्व विदेशों में रह कर खालिस्तान की माँग कर रहे हैं। लेकिन वे इस बात को भूल गये हैं कि अमेरिका में ही सिक्ख सरदारों की गदर पार्टी का गठन हुआ था। इस पार्टी ने ही सबसे प्रथम स्वतन्त्रता का नारा बुलन्द किया था। अमेरिका के कारागृहों में बन्द होकर उन स्वतन्त्रता के दीवानों ने नरकतुल्य जीवन बिताया

था। क्या उन बलिदानी आत्माओं का त्याग पंजाब को देश से अलग होता हुआ देख सकेगा ? राजनैतिक कुहरा द्रुमों तथा पुष्पों को आवृत्त कर सकता है। लेकिन ऊधमसिंह तथा भगतसिंह को रंचमात्र भी स्पर्श नहीं कर सकता।

अन्त में विगत 24 जुलाई सन् 1985 में पंजाब समस्या का शान्तिपूर्ण हल प्रधान मन्त्री श्री राजीव गाँधी एवं अकाली दल की ओर से सन्त हरचन्द सिंह लोंगोवाल, सुरजीतसिंह बरनाला एवं गुरुचरणसिंह टोहरा के मध्य आनन्दपुर प्रस्ताव को नजरअन्दाज रखते हुए समझौता हुआ है। उसके अन्तर्गत चण्डीगढ़ पंजाब को तथा उसके बदले कुछ हिन्दी भाषी प्रदेश हरियाणा को दिये जायेंगे। रावी-व्यास जल विवाद तथा अन्य मामलों को सुलझाने के लिए एक ट्रिब्यूनल का गठन किया गया है, जो शीघ्र ही सरकार को रिपोर्ट देगी। इसी समझौते के अनुसार पंजाब में नवीन चुनाव हुए हैं, उसमें अकाली दल को विजय मिली और उनका नवीन मन्त्रिमण्डल बरनाला के नेतृत्व में गठित किया गया है। जो पंजाब समझौते का पूर्णरूप से पालन कर रहा है। किन्तु खालिस्तान का स्वप्न देखने वाले उग्रवादियों की हलचलें अभी समाप्त नहीं हुई हैं और पंजाब समझौते के विरोध में स्व० संत लोगोंवाल की हत्या कर दी गई तथा छुटपुट हत्याओं का क्रम जारी है। मुख्यमन्त्री सुरजीतसिंह बरनाला को केन्द्र का पूर्ण समर्थन मिल रहा है। वे राजनीतिक दांव पेचों से विरोधियों को मात दे रहे हैं। आशा है कि अकाली दल की सरकार उग्रवादियों की विध्वंसकारी योजनाओं को समाप्त करने में सफल सिद्ध होगी।

65
संसद में प्रतिपक्ष की भूमिका

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- संसदात्मक शासन व्यवस्था का स्वरूप
- संसद सदस्य की योग्यताएँ
- बहुमत वाला दल सत्तारूढ़
- भारत में विरोधी दलों की शोचनीय अवस्था

- **विदेशों में विरोधी दलों का गौरवपूर्ण स्थान**
- **विरोधी दलों का दायित्व**
- **उपसंहार**

संविधान के अनुच्छेद 79 में वर्णित है कि—"संघ के लिए एक संसद होगी जो राष्ट्रपति और दो सदनों से मिलकर बनेगी जिनके नाम क्रमशः राज्य सभा तथा लोक सभा होंगे।" डॉ० अम्बेडकर के शब्दों में 'संसदात्मक व्यवस्था शासन के सामयिक मूल्यांकन के साथ-साथ दिन-प्रतिदिन के मूल्यांकन का भी अवसर प्रदान करती है।" गार्नर के शब्दों में—"संसदात्मक शासन वह शासन प्रणाली है। जिसमें वास्तविक कार्यपालिका का अर्थात् मन्त्रिमण्डल अपनी राजनैतिक नीतियों तथा कार्यों के लिए वैधानिक और तत्कालीन रूप में व्यवस्थापिका के प्रति और अन्तिम रूप में निर्वाचक-मण्डल के प्रति उत्तरदायी होता है।"

संसदात्मक शासन में व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। नाममात्र की एवं वास्तविक कार्यपालिका में भेद होता है। मन्त्रि-मण्डल का सामूहिक उत्तरदायित्त्व होता है। इसके साथ ही व्यक्तिगत उत्तरदायित्त्व होता है। प्रत्येक मन्त्री को व्यक्तिगत रूप से उस विभाग को सुचारु रूप से संचालित करने के लिए विधान मण्डल के प्रति उत्तरदायित्त्व निभाना पड़ता है।

संसदात्मक शासन प्रणाली में प्रधानमन्त्री का नेतृत्व होता है। प्रधान मन्त्री मन्त्रिमण्डल का नेता होता है। ये शासन व्यवस्था जनता के प्रति उत्तर-दायी होती है। इस प्रणाली में समय की आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी सम्भव है। ये अनुभवी तथा योग्यतम व्यक्तियों का शासन है। इस शासन में जनता को राजनैतिक-शिक्षा प्राप्त करने का अवसर मिलता है। ये प्रणाली लोकतन्त्रीय सिद्धान्त की रक्षा करने वाली है। इसमें निरंकुशता को पनपने का अवसर नहीं होता है।

संसद का सदस्य वही व्यक्ति हो सकता है जो भारत का नागरिक हो। राज्य-सभा की सदस्यता के लिए व्यक्ति की आयु सीमा तीस वर्ष निर्धारित की गई है। लोक सभा की सदस्यता के लिए आयु 25 वर्ष निश्चित की गई है।

संसद की रचना से यह बात भली प्रकार विदित हो जाती है कि इसमें राज्यों के प्रतिनिधि एवं जनता के द्वारा प्रत्येक रूप से चुने गए प्रतिनिधि सम्मिलित होते हैं। इसके साथ ही मनुष्य में उन समस्त योग्यताओं का समावेश आवश्यक है जो समय-समय पर संसद के द्वारा निर्धारित की जाती है।

संसद में जिस दल का बहुमत होता है वह सत्ता को सम्भालता है। इसके अतिरिक्त अन्य दलों के व्यक्ति प्रतिपक्ष के रूप में माने जाते हैं। सत्तारूढ़ दल यदि लोकतन्त्र पर कुठाराघात करता है तो विरोधी दल उसका तीव्र विरोध करता है। वे सरकार को विवश करते हैं कि वह अपने अलोकतन्त्री कदम को वापिस ले। यदि सत्तारूढ़ दल जनता के हित में कार्य सम्पादित करता है तो विरोधी दलों को व्यर्थ में ही कीचड़ उछालकर उसके कार्य में गतिरोध उत्पन्न नहीं करना चाहिए इससे कार्य में विलम्ब होता है। समय, धन तथा शक्ति व्यर्थ में ही नष्ट होती है विरोध के लिए विरोध प्रदर्शित करना किसी भी स्थिति में उपयुक्त नहीं है।

भारत को स्वतन्त्र हुए पर्याप्त समय हो चुका लेकिन आज भी विश्व के अधिकांश राष्ट्र भारत की प्रगति तथा विकास के प्रति आशंका व्यक्त कर रहे हैं। उनकी दृष्टि में भारत आज भी अविकसित है। देश के पिछड़े होने के अन्य कारणों के साथ एक यह भी कारण है कि इस देश में सशक्त विरोधी दल का नितान्त अभाव है। विरोधी-दल के अभाव में सरकार की गाड़ी मनमाने रूप में चलती रहती है। उसमें व्यवधान उत्पन्न करने वाले कारकों का अभाव होता है।

जब हम दुनियाँ के अन्य राष्ट्रों के विरोधों पर दृष्टिपात करते हैं तो यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उन देशों में विरोधी दलों को सम्यक महत्त्व प्रदान किया जाता है।

1967 के चतुर्थ आम चुनाव से पहले तक भारतीय राजनीति में शक्ति सम्पन्न एवं सुगठित विरोधी दल का नितान्त अभाव था। 1967 के बाद विरोधी राजनैतिक दलों की शक्ति में विकास हुआ। लेकिन 1980 के बाद की राजनीति में संसद एवं संसद के बाहर विरोधी दल का अभाव ही दृष्टव्य है। विश्व के अन्य राष्ट्रों में आदर्शो एवं सिद्धान्तों को पल्लवित तथा विक-

सित करने के लिए विरोधी दलों को समस्त सुविधाएँ तथा अवसर प्रदान किए जाते हैं। लोकतन्त्र को जीवित रखने के लिए यह अपेक्षित है कि राष्ट्र के हर नागरिक को आत्माभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए। आत्माभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतन्त्रता के बिना मानव का सर्वतोमुखी विकास अवरुद्ध हो जायेगा। प्रगति के स्वतन्त्र तथा स्वस्थ वातावरण का होना परमावश्यक है।

विरोधी दलों को यह बात दृष्टि में रखनी चाहिए कि उन्हें स्वयं को संकुचित राजनीति के दल-दल में लिप्त नहीं होना चाहिए। इस प्रकार के अतिरंजित वक्तव्य प्रसारित करना चाहिए जो अनर्गल तथा सारहीन हों। नाम तथा यश उपार्जित करने के लोभ में विद्रोह तथा ईर्ष्या पूर्ण भावनाओं को प्रसारित नहीं करना चाहिए। यदि विपक्षी दल इस प्रकार की कार्यवाही में लिप्त रहेगा तो देश उत्थान के स्थान पर पतन की ओर अग्रसर हो जायेगा।

दुर्भाग्य का विषय तो यह है कि हमारे देश भारत में विरोध-पक्ष की प्रत्येक बात को शंका की दृष्टि से देखा जाता है। हर उचित बात को राजनीति का जामा पहिनाकर रद्दी की टोकरी में डाल दिया जाता है। इससे समस्याओं का निराकरण होने के स्थान पर उनका जाल सा फैलता जाता है। ये समस्याएँ देश के लिए बोझ स्वरूप बन जाती हैं। अतः सत्तारूढ़ दल को विपक्षी दलों की विवेकपूर्ण बातों को अमल में लाना चाहिए। इसके साथ ही विरोधी दलों को भी दल-गत राजनीति से ऊपर उठकर राष्ट्र के उत्थान तथा कल्याण को सर्वोपरि स्थान देना चाहिए।

विनोबाजी ने एक बार कहा था कि विद्वानों, दार्शनिकों तथा देश प्रेमियों का एक सम्मेलन गठित होना चाहिए, जो एक स्थान पर समवेत होकर राष्ट्र-हित की बातों को सोच सकें तथा उन्हें कार्य रूप में परिणित करने का भी प्रयास करें। विरोधी दलों के लिए विनोबाजी का यह सुझाव एक अमृत-संजीवनी तुल्य है। उन्हें राष्ट्रहित को दृष्टि-पथ में रखकर सत्ता-रूढ़ दल का पूरी तरह सहयोग करना चाहिए। इससे राष्ट्र की तो प्रगति होगी ही, साथ ही सत्ता-रूढ़ दल में भी विरोध के लिए विश्वास तथा आस्था की भावना जाग्रत होगी। राजनैतिक दलों को अच्छी नीतियों तथा कार्यक्रमों को प्रचार तथा प्रसार करना चाहिए। संकीर्ण तथा क्षेत्रीय भावनाओं से ऊपर उठकर

व्यवहार करना चाहिए। सरकार की टांग-पकड़ कर गिराओं तथा कुर्सी हथियाओ की नीति का अनुसरण नहीं करना चाहिए। विरोधी दल लोकमत को प्रकाशित करने वाले होने चाहिए। जनता को लोकतन्त्र के प्रति जागरूक करना चाहिए। स्वार्थों तथा पद के पीछे उन्मत्त व्यक्तियों के लिए कवि नीरज की निम्न पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

"लोग तो समझे थे, तुम आए तो बहार आयेगी।
किसने सोचा था कि फूलों में ही ठन जायेगी।।"

विरोधी दलों को प्रजातन्त्र का प्रहरी होना चाहिए। उन्हें मतदाता का मार्ग दर्शक बनना चाहिए संगठित विरोधी दल ही सरकार की मनमानी पर अंकुश लगा सकते हैं। विरोधी दलों का विरोध विनाशात्मक न होकर सृजनात्मक होना चाहिए। कामरोको प्रस्ताव, अविश्वास का प्रस्ताव रखकर एवं संसद से बहिर्गमन करके स्वयं का विरोध व्यक्त करना चाहिए। प्रतिपक्ष को एक सबल भूमिका का निर्वाह करना चाहिए।

आज राजनैतिक परिस्थितियाँ दिन-प्रतिदिन परिवर्तित हो रही हैं। ऐसी स्थिति में विरोधी दल को सत्तारूढ़ सरकार को उचित मार्ग दर्शन देना चाहिए। जनहित तथा राष्ट्रहित के प्रश्नों को व्यक्तिगत एवं दलगत स्वार्थों से ऊँचा समझें तभी राष्ट्र विकास के मंगलमय पथ पर अग्रसर होने का सौभाग्य प्राप्त कर सकेंगे।

66
राष्ट्रभाषा-हिन्दी

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- अधिकांश राष्ट्र के व्यक्तियों के द्वारा प्रयुक्त
- विदेशी शासकों का प्रभाव
- हिन्दी को लोकप्रिय बनाने में वर्तमान सरकार की उदासीनता
- भारतवर्ष में अहिन्दी भाषियों का बाहुल्य
- उपसंहार

जब मानव ने इस धरती पर अपनी आँखें आदि काल में खोली होंगी तो भाषा के अभाव में ध्वनि और संकेतों के माध्यम से अपनी भावनाओं को व्यक्त किया होगा, लेकिन जैसे-जैसे सभ्यता का विकास हुआ मानव ने युगों की घोर साधना के पश्चात् भाषा के उस रूप को प्राप्त किया जिसे हम वाणी के द्वारा व्यक्त कर रहे हैं तथा कानों के माध्यम से श्रवण कर रहे है। यदि भाषा का यह विकसित रूप जिसका हम नेत्रों से अवलोकन कर रहे हैं, नहीं मिला होता तो सभ्यता, कला, धर्म, साहित्य, विज्ञान एव संस्कृति काल के कराल गाल में सदैव-सदैव के लिए तिरोहित हो गये होते। भाषा का महत्त्व वर्णनातीत है।

अंग्रेजों की दासता की श्रृङ्खलाओं से भारत माता मुक्त हुई तो हमारे देश के कर्णधारों ने नवीन संविधान का निर्माण किया और साथ ही, भारत के कोटि-कोटि मानवों के हृदय सिंहासन पर विराजमान हिन्दी को राष्ट्र-भाषा के पद पर प्रतिष्ठित करके जन-भावनाओं का तो सम्मान किया ही, साथ ही अपनी अटूट तथा अमर देश-भक्ति का भी परिचय दिया। साथ ही, हिन्दी का उत्तरोत्तर विकास करते हुए उसे अँग्रेजी के स्थान पर स्थापित करने का भी प्रयत्न किया। राजनीति स्वार्थ का अखाड़ा होती है, फलतः स्वार्थी तत्त्वों ने भाषा को माध्यम बनाकर एक संघर्ष का सूत्रपात कर दिया। संघर्ष के इस झमेले में राष्ट्र-भाषा की समस्या धूमिल एवं नैराश्यपूर्ण हो गयी। सरकार ने विवश होकर हिन्दी भाषी राज्यों में हिन्दी के स्थान पर अँग्रेजी बोलने तथा प्रयोग करने की स्वतन्त्रता दे दी। इसका फल यह हुआ कि हिन्दी राष्ट्र-भाषा के पद पर सुशोभित होते हुए भी अपने स्थान को प्राप्त नहीं कर सकी और आज भी हिन्दी का प्रश्न अन्धकार के गर्त में पड़ा हुआ निदान के लिए छटपटा रहा है।

अपने राष्ट्र में जिस भाषा का सर्वाधिक प्रचलन होता है वही भाषा राष्ट्र भाषा के पद को सुशोभित करने को मान्य होती है राष्ट्र की भाषा को राष्ट्र-भाषा कहते हैं। राष्ट्र से तात्पर्य है एक नियत भू-भाग, निश्चित विचारधारा तथा समान सभ्यता एवं संस्कृति के मानने वाले लोगों से है। राष्ट्र के समस्त कार्य उसी के माध्यम से सम्पन्न होते हैं एवं जनता तथा सरकार के द्वारा वहीं मान्य होती है। जिस प्रकार राष्ट्रीय ध्वज देश विशेष के गौरव का प्रतीक है,

ठीक उसी प्रकार से राष्ट्रीय भाषा भी राष्ट्र को गौरवान्वित करती है। राष्ट्रीय भाषा राष्ट्र के नागरिकों में नवीन प्राण फूँकने हेतु संजीवनी का कार्य करती है जिस प्रकार शरीर आत्मा के बिना निर्जीव है वैसे ही एक राष्ट्र का अस्तित्व बिना राष्ट्र-भाषा के शून्य है। यदि एक राष्ट्र विदेशी भाषा के सहारे अथवा विदेशी भाषा द्वारा अपने को जीवित समझता है, वह उसकी महान् भूल है। स्वयं की भाषा का ही राष्ट्रीय उन्नति में महान् योगदान है।

भारतवर्ष एक महान् गणराज्य है। विशाल देश होने के कारण इसमें विभिन्नता का होना भी परम स्वाभाविक है। वह विभिन्नता हमें सर्वप्रथम इसमें प्रचलित विविध भाषाओं में दृष्टिगोचर होती है। इन प्रचलित भाषाओं का हिन्दी के साथ अटूट सम्बन्ध रहा है। सर्वप्रथम संस्कृत के साथ इसका सम्बन्ध स्थापित करते समय यह एक-दूसरे की विरोधिनी-सी प्रतीत होती है। कुछ विद्वानों की यह धारणा है कि संस्कृत के सहारे ही हिन्दी की उन्नति सम्भव है। दूसरे विद्वान इस धारणा को भ्रामक बतलाते हुए कहते हैं कि संस्कृति की ओर अत्यधिक झुकाव हिन्दी के विकास में सहयोगी नहीं हो सकता है। हिन्दी से सम्बन्ध रखने वाली भाषा उर्दू है। हिन्दी प्रेमियों का यह कथन है कि उर्दू का प्रादुर्भाव भी हिन्दी से हुआ है। उर्दू एवं हिन्दी में केवल शब्दावली में ही अन्तर है, लेकिन भाषा-विज्ञान एवं वाक्य-रचना एवं व्याकरण की दृष्टि से दोनों के अन्दर असमानता लेशमात्र भी नहीं है। इसके अतिरिक्त भारतवर्ष में बुन्देली, डिंगल, ब्रजभाषा, भोजपुरी, अवधी, तमिल, मराठी, गुजराती, बंगला आदि अनेक भाषाएँ हैं परन्तु उपर्युक्त भाषाओं का साहित्य-कलेवर विशाल एवं अनूदित नहीं है जितना कि हिन्दी भाषा का है। विभिन्न भाषाओं के होते हुए भी भारतीय साहित्यकार में हिन्दी का वही स्थान है जो नक्षत्र लोक में चन्द्रमा का है।

भारतवर्ष सदियों तक अंग्रेजों व अन्य विदेशियों का गुलाम रहा एवं विभिन्न विदेशी शासकों ने अपने देश की भाषा के माध्यम से शासन-कार्यों को संचालित किया। स्वतन्त्रता के पूर्व अंग्रेजी शासन काल में समस्त कार्य अंग्रेजी में ही सम्पन्न होते थे परन्तु स्वतन्त्र हो जाने के बाद अंग्रेजी के द्वारा शासन के कार्यों का संचालन अत्यन्त ही लज्जा का विषय है। हिन्दी के अतिरिक्त भारतवर्ष में अनेक प्रान्तीय एवं स्थानीय भाषाएँ भी हैं लेकिन राष्ट्रीय भाषा के पद पर आरूढ़ होने हेतु हिन्दी को ही उपयुक्तता प्रदान की

गई है। किसी भी वस्तु की महत्ता उसके गुणों में समाहित होती है परन्तु हिन्दी में राष्ट्र-भाषा बनने हेतु जो विशेष गुण हैं, वह निम्नलिखित हैं :

(1) अन्य भारतीय भाषाओं की अपेक्षा हिन्दी सरल एवं सुगम है। इसे सीखने हेतु थोड़े ही परिश्रम की आवश्यकता पड़ती है।

(2) हमारे देश को स्वतन्त्रता प्राप्त हो जाने के पश्चात् हिन्दी बोलने वालों की संख्या लगभग चालीस प्रतिशत थी। उस समय अन्य भाषाओं के बोलने वालों का प्रतिशत 5 अथवा 6 था एवं अंग्रेजी बोलने वालों का केवल 2 प्रतिशत था। अतः राष्ट्र-भाषा का स्थान वही भाषा प्राप्त कर सकती है जिसको कि अधिक-से-अधिक लोग बोलते हों।

(3) हिन्दी भाषा को बोलने वालों की संख्या अत्यधिक है लेकिन उसको समझने वाले बोलने वालों से भी अधिक हैं। जितनी भी प्रान्तीय भारतीय भाषाएँ हैं उनके बोलने एवं समझने वाले यह ठीक प्रकार से जानते हैं कि सभी भाषाओं का एकमात्र स्रोत हिन्दी भाषा ही है जिसके माध्यम से ही इनका उद्गम हुआ।

(4) हमारी हिन्दी भाषा की लिपि अन्य भाषाओं की भाँति नहीं है। इसकी लिपि पूर्ण वैज्ञानिकता को धारण किये हुए है। हर शब्द का उच्चारण उसकी बनावट के अनुकूल ही है। वर्णमाला के अक्षरों की ध्वनि हमेशा एकसी ही रहती है एवं उसकी ध्वनियों में परिवर्तन नहीं हो सकता है।

उपर्युक्त गुणों के कारण ही हिन्दी को ही राष्ट्र-भाषा के पद पर सुशोभित किया जा सकता है, किसी अन्य प्रान्तीय भाषा को नहीं।

भारतीय संविधान द्वारा हिन्दी को राष्ट्र-भाषा तो घोषित कर दिया गया लेकिन उसे व्यावहारिक रूप से प्रयोग करने में उसके सामने एक समस्या उठ खड़ी हुई। अतः 15 साल या 1965 तक अंग्रेजी में ही शासन-कार्य का संचालन करने की सिफारिश की गई एवं यह पन्द्रह साल का समय हिन्दी के प्रचार हेतु रखा गया। परन्तु इसे चाहे हिन्दी का दुर्भाग्य कहें या अँग्रेजी का सौभाग्य कि उसके पश्चात् सरकार ने हिन्दी के प्रचार एवं उन्नति में पूर्ण योगदान नहीं दिया इसलिए 15 साल के समय के पश्चात् भी हिन्दी प्रेमी अंग्रेजी की जड़ों को उखाड़ने में समर्थ न हो सके। इसके विपरीत अंग्रेजी ने ही अपनी जड़ें और मजबूत कर लीं तथा आज भी शासन का अधिकांश कार्य अंग्रेजी के बलबूते पर ही निर्भर है।

भारतीय शासन के उच्च पदों पर आसीन अधिकारियों ने हिन्दी का सीखना एक व्यर्थ का झंझट मोल लेने के समान समझकर उन्होंने हिन्दी के प्रति अपनी उदासीनता प्रकट की। अंग्रेजी जिसे उन्होंने तोते की भाँति रट-रट कर सीखा था उसी भाषा को अपने से नीचे के अधिकारियों के लिए एक शस्त्र के रूप में प्रयोग करते हैं। वे यह भी समझते हैं कि हिन्दी को दिन-रात सीखने पर भी अँग्रेजी के समान पारंगत नहीं हो सकते हैं। इसमें एक सबसे बड़ा कारण सरकारी मशीनरी की उदासीनता भी है जिसके कारण हिन्दी को शासन के कार्यों में व्यावहारिक रूप में प्रयोग नहीं किया गया।

भारतवर्ष में हिन्दी भाषा-भाषियों के सबसे बड़े राज्य उत्तर प्रदेश में सन् 1971 से शासन-तन्त्र एवं सरकारी कार्यालयों में हिन्दी को प्रयोग करने का नियम दृढ़ता से लागू कर दिया गया है। अनेक विश्वविद्यालयों में अभी अंग्रेजी के माध्यम से ही शिक्षा प्रदान की जाती है। विज्ञान इत्यादि अनेक ऐसे विषय हैं जिनकी पुस्तकें हिन्दी में मिलती ही नहीं हैं। राष्ट्रीय स्तर की अनेक परीक्षाओं हिन्दी में सह-भाषा के रूप में है, लेकिन मूल भाषा अंग्रेजी ही है। भारत के कुछ राज्यों में हिन्दी के विरोध के नारे आज भी गूंज रहे हैं जो कि हिन्दी के लिए अत्यन्त ही अशुभ सिद्ध हो सकते हैं।

संविधान द्वारा हिन्दी के राष्ट्र-भाषा घोषित हो जाने पर भी इसके विरोध की सुलगती चिनगारियों को नहीं बुझाया जा सका। जिस प्रकार फसल के साथ उसको नष्ट करने वाले कीटाणु एवं बीमारियाँ भी पनपती हैं उसी प्रकार हिन्दी विरोधी भी अपने को सक्रिय बनाने लगे। जिस तरह से थोड़ी-सी ही असावधानी होने के कारण कीटाणु फसल को नष्ट करने में समर्थ हो जाते हैं वही स्थिति इन हिन्दी विरोधियों की भी हो गई है। स्वार्थ लिप्त राजनेताओं एवं अंग्रेजी के गुलामों ने हिन्दी के अस्तित्व को समाप्त करने के भरसक प्रयास किये लेकिन उन्हें इस कार्य में असफलता ही हाथ लगी। हिन्दी के प्रचार एवं प्रसार में सरकार ने जिस उपेक्षापूर्ण नीति को अपनाया वह भी औचित्यपूर्ण नहीं है। पं० जवाहरलाल नेहरू के प्रधान मन्त्रित्व काल में दक्षिण में हिन्दी विरोधी आन्दोलन हुए, प्रदर्शन किये गये, अनेक व्यक्तियों ने आत्मघात किये राष्ट्रीय सम्पत्ति की तोड़-फोड़ की गई। फलत: 15 साल के समय को और अधिक लम्बा कर दिया गया। आजकल के नियमानुसार हिन्दी का प्रचलन

अहिन्दी भाषी प्रान्तों के ऊपर निर्भर है । दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि हिन्दी-विरोधी आन्दोलन सरकार की उदासीनता का ही दूसरा रूप है ।

स्वार्थी राजनीतिज्ञ हिन्दी के विरोध को दबाने के बजाय और उसे उभारने का प्रयत्न करते हैं । वह केवल मात्र अपने स्वार्थों को सिद्ध करने हेतु हिन्दी के प्रति वाचक सहानुभूति ही प्रकट करते हैं, उसके प्रचार एवं प्रसार हेतु ठोस कठम उठाना नहीं चाहते । राजनीतिज्ञों ने हिन्दी प्रचार की जब कभी दुन्दुभी बजाई भी तो मात्र अपने स्वार्थों के लिए । यदि सरकार ऐसे विरोधियों का दृढ़ता के साथ दमन करने लग जाय तो यह कोई असम्भव कार्य नहीं है ।

कुछ लोग हिन्दी को संस्कृतनिष्ठ बताकर उसकी आलोचना करते हैं परन्तु यह उनकी बहुत बड़ी भूल है । हिन्दी भाषा में से दूसरी भाषाओं को अलग कर दिया जाय तो अहिन्दी भाषी भी उसको सरलतापूर्वक समझ सकते हैं । अहिन्दी भाषी हिन्दी के कुछ शब्दों पर हँसते हैं, परन्तु उनका यह हास्य भ्रामक एवं द्वेषपूर्ण है । संस्कृत से केवल हिन्दी का ही नहीं अपितु सम्पूर्ण भारतीय भाषाओं का विकास हुआ है । संस्कृत के शब्द जितने अन्य भाषाओं में हैं उतने हिन्दी में नहीं हैं ।

हिन्दी हमारे देश की राष्ट्र-भाषा है । अब यह प्रश्न उपस्थित होता है कि हिन्दी के स्वरूप का कैसे निर्धारण किया जाय । यदि हम गम्भीरतापूर्वक मनन करें तो इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि संस्कृत भाषा भारत की अधिकांश भाषाओं की जननी है । हिन्दी के तत्सम संस्कृत शब्दों में, दूसरी भाषा बोलने वालों को नाममात्र को कठिनाई तथा दुरूहता का अनुभव नहीं होगा । साथ ही यह बात भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि अप्रचलित संस्कृत शब्दों को अपनाने से भाषा अपने व्यवहार के रूप को खो बैठेगी अंग्रेजी एवं उर्दू में दैनिक जीवन में प्रयुक्त होने वाले शब्द स्कूल, मास्टर, कोर्ट, शरीर तथा स्टेशन आदि प्रचलित शब्दों को अपनाने से भाषा में व्यावहारिकता का सचार होगा ।

यदि हम यथार्थ में राष्ट्र-भाषा हिन्दी को विकास के पथ पर अग्रसर देखना चाहते हैं तो सबसे प्रथम हमें अंग्रेजी भाषा के एकाधिकार को समाप्त करना होगा । साथ ही हिन्दी प्रेमियों तथा हिन्दी की मान्य संस्थाओं को राष्ट्र-भाषा के विकास में कठोर साधना करनी होगी । हिन्दी-भाषी राज्यों को एवं विश्व-विद्यालयों को भी सहयोग देना चाहिए । सम्पूर्ण राज्य कार्य संचालन के लिए

हिन्दी में उचित शब्दों का समावेश होना चाहिए। हिन्दी का ज्ञान अनिवार्य घोषित कर देना चाहिए। हिन्दी में वैज्ञानिक कोष तैयार होना चाहिए।

देश के बहुसंख्यक मनुष्यों की भाषा होने के कारण हिन्दी का दायित्व सबसे महत्त्वपूर्ण है। आज भी श्रीनगर से लेकर त्रिवेन्द्रम पर्यन्त तक हिन्दी प्रेमी, कवि, लेखक तथा शायर विद्यमान हैं। हिन्दी भाषियों को गत दिवस की प्रतीक्षा में रहना चाहिए जब हिन्दी भगीरथ गंगा के किनारे से नहीं अपितु उसकी माँग कृष्णा और कावेरी के पुनीत पुलिनों से दुहराई जाय। वह दिन अधिक दूर नहीं जबकि ऐसा स्वप्न साकार होगा। इसमें केवल मात्र एक अपेक्षा है कि हमारे दिलों में सभी भारतीय भाषाओं के लिए समान रूपेण श्रद्धा की भावना विद्यमान रहनी चाहिए। साथ ही हमें राष्ट्र-भाषा हिन्दी के बहुमुखी विकास के लिए प्राण-प्रण से जुट जाना चाहिए। एक कवि का निम्न कथन हिन्दी के विकास की प्रेरणा निम्न प्रकार दे रहा है—

"निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के मिटे न हिय को शूल।।"

67
परिवार नियोजन

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- दृढ़ इच्छा शक्ति
- निम्न स्तर के परिवारों में जनसंख्या अधिक होती है
- साधनों का अभाव
- जन्म दर में न्यूनता
- सामाजिक चेतना अपेक्षित
- धैर्य धारण की अपेक्षा
- व्यवधान डालना उचित नहीं
- परिवार कल्याण केन्द्र का अभियान
- उपसंहार

अन्न का अभाव तथा सुरक्षा की तरह निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या किसी भी राष्ट्र के लिए विकराल समस्या बनती जा रही है। हमारे देश भारत के समक्ष ये दोनों समस्याएँ व्यापक स्तर पर उपस्थित हैं। जहाँ तक अन्नोत्पादन का प्रश्न है पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से इस समस्या पर काबू पा लिया गया है। लेकिन जनसंख्या की समस्या दिन-प्रतिदिन विस्तार की ओर उन्मुख है। देश में कहीं अकाल के कारण निरीह प्राणी दम तोड़ रहे हैं तो कहीं व्यक्तियों के लिए मूल्य-वृद्धि एक समस्या के रूप में विद्यमान है। देश में समस्याओं का जाल सा फैला हुआ है। इन सम्पूर्ण समस्याओं में से परिवार नियोजन की समस्या सबसे उग्र एवं हानिप्रद है। स्वतन्त्र राष्ट्र में सभी मानवों के लिए अन्न, वस्त्र, मकान, चिकित्सा तथा शिक्षा का प्रबन्ध अपेक्षित है। यदि हमें देश का उत्थान करना है तो जनसंख्या को सीमित करने का कोई न कोई मार्ग ढूँढ़ना ही पड़ेगा। यदि खाद्य-पदार्थों का अभाव होगा तो फालतू मानव अकाल तथा बीमारी के शिकंजे में फँसकर जीवन-लीला समाप्त करने के लिए विवश हो जाएँगे। यदि भारत की बढ़ती हुई जनसंख्या पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाय तो एक साथ अनेक समस्याओं का निराकरण हो जायेगा। सीमित परिवार ही सुख तथा समृद्धि की आधारशिला है।

इसका अर्थ यह नहीं है कि हमारे देश की जनसंख्या सबसे अधिक घनी है। भू-भाग को ध्यान में रखते हुए उसके अनुपात में जनसंख्या कुछ भी नहीं है, परन्तु जनसंख्या के अनुसार हमारे पास साधनों की कमी है। हमको बहुत थोड़े ही समय पहले स्वतन्त्रता प्राप्त हो सकी है। अभी भी हम पूर्ण रूपेण अपने आपको स्वतन्त्र अनुभव नहीं कर रहे हैं। हमारे हाथ एवं पैर गुलामी की बेड़ियों में जकड़े हुए से प्रतीत हो रहे हैं। अभी हम इस योग्य नहीं हो सके हैं कि अपने पैरों पर स्वयं खड़े हो सकें। साथ ही साथ एक बात और है कि हमने जनसंख्या की वृद्धि में यदि रोक नहीं लगाई तो हम स्वावलम्बी तो क्या अपने आपको जिन्दा रखना भी कठिन अनुभव करने लगेंगे। यदि हम पूर्णरूपेण अपने ही पैरों पर हर दृष्टिकोण से खड़े होना चाहते हैं और देश में व्याप्त विभिन्न समस्याओं का समाधान करने के लिए कटिबद्ध हैं तो हमें सबसे पहले देश की तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या पर नियन्त्रण करना हमारा परम कर्त्तव्य हो जाता है।

आज मानव का मस्तिष्क इतनी विकसित अवस्था को प्राप्त कर चुका है कि यदि वह किसी कार्य को करने का दृढ़ निश्चय कर ले तो उसे उसमें पूर्ण रूपेण सफलता अवश्यंभावी हो जाती है। इसके लिए सच्चे मन से लगन होना परमावश्यक है। यदि हमें यह बात पूर्ण रूपेण ज्ञात है कि हम अमुक वस्तु का त्याग करके साधन संपन्न एवं स्वावलम्बी बन सकते हैं तब हमारे लिए उसका त्याग करना कोई असम्भव बात नहीं है।

हमारे देश के सामाजिक स्तर पर अध्ययन से यह निर्विवाद सिद्ध हो चुका है कि भारतवर्ष में निम्न श्रेणी के परिवारों में ही जनसंख्या की वृद्धि अधिक हो रही है। परिवार आर्थिक दृष्टि से ही पिछड़े हैं वे अपने परिवारों में बच्चों की बढ़ोत्तरी पर नियंत्रण नहीं कर पा रहे हैं। उनमें जनसंख्या का इतनी तेजी से बढ़ने का सबसे मूल कारण अशिक्षा ही है। बहुत से मनोविज्ञान के विद्वानों की यह धारणा है कि चूँकि निम्न स्तर के लोगों के पास मनोरंजन के साधन का अभाव होता है इसलिए उन्हें 'यौन सुख' में सबसे सस्ता मनोरंजन प्रतीत होता है। इसके अतिरिक्त उनके पास अन्य मनोरंजन का साधन नहीं है। यही कारण है कि इस वर्ग के लोग जनसंख्या की वृद्धि में सर्वाधिक योग दे रहे हैं।

परन्तु आज की परिस्थिति के अनुरूप हमारे पास समय तथा साधनों की कमी है। यही कारण है कि हमको जनसंख्या के इतने अधिक अनुपात से बढ़ने में चिन्तित होना पड़ रहा है। लेकिन चूँकि इस समय हमारे पास उतने साधन नहीं हैं जितने कि अनुपात के हिसाब से होने चाहिए थे, तब यह हमारा पुनीत कर्त्तव्य हो जाता है कि ऐसी स्थिति में जनसंख्या की वृद्धि पर रोक लगाना ही हमें अपने तथा राष्ट्र के हित में प्रतीत हो रहा है। यदि हम ऐसा करने में सफल नहीं हो सकते हैं तो इसी से सम्बन्धित हमारे समक्ष दूसरी समस्या भी खड़ी हो सकती है।

जन्म की दर को कम करना ही जनसंख्या की वृद्धि को रोकने का सबसे सरलतम उपाय है। इसके अभाव में हम अपने रहन-सहन के स्तर को ऊँचा नहीं उठा सकते हैं तथा उसी स्थान पर रहेंगे जिस पर कि हम स्वतन्त्र होने से पूर्व थे। जनसंख्या की वृद्धि को रोकने के सम्बन्ध में हम उसको एक दूसरा नाम भी दे सकते हैं और वह है—परिवार नियोजन। इसके हेतु यह नाम बहुत ही उपयुक्त एवं सार्थक है। परिवार नियोजन के अन्तर्गत जन्म के अनुपात

को कम करना ही नहीं अपितु जनसंख्या की वृद्धि में रोक पर अधिक ध्यान दिया गया है।

वर्तमान काल के सर्वेक्षण के अनुपात से यह सिद्ध हो चुका है कि देश में शिक्षित लोगों की भी आज कोई कमी नहीं है। समय का उचित लाभ उठाते हुए हमारे लिए यह आवश्यक हो जाता है कि हम अपनी योजनाओं एवं भविष्य के सपनों को साकार बना सकें। इस समय हमारे मानस में सामाजिक चेतना है और इसका हमको अब पूर्ण उपयोग करना ही अच्छा है। यदि हम इस समय का सदुपयोग नहीं करते हैं तो हमारे सुनहरे सपने पल भर में ही ढह जायेंगे।

परन्तु हम लोगों के समक्ष इसके लिए केवल परिवार-नियोजन ही नहीं अपितु इसके स्थान पर अन्य उपाय भी सफल हो सकते हैं। इसके लिए हम ये लाभ जल्दी ही अनुभव नहीं कर सकते अपितु इनके साकार होने में समय भी अधिक लग सकता है। इसके लिए हमें धैर्य धारण करने की आवश्यकता है। हम जब भी कोई बुद्धिमानीपूर्ण कदम उठाते हैं तो हमें उसके लिए सोच-समझ कर उठाना चाहिए नहीं तो इसका परिणाम घातक हो सकता है। ऐसे कार्य का परिणाम जल्दी ही नहीं निकलता अपितु इसके लिए हमको अधिक प्रतीक्षा एवं धैर्य रखना पड़ता है।

आज के उन्नतशील युग में भी हमें लोगों की बुद्धिहीनता पर बड़े दुःख के साथ कहना पड़ रहा है कि आज भी उन्होंने परिवार नियोजन की सफलता में अनेक प्रकार से रोड़े अटकाना प्रारम्भ कर दिया है। यह परिवार नियोजन के अहित में है, दूसरे शब्दों में इसे देश-द्रोहिता भी कह सकते हैं। किसी कार्य के सफल होते देखकर विपक्षियों का इस प्रकार से गलत प्रचार करना कहाँ की बुद्धिमता है, अपितु हम तो इसको निन्दा की दृष्टि से ही निहारेंगे। ऐसे लोगों से आज मानव एवं राष्ट्र दोनों को सतर्क रहने की आवश्यकता है। यह बात किसी भी धार्मिक ग्रन्थ के अन्दर नहीं पाई जा सकती है कि मानवता का अहित हो और वह कल्याण कार्यों से अलग रहे। मानव को उपर्युक्त दोष-पूर्ण परिस्थितियों एवं राहों से अलग रखना भी परिवार नियोजन का ही कार्य है। यह हमको दूसरे साधनों से सुलभ नहीं हो सकता।

परिवार कल्याण केन्द्र का यह अभियान कोई नवीन बात नहीं है, अपितु आज से वर्षों पूर्व प्रारम्भ हो चुका है। लेकिन किन्हीं कारणवश यह कार्यक्रम

प्रगति के पथ पर अग्रसर नहीं हो सका। इसकी पृष्ठभूमि में अनेक कारण थे जिसके द्वारा यह सफलता की सीढ़ी तक नहीं पहुँच सका। परिवार नियोजन की कुछ वर्ष पूर्व असफलता के प्रमुख कारण निम्न प्रकार से हैं—

(1) हमारे देश में शिक्षितों की अपेक्षा अशिक्षितों की संख्या उस समय अधिक थी।

(2) उस कार्यक्रम को उतनी गम्भीरतापूर्वक नहीं लिया गया जितनी गम्भीरता से इसे लिया जाना चाहिए था क्योंकि इससे विशाल समाज का भला होता है।

(3) उस समय इसका सम्बन्ध केवल स्वास्थ्य एवं चिकित्सा विभाग से ही था।

आज देश जाग्रत अवस्था में है एवं स्थिति भी परिवर्तित हो चुकी है। उस समय की अपेक्षा अब देश में शिक्षितों की संख्या बहुत अधिक है आजकल की युवा पीढ़ी सजग है एवं वह अब इसे अपने कंधों पर भार के रूप में अनुभव करने लगी है। आज का युवा वर्ग अपने वृद्धों हेतु पथ-प्रदर्शन कर रहा है।

लेकिन हमें बड़े दुःख के साथ कहना पड़ता है कि आज भी कुछ प्राचीन विचारधाराओं से प्रभावित व्यक्ति इस कार्यक्रम के सफलतापूर्वक संचालन में सहयोग नहीं दे रहे हैं। आज स्थान-स्थान पर शिविरों को स्थापित किया गया है। परन्तु आजादी की अधेड़ पीढ़ी की क्रियाकलापों पर दृष्टिपात करने से रोना ही आ जाता है और कुछ नहीं सूझता। इस कार्यक्रम में राज्य की तरफ से अनेक सुविधाएँ होने पर भी जनता द्वारा इसे वह रूप प्रदान नहीं किया, जिसकी कि आज आशा थी। हमारे देश का अधेड़ वर्ग अपने कर्त्तव्यों से विमुख है पर युवा उसे उसके गन्तव्य की तरफ समझा बुझा कर ले जाना चाहता है। इसे देख कर परिहास के अतिरिक्त और कुछ नहीं आता कि जो चीज युवा वर्ग को स्वयं सीखनी थी उसे आज वह अपने से बड़ों को सिखा रहा है।

वर्तमान समय में देश के अन्दर हर क्षेत्र में कीर्तिमान स्थापित हो रहे हैं फिर परिवार नियोजन को ही क्यों पीछे छोड़ दिया जाय। परिवार नियोजन के सफल होते ही देश की अनेक समस्याएँ स्वयं ही सुलझ जायेंगी। यदि

आज हम अपने वर्तमान पर नियन्त्रण कर लेते हैं तो हमारा भविष्य स्वतः ही उज्ज्वल हो सकता है। हमें आज अपने काम को बड़े ही सफलतापूर्वक निभाना है नहीं तो भविष्य की पीढ़ी हमें धिक्कारेगी और देशद्रोही मान बैठेगी। आज हमें इस बात की प्रतिज्ञा करनी है कि हम जनसंख्या रूपी दानव को परास्त करके देश में सुख और समृद्धि की वर्षा करें। यह तभी सम्भव है जब कि जन-जन के अन्दर इस संकल्प को पूर्ण करने की भावना जागृत हो जाये। यदि हम अपने देश के भविष्य को सुनहला प्रतीत करना चाहते हैं तब आज हमें आवश्यकता है परिवार नियोजन कार्यक्रम को अपनाकर पूर्ण सफल बनाने की। इसमें केवल मात्र अपने ही स्वार्थ निहित नहीं हैं अपितु भविष्य में आने वाली समस्त पीढ़ियों के हितों की रक्षा का प्रश्न है। अतः ऐसी स्थिति में यह हमारा परम पुनीत कर्त्तव्य हो जाता है कि हमें अपने वर्तमान ही नहीं अपितु भविष्य को भी स्वर्णिम एवं सुखमय बनाना है जिससे देश संसार में आदर्श उपस्थित कर सके। हमारी यही कामना है जैसा कि किसी संस्कृत के कवि ने ठीक ही कहा है—

"सर्वे भवन्तु सुखिनः।"

68

काले धन की समस्या

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- देश में राष्ट्रद्रोही तत्व विद्यमान हैं
- काले धन का अभिप्राय तथा इसके फलस्वरूप उत्पन्न समस्याएँ
- काले धन में प्रतिदिन बढ़ोत्तरी
- काले धन के मुख्य स्रोत
- काले धन का विस्तार
- उपसंहार

मनुष्य का जीवन अनन्त संघर्षों से आपूरित है। इस संघर्ष को उसने स्वतन्त्रता प्राप्त करने हेतु बनाया था। संसार में जितने मनुष्य हैं उतने ही प्रकार के चरित्र हैं। मानव अपनी क्षमता को अपने देश की उन्नति के कार्यों में लगाता है एवं उसका कर्त्तव्य देश में स्वतन्त्रता का वातावरण निर्मित्त करना है। स्वतन्त्रता का यह अर्थ है कि प्रत्येक व्यक्ति ऐसे कार्यों को आसानी से कर सके जिससे उसकी आत्मोन्नति हो जो व्यक्ति केवल अपने ही हित के विषय में सोचता है तथा दूसरों के हितों की चिन्ता नहीं करता वह स्वतन्त्रता के नियमों का उल्लंघन करता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि स्वतन्त्रता वह वस्तु है जो कि सभी मानवों के विकास हेतु शुद्ध वातावरण उत्पन्न कर सके तथा जिससे उसका एकाकी विकास न होकर बहुमुखी उन्नति हो एवं दूसरों के हितों का भी पूरा-पूरा ध्यान रखा गया हो।

दुःख का विषय है कि देश में कुछ ऐसे तत्त्व विद्यमान हैं जो राष्ट्रोन्नति के मार्ग में रोड़ा अटकाते हैं तथा परस्पर द्वेष की भावना उत्पन्न करते हैं। ऐसे लोग स्वतन्त्रता का ही सही ढंग से न तो अर्थ जानते हैं, और न उसको प्रयोग करना। स्वार्थी लोग स्वतन्त्रता का एकमात्र यह अर्थ लगाते हैं कि इसमें केवल अपना ही उल्लू सीधा करना है, न कि दूसरों के हितों का ध्यान रखना। हमारे स्वतन्त्र भारतीय संविधान में कुछ मूल अधिकारों को दर्शाया गया है। जिनका होना देशोन्नति के हेतु परमावश्यक है।

हमारा देश भी इसका अपवाद नहीं है। उसमें नागरिकों के हितों का विशेष ध्यान रखा गया है। लेकिन कुछ ऐसे देशद्रोही भी हैं जो अपने पशु-तुल्य व्यवहार के कारण दूसरों के हितों की तनिक भी परवाह नहीं करते। परिणाम-स्वरूप राष्ट्र में सामाजिक विघटन की खाइयाँ दिन-प्रतिदिन चौड़ी होती चली जा रही हैं। इन देश-द्रोहियों के ऐसे निन्दनीय कार्य हैं जिनसे कि ये मानव होते हुए भी दानवों का रूप धारण किए हुए हैं।

अब हमारे सामने काले धन का प्रश्न आता है। काले धन से तात्पर्य उस धन से है जिसकी कि कोई गिनती न हो एवं ऐसी धनराशि को छुपा कर रखा गया हो एवं उसका कोई लिखित ब्यौरा न हो। हमारे देश के अन्दर काला धन इतनी अधिक मात्रा में है कि उससे देश का कोई भी भाग अछूता नहीं बचा है। यह इस प्रकार की धनराशि है जो मानव कल्याण के कार्यों में नहीं

लगायी जा सकती है। यद्यपि इस धन को विभिन्न कार्यों में लगाया जा सकता है, परन्तु ऐसा किया नहीं जाता है। यह धन प्रायः धनी लोगों के ही हाथों में है, जो कि रात-दिन धन कमाने हेतु अनुचित साधनों का उपयोग करते हैं। यह धन मँहगाई बढ़ाकर आम जनता के समक्ष अनेक मुसीबतें उत्पन्न कर देता है। कुछ लोग अपने हाथों में अत्यधिक धन ग्रहण किए हुए हैं। कुछ धनी लोग इसी धन के सहारे समाज में राजा और महाराजाओं जैसा जीवन व्यतीत करते हैं तो दूसरी ओर भूखे और नंगे लोग देश के ऊपर भार बने हुए हैं। इस काले धन का उपयोग एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में केवल विलासितापूर्ण वस्तुओं पर व्यय किया जाता है, न कि कल्याणकारी कार्यों में, ऐसा धन केवल पूँजी-पतियों के ही हाथ की कठपुतली बनकर रहता है, न कि सार्वजनिक कल्याण हेतु विकास की विभिन्न योजनाओं के चलने पर भी ऐसे धन पर रोक नहीं लगाई जा सकी है। काले धन की समस्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही चली जा रही है। आवश्यक वस्तुओं की बाजार में कमी केवल कृत्रिम रूप से की जाती है। यथार्थ में ऐसी बात नहीं है। इस जमाखोरी ने समाज की नींव को खोखला कर दिया है। ऐसे व्यक्ति समाज के लिए अभिशाप हैं जो कि रिश्वत, भ्रष्टाचार एवं हिंसा में लिप्त हैं। तस्करों के द्वारा अर्जित धन भी एक विशाल भू-भाग पर फैला हुआ है काला धन वह वस्तु है जिसके द्वारा न्याय, सामाजिक नियम एवं नैतिकता का खुले रूप में हनन हो रहा है। आर्थिक एवं सामाजिक ढाँचे पर भी इसका विपरीत प्रभाव पड़ा है। इसने समाज में कुत्सित वातावरण उत्पन्न कर दिया है एवं एकता पर भी कुठाराघात किया है। इससे एक विशाल धनराशि अनैतिक व्यक्तियों के हाथों में आ गई है तथा वे मनमाने ढंग से इसका उपयोग कर रहे हैं। इस काले धन से आध्यात्मवाद पर गम्भीर चोट पहुँची है एवं भौतिकवाद की जड़ों को मजबूत बना दिया है। इससे राष्ट्रीय पतन भी हो सकता है। काले धन ने देश के समक्ष एक ऐसे रोग को खड़ा कर दिया है जिसका एक निदान कठिन ही नहीं अपितु असम्भव प्रतीत होने लगा है। इसका यदि समय पर उपचार नहीं किया गया तो यह राष्ट्रीय स्वास्थ्य हेतु एक ऐसे रोग के रूप में सिद्ध होगा जो कि दुसाध्य हो।

धन के विषय में जाँच के आँकड़ों से यह सिद्ध हो चुका है कि काले धन को दिन-प्रतिदिन बढ़ावा मिल रहा है तथा उसकी वृद्धि पर रोक नहीं लगाई

जा सकी है। काले धन की राशि सन् 1968-69 में अनुमानतः चार हजार करोड़ से लेकर सात हजार करोड़ तक बताई गई थी। उसके पश्चात् भी इस धन में वृद्धि होती ही चली जा रही है। काले धन के रोग का उचित रूप से निदान किया जा सका है। विभिन्न अर्थशास्त्रियों का अनुमान है कि काले धन का राष्ट्र में जितना उत्पादन होता है उसका दस प्रतिशत से भी अधिक है इसे काले धन्धों में भी प्रयोग किया जाता है। फलतः आर्थिक रूप तीन भागों में विभाजित हो गया है। उनमें एक क्षेत्र काला बाजार का भी है यह काला बाजारी का क्षेत्र समाज के आर्थिक ढाँचे के लिए बड़ा ही हानिकारक है। आर्थिक स्तर की जाँच के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सका है कि भारत में हर साल एक हजार करोड़ रुपये का कर चोरी के रूप में लिया जाता है। यह सब काला बाजारी का ही परिणाम है।

जिन मुख्य स्रोतों के कारण देश में काले धन की समस्या उत्पन्न हो गई है, उनका नीचे संक्षेप में वर्णन किया जा रहा है—

(अ) **कर चोरी को नियन्त्रित करना**—कर चोर ही काले धन के संचय के प्रमुख साधन बने हुए हैं। विभिन्न कम्पनी एवं कारखानों के संचालक सामूहिक एवं व्यक्तिगत रूप से करों की चोरी करते हैं। जब तक हर नागरिक अपने कर्तव्यों का ढंग से पालन नहीं करता तब तक इस देश के शासन को सही ढंग से नहीं चलाया जा सकता है। ये भ्रष्ट लोग जाति एवं देश के दुश्मन हैं एवं स्वार्थ में अन्धे होकर पूरे देश के जीवन से खिलवाड़ करते रहते हैं। हर व्यापारिक संस्था का आज यह आम रिवाज बन चुका है कि वे अपने व्यापार से सम्बन्धित हर प्रकार के कागज दुहरे बनाते हैं। वे ऐसा कर के वास्तविक आय के आँकड़ों को अधिकारियों के समक्ष न रखकर कर के रूप में देने वाली धनराशि को स्वयं रख लेते हैं। फलतः धनी पुरुषों के पास निरंतर अधिक धन इकट्ठा हो जाता है और गरीब गरीबी की खाई में गिरता चला जा रहा है।

करों की बढ़ी हुई दर ने सच्चरित्र लोगों को भी बेईमान बना दिया है। इसलिए करों की दर को कम करना भी नितांत आवश्यक है।

(ब) **लाइसेंस तथा कन्ट्रोल व्यवस्था**—इस प्रणाली के दुरुपयोग के कारण भी कालेधन को बढ़ावा मिला है। लाइसेंस धारक तथा कन्ट्रोल वाले अपने क्षेत्र में बड़ी अनियमिततायें बरतते हैं। ये लोग अवास्तविक रूप में अमुक उप-

भोक्ता वस्तुओं की कमी दिखाकर उन्हें ऊँचे मूल्य पर चोरबाजारी के माध्यम से बेच देते हैं। इस पर नियन्त्रण किया जाना परमावश्यक है।

(स) कर्मचारी वर्ग की भ्रष्टता—कुछ राज्यों में भ्रष्ट अफसर भी हैं जो कि देश पर एक कलंक के समान हैं। ये कर्मचारी धनिकों से सम्पर्क रखते हैं तथा उनके आय-व्यय का उचित ब्यौरा तैयार किए बगैर ही आयकर इत्यादि वसूल करते हैं। जिससे सरकार को कर के रूप में क्षति होती ही है साथ ही साथ काले धन को भी बढ़ावा मिलता है। इस प्रकार के भ्रष्ट लोगों को जब तक शासन से नहीं उखाड़ फेंका जायगा तब तक इस क्षेत्र में सुधार होना अत्यन्त ही असम्भव है।

(द) राजनीतिज्ञों का हाथ—देश में जब भी चुनाव आते हैं तब अनेक राजनीतिक नेता अपने-अपने क्षेत्र के धनिक लोगों से चुनाव हेतु धन संचय करते हैं। इस प्रकार का धन कहीं बाहर से नहीं आता अपितु यह अपने ही देश की पूँजी है। इस हमारी सरकार ने कुछ नियमों का भी निर्माण किया है एवं आदेश भी जारी हुए हैं परन्तु फिर भी इस समस्या का पूर्णरूपेण समाधान नहीं हो सका है।

(य) धन-वितरण में असमानता—काले धन की समस्या का एक अन्य कारण धन का असमान रूप से वितरण भी है। देश की पूँजी का अधिकांश भाग कुछ विशेष लोगों के ही हाथ में है। ये ही लोग लाइसेंस तथा कन्ट्रोल आदि के परमिट प्राप्त करते हैं और अन्य अनेक सुविधायें प्राप्त करते हैं। सस्ती ब्याज दर का पैसा केवल मात्र उन्हीं को ही मिलता है। देश के समस्त आर्थिक ढाँचे पर केवल चन्द धनिकों का ही अधिकार है। ऐसे लोग हर अनुचित साधन से धन कमाकर एक विशाल धनराशि इकट्ठी करते रहे हैं जो कि काले धन के रूप में है तथा इसी कारण उनकी तोंद का विस्तार होता चला जा रहा है।

(र) तस्कर समस्या—यह समस्या भी अनन्तकाल से देश में अपना जाल बिछाए हुए है। यह भी काले धन के लिए उत्तरदायी है। कैमरे, घड़ियाँ, ट्रांजिस्टर तथा चाँद एवं स्वर्ण आदि अनेक बहुमूल्य वस्तुयें चोरी छुपे एक स्थान से दूसरे को भेजकर चोरी से बेच दी जाती हैं। चाँदी एवं स्वर्ण को भी तथा अन्य धातुओं का व्यापार भी चोरी छुपे किया जाता है। अचल सम्पत्ति

को अत्यन्त बढ़ती हुई कीमत पर विक्रय करना भी इसी प्रणाली के अन्तर्गत होता है।

अन्त में हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि काले धन एवं तस्कर समस्या हमारे राष्ट्र के लिए बड़ी घातक है। यदि प्रशासन एवं जनता द्वारा इस समस्या के समाधान हेतु ठोस कार्यवाही न की गई, यदि हमने इस कलंक को धोने के लिए दृढ़ निश्चय नहीं किया तो हमारा राष्ट्र विश्व के अन्य राष्ट्रों के मध्य उपहासास्पद एवं लज्जा का अनुभव करेगा। राष्ट्र कमजोर होकर उसकी एकता में दरारें पड़ जायेंगी जिससे देश की स्वतन्त्रता पर भी आघात पहुँच सकता है। विश्व के मध्य अपने राष्ट्र के गौरव को बनाए रखने तथा राष्ट्र की नींव को सुदृढ़ बनाने के लिए अत्यन्त ही आवश्यक है कि हमको काले धन की समस्या के उन्मूलन हेतु सम्पूर्ण शक्ति के साथ जुट जाना चाहिए तभी हम इस समस्या का समाधान कर सकते है अन्यथा नहीं। अपने राष्ट्र के मस्तक से इस कलंक के टीके को हटा करके ही हम विश्व के मध्य असीम शक्ति, अपार वैभव एवं सामाजिक संगठन को स्थायी बना सकते हैं।

काले धन को रोकने के लिए निम्न बातें आवश्यकीय एवं विचारणीय हैं—

(1) अनावश्यक वस्तुओं के उपयोग पर सरकार पूर्ण प्रतिबन्ध लगाए।

(2) चुनाव पर होने वाले पार्टियों के अपव्यय को रोका जाय।

(3) चोर बाजारी के विरुद्ध सक्रिय तथा कठोर कदम उठाया जाय।

(4) कर की दरों में कमी की जाय।

(5) समय-समय आयकर अधिकारियों द्वारा छापे मारे जायें।

(6) विशेष धारक बाण्ड भी इस समस्या का निराकरण कर सकते हैं। इस योजना में कोई भी मानव इच्छानुसार बाण्डस क्रय कर सकता है।

(7) काले धन के स्रोतों का पता लगाना अपेक्षित है।

यदि हम अपने इस प्रयत्न में सफलता प्राप्त कर लेते है तो यह कार्य हमारे लिए एवं देश के लिए बड़ा ही पुण्यदायक सिद्ध होगा, यही हमारी कामना है।

69
दहेज प्रथा

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना**

- **प्रारम्भ में दहेज का प्रारूप**
- **दहेज प्रथा का विकृत रूप**
- **दहेज प्रथा का कुप्रभाव**
- **दहेज प्रथा का वर्तमान रूप**
- **दहेज की जड़ें गहरी हैं**
- **स्वतन्त्र भारत में किए गए प्रयत्न**
- **उपसंहार**

केवल भारतीय समाज में नहीं अपितु विश्व समाज में समयानुसार अनेक प्रथाओं का प्रचलन होता रहा है। इन प्रथाओं का प्रचलन समाज में विकृति उत्पन्न करने हेतु नहीं अपितु सही व्यवस्था रखने हेतु ही किया गया परन्तु बाद में लोगों ने उसको गलत ढंग से प्रयोग करना आरम्भ कर दिया जिससे सामाजिक विघटन तक की नौबत आ पहुँची। उदाहरणार्थ यदि जाति प्रथा अथवा वर्ण व्यवस्था को ही ले लिया जाय, इसका संचालन समाज में व्यवस्था बनाये रखने एवं कार्यों के विभाजन हेतु हुआ था लेकिन बाद में लोगों ने इसका गलत अर्थ लगाना शुरू कर दिया जो कि उच्च एवं निम्नवर्ग में परिवर्तित हो गयी। आज इसका इतना विकृत रूप हो गया है कि उच्चवर्ग एवं निम्न वर्ग के मध्य की खाई को पाटना असम्भव हो गया है। चूँकि परिवर्तन संसार का नियम है यह सार्वभौम सत्य है अन्य प्रथाओं के समान दहेज-प्रथा में भी समयानुसार परिवर्तन हुए। वर्तमान समय में दहेज प्रथा का यह परिवर्तन इतना विकृत रूप धारण कर चुका है कि यह भारतीय समाज के लिए एक समस्या बन गया है। वर्तमान समय की माँग है कि इस समस्या का निराकरण किया जाय। यदि इस समस्या का उपचार नहीं किया गया तो यह समाज में छूत की बीमारी के समान फैलती चली जाएगी एवं उसे पंगु बना देगी।

भारतीय समाज के लिए दहेज प्रथा कोई नई वस्तु नहीं है अपितु यह तो प्राचीन काल से ही चली आ रही है केवल समय-समय पर इसके रूपों में परिवर्तन होता चला आया है। हमारे समाज में वैवाहिक बंधन को पवित्र एवं अटूट माना गया है। विवाह सम्बन्ध को गम्भीर मानते हुए भारतीय लोगों की यहाँ तक धारणा है कि विवाह बन्धनों को तोड़ना मनुष्य के वश की

बात नहीं चाहे ईश्वर भले ही इसे तोड़ दे। हमारे देश के प्राचीन मनीषियों ने अपने संस्कृत ग्रन्थों में भी इस बात का उल्लेख किया कि विवाह में कन्या पक्ष द्वारा वर पक्ष को दहेज दिया जाता है। इसके साथ ही कुछ ऐसे उल्लेख भी मिलते हैं उस समय दहेज सहित विवाहों को ठीक नहीं माना जाता था। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उस समय भी दहेज प्रथा को अच्छा नहीं माना जाता था।

इतना सब होते हुए भी धीरे-धीरे इस प्रथा का प्रचलन होता चला गया क्योंकि इसके अन्दर अवगुण ही नहीं अपितु समाज में इसके गुणों का भी अनुमान लगाया जाने लगा। दहेज प्रथा की सराहना इसलिए हुई कि इसका धन नव-दम्पत्ति को एक सुखी जीवन व्यतीत करने में सहायक होता था। समाज इस अभिशाप को वरदान मानने लगा। यद्यपि यह बात ठीक है कि नव-दम्पत्ति को धन की आवश्यकता होती है एवं वरपक्ष ही इस भार को वहन करता रहे यह भी उचित नहीं है। इसमें केवल वरपक्ष को ही सुखी नहीं देखा जाता है अर्थात् इसमें केवल वर को लाभ नहीं होता। दाम्पत्य जीवन में दोनों पक्षों के समान हित होते हैं। केवल वर ही नहीं अपितु वर तथा वधू दोनों ही नवजीवन में प्रवेश करते हैं। इसलिए यह उत्तरदायित्व दोनों पक्षों पर ही मान्य होता है इसी कारण प्राचीन काल में इस प्रथा का विरोध किया गया था एवं इसे निषिद्ध ठहराया गया था। यह सब होते हुए भी कुछ वर्गों ने इसे प्रोत्साहित किया एवं धीरे-धीरे यह एक प्रथा के रूप में विकसित होती गई। धीरे-धीरे वर पक्ष वधू पक्ष से कुछ न कुछ दहेज के रूप में लेने का अपना अधिकार मानने लगा। इसके विपरीत कन्या के अन्दर भी यह धारणा दृढ़ होती चली गई कि कन्या के विवाह का अर्थ ही यह है कि वर पक्ष के लिए कुछ न कुछ दहेज के रूप में प्रदान करना। समाज के अन्दर दहेज-प्रथा प्रतिष्ठा का भी प्रश्न बन गई एवं वधू पक्ष वाले धन देना (दहेज देना) अपना धर्म समझने लगे।

यदि इस प्रथा का उपर्युक्त रूप रहता तो अच्छा था लेकिन समय के परिवर्तन के साथ-साथ इसमें भी परिवर्तन दृष्टिगोचर हुए। इस प्रथा का विकृत रूप हो गया एवं इस परिवर्तन ने इसे कुप्रथा के रूप में पीरिणित-कर दिया है। वर को एक अमूल्य निधि समझा जाने लगा। वर पक्ष वाले कन्या

पक्ष वालों से अपने को श्रेष्ठ समझने लगे, तथा बेटी वाला उसके समक्ष दयनीय समझा जाने लगा।

प्रस्तुत कुप्रथा का जिन कारकों पर प्रभाव पड़ा उनमें सबसे अधिक कन्या ही प्रभावित हुई। इससे कन्या की दयनीय स्थिति हो गई। यही कारण था कि परिवार वाले कन्या के जन्म पर इतने प्रसन्न नहीं होते जितने कि पुत्र के जन्म पर। कन्या को दुःख सूचक समझा जाने लगा। पुत्री को जन्म देने वाली माताओं पर अनेक प्रकार के व्यंग्य किये जाने लगे। परिवार में पुत्री के जन्म पर शोकपूर्ण वातावरण होने लगे।

आज समाज का स्वरूप बदल चुका है एवं शिक्षा का प्रसार एवं प्रचार हो रहा है परन्तु फिर भी इस समस्या पर अंकुश नहीं लगाया जा सका है। आधुनिक युग के अनुरूप हमारे समस्त क्रिया-कलापों में परिवर्तन आये परन्तु हम दहेज प्रथा को तिलांजलि न दे सके। यह बड़े खेद की बात है। मानसिक रूप से पिछड़े होने पर भी जीवन स्तर में वृद्धि कर लेना कहाँ की बुद्धिमानी है। आज हमारी कुप्रथाओं ने हमको ठीक वैसी स्थिति पर लाकर खड़ा कर दिया जैसे कि हम आज से बीस वर्ष पूर्व गुलामी की जंजीर में जकड़े हुए कराह रहे थे। आज हमें इतना साहस एवं शक्ति भी नहीं है कि जंजीरों को तोड़कर अपने को मुक्त कर लें। वह सब कुप्रथाओं का प्रभाव नहीं अपितु यह स्वयं हमारे हृदयों में हीनता की भावना का परिणाम है। आधुनिक काल में कन्या स्वयं भी इस अभिशाप का भार अपने सिर लादे रहती है एवं उसके जीवन का अधिकांश भाग इसी से सम्बन्धित विचारों में व्यतीत होता है। धनोपार्जन हेतु परिश्रम करने के फलस्वरूप पिता के शरीर के झुकाव एवं भाई को चिन्तित अनुभव करके कन्या के हृदय पर जो बीतती उसका अनुमान लगाना सहज नहीं है। इस स्थिति से छुटकारा पाने के लिए अनेकों कन्याएँ अपने पथ से विचलित होकर भटक गईं एवं उन्होंने समाज के घृणित एवं घिनौने कुकृत्यों को अपना कर एक ऐसे जीवन का सूत्रपात किया जिसने उनके जीवन को तबाह कर दिया।

आज के भारतीय समाज में दहेज प्रथा को एक आवश्यक अंग के रूप में मान लिया गया है। विश्व में पहले विश्व-युद्ध के उपरान्त चेतना जाग्रत हुई एवं भारतवर्ष भी इसका अपवाद नहीं था। समाज सुधार के आकाश में कुछ

नक्षत्रों का उदय हुआ। भारतीय समाज में व्याप्त कुप्रथाओं पर विचार किया गया। कुछ समाज सुधारकों ने दहेज प्रथा पर भी उँगली उठाई। कुछ विचारक इस कुप्रथा के समाज में पनपने पर अत्यन्त ही चिन्तित हुए कि वे ऐसे अभिशाप का समाज में शिशु के समान पोषण क्यों करते रहे ?

लेकिन प्राचीन काल से ही प्रचलित इस प्रथा का अन्त कुछ दिनों में ही हो जाये यह असम्भव है। इस पर अनेकों महापुरुषों द्वारा अथक प्रयत्न किये गये। दहेज को लोग सामाजिक प्रतिष्ठा का प्रतीक मानने लगे कि अमुक व्यक्ति ने अपनी बेटी के विवाह में अमुक धन दिया। इतना सब कुछ होने पर भी फिर भी वर पक्ष पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता एवं वे अधिक से अधिक दहेज लेने की अपेक्षा करने लगे तथा कम दहेज देने वालों को ठुकराने लगे।

इसका परिणाम यह निकला कि अच्छी कन्याओं को या तो अविवाहित रहना पड़ता अथवा अनमेल विवाह के लिए बाध्य होना पड़ता। कन्या का जीवन नरक की भट्टी बन गया एवं इस अबला जीवन को पाप समझा जाने लगा। कन्या के मस्तिष्क में केवल दो ही विचार रह-रह कर टकराने लगे कि या तो जीवन पर्यन्त अविवाहित अथवा जन्म भर व्यंग्य वाणों की बौछार। यह दोनों ही अभिशाप कन्या के अन्तस्थल को बेधने लगे।

चाहे इसे समय की पुकार कहा जाय अथवा परिवर्तन, समाज सुधारकों ने लोगों की तन्द्रा को भंग करना चाहा लेकिन उन्हें स्वयं इसमें सहयोग नहीं मिला। इस प्रथा में वर पक्ष लाभान्वित था अतः उसके समर्थन करने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। कन्या पक्ष भी इसमें भाग लेना अपनी प्रतिष्ठा के विरुद्ध ही समझने लगा लेकिन समाज सुधारक इस दशा में सतत् प्रयत्नशील रहे। इस क्षेत्र में अनेकों महापुरुष कूद पड़े जिनमें सर्वश्री राजा राममोहन राय, महामना मदनमोहन मालवीय, महात्मा गाँधी तथा बाल गंगाधार तिलक आदि नेता थे। इन सभी ने मिलकर दहेज प्रथा के विरोध में आवाज उठाई। इस क्षेत्र में कुछ लोगों ने समक्ष जाने का भी प्रयास किया। लेकिन पूर्ण सफलता प्राप्त करना 'टेढ़ी खीर' थी। हमारे माननीय नेताओं के उस समय के प्रयासों की असफलता का एकमात्र कारण था भारत का गुलामी की जंजीरों में जकड़ा होना।

कुप्रथाओं के अन्त करने के सम्बन्ध में जो स्वतन्त्रता के बाद प्रयास किये गये वे अत्यन्त ही सराहनीय हैं। हमारे देश में इस प्रकार के कानून बनाए गये जिनके द्वारा दहेज प्रथा को पनपना एक अपराध के रूप में घोषित कर दिया गया है। दहेज प्रथा पहले प्रथा थी उसके उपरान्त उसका रूप बदल कर कुप्रथा हुई और आज उसे सामाजिक अपराध माना जाता है। इसके विरुद्ध कदम उठाने में समय-समय पर कानून को सफलता भी मिली है परन्तु यह सफलता पूर्णता को प्राप्त नहीं हुई तथा दहेज पर आवश्यक अंकुश नहीं लगाए जा सके।

जिस देश में भुखमरी तथा बेकारी की समस्या हो, जनसंख्या प्रतिपल बढ़कर सुरसा की भाँति मुख फैला रही हो, उस देश में प्रणय-बंधन के अवसर पर एक बड़ी धनराशि का अपव्यय करना कहाँ तक न्याय संगत है? समाज में पुरुष तथा नारी का समान स्थान है। मनु का कथन है कि जहाँ नारियों की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते हैं। जहाँ नारियों का अनादर होता है वहाँ सम्पूर्ण शुभ कर्मों पर पानी फिर जाता है।

सामाजिक बुराइयों को विनष्ट करने के लिए इस देश के महापुरुषों ने समय-समय पर भागीरथी प्रयास किया है। राजा राममोहन राय ने सती-प्रथा को समाप्त करने का सराहनीय प्रयास किया। स्वामी दयानन्द ने विधवा विवाह को उचित तथा वैध ठहराया। महात्मा गाँधी ने जाति-पाँति तथा छूआछूत का डटकर विरोध किया। इसी तारतम्य में संजय गाँधी ने भी दहेज प्रथा को समूल नष्ट करने का दृढ़ व्रत लिया था। पंजाब, हरियाणा तथा उत्तर प्रदेश में दहेज प्रथा के उन्मूलन के लिए कानूनों को बनाया जा चुका है।

लेकिन वर्तमानकाल में भी इस कुप्रथा को समूल नष्ट करने हेतु प्रभाव-शाली कदम उठाए जा रहे हैं। आज के युवा वर्ग ने स्वर्गीय संजय गाँधी के चार सूत्रीय कार्यक्रम से प्रभावित होकर इस दशा में प्रयास करना प्रारम्भ कर दिया था। इस सामाजिक अभिशाप के अन्त करने हेतु सभी सतत् प्रयत्न कर रहे हैं कि अमुक स्थान पर अमुक युवक युवतियों ने दहेज प्रथा के अपने ऊपर लागू न करने की शपथ ग्रहण की है। यह सूचनाएँ स्वर्णिम भविष्य की निर्माता एवं राष्ट्र को एक नया मोड़ देने के लिए हैं। युवाओं द्वारा इस क्षेत्र

में यदि इसी प्रकार का सहयोग मिलता रहे; तो इससे नवीन भारत का निर्माण होगा जिसमें कि सभी के समान अधिकार होंगे। इससे देशवासियों में सहयोग की भावना उत्पन्न होगी एवं राष्ट्र उत्तरोत्तर उन्नति के पथ पर अग्रसर होता चला जाएगा।

70

वृक्षारोपण अभियान

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- वृक्ष और उनके प्रकार
- वृक्षों से मानव को लाभ
  - (1) प्राकृतिक लाभ
  - (2) कृषि विषयक लाभ
  - (3) वृक्ष और मानव जीवन
  - (4) वृक्षों की विभिन्न उपयोगिता
- वृक्षारोपण के लिए उचित व्यवस्था
- उपसंहार

ईंधन आज हमारे जीवन का आवश्यक अंग है किन्तु हम लोग शायद नहीं जानते कि ईंधन का एक साधन प्राचीन समय से लकड़ी भी रहा है और आज भी हमारे ग्रामीण क्षेत्रों में लकड़ी का प्रयोग ईंधन के रूप में किया जा रहा है। यह लकड़ी हमें वनों के वृक्षों से प्राप्त होती है। प्राचीनकाल से ही मनुष्य वृक्षों की उपयोगिता के कारण वृक्षों को देवता का रूप देकर उनकी पूजा करता चला आ रहा है। कारण यह है वृक्ष उनकी जीविका का महत्त्वपूर्ण साधन रहे हैं। प्राचीन समय में वन बहुत भयंकर होते थे। अधिकतर दानव और राक्षस आदि वनों में ही रहा करते थे। किसी अपराध के कारण यदि किसी व्यक्ति को देश निकाला दिया जाता था तो उसे वन में जाकर रहना

पड़ता था। प्रसिद्ध है कि राम-लक्ष्मण और पांडवों को घर छोड़कर सालों के लिये वनों में रहना पड़ा, अतः हमारे पूर्वजों के आश्रय का प्रमुख स्थल वन था। वनों को एक पवित्र एवं शान्तिमय स्थल भी समझा जाता था जहाँ मनुष्य संसार से वैराग्य लेकर तपस्या करके भगवान की स्तुति किया करता था। वनों में ऋषि मुनि महात्मा आदि भी रहकर इस संसार के कोलाहल से दूर वातावरण में भगवद् भजन किया करते थे। आज भी वनों से मनुष्य का उसी तरह गहरा सम्बन्ध है। वृक्ष मनुष्य मात्र के लिए उपयोगिता के कारण पूज्य हैं।

भारतीय शास्त्रों में कल्प वृक्ष को सभी मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाला वर्णित किया गया है। अक्षय वट का भी उल्लेख मिलता है। कृष्ण भगवान ने स्वयं को वृक्षों की कोटि में रखकर अपने को पीपल वृक्ष के नाम से सम्बोधित किया है। हिन्दू पीपल की पूजा एक देव तुल्य करते हैं। महावीर स्वामी तथा गौतम बुद्ध ने अपने शैशव की आँखें वृक्षों के तले ही खोलीं। साहित्यकारों ने भी सीता, उर्मिला तथा पार्वती के माध्यम से वृक्षों का आरोपण कराया है। ये तथ्य वृक्षों की महत्ता को प्रतिपादन करने वाला है। अशोक एवं हर्ष आदि राजाओं ने वृक्षों का आरोपण करवाया। ये बातें वृक्षों की आवश्यकता तथा गौरव को व्यक्त करती हैं।

उन्नीस सौ पचास का यह महान् वर्ष जब देश का नया संविधान प्राप्त हुआ और वृक्षों की उपयोगिता स्पष्ट करने के लिए वन महोत्सव का अखण्ड कार्यक्रम भी आयोजित किया गया। वृक्षों की महत्ता को देखते हुए तब से अब तक लगातार वनमहोत्सव का यह कार्यक्रम मनाया जाता है। जिसे सम्पन्न करके जीवन में एक बार हम किसी न किसी तरह वृक्षों की उपयोगिता देखते हुए अपना आभार प्रकट कर देते हैं। हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में वृक्षों का अपना विशेष महत्त्व है। मानव जीवन को बनाये रखने में वृक्ष एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। हमारे जीवन में सौन्दर्य, सजावट, आराम, भोजन, हवा आदि अपना-अपना अलग स्थान रखते हैं किन्तु इन सब वस्तुओं को वृक्ष ही हमारे जीवन में प्रदत्त करते हैं।

स्थान के साथ-साथ वृक्षों की आकृति भी परिवर्तित होती रहती है। जैसे कि शीत प्रदेश में पाये जाने वाले वृक्ष कोणदार वृक्ष कहलाते हैं और

उनकी पत्तियाँ नुकीली होती हैं । मैदानी भागों में वृक्ष पृथ्वी में अधिक गहराई तक धँसे रहते हैं । पर्वतीय प्रदेश में पाये जाने वाले वृक्षों की लकड़ी सुन्दर और टिकाऊ होती है ।

वृक्ष हमारे जीवन में ईंधन के रूप में तो प्रयोग होते ही हैं किन्तु हमारी आवश्यकताओं की अधिकांश वस्तुएँ वृक्षों से ही प्राप्त होती हैं । हमें भवन बनाने के लिए लकड़ी वृक्षों से ही प्राप्त होती है । वृक्षों की सहायता से आज के वैज्ञानिक युग की शक्ति का एक मुख्य साधन रबर भी हमें मिलता है जिससे यातायात के साधनों का विकास होता है । विभिन्न प्रकार के रंग, सुगन्धियाँ हमें वृक्षों से ही प्राप्त होती हैं । हमारे देश में गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र आदि नदियाँ और देश भर में फैली उनकी अन्य सहायक नदियाँ वर्षा ऋतु में बाढ़ द्वारा अपना तांडव नृत्य प्रस्तुत करती हैं । खेती, फसलें, घरबार, धन-दौलत पशु धन और यहाँ तक कि मानव जीवन में प्रतिवर्ष बाढ़ की लपेट में आकर नष्ट हो जाते हैं । खेती योग्य भूमि और उपजाऊ क्षेत्र प्रतिवर्ष बाढ़ की भेंट चढ़ जाते हैं । भूमि-कटाव और भूमि क्षरण की प्रक्रिया बाढ़ के कारण ही होती है । बाढ़ द्वारा भूमि कटाव को रोकने में वृक्ष हमारे बहुत लाभप्रद हैं । वृक्षों की गहरी पृथ्वी तक धँसी हुई जड़ें मिट्टी को बहुत मजबूती से जकड़े रहती हैं, इसी कारण वृक्षों की सहायता से बाढ़ का प्रकोप नियन्त्रण किया जाता है और भूमि कटाव की भयंकर समस्या सम्मुख नहीं आती । हमारे देश में वृक्षों की कमी हो जाने के कारण भूमि कटाव की समस्या प्रतिवर्ष आ जाती है और खेती योग्य उपजाऊ भूमि नदी के गर्भ में समा जाती है जिससे भूतपूर्व प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी का अधिक अन्न उपजाओ कार्यक्रम सफल नहीं हो पा रहा है । हमें चाहिए कि अधिक से अधिक संख्या में नदी के किनारों पर वृक्ष लगाकर भूमि कटाव की भयंकर समस्या का समाधान करें ।

एक वैज्ञानिक निष्कर्ष के अनुसार वृक्षों की कमी के कारण रेगिस्तान की रेत प्रति वर्ष तीन किलो मीटर दोआब के मैदान की ओर बढ़ रही है । रेगिस्तान की वृद्धि का मुख्य कारण वृक्षों का न होना है । वृक्ष ही रेगिस्तान की वृद्धि रोकने में सहायक हो सकते हैं । वृक्षों की सहायता से देश में बंजर भूमि का बढ़ना रोक कर उपजाऊ और कृषि योग्य भूमि का विकास किया जा सकता है । यदि वृक्षों को नष्ट करके हमारे देश की प्राकृतिक सम्पदा को नष्ट

करने का यही क्रम बना रहा तो वह दिन दूर नहीं जब बंजर भूमि से देश भर जाएगा और उपजाऊ भूमि नष्ट हो जाएगी। वर्षा के दिनों में वर्षा के वेग से भूमिक्षरण और कटाव बहुत होता है। किन्तु जिस स्थान पर वृक्ष होते हैं, वहाँ पानी का सम्पूर्ण वेग वृक्ष ही सह लेते हैं और भूमि पर पानी सीधा नहीं गिरने पाता जिससे बरसात द्वारा भूमि कटाव नहीं हो पाता। ऊँचे-ऊँचे वृक्ष बरसात करवाने में भी मदद करते हैं। वनस्पति-शास्त्र के एक विद्वान के अनुसार यदि वृक्ष न हों तो हम अधिक समय तक जीवित नहीं रह सकते हैं। वायुमण्डल में आक्सीजन एक निश्चित मात्रा में पायी जाती है। उस ऑक्सीजन का शोषण हम अपने शरीर में करके कार्बनडाइ-आक्साइड बाहर निकालते हैं। वृक्ष सदैव कार्बनडाइ-आक्साइड की सहायता से अपना भोजन तैयार करते हैं। वृक्ष कार्वनडाइ-आक्साइड का शोषण करके आक्सीजन को विसर्जित करते हैं। यदि हमारे जीवन में वृक्ष न पाए जाते तो हम ऑक्सीजन का शोषण करते-करते एक समय इसे बिल्कुल समाप्त कर देते और वायु मण्डल में कार्बन डाई-ऑक्साइड की प्रधानता होती और जीवधारी जीवित नहीं रह सकते थे। अतः वृक्षों का हमारे जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। वायु मण्डल को शुद्ध करने में इस प्रकार वृक्षों द्वारा एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई जाती है।

आज सम्पूर्ण देश मशीनों और कल कारखानों से आपूरित है। जगह-जगह मिलें खुल गयी हैं एवं उद्योग धन्धों के नित नवीन कारखाने खुलते जा रहे हैं जिससे देश प्रगति की राह में बढ़ता चला जा रहा है, किन्तु साथ ही, इन कल कारखानों की धुआँ उगलती चिमनियाँ मानव के बहुमूल्य जीवन को नष्ट किए डाल रही हैं। धीरे-धीरे इन कारणों से मनुष्यों की औसतन आयु कम होती जा रही है। वायु मण्डल भी इन कल कारखानों से दूषित होता जा रहा है। हमारे देश का विज्ञान भी इस दोष को दूर करने में असमर्थ है। हमारे देश का विख्यात सौन्दर्य ताजमहल धीरे-धीरे इन धुआँ उगलती चिमनियों के कारण अपना सौन्दर्य खोता जा रहा है। ताजमहल जो अपनी सुन्दरता और श्वेत संगमरमर की कलात्मकता के कारण विश्व भर में विख्यात है धीरे-धीरे अपनी ख्याति और सुन्दरता को क्षीण कराता जा रहा है और इन सब कारणों को रोकने में समर्थ है हमारे देश में वृक्षारोपण कार्यक्रम।

गर्मी की ऋतु में चलने वाली गर्म हवाएँ और शीत ऋत में चलने वाली ठण्डी हवाएँ वृक्षों के आ जाने से अपना उग्र प्रभाव खो बैठती हैं। वृक्ष वातावरण के ताप को सामान्य बनाये रखते हैं। वृक्षों की सहायता से हमारे ग्रामीण पशुओं के चारे का प्रबन्ध करते हैं। वृक्षों द्वारा पथिक को शीतल छाया और सुगन्धि प्राप्त होती है। वृक्षों की पत्तियाँ फल-फूल आदि सभी किसी न किसी रूप में हमारे जीवन के लिए उपयोगी हैं। वृक्षों की पत्तियाँ तथा फूलादि सड़कर खाद बनते हैं जिससे हमारे देश में खाद की समस्या का समाधान होता है। वृक्षों की सहायता से ही रेल के स्लीपर, रेल के डिब्बे, केबिन आदि बनाये जाते हैं। वृक्षों से तारपीन का तेल, विरोजा और विभिन्न प्रकार की औषधियाँ प्राप्त होती हैं। बढ़ईगीरी के लिए पूरा कच्चा माल वृक्षों से ही प्राप्त होता है। वृक्षों के फल हमारे शरीर के लवणों और विटामिनों की कमी दूर करते हैं। जैसे आम, अमरूद, अंगूर, सेव एवं नाशपाती आदि। विभिन्न प्रकार के वृक्ष और पौधे केवल सुन्दरता के कारण लगाये जाते हैं। किसी वृक्ष की पत्ती गोल होती है, तो किसी का तना काँटेदार। किसी वृक्ष का फूल हरा, पीला, लाल है तो किसी वृक्ष का फूल अपनी मस्त सुगन्ध बिखेरता रहता है। इतना ही नहीं, देश के नैतिक, आर्थिक और धार्मिक उत्थान में भी वृक्षों की उपयोगिता सराहनीय है। वृक्षों के पुष्प देवी-देवताओं की अर्चना हेतु और उसकी सुगन्ध मानव जीवन को आनन्दमय और मधुर बनाती है। मन को शान्त करने वाली शीतल हरियाली भी वृक्षों से प्राप्त होती है। वृक्षों से चन्दन, शीशम, सागौन, आबनूस, तारपीन, मिलने के साथ-साथ, वनों में भयंकर जीव जन्तु भी पाये जाते हैं जिससे दूर-दूर देशों से लोग इन्हें देखने आते हैं, अतः वनों का उपयोग हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में देखने को मिलता है।

वृक्षों की उपयोगिता को देखते हुए राष्ट्र के उत्थान में योगदान करने हेतु हमारा यह परम पुनीत नैतिक कर्त्तव्य है कि देश की नष्ट होती हुई इस वन सम्पदा की रक्षा करें और जगह-जगह उपयोगी वृक्षों का रोपण करें। आज हमारे देश में उत्साह की कमी नहीं है। अभाव है सही मार्ग दर्शकों का जो हमें वृक्षों के प्रत्यारोपण के सम्बन्ध में जानकारी दे सकें। वृक्ष किस स्थान पर लगाए जायँ उनमें कहाँ कितनी खाद, जल तथा जमीन प्रयोग की जाये इन सभी बातों की जानकारी दिलाना आवश्यक है। अधिक सिंचाई चाहने वाले

वृक्ष किसी कुएँ, नहर आदि के किनारे लगाये जाने चाहिए। वृक्षों के मध्य पर्याप्त फासला होना चाहिए। कुछ वृक्ष जिनके फल उपयोगी होते हैं, जमीन के विस्तृत भाग में बगीचे के रूप में लगाए जाने चाहिए। इन वृक्षों के मध्य अधिक फासला होना चाहिए जिससे प्रत्येक वृक्ष को आवश्यक पोषण तत्व तथा स्थान आसानी से प्राप्त हो सके। कुछ वृक्ष केवल सुन्दरता और सजावट के लिए लगाये जाते हैं। ऐसे वृक्ष घरों की चार-दीवारी में, पार्क अथवा किसी सार्वजनिक स्थान पर लगाए जाने चाहिए। बंजर भूमि को वृक्षारोपण द्वारा ही हम उपजाऊ बना सकते हैं। ऐसे वृक्ष जिनका उपयोग ईंधन के लिए किया जाता है, ऐसी ही भूमि में उगाये जाते हैं। इन वृक्षों की लकड़ी को ईंधन के रूप में जलाकर कोयले, उपले आदि की बचत की जा सकती है। उपले न बनाकर उस गोबर से महत्त्वपूर्ण खाद तैयार की जा सकती है जिससे भूमि उपजाऊ बनती है। ऐसे वृक्ष जिनकी छाया सघन और शीतल होती है, पथिकों के लाभार्थ सड़कों के किनारे, नहर के किनारे तथा रेलवे लाइन के किनारे लगाये जाने चाहिए। वे वृक्ष जिनकी सहायता से वायुमण्डल शुद्ध होता है, विद्यालयों, चिकित्सालयों और कार्यालयों के समीप लगाये जाने चाहिए। कँटीली झाड़ियाँ आदि के वृक्ष भूमि-क्षरण और भूमि-कटाव को रोकने में सहायता करते हैं। अतः इन वृक्षों को नदी के किनारे पर या रेतीले स्थानों पर लगाना चाहिए।

पौधा लगाने के लिए चार फीट गहरा गड्ढा खोदकर उसमें पौधे को आधा खाद से भरकर रोप देते हैं। तत्पश्चात् मिट्टी से गड्ढा बन्द कर देना चाहिए। बरसात आने के पूर्व ही पौधों के चारों ओर भूमि को छः इंच ऊँचा रखना चाहिए जिससे कि बरसात होने पर भूमि समान तल पर आ सके। जुलाई मास से, अक्टूबर के मध्य पौधों का रोपण कर देना चाहिए तत्पश्चात् पौधों को दीमक तथा कीटाणु से बचाना चाहिए। पौधों की रोपाई करके उसमें पानी लगाना आवश्यक है। जिस स्थान पर वृक्षारोपण किया जाय उस स्थान पर सिंचाई का अच्छा प्रबन्ध होना चाहिए, पौधों को उचित पोषक तत्व प्राप्त हो सके इसके लिए आवश्यक है कि पौधों के मध्य फासला उचित एवं निर्धारित होना चाहिए।

तत्पश्चात् पौधों की निराई व उसके चारों ओर की घास आदि साफ करते रहते हुए, रासायनिक खाद देनी चाहिए जिससे वृक्ष उचित ढंग से विकसित

हो सकें। वृक्षारोपण करने हेतु लिया गया पौधा पूर्णतः शुद्ध, स्वस्थ और कीटाणु रहित होना चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि सरकार द्वारा वृक्षारोपण में सहायता देने के लिए नियुक्त कार्यालय से ही पौधा प्राप्त करें। अनेक प्रकार की पौधशालाओं से भी वृक्षारोपण हेतु पौधे प्राप्त किये जा सकते हैं। विभिन्न प्रकार के देशी तथा विदेशी वृक्ष पौधशालाओं से प्राप्त कर लेने चाहिए।

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि राष्ट्र के उत्थान और उसकी आर्थिक, नैतिक और सामाजिक उन्नति के लिए वृक्षारोपण बहुत आवश्यक है। इसके लिए हमारे देश की भूतपूर्व प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी के सुपुत्र श्री संजय गाँधी ने देश के प्रत्येक नागरिक से अपील की थी कि वे देश की प्रगति के लिए प्रति वर्ष कम से कम एक वृक्ष लगायें और उसकी देखभाल करें। इस सम्बन्ध में शिक्षा संस्थाओं द्वारा प्रत्येक अध्यापक से एक-एक वृक्ष और प्रत्येक कक्षा के विद्यार्थियों से एक-एक वृक्ष लगाने की अपील की गई थी। इस अपील के फलस्वरूप देश में सर्वत्र लाखों वृक्ष लगाये गये हैं और वृक्षारोपण के महत्त्व को समझते हुए लोगों ने इस कार्यक्रम को क्रियात्मक रूप दिया है; क्योंकि प्राचीन शास्त्रों में कहा गया है कि एक वृक्ष को लगाना सौ यज्ञ करने के समान होता है। हर्ष की बात यह है कि इस कार्यक्रम में यहाँ के नागरिकों ने बड़े उत्साह से भाग लिया है और भारत वसुन्धरा की हरीतिमा का पुनः उत्जान किया है।

71

मंगल ग्रह एक खुलता हुआ रहस्य

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- मानव का अन्तरिक्ष में प्रवेश

- **मानव की चन्द्रतल की खोज**
- **चन्द्रतल की बनावट**
- **चन्द्रतल पर मानव-जीवन**
- **चन्द्रमा का वायुमण्डल**
- **चन्द्रतल की खोज के शुभ परिणाम**
- **चन्द्रमा पर पहुँचने के लिए भावी योजना**
- **उपसंहार**

मानव एक जिज्ञासु प्राणी है। उसकी जिज्ञासा दिन प्रतिदिन बढ़ती रहती है। वह परम्परागत वातावरण में रहने से ऊबने लगता है। आज का मानव एक नये वातावरण में जाने को उत्सुक बना रहता है, यही उत्सुकता उसका विकास करती है। इसी उत्सुकता ने उसका ध्यान पृथ्वी से उठाकर अंतरिक्ष की ओर मोड़ा है। वह दिन-प्रतिदिन पृथ्वी की परतों की उधेड़-बुन में लगा रहा और फलतः विभिन्न तथ्यों की खोज कर ली है तथा अपने जीवन को सुविधाजनक बनाया है, लेकिन उसका मस्तिष्क आराम करने का अभ्यस्त नहीं है, उसने ऊपर को दृष्टि की तो उसे आकाश में कुछ नया-सा दिखाई देने लगा, उसे खोजने की जिज्ञासा हुई। यह जिज्ञासा उसे अंतरिक्ष की खोज-बीन करने के लिए उकसाती रही है। मानव ने प्रकृति के वास्तविक रहस्यों को खोज निकाला है। इसी उत्सुकता ने इन्सान को चन्द्रमा के स्वरूप को निकट से देखने के लिए आकर्षित किया है। मंगल ग्रह पर उसका ध्यान जाना आर्यभट्ट का अंतरिक्ष में प्रवेश आदि बातें उसकी जिज्ञासा तथा लगन की द्योतक हैं।

4 अक्टूबर 1957 की स्वर्णिम बेला में मानव-जीवन में एक नये युग का सूत्रपात हुआ है। इस नये युग को अन्तरिक्ष की संज्ञा दे दी गयी। रूस के 'यूरीगागरिन' को अन्तरिक्ष की प्रथम यात्रा करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। रूस ने अपना प्रथम स्पुतनिक छोड़ा। 12 अप्रैल 1962 को मानव ने अन्तरिक्ष में पहली उछाल लगायी। रूस का स्पुतनिक चन्द्रमा के चक्कर लगाकर ही वापिस लौट आया उसे चन्द्रतल पर पहुँचने का अवसर न मिल सका, लेकिन इस असफलता ने मानव को एक होड़ में रख दिया। जिससे प्रभावित होकर अमेरिका ने अपोलो-10 को चन्द्रतल पर उतारा। इसके पश्चात् 20 जुलाई

1969 को अपोलो-11 चन्द्रतल पर उतारा गया। जिसने चन्द्रमा के सभी रहस्यों को खोलकर कवियों की उपमा को फीका कर दिया। जिस चन्द्रमा को सुन्दरता का प्रतीक माना जाता रहा है उसके वक्षस्थल में गहरी खाइयों और विशाल पर्वतों को पाया। वहाँ से अनेकों नमूने लाए गये जिनके आधार पर मानव-जीवन में सम्भावनाएँ लगायी गयीं' मानव पृथ्वी की तरह चन्द्रमा पर भी निवास-स्थान बनाने के लिए प्रयत्नशील हो गया। चन्द्रतल पर रहने के लिए नयी-नयी योजनाओं का सूत्रपात होने लगा। सर्वप्रथम 1971 में अमेरिका के मेरिनर-9 ने मंगलग्रह की परिक्रमा लगाई। सोवियत रूस भी मंगलग्रह पर पहुँचने के लिए प्रयत्न करता रहा, उसके तीन यानों ने मंगल-ग्रह की परिक्रमा की थी। अमेरिका के अथक परिश्रम के परिणामस्वरूप 20 जुलाई 1976 को वाईकिंग-1 भेजा तथा 4 सितम्बर 1976 को वाईकिंग-2 को मंगलग्रह पर भेजा इन यानों द्वारा मानव ने सर्वप्रथम मंगल पर पदार्पण किया। ये तिथियाँ विज्ञान के इतिहास में सुनहरे अंकों में अंकित हैं।

20 अगस्त 1975 को अमेरिकी वैज्ञानिकों ने मंगल ग्रह की जानकारी हेतु वाईकिंग-1 को फ्लोरिडा में अन्तरिक्ष केन्द्र से भेजा। इस यान ने 11 मास बाद 20 जुलाई 1976 को मंगलग्रह पर उतरकर और जून के अन्त में मंगल की कक्षा में प्रवेश करके मंगल ग्रह की छानबीन आरम्भ कर दी। वाइकिंग-1 ने मंगलग्रह के धरातल के अनेक चित्र भेजे। इस यान द्वारा प्रेषित किए गए चित्रों का पेसाडीना की "जैट प्रोपल्यान" प्रयोगशाला में विश्लेषण किया गया। इस यान को 4 जुलाई 1976 को मंगल पर उतारना निश्चिंत हुआ। लेकिन इसके द्वारा भेजे गये चित्रों के विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि इसके उतरने के लिए निर्धारित स्थान ऊबड़-खाबड़ तथा असुरक्षित है। इस कारण इसे 4 जुलाई के स्थान पर यह 20 जुलाई 1976 से मंगल की खोज में रत हो गया। यह अमेरिका के लिए बड़ी उपलब्धि था। विश्व भर में अमेरिका की इस उपलब्धि की भूरि-भूरि प्रशंसा होने लगी। भारतीय समयानुसार 5 बजकर 42 मिनट पर मंगल की लालिमा का तिरोभाव हुआ, इस दिन ने इसका सारा रहस्य खोलकर प्रस्तुत किया।

वाईकिंग-1 लैंडर मंगलग्रह के जिस स्थान पर उतरा वह एक मनमोहक स्थान था। उस स्थान का धरातल छोटे-छोटे पत्थरों से बना हुआ था। इसकी

तस्वीर पृथ्वी पर भेजी गयी यह स्थान (सुनहरा मैदान) (क्रिसे प्लेस निशिया) था। जब वाईकिंग 300° अंश ऊपर देखा उसे बड़े ही आश्चर्यजनक दृश्य दिखाई दिये इनके चित्र भी अवतरित किए गए। इन सभी दृश्यों को टेलीविजन पर देखा गया। मंगलग्रह की लालिमा उसके धरातल पर पाये जाने वाले लाल पत्थरों के कारण है, इन लाल पत्थरों से वहाँ ऑक्सीजन और लोहे की उपस्थिति का आभास हुआ। ये लाल पत्थर लोहे पर ऑक्सीजन और नमी की उपस्थिति के कारण जंग लगे हुए लोहे के टुकड़े मात्र हैं। यहाँ का धरातल रंग बिरंगा है। इस पर हरे, नीले धब्बे दिखाई देते हैं जिनसे यहाँ ताँबा होने का अनुमान लगाया जाता है। यहाँ के आकाश का रंग नीला न होकर गुलाबी है। मंगल ग्रह पर मानव के नीले आकाश की कल्पना चूर-चूर हो गयी है। यहाँ पर चन्द्रमा की तरह बडे-बड़े गर्त, बड़ी-बड़ी चट्टानें तथा खाइयाँ देखने में आयी हैं। इस प्रकार मंगल की भौतिक बनावट पृथ्वी जैसी ही कही जा सकती है।

मंगलग्रह पर पहुँचने का मुख्य कारण यहाँ पर मानव जीवन की सम्भावना का पता लगाना था लेकिन यहाँ से भेजे गए चित्रों से मानव तथा जीवों का कोई आभास नहीं मिल पा रहा है, न इनमें कहीं वनस्पति के ही दर्शन मिल रहे थे। यहाँ का मिट्टी की प्रयोगशालाओं में विश्लेषण किया गया है, केलीफोर्निया में किए गए प्रयोगों से ज्ञात हुआ कि मंगल से लाई गई मिट्टी में ऑक्सीजन पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है। जेट प्रोपल्सन प्रयोगशाला में किए गए विश्लेषण ने इसमें कार्बन की उपस्थिति का आभास कराया है जिससे यहाँ जैविकी कारण की सम्भावना लगाई गई। डा० हेलोल्ड ने बताया कि मंगल ग्रह पर कोई ऐसी रासायनिक प्रक्रिया आवश्यक रूप से होती है जो ऑक्सीजन अत्यधिक मात्रा में देती है, डा० हेलोल्ड जैविका परीक्षण दल के अध्यक्ष थे। मंगल की लाल भूमि को वैज्ञानिकों ने रंगीन मरुभूमि कहा। इसको देखकर ऐसा लगता था जैसे यहाँ किसी ने लाल रंग बिखेर दिया है या लोहे के ऑक्साइड की एक पर्त चढ़ा दी है। डा० प्रिस्टले जो कि अकार्बनिक रसायन दल के नेता थे। यहाँ की मिट्टी के विश्लेषणों के आधार पर बताया कि मंगल पर 15% से 30% प्रतिशत सिलिकन, 10% से 20% तक लोहा, 3% से 8% तक कैल्शियम, 2% से 4% तक टिटेनियम, 7% से कम मैग्नी-

शियम और 5% से कम निकल उपस्थित है। मिट्टी के इस विश्लेषण ने वहाँ पर नमी की उपस्थिति की जानकारी दी जिसके आधार पर कहा जा सकता है कि मंगल पर जल भी उपस्थित है। इन प्रयोगों के आधार पर मंगल पर किसी ऐसे तत्त्व की उपस्थिति का अनुमान है जो यहाँ की उपज क्षमता को नष्ट कर देता है। इन सूचनाओं ने पृथ्वी और मंगल को समरूपता के क्षेत्र में खड़ा कर दिया और यहाँ पर मानव के होने की सम्भावना प्रदान कर दी। इसी खोज के लिए अभी जीव-विज्ञान सम्बन्धी विश्लेषण प्रक्रिया का क्रम टूटा नहीं है।

डॉ० त्रेबलोविव का कहना है कि वाइकिंग, मेरिनर के क्रम को आगे बढ़ाने में अति महत्त्वपूर्ण है। यह दो अलग होते हुए भी एक ही क्रम में कहे जा सकते हैं। यह एक दूसरे के परिपूरक हैं। इसके दो भाग हैं 'लैंडर' तथा 'ओरबिटर'। 'लैंडर' यहाँ की मिट्टी का विश्लेषण करता है जो इनमें उपस्थित कार्बनिक और अकार्बनिक यौगिकों को स्पष्ट करते हैं और जैविक क्रियाओं को समझाते हैं। यह मंगल के धरातल के अति सूक्ष्म चित्रों को भेजता है। 'ओरबिटर' लैंडर के द्वारा भेजे गए चित्रों को ग्रहण करता है, स्पेक्ट्रम का मापन करता है जोकि मंगल के रहस्य का उद्गार करते हैं यह पृथ्वी और लैंडर के बीच एक विसरण स्टेशन की भाँति महत्त्वपूर्ण सेवा करता है। लैंडर के चित्र और संकेत 'ओरबिटर' पर परिवर्तित होते हैं जोकि पृथ्वी पर गुजरते हैं। 'ओरबिटर' कक्ष हमेशा लैंड़र से जुड़ी रहती है। इसका अर्थ है लैंडर की प्रत्येक सूचना ठीक उसी समय 'ओरबिटर' पर गुजरती है। लैडर पर पृथ्वी को सूचित करता है लेकिन इसकी सूचना दर अत्यल्प है। 'ओरबिटर' और लैंडर के मस्तिक का कार्य उन पर लगे हुए 'कम्प्यूटर' करते हैं। लैडर दो 'कम्प्यूटर' रखता है, प्रत्येक की क्षमता 8000 शब्द याद रखने की है। प्रत्येक शब्द बाईकिंग के लिए भिन्न आदेश अथवा निर्देश का कार्य करता है। इन्हीं शब्दों की सूचनाओं के आधार पर आगे बढ़ जाता है तथा विभिन्न तत्वों की जानकारी पाने में समर्थ होता है। केवल एक बाईकिंग कम्प्यूटर कार्य करता है। जबकि दूसरा शान्त रूप से आराम करता है। 'सेम्पिल आय' अकेली गतिशील होकर कई हजार शब्दों के लिए पर्याप्त होती है, केवल 5000 शब्द कार्य करने की दशा में होते हैं। जब ये मंगल के धरातल का अवरोहण करता

है । तब वाईकिंग मिशन के नियन्त्रक एक नए विचार का निर्माण करते हैं जिसे 'प्राथमिक नमूना' कहते हैं जो कि प्रत्येक सात दिन के आदेशों, सैकड़ों से लेकर हजारों शब्दों के तुलनात्मक अध्ययन पर पृथ्वी द्वारा मंगल पर भेजा जाता है ।

लेकिन उस समय पृथ्वी से यथार्थ में कुछ भी नियन्त्रित नहीं हो सकता जब लैंडर अपनी कक्षा में नहीं रहता है । लैंडर अवरोहण के क्रम में, एक जटिल नियन्त्रण की समस्या होती है, अन्यथा, वह प्रकाश की गति से नियन्त्रित रहता है । पृथ्वी से भेजा गया आदेश 20 मिनट में लैंडर तक पहुँचता है । अवरोहित लैंडिंग क्रम के कक्षा से हटने को नियन्त्रण करने का केवल एक ही तरीका है 'स्वगति' । लैंडर स्वयं ही अपने निम्न झुकाव पर हो जाता है । वास्तविकता यह है कि इसका कम्प्यूटर एक 'यादगार' का भण्डार है । इसके निर्देशन लैंडर को कार्य कराते हैं और लगातार 60 दिन तक पृथ्वी के साथ सम्बन्ध न रहने पर भी प्रयोग करते रहते हैं ।

डॉ० व्रेबलोबिव के अनुसार मंगल और मंडल संयोजन 25 नवम्बर 1976 को आ गया जब सूर्य, पृथ्वी और रेड प्लेनेट के बीच हो गया था । बाईकिंग को 'स्पेसक्राफ्ट' से 8 नवम्बर से जब तक (लगभग 25 दिसम्बर) जोड़ा तब तक आइस्टीन का 'आपेक्षिक सिद्धान्त' प्रयोगात्मक रूप से परीक्षण कर लिया जाय, इससे गणना की गई कि सूर्य की रेडियो तरंग झुक जाएगी वाईकिंग से पृथ्वी पर आकर सूचना देने में । यदि सभी कार्य नियमित ढंग से पूर्ण होते हैं तो यह 'तीन माह' लेगा, अगला वाईकिंग 1976 में शीघ्र ही छोड़ दिया गया । स्पेस क्राफ्ट का आनुपातिक जीवन लगभग 90 दिन था लेकिन मेरीनर-9 जो कि लगभग समान जीवन की कल्पना करके छोड़ा गया । उसने पूरा एक वर्ष लिया घटनापूर्ण तरीकों से यह असफल हो गया, क्योंकि यह सोलर के सम्पर्क में आने से सूर्य की विद्युत शक्ति स्रोत से गैसीय अवस्था में आ गया । वाईकिंग लैंडर के शक्ति स्रोत सूर्य के प्रकाश से स्वतन्त्र थे । यह 'रेडियो ऐक्टिव' तत्व प्लेटीनम के नष्ट होने पर भी नियन्त्रित रहा ।

वाईकिंग की सूचनाओं के आधार पर यहाँ प्रातःकाल का ताप 0°F से 122°F तक पाया गया । यहाँ दोपहर का ताप 22°F से कम रहता है ।

मंगल पर वायुदाब 7·70 मिलीवार है। यहाँ पर चलने वाली हवाओं की गति 15 मील प्रति घण्टा है। वायुमण्डल में नाइट्रोजन की मात्रा पृथ्वी की अपेक्षा काफी कम है, पृथ्वी पर 78% नाइट्रोजन पायी जाती है जबकि मंगल पर यह केवल 3% है। वायुमण्डल के विश्लेषण के आधार पर यहाँ का वातावरण भी घना था। यहाँ भी नाइट्रोजन पृथ्वी की तरह थी जिस कारण से मंगल की सतह पर पानी द्रव अवस्था में रहा होगा। क्योंकि 'ओरबिटर' के चित्रों में पाये जाने वाली रेखाओं से नहरों की आकृति आभासित होती है। यहाँ पर गहरा कोहरा होना भी डा० मैकइलोरी के अनुसार पर्याप्त मात्रा में पानी होने की सम्भावना अभिव्यक्त करता है।

वाईकिंग-1 द्वारा प्रेषित चित्रों में कुछ शिलाओं के चित्र भी हैं जो बड़े ही विचित्र हैं, यहाँ पर ज्वालामुखी पर्वत भी हैं जो कि पृथ्वी के ज्वालामुखियों से बड़े हैं, इनमें ओलम्पिक मॉन्स सबसे विशाल है जो कि माउन्ट ऐवरेस्ट से लगभग तीन गुना ऊँचा है। अनुमान है कि यह 80 किलोमीटर व्यास तथा 24 किमी० ऊँचाई का जो कि 20 करोड़ वर्ष पहले बनना प्रारम्भ हो गया था। मंगल पर एक जूते के आकार की शिला पायी गयी थी, इस पर रोमन अक्षर में "बी" "जी" तथा 2 का अंक लिखा है जिसका बड़ा ही रोचक अर्थ निकाला गया। इसके द्वारा मंगलवासी हमसे कह रहे हैं कि विटामिन 'बी' और विटामिन 'जी' दिन में दो बार खाइए। यहाँ पर पायी गयी खाइयों ने आभास कराया कि यहाँ उल्कापात होता है।

वाईकिंग-1 ने मंगलग्रह के रहस्यों का पर्दाफाश कर डाला है। लैंडर के चित्रों के विश्लेषण ने बताया यहाँ के धरातल पर नारंगी-लाल रेगिस्तान है जो चट्टानों से पटा हुआ है। यहाँ बड़ी-बड़ी नदियाँ हैं। यहाँ की चट्टानें कई रंगों की हैं। मंगल पर ऑक्सीजन की पर्याप्त मात्रा तथा अन्य जीवन सम्बन्धी आवश्यक तत्त्व, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन तथा पानी के होने के कारण यहाँ मानव के होने की सूचना मिली। यहाँ पर बड़ी-बड़ी लाइनों तथा खड्डों से नदी होने का अनुमान है।

वाईकिंग-1 की सफलता ने वाईकिंग-2 को जन्म दिया। 4 सितम्बर 1976 को अमेरिका ने मंगल पर जीवन और भू-विज्ञान सम्बन्धी जानकारी प्राप्त करने के लिए मंगल के "यूटोपिया" नामक स्थान पर उतारा। यह

स्थान धूल से भरा पड़ा है। यहाँ पर कुहरा और बर्फ होने के कारण वैज्ञानिकों के विचार से मानव जीवन की सम्भावना ने जन्म ले लिया है। प्रारम्भ में वाईकिंग-2 का रेडियो सम्पर्क टूट जाने से सूचना नहीं प्राप्त हो सकी थी लेकिन 45 मिनट के बाद यह सम्बन्ध स्थापित हुआ आरबिटर से सम्बन्ध जुड़ गया। इसके बाद ग्रह के धरातल के लैंडर ने रंगीन चित्र दिए जिनमें मंगल के धरातल के लाल रंग होने तथा सिंदूरी रंग का आकाश होने की सूचना प्राप्त हुई ?

भारतवर्ष भी अब तक विज्ञान के क्षेत्र में चरण बढ़ा चुका है। वाईकिंग मिशन के साथ काम करने वाले वैज्ञानिकों डा० नवीन जयरथ, प्रेमकुमार, डा० नरेन्द्र द्विवेदी के नाम सदैव चिर स्मरणीय रहेंगे इन्होंने वाईकिंग मिशन में कार्य करके भारत के गौरव को बढ़ाया है। डा० जयरथ आई० टी० आई० दिल्ली के स्नातक हैं तथा इन्होंने मास्टर्स डिग्री पैसाडीना कैलटैक से प्राप्त की है। इनको अमेरिका द्वारा "असाधारण उपलब्धि पुरस्कार" भी मिल चुका है डा० द्विवेदी अपोलो मिशन में भी कार्य कर चुके हैं। प्रेमकुमार अमरीकी अंतरिक्ष शटल पर कार्य कर रहे हैं। इस शटल ने 8 फरवरी 1977 में उड़ान भरी और रोकेट की तरह अन्तरिक्ष में जाकर पृथ्वी पर वापिस आ गयी।

वाईकिंग और अपोलो की सफलता से ऐसा प्रतीत होने लगा है कि वैज्ञानिकों ने अन्तरिक्ष को क्रीड़ा-स्थल बना लिया है। आज सभी राष्ट्र अन्तरिक्ष की ओर आकर्षित हो रहे हैं। उनका प्रयत्न हो रहा है कि वह वहाँ पर घर बनाकर रहने लगे। वाईकिंग-1 तथा वाईकिंग-2 ने मंगल पर मानव जीवन की सम्भावना को व्यक्त कर दिया है। वर्तमान समय में सभी व्यक्तियों का ध्यान इसकी ओर आकर्षित हो गया है। विज्ञान को आज एक महान् उपलब्धि प्राप्त हो गई है।

72
भारत विश्व की नजरों में

विचार-तालिका

- प्रस्तावना

- **भारत का गौरवशाली प्राचीन रूप**
- **भारत का वृहद दृष्टिकोण**
- **विभिन्न राष्ट्रों की दृष्टि में**
- **उपसंहार**

"कोई बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी
सदियों रहा है दुश्मन दौरे जहाँ हमारा।"

किसी शायर ने ठीक ही कहा है कि आज यूनान, मिश्र, रोम सभी समाप्त हो गये हैं। वह प्राचीन वैभव और प्रशंसा जो इन देशों को प्राप्त थी, समाप्त हो चुकी है। इनका भूत कितना अच्छा रहा हो पर वे भारत के प्राचीन एवं अर्वाचीन वैभव, संस्कृति और परम्पराओं के समक्ष टिक नहीं सकते। भारत के तो "खण्डहर बता रहे हैं कि इमारत बुलन्द थी।" जब विश्व के मानव जंगली जीवन व्यतीत करते थे उस समय भारत विश्व को चकाचौंध करने वाली अलौकिक सभ्यता एवं संस्कृति के दौर से गुजर चुका था। उस अनुपम अजेय संस्कृति पर सभी की लोलुपता पूर्ण नजरें रहीं। प्रारम्भ से ही विश्व के विभिन्न राष्ट्रों ने जानना चाहा कि भारत के गर्त में क्या छिपा है। विदेशी राष्ट्रों ने सहस्त्रों वर्षों तक भारत भूमि पर अपनी बुरी नजर डाली, परन्तु भारत की ऐतिहासिक सभ्यता अपनी परम्पराओं को लिए हुए अक्षुण्ण बनी रही। भारत के ऋषि, मुनियों, दार्शनिक एवं युगनिर्माताओं ने भारत माता के गौरव को क्षीण न होने दिया। उनका उद्देश्य विश्व में मानवता का प्रचार प्रसार करना रहा। भारत ने जगत गुरु का पद प्राप्त किया था, दूर-दूर तक विश्व के कोनों में अद्‌भुत सभ्यता का प्रचार भारत के मनीषियों ने किया। प्राचीन मनीषी विश्व हेतु प्रकाश स्तम्भ बने रहे और सबको राह दिखाते रहे।

भारत का मूल उद्देश्य ही अन्धकार से प्रकाश की ओर बढ़ना रहा है—

"तमसो मा ज्योतिर्गमय
असतो मा सद्‌गमय"

हम असत्य से सत्य की ओर बढ़ें तभी प्रकाश हमें प्राप्त होता है।

सृष्टि के आदि से ही इस भूमि ने ऐसे चिन्तकों, विचारकों एवं कर्णधारों को जन्म दिया जिन्होंने असख्य बर्बर जातियों को ज्ञान प्रदान किया। उनका उद्देश्य सबका भला करना था। वसुधा को उन्होंने कुटुम्ब माना था।

"वसुधैव कुटुम्बकम्"

सब को सुखी देखना ही हमारा लक्ष्य था—

"सर्वेभवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुख भाग् भवेत् ।"

हमारे प्राचीन दार्शनिकों और महामानवों ने फल में आस्था नहीं रखी। केवल कर्म को प्रधान समझकर वे देशों का अन्धकार दूर करते रहे—

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फषुष कदाचन्"

दूसरे के भले के लिए, कल्याण के लिए भारत का अस्तित्व रहा है—

"दर्द दिल के वास्ते पैदा किया इन्सान को
वरना ताअत के लिए कुछ कम न थे करवे बयां।"

आज विश्व जिस कगार पर खड़ा हुआ है उसका निर्माण भारत के ही मनीषियों ने सहस्रों वर्ष पूर्व किया। जंगलों में भटकने वाले प्राणियों को सद्-मार्ग पर भारत ने ही चलना सिखाया—

"लोग कहते हैं बदलता है जमाना
पर मर्द वो हैं जो जमाने को बदलते हैं।"

किसी ने ठीक कहा है—

"धन्यं हि भारतवर्षम्,
धनया भारत संस्कृति।
भारतीयाः जनाः धन्याः;
धन्यास्मांकं परम्परा।"

आदि कवि वाल्मीकि तो क्रोञ्च पक्षी के जोड़े में से एक को अलग होते देखकर अकस्मात् कह उठे—

"मा निषादप्रतिष्ठाम् त्वमगमः शाश्वती समाः।
यत् क्रोञ्च मिथुना देक मवधीः काम मोहितम्।"

भारतवर्ष सब प्राणियों के हित में ही लगा रहा है परजन हिताय एवं परजन सुखाय की भावना लेकर ही यहाँ के मनीषी एवं महामानव जीवित रहे हैं।

भारतवर्ष से ही बुद्धधर्म जापान, चीन व तिब्बत में फैला। सम्राट अशोक ने अपने पुत्र एवं पुत्री को बौद्धधर्म फैलाने के लिए चीन भेजा था।

जनसंख्या के क्षेत्र में चीन के पश्चात् भारत ही अग्रणी है। भारत का क्षेत्रफल भी सबसे अधिक है। यहाँ चरित्र को प्रधानता प्रदान की जाती है। आदर्श यहाँ सर्वोपरि है। राजा राम का आदर्श यहाँ सर्वोपरि माना जाता है। राम राज्य यहाँ का आदर्श राज्य रहा है।

अपने पड़ोसी की सहायता करना यहाँ का आदर्श रहा है। बंगला देश को पूरी सहायता भारत ने प्रदान की जिसको विश्व के सभी देश देखते रह गये।

अन्याय को हम सहन नहीं कर सकते। जब पाकिस्तान ने बिना कारण हमारे देश की भूमि हड़पनी चाही तो उसे भी हमने पाठ पढ़ा दिया कि अपनी भूमि की सुरक्षा कैसे की जाती है।

भारत किसी गुट में नहीं है। निर्गुट देशों का यह सिरमौर है। किसी की बुराई से भारत को सरोकार नहीं, न तो भारत कम्युनिस्ट रूस का हिमायती और न ही पूँजीवादी अमेरिका के साथ है।

भारत की नीति सदस्यता की नीति रही है। यही कारण है कि आज भी विश्व में भारत अपना गरिमामय स्थान बनाये हुए है।

अभी हाल में हुई भारत चुनाव सम्बन्धी गतिविधियों ने विश्व को आश्चर्य में डाल दिया है। सबको बहुत आश्चर्य है कि किस प्रकार शान्तिपूर्ण चुनाव द्वारा देश की सत्ता का हस्तान्तरण होता है।

भारत ने कभी दूसरे देशों पर आक्रमण नहीं किया। उसने यह कभी नहीं चाहा कि पड़ोसी की भूमि हड़प ली जाये। प्राचीन काल से आज तक कभी भी इस देश के वीरों ने अपनी सीमा का अतिक्रमण नहीं किया।

हमारे देश का विज्ञान ऋग्वेद काल से ही सर्वोपरि रहा है। यहाँ इस प्रकार के शस्त्र थे जो एक बाल के सहस्रों टुकड़े सुन्दर ढंग से कर देते थे। अँगूठी के छल्ले में से कपड़े का थान गुजर सकता था। इससे ज्ञान होता है कि बहुत मूल्यवान उत्तम मलमल हमारे देश में निर्मित होती रही है।

स्वामी विवेकानन्द रामतीर्थ जैसे प्रकाण्ड मनीषी इस भूमि पर जन्मे जिन्होंने विदेशों में जाकर भारतीय संस्कृति को बढ़ाया और अनपढ़ एवं अज्ञानी जनता को ज्ञान का मार्ग प्रशस्त किया।

परिवर्तन का चक्र घूमता रहता है। सहस्रों वर्षों की पराधीनता इस देश को सहन करती पड़ी, परन्तु अपने धर्म, आदर्श एवं प्राचीन परम्पराओं पर

इसने आँच नहीं आने दी। इस भारत जननी ने रण बाँकुरों को जन्म देकर धरती को स्वतन्त्र कराया। सुभाषचन्द्र बोस जैसे वीरों ने अपनी जन्म भूमि को स्वतन्त्र कराने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी।

भारत के इतिहास में सन् 1947 सदैव स्वर्णाक्षरों में लिखा जायेगा क्योंकि इस पुण्य बेला में भारत ने स्वतन्त्रता के वातावरण में साँस ली। महात्मा गाँधी, सुभाषचन्द्र बोस, सरदार पटेल, मदनमोहन मालवीय एवं बालगंगाधर तिलक जैसे प्रातः स्मरणीय महापुरुषों के भागीरथी तपस्या एवं प्रयासों से ही हमें यह स्वतन्त्रता प्राप्त हुई है। जब से भारत स्वतन्त्र हुआ है तब से विभिन्न देशों ने अपनी-अपनी दृष्टि से भारत को देखने का प्रयास किया है।

एशिया तथा अफ्रीका के बहुत से राष्ट्र हैं जो अपनी दृष्टि भारत पर केन्द्रित किये हुए हैं। भारत ने स्वयं अनेक परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़े हुए राष्ट्रों को स्वतन्त्र कराया है। भारत के प्रयासों के फलस्वरूप आज एशिया व अफ्रीका का बहुत बड़ा भाग स्वतन्त्र है। भारत ने उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवाद को नहीं अपनाया है, अतः स्वतन्त्र हुए राष्ट्र भारत को अपना संरक्षक मानते हैं। चीन भारत को एशिया में अपना सबसे बड़ा विरोधी मानता है। चीन को यह मालूम है कि भारत के पास प्राकृतिक देन बहुत है। भारत की भूमि शस्य श्यामला है। वह दिन भी आ सकता है जब भारत एशिया में सर्वोच्च शिखर पर पहुँचे। अतः चीन किसी न किसी प्रकार भारत को बढ़ने से रोके रहता है। चीन नहीं चाहता कि भारत उन्नति करे। वह भारत से द्वेष रखता है। चीन भारत के महान् स्वरूप से परिचित है। अतः जलन रखते हुए 1962 में चीन ने भारत पर अचानक हमला किया था। चीन नहीं चाहता कि भारत उन्नति करे। वह भारत की उन्नति में विराम चिन्ह लगाना चाहता है। भूतपूर्व प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने बहुत प्रयास इस ओर किया कि चीन एवं भारत में मैत्री भाव स्थापित रहे।

संसार में अमेरिका का गौरवपूर्ण स्थान है। भारत की उन्नति में अमेरिका बहुत सहायक सिद्ध हुआ है। स्पष्ट रूप से तो अमेरिका भारत का हित करना चाहता है, परन्तु छिपे रूप से वह भी नहीं चाहता कि भारत आणविक शक्ति सम्पन्न देश बन करके उभर कर विश्व के सामने आये जो सहायता अमेरिका

ने भारत को दी है, उसने भारत को स्वावलम्बी बनने से रोका है। अमेरिका को भारत की जनसंख्या, क्षेत्रफल एवं परम्पराएँ ज्ञात हैं। वह अन्दर ही अन्दर इन बातों में भारत से भयभीत है। भारत के लिए अणुबम बनाना अधिक खर्चीला होगा ऐसा अमेरिका का कथन इसलिए है कि भारत अधिक शक्ति सम्पन्न नहीं हो सके। जब भारत इस क्षेत्र में आगे बढ़ता है तो अमेरिका भारत के सिद्धान्त अहिंसा व शान्ति की प्रशंसा करने लगता है और जिससे भारत शान्त रहे और आगे आणविक क्षेत्र में उन्नतिशील देश न बन पाये। अमेरिका ने अनाज की सहायता भारत को पहुँचाकर भारत को और अधिक पंगु बना दिया है। भारत के बहुत से निवासी अमेरिका की प्रशंसा करने लगे हैं। वह नहीं समझते कि इस प्रकार सहायता मिलने से देश की जड़ें और भी खोखली हो जाती हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त भारत एक उमड़ती हुई शक्ति के रूप में विश्व रंगमंच पर उपस्थित है। अमेरिका अपने स्वार्थवश यह नहीं चाहता कि भारत पनपे। वह भारत की सीमाओं से, मर्यादा से एवं परम्पराओं से भलीभाँति परिचित है।

आज विश्व के दूसरे देश भी यह नहीं चाहते कि भारत उभर कर सर्व-शक्तिवान देशों के बीच आ जाये, इसलिए रूस ने भी ऊपरी तौर पर मित्रता का हाथ भारत की ओर बढ़ाया है। अन्दर से बात दूसरी है। रूस कभी नहीं चाहता कि भारत एशिया का सर्वशक्तिमान देश बन जाये। रूस भारत को उन्नतिशील नहीं होने देना चाहता। वह नहीं चाहता कि भारत आत्म-निर्भर बने और विश्व की महान शक्तियों में शामिल हो। रूस नहीं चाहता कि भारत अणु शक्ति का निर्माण कर शक्तिशाली बने। अतः वह भारत को शान्तिपूर्ण मार्ग पर ही चलने को कहता है। भारत के उपदेशों को बढ़ा-चढ़ा कर दोह-राता है। ऐसा समझा जाता है कि बँगला देश की भारत ने जब सहायता की तब रूस ने भारत से मैत्री भाव और भी घनिष्ठ किये पर ऐसा समझना भूल है कुछ न कुछ रूस की चाल इसके पीछे अवश्य रही है। रूस ने जब-जब भारत की सहायता की है कुछ न कुछ स्वार्थ उनके पीछे अवश्य छिपा है। ये ऐसे देश नहीं हैं जो दूसरों का भला करने हेतु अपना बलिदान कर लेते हैं। अमेरिका और रूस दोनों ही पाकिस्तान को शस्त्र प्रदान कर भारत का अहित करना चाहते हैं। इस नीति से यह स्पष्ट है कि रूस मैत्री की ओट में भारत

को पुनः परतन्त्र देखना चाहता है, बाहरी रूप से शक्ति संतुलन की दृष्टि से रूस भारत के साथ है।

अरब देश भी दोहरी चाल चल रहा है। एक ओर वे भारत को अपना मित्र कहते हैं और दूसरी ओर पाकिस्तान से अपने सम्बन्ध सुदृढ़ बनाये हुए हैं। जब काश्मीर के प्रश्न पर भारत-पाक युद्ध छिड़ा था तब अरब देश वालों ने पाकिस्तान का ही साथ दिया था, जबकि भारत ने अरब देशों की सदा से ही सहायता की है।

पाकिस्तान तो भारत का जन्मजात शत्रु है। यद्यपि भारत में छह करोड़ मुसलमान निवास कर रहे हैं जिन्हें प्रशासन से सामान्य अधिकार प्राप्त हैं, परन्तु पाक भारत को एक हिन्दू राष्ट्र की दृष्टि से देखता है। काश्मीर के प्रश्न को लेकर भारत पर पाकिस्तान अनेक बार आक्रमण कर चुका है। अपनी स्वार्थ सिद्धि हेतु पाक भारत के नेताओं की प्रशंसा करता है तथा भारत को अग्रज कहने लगता है परन्तु अवसर निकलने पर पुनः शत्रुता मानने लगता है। संसार में भारत विरोधी भावना फैलाकर पाक शान्ति की साँस लेता है।

नेपाल, बर्मा, लंका, जापान एवं अफगानिस्तान आदि कुछ ऐसे एशिया महाद्वीप के राष्ट्र हैं जो भारत के सच्चे मित्र हैं। इन देशों का भारत से हर प्रकार का मानवीय सम्बन्ध है।

सभी देश भारत को अपनी-अपनी नजर से देख रहे हैं परन्तु भारत की वास्तविक धारणा को वे भी नहीं समझ पाये हैं—

हमारी सरकार देश की शान तथा गौरव की वृद्धि हेतु निरन्तर प्राणपण से चेष्टा कर रही है। आशा है, निकट भविष्य में देश दिन दूनी रात चौगुनी प्रगति करता हुआ उन्नति के तराने दुहराता रहेगा—

"अहलें नजर जौके नजर खूब हैं लेकिन
जो रह की हकीकत को न समझे वो नजर क्या है।"

73
लोकनायक श्री जयप्रकाश नारायण

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- जीवन वृत्त एवं शिक्षा दीक्षा
- राजनैतिक कार्य-क्षेत्र एवं विदेश भ्रमण
- ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध संघर्ष
- सर्वोदयी विचार दर्शन की छाया
- लोकनायक
- उपसंहार ।

भारत भूमि की पावन धूल में असंख्य रत्न गुप्त रूप में छिपे हुए हैं । इन महाविभूतियों का योगदान राष्ट्र के लिए सदैव प्रेरणा का अजस्र स्रोत रहा है । युग परिवर्तन एवं सामाजिक क्रान्ति तो कुछ सीमित व्यक्तियों द्वारा ही परिपूर्ण हुई है । देश में ऐसे गौरवशाली व्यक्तियों की कमी नहीं है । जीव योनियों में मानव जीवन सर्वोत्तम कृति मानी गई है । इसके पीछे मनुष्य में ही मानसिक विकास की पराकाष्ठा अतिशयता के साथ विद्यमान है । मनुष्य ही परस्पर दुख-दर्द से प्रभावित हो उसमें हाथ बँटाता है । ऐसे ही चन्द गिनती के मर्मस्पर्शी व्यक्तियों में डॉ० राजेन्द्र प्रसाद, स्व० नेहरूजी, लाल-बहादुर शास्त्री, गोखले, पूज्य बापूजी एवं लोकनायक जयप्रकाश नारायण का नाम अविस्मरणीय है ।

जीवन एवं शिक्षा-दीक्षा—एक ही प्रकाश, जयप्रकाश, जो यथा नाम तथा गुण की कहावत को चरितार्थ करते हैं, का जन्म 11 अक्टूबर 1902 को बिहार के एक छोटे से गाँव सिताब दियारा में कायस्थ कुल में हुआ था, आप अपने पिता जिनका नाम हरसूदयाल तथा माता फूलरानी की चौथी सन्तान थे । आपने प्रारम्भिक शिक्षा घर पर पूर्ण की और 6 वर्ष की अल्पायु में गाँव

की प्राथमिक शाला में प्रवेश लिया । 9 वर्ष की अवधि में पटना विश्वविद्यालय में अध्ययन के लिए प्रवेश लिया । आप विद्या अर्जन में विशेष रुचि रखते थे अतः माध्यमिक परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त किये और अच्छी छात्रवृत्ति लेने में सफल हुए । 18 वर्ष की आयु में ही आपका विवाह प्रसिद्ध वकील श्री बृज किशोर की सौभाग्यवती कन्या प्रभावती से हो गया ।

राष्ट्र-पिता गाँधीजी द्वारा असहयोग आन्दोलन के संचालन के समय श्री जयप्रकाश ने अपनी सारी पुस्तकों को तालाब में फेंककर आन्दोलन में अपने जीवन की सम्पूर्ण शक्ति की आहुति दे दी । अपने निकट सम्पर्क के व्यक्तियों में से एक श्री भोलापन्त के आग्रह पर आपने संयुक्त राज्य अमरीका में उच्च शिक्षा के लिए कार्यक्रम निर्धारित किया । संयुक्त राज्य अमरीका में अपनी जीविका का निर्वाह होटलों में काम करके, झूठी तश्तरियाँ धोकर तथा सफाई का काम करके किया । फिर भी आपने 90% अंक लेकर बी० ए० की उपाधि ग्रहण की । तदुपरान्त एम० ए०, पी-एच० डी० की शिक्षा की तैयारी कर रहे थे, तो आपको अपनी माता जी की घातक बीमारी की सूचना प्राप्त हुई और इस कारण अविलम्ब भारत लौटने को विवश हुए । अपने विदेश प्रवास में आपने अमरीका के जीवन का गहराई से अध्ययन किया । वहाँ के धनिक वर्ग द्वारा निर्धनों के शोषण से आपकी संवेदनशील आत्मा घृणा से आपूरित उठी । इस कष्ट की चक्की में पिसते हुए मानव की मुक्ति आपने साम्यवाद में अन्वेषित की और ऐसी ही अवस्था के साथ आप भारत आये । स्वराष्ट्र भारत में काँग्रेस द्वारा संचालित आन्दोलन आपको रुचिकर न लगे । इस पर गाँधी-इरविन समझौते की निराशाजनक विफलता से स्वयं काँग्रेस की ओर उन्मुख हुए । आप भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के मन्त्री भी निर्वाचित हुए । इसके उपरान्त आपका सारे देश के दौरे का प्रोग्राम निर्धारित हुआ । परन्तु मद्रास में आपको बन्दी बना किया गया और मद्रास से आपको नासिक के कारागृह में स्थानान्तरित कर दिया गया । सन् 1933 में आपको पुनः मुक्त कर दिया गया ।

स्वयं को काँग्रेस के प्राचीन तथा परम्परा के सिद्धान्तों में विश्वास नहीं था । इसलिए आपने काँग्रेस को समाजवादी रूप दिया । इस प्रकार मीनू

मसानी, आचार्य नरेन्द्रदेव, डॉ० सम्पूर्णानन्द, डॉ० लोहिया आदि विद्वानों के अति निकट का सम्पर्क किया। सन् 1935 में कुछ मतैक्य के कारण कांग्रेस की प्रबन्धकारिणी समिति के सदस्य पद से त्याग पत्र प्रस्तुत कर दिया। इसके विपरीत गाँधीजी के स्वातन्त्र्य संघर्ष में सक्रिय हाथ बटाते रहे। इसके सुफल रूप में आपको 1943 में बन्दी बनाकर लाहौर जाना पड़ा। लाहौर में कष्टों की सीमा का वर्णन नहीं किया जा सकता है। सन् 1946 में उस वेदनापूर्ण बन्दीगृह से विमुक्त कर दिया।

सन् 1948 में संविधान सभा के सदस्यों के निर्वाचन के समय आपको भी निमन्त्रित किया गया। परन्तु आपने इस निमन्त्रण को अस्वीकार कर दिया। पद लोलुपता से पृथक रहकर जन-सेवा में जीवन लगा दिया। यह जीवन पद्धति भी आपकी आशाओं को सन्तुष्ट न कर सकी। परिणामस्वरूप आप आचार्य विनोबा भावे के सर्वोदय आन्दोलन के प्रति उन्मुख हुए। सन् 1954 में आपने स्वयं भूदान सत्याग्रह में सक्रिय सहयोग दिया। यह श्री जयप्रकाश की सेवा का स्वतन्त्र अवसर था। श्री जयप्रकाश द्वारा भूदान सेवा का कार्य अत्याधिक श्लाघनीय रहा है। सन् 1973 में आपने चम्बलघाटी के अनेक दुर्दान्त दस्युओं को आत्म-समर्पित करने के लिए विवश कर दिया। यह तो यथार्थ में एक अतुलनीय साहस का गौरवपूर्ण कार्य है।

इस प्रकार एक ओर आप जन-सेवा के पावन कार्य में व्यस्त थे तो दूसरी ओर देश में मँहगाई, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार तथा निर्धनता से जनता असहाय एवं दुखी हो रही थी। आपको इसे देखकर बड़ी वेदना हुई। परिणामतः बिहार में युवा वर्ग के सहयोग से अहिंसात्मक आन्दोलन का सूत्रपात किया। 8 अप्रैल 1974 को एक विशाल जुलूस निकाला। 6 मार्च 1975 को राजधानी में विशाल प्रदर्शन का आयोजन किया गया जिसमें असंख्य लोगों ने हाथ बँटाया। उस दिन सरकार को एक माँग-पत्र भी दिया गया। आपके इस राजनैतिक क्रिया-कलाप से इन्दिरा सरकार आतंकित हो उठी। फलस्वरूप 26 जून 1975 को राष्ट्र पर आन्तरिक कानून स्थिति की चादर का कलुषित आवरण डाल दिया गया। 26 जून को ही आपको कारागृह भेज दिया गया। 2 नवम्बर 1975 को श्री जयप्रकाश के गुर्दे की खराबी के कारण मुक्त कर दिया गया। उस समय बम्बई स्थित जसलोक अस्पताल में आपका उपचार हुआ था, परन्तु आपके जीवन को बचाया न जा सका।

दूसरी ओर 18 जनवरी, 1977 को जब प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने अचानक निर्वाचन की घोषणा कर दी तो आपने तुरन्त ही सक्रिय होकर महत्त्वपूर्ण दलों को संयुक्त कर एक नयी पार्टी को आविर्भूत किया जिसको जनता पार्टी का नाम दिया गया। यही नया दल जनता पार्टी आपकी सूझबूझ और अथक प्रयासों के सुफल रूप में निर्वाचन में सफलता प्राप्त कर सकी और मार्च 1977 में काँग्रेस सरकार सत्ताच्युत कर दी गई।

यह सब कुछ ही आपके राजनैतिक जीवन के विविध पहलू हैं, परन्तु इस जीवन यात्रा का अन्त नहीं हो सकता है। यह यात्रा बड़ी लम्बी एवं विश्राम से रहित है। आपको एक-एक दिन के अन्तराल से डायलिसिस के लिए आठ-आठ घण्टे बिस्तर पर आबद्ध रहना पड़ता था, जिसकी पीड़ा अवर्णनीय है। यहाँ रक्त की शुद्धि होती है और आत्म शुद्धि पूर्णतः असम्बन्धित है। आपकी आत्मा पूर्णतः निर्मल है तभी तो उनके जयघोष ने सम्पूर्ण राष्ट्र को प्रकम्पित कर दिया था। मृत्यु पर्यन्त तक सम्पूर्ण क्रान्ति और देश के नवगठन के लिए आपका स्वर गूँजता रहा था।

ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध संघर्ष

राजनीति में प्रवेश लेकर कुछ सक्रिय होने के उपरान्त समाजवादी दर्शन के प्रसार तथा गरीबी के उन्मूलन में विशेष रूप से सचेष्ट दृष्टिगोचर लगते हैं। इसीलिए जयप्रकाश जी ने अंग्रेजों के विरुद्ध राष्ट्रीय स्तर पर आन्दोलन का सूत्रपात कर दिया। इसी उद्देश्य के लिए लाहौर में काँग्रेस अधिवेशन में भाग लिया। 31 दिसम्बर 1929 को रात को ठीक साढ़े बारह बजे जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में पूर्ण स्वातन्त्र्य-प्राप्ति का संकल्प लिया। इस विद्रोही क्रिया-कलाप के कारण आपको मद्रास में बन्दी बनाकर नासिक के कारागृह में बन्दी बना लिया गया। यहीं पर आपने मीनू मसानी और अशोक मेहता के साथ मिलकर समाजवादी दल के गठन का विचार बनाया।

सर्वोदयी विचार दर्शन की छाया

निश्चय ही श्री जयप्रकाश जी सर्वोदयी दर्शन पद्धति से आजीवन अत्यधिक प्रभावित रहे। इसमें दो मत नहीं हैं। इसके पीछे आचार्य भावे के निकट का सान्निध्य उनके लिए प्रेरणा का अजस्र स्रोत रहा है जिसे विस्मृत नहीं किया जा सकता है। सर्वोदय यज्ञ को अपने जीवन-पर्यन्त संचालित रखना

ही उनके लिए मूलमंत्र तथा सर्वस्व कहा जाय तो अनुचित नहीं है । जयप्रकाश जी में पद त्याग की विलक्षण भावना होने से आपका व्यक्तित्व विशेष आकर्षण का विषय बन गया । आपने जवाहरलाल नेहरू की सरकार में सम्मिलित होने के आमंत्रण को अनेक बार ठुकरा दिया । 1952 के मतदान में आपने सुझाव रखा कि निष्पक्ष चुनावों के लिए काँग्रेस को सत्ता से पृथक रहकर चुनाव लड़ना चाहिए परन्तु अपनी-अपनी ढपली और अपना-अपना राग में जयप्रकाश जी की आवाज को किसी ने नहीं सुना । अतः जयप्रकाश जी ने राजनीति से संन्यास ले लिया और 19 अप्रैल 1954 में विनोबा भावे के भूदान आन्दोलन से प्रेरणा लेकर रक्तविहीन सामाजिक परिवर्तन हेतु भूमि दान देने का आह्वान किया । 20 वर्ष तक आपने सर्वोदय आन्दोलन का प्रचार एवं प्रसार देश तथा विदेश में किया ।

आदर्श लोकनायक—जयप्रकाश जी की स्पष्ट विचारधारा थी कि बात का प्रकाशन निःसंकोच करना चाहिए और साथ ही बात का निर्वाह भी दृढ़ता से करना चाहिए । चीन द्वारा तिब्बत पर आधिपत्य करने, रूस द्वारा हंगरी के जन-विद्रोह का दमन तथा वियतनाम के खिलाफ अमरीकी अत्याचार का सरेआम विरोध ही नहीं किया, अपितु आपने रचनात्मक कार्यों में अपनी पूर्ण श्रद्धा बनाए रखी । साम्प्रदायिक विप्लव हो, बाढ़ अथवा अकाल हो, गरीब, हरिजनों तथा किसानों के साथ अत्याचार को जयप्रकाशजी सदैव अपना सहयोग देकर राष्ट्रीय संकटों में अपना समय देते रहे । अन्य बड़े नेताओं से भी अधिक बड़ा काम जो श्री जयप्रकाश नारायण ने कर दिखाया वह अन्य किसी ने नहीं किया है । वह यह है कि 400 के लगभग कुख्यात दस्युओं ने महात्मा गाँधीजी की प्रतिमा के समक्ष आत्म-समर्पण किया । यह एक महान् पुण्य का कार्य-है जो अन्य नेता न कर पाये । अनेक तस्करों ने जयप्रकाशजी के सम्मुख तस्करी न करने का संकल्प लिया । वह हृदय परिवर्तन का एक नया तथा अनुपमेय मार्ग है ।

श्री जयप्रकाश जी में अनेक विलक्षण गुण थे जिनका अन्य नेताओं में अभाव है । इन्दिरा शासन ने जब घोर दमनचक्र चलाया और प्रजातन्त्र को कुचल दिया, शीर्षस्थ नेताओं को कारागृह में ठूँस दिया, समाचार पत्रों की आवाज पर ताला लगा दिया, और अपनी कुर्सी

सुरक्षित रखने का प्रपंच रच दिया तो सम्पूर्ण देश में जयप्रकाश जी के सन्देश ने जागरण का स्वर फैला दिया। उन्होंने स्पष्ट कहा कि "डरो नहीं, अभी मैं जिन्दा हूँ।" उनके मार्ग दर्शन के आधार पर सभी महत्त्वपूर्ण राजनैतिक दलों से संयुक्त होकर जनता पार्टी का प्रादुर्भाव हुआ। इस जनता पार्टी के नेताओं ने सम्पूर्ण देश में चुनाव अभियान में भाग लिया। भारतीय समाज में एक क्रान्ति का सूत्रपात हुआ। भारतीय इतिहास नये मार्ग पर अग्रसरित है। देश का समुदाय स्वतन्त्रता के नये प्रकाश में आया। उत्तरी भारत में काँग्रेस की अमोघ संगठन शक्ति निर्वाचन में जनता द्वारा धराशायी कर दी गई और काँग्रेस समूल नष्ट हो गई। राष्ट्र में पुनः लोकतन्त्र का वृक्ष लहलहा उठा। उस समय भारतवासी एकजुट होकर जयप्रकाशजी की ओर देख रहे थे कि आपने युग परिवर्तन कर दिखाया। यद्यपि आपका स्वास्थ्य रोग से क्षीणकाय हो चुका था। परन्तु उनकी आत्मिक शक्ति अत्यधिक सुदृढ़ थी। आप अधिक वृद्ध होने पर भी राष्ट्र के कल्याणार्थ अत्यधिक व्यस्त रहते थे। हम सभी भारतवासी उनके दीर्घजीवी होने की शुभेच्छा करते रहे। कुछ बुद्धिजीवी वर्ग आपको अस्थिरमति होने का जो आरोप लगाते हैं, वह आंशिक रूप से भले ही उचित माना जाय पर पूर्ण सत्य कदापि नहीं कहा जा सकता है। आपकी राष्ट्र सेवा, त्याग, साधन और श्रद्धा निस्संदेह अनुकरणीय है। कवि की निम्नांकित पंक्तियों में आपके व्यक्तित्व की आभा स्पष्ट झलकती है।

"है उनके हाथों में भविष्य जो शूलों पर चलते हैं,
मादकता बिखराने वाले फूलों से भी डरते हैं।"

ऐसा विलक्षण व्यक्तित्व, भीष्म की सी दृढ़ आस्था एवं युधिष्ठिर की सी धार्मिक वृत्ति, चट्टान की दृढ़ता अन्य जननायकों मे नही पाई जाती। लेकिन वयोवृद्ध जयप्रकाश जी का व्यक्तित्व अधिक विलक्षण एवं सभी गुणों से युक्त था। सागर के समान अथाह गहनता एवं पृथ्वी के समान असीम कष्टों के मध्य धैर्य का गुण अन्य लोक नायकों में अभाव सर्वदा बुरी तरह अखरता है। यह कहना अत्युक्ति नहीं है कि संकट काल में ऐसे व्यक्तित्व की परम आवश्यकता थी जो देश का मार्ग दर्शन कर सके। काँग्रेस के शासनतन्त्र का रूप अब भद्दा प्रतीत होता था उससे हम सभी बुरी तरह निराश हो गए थे। ऐसे समय में और ऐसे संकट की घड़ी में देश का मार्ग सुनिश्चित करने के लिए एक

राष्ट्र निर्माता की आवश्यकता थी, इस रिक्तता की आपूर्ति जयप्रकाश जी ने की। भारत का मस्तक विदेशों में भी गौरव से ऊँचा हो गया। जो दारिद्रय एवं आलस्य कॉंग्रेस ने फैला रखा था, उसे जनता पार्टी ने कुछ काल के लिए विलुप्त कर दिया। हम सभी नत मस्तक हो उनके दीर्घ जीवी होने की शुभ आकांक्षा व्यक्त करते रहे। रक्तहीन क्रान्ति के अभाव में राष्ट्र द्वारा की गई प्रगति एवं वर्तमान ढाँचा ही विनष्ट होने की स्थिति रहती है। प्रजातन्त्र की सुरक्षा को नष्ट होने की आशंका हो गई थी। इसलिए रक्तहीन क्रान्ति से व्यर्थ में असंख्य धन, जन एवं शक्ति नष्ट हो जाती जिससे देश का भविष्य ही अन्धकारमय हो जाता। राष्ट्र को स्वतन्त्रता की सांस लेना अत्यधिक दुष्कर हो गया था। ऐसी हालत में रक्तहीन क्रान्ति ने समाज को एक नया रूप प्रदान कर दिया। इसलिए यह कहना अत्युक्ति न होगा कि रक्तरहित क्रान्ति से एक नये प्रगति के अध्याय का श्रीगणेश हुआ। यदि वर्तमान परिवर्तन रक्तपात तथा हिंसा द्वारा लाया जाता तो उसके दुष्परिणाम न जाने कितने कुप्रभावकारी होते, इसे तो भविष्य ही बता सकता है। यह रक्तहीन क्रान्ति के पीछे भारतीय पुरातन प्रेरणा एवं गाँधीवादी निष्ठा का ज्वलन्त उदाहरण है। सभी सुनिश्चित होकर इसकी प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते हैं। यह हमारी प्रजातन्त्रीय जागरूकता का एक सशक्त प्रमाण है, जो राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत है। यह भारतीयों की अहिंसक प्रवृत्ति का परिचायक है और गाँधीवादी आस्था का द्योतक है। आपका स्वर्गवास 8 अक्टूबर 1979 को हो गया। आपका दाह संस्कार पटना में गंगा तट पर राष्ट्रीय सम्मान के साथ किया गया। सात दिन तक सारे राष्ट्र में राष्ट्रीय शोक मनाया गया।

74
अन्तर्राष्ट्रीय बालवर्ष

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—संयुक्त राष्ट्र संगठन का निर्माण
- शिशुओं की समस्याएँ

- **अनाथ बच्चों की कारुणिक दशाएँ**
- **समस्याओं के समाधान हेतु दृढ़ संकल्प**
- **भारतवर्ष के वृद्धों, बच्चों तथा युवकों की दशा**
- **स्थिति सुधारने के उपाय**
- **उपसंहार**

यदि हम प्राचीन इतिहास के सुनहरी पृष्ठों को उलटकर देखें तो यह बात स्पष्ट हो जायेगी कि सन् 1945 में द्वितीय विश्व युद्ध (Second world war) के अवसान होते ही एक ऐसे संयुक्त राष्ट्र संगठन का निर्माण हुआ जो समस्त समस्याओं के समाधान का केन्द्र था। संसार के आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों में कार्य सम्पादन के लिए संयुक्त राष्ट्र संगठन नामक एक संस्था है जो कि यूनेस्को के नाम से प्रसिद्ध है। महिलाओं की दशा बहुत ही शोचनीय थी, अतः उसमें आवश्यक सुधार के लिए अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष का समायोजन हुआ। बच्चों की समस्याओं का निराकरण करने के उद्देश्य से इस संस्था ने उचित कदम उठाने का निर्णय लिया है। अतः जनता सन् 1979 को अन्तर्राष्ट्रीय बालवर्ष के रूप में मनाने के लिए कटिबद्ध है।

यदि शिशुओं की समस्याओं पर सिंहावलोकन किया जाता तो समस्याएँ गण्ना से परे हैं। जन-विशेष कभी किसी समस्या पर विचार ही नहीं करते। उदाहरण के तौर पर कुछ बच्चे मातृ-पितृविहीन होते हैं। यदि उनसे पूछा जाय कि तुम्हारे माता-पिता कौन हैं तो इस प्रश्न का उत्तर देने में उन्हें कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। फलतः जब उन्हें इस विषय में कोई जानकारी ही नहीं होगी तो उनके लालन-पालन, शिक्षा-दीक्षा, प्रेम तथा मानसिक संतुष्टि इत्यादि समस्याएँ मुँह फाड़े खड़ी रहेंगी। अतः समाज में उनका स्थान दूसरे सम्मानित एवं प्रतिष्ठित मनुष्यों की तरह होना अपेक्षित है।

दूसरी समस्या ऐसे अनाथ बच्चों की है जिनके माता-पिता दुर्भाग्य से असामयिक काल के ग्रास हो जाते हैं। ऐसी दशा में उनके लालन-पालन का भार दूसरे लोगों के कन्धों पर रहता है। ये अनाथ बच्चे पराश्रित रहकर भयावह स्थिति में साँस लेते हैं।

तीसरी समस्या ऐसे निर्धन माता-पिताओं की सन्तानों की है, जिनकी स्थिति अनाथ बच्चों की अपेक्षा कुछ अच्छी होती है। जिस घर में बच्चों की

संख्या अत्यधिक हो तथा आय जीवन-निर्वाह के लिए अपर्याप्त हो तो होने वाले बच्चों को महान् कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। आय के अभाव में न तो उन्हें शारीरिक पुष्टि के लिए पर्याप्त भोजन ही उपलब्ध हो पाता है और न उचित शिक्षा-दीक्षा ही सम्भव हो पाती है, परिणाम यह होता है कि वे अपने जीवन-निर्वाह के लिए इधर-उधर भटकते रहते हैं।

कुछ माता-पिताओं के बच्चे ऐसे हैं जो बाल्यकाल से ही शराब पीने एवं अन्य प्रकार के दुर्व्यसनों के शिकार हो जाते हैं क्योंकि उन्हें बचपन में लालन-पालन शिक्षा तथा मनोरंजन की सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हो पातीं; इसके साथ ही जब वे कुत्सित कर्म करने के लिए उतारू हो जाते हैं तो मारपीट के डर से अक्रान्त रहते हैं। ये आवारा शिशु घर से निकाल दिए जाने पर दर-दर की ठोकरें खाते फिरते हैं।

ये अनाथ एवं निर्धन बच्चे दुकानों तथा कारखानों के संचालकों द्वारा उत्पीड़ित किये जाते हैं। इसका कारण यह है कि यदि वे जितकी उम्र अधिक है उनसे काम करायेंगे तो अधिक वेतन का भुगतान करना पड़ेगा जिससे उनको अधिक हानि उठानी पड़ेगी। जब आपत्तियों के जाल में फँसे असहाय, अनाथ बच्चे कम वेतन पर ही कार्य करने के लिए उद्यत हो जाते हैं तब मालिक लोग इस मौके का फायदा उठा कर उन्हें कार्य करने की स्वीकृति प्रदान कर देते हैं। इन निर्धनों एवं असहायों से वह कार्य कराया जाता है जिसमें अत्याधिक शारीरिक परिश्रम करने के बजाय कम परिश्रम से करने योग्य कार्य जो निरन्तर चलता रहे। उदाहरण के लिए, दियासलाई निर्माण, जिल्दसाजी तथा होटलों में भोजन की परोसाई करवाना इत्यादि ऐसे कार्य हैं जिनमें शारीरिक परिश्रम तो कम करना पड़ता है लेकिन निरन्तर व्यस्त रहना पड़ता है। इसका दुष्परिणाम इन असहायों पर ऐसा पड़ता है कि उनके जीवन की उन्नति का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है।

जब अन्तर्राष्ट्रीय बाल कल्याण संघ का ध्यान इस मातृ-पितृ विहीन निर्धन एवं असहाय अनाथों की दुर्दशा पर गया तो उसने इन समस्याओं के समाधान के लिए दृढ़ संकल्प किया। उन्होंने एक ऐसे घोषणा-पत्र का प्रारूप तैयार किया जिसमें बच्चों के लिए स्वास्थ्य, लालन-पालन पारिवारिक सुरक्षा एवं उचित शिक्षा की व्यवस्था का अधिकार उपलब्ध हो। इसके साथ ही

निन्दनीय कार्य, दुर्व्यसन उन्हें छू भी न सके तथा उनकी शारीरिक एवं मानसिक उन्नति का पथ प्रशस्त हो।

इस घोषणा-प्रपत्र का समस्त देशों पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वे भी मुक्त-कण्ठ से इनकी प्रशंसा करने लगे तथा शिशुओं की समस्याओं के समाधान के लिए उचित कदम उठाने के लिए सक्रिय हो गये। हमारे देश भारतवर्ष में भी अन्तर्राष्ट्रीय बाल वर्ष को प्रभावी बनाने के लिए व्यापक कार्यक्रमों की रूपरेखा समायोजित की गई।

यदि भारतवर्ष के बच्चों, युवकों एवं वृद्धों की स्थिति पर विहंगम दृष्टिपात किया जाय तो यह स्पष्ट हो जाता है कि उनकी दशा में सुधार लाने के लिए सक्रिय कदम उठाये जाएँ परन्तु ऐसे बच्चे उनकी उम्र 6 वर्ष है उनकी स्थिति को ध्यान में रखते हुए उचित पथ का आश्रय लिया जायेगा—6 वर्ष की उम्र वाले लगभग साढ़े बारह करोड़ बच्चे हमारे देश में निवास कर रहे हैं जिनमें साढ़े पाँच करोड़ निर्धनता के शिकार हैं। शहरों की गन्दी बस्तियों में रहने वालों की संख्या लगभग सवा करोड़ है एवं ग्रामों में रहने वालों की संख्या लगभग सवा चार करोड़ है। हमारे देश का यह दुर्भाग्य ही है कि ये निर्धन एवं असहाय बच्चे दुग्ध तथा अन्य पौष्टिक आहार से वञ्चित रह जाते हैं। 1 से 5 साल तक मरने वाले शिशुओं की संख्या 40% है एवं ऐसे बच्चे जो रक्ताभाव की वजह से काल के ग्रास हो जाते हैं वे 60% हैं।

सर्वप्रथम माताओं एवं बच्चों के लिए समुचित चिकित्सा की व्यवस्था की जाय, क्योंकि ऐसा होता है कि कुछ माताएँ बच्चों को जन्म देकर ईश्वर की प्रिय बन जाती हैं तथा दूध के अभाव में बच्चे को भी काल का ग्रास बनना पड़ता है। अन्तर्राष्ट्रीय बाल कल्याण संघ निर्धन शिशुओं एवं उनकी जन्मदात्री माताओं के लिए मुफ्त पौष्टिक आहार प्रदान करने का प्रबन्ध करेगा। बालवाड़ियाँ, आँगनवाड़ियाँ तथा शिशु सम्भाल गृह विशेष रूप से नन्हें शिशुओं की देखभाल के लिए स्थापित किये जायेंगे। बच्चों के स्वास्थ्य पर कोई दुष्प्रभाव न पड़े इस दृष्टिकोण से स्वास्थ्य केन्द्र का उद्घाटन होगा जो लोग विद्यालयों के समीप दूषित भोज्य सामग्री बेचते हैं उन पर प्रतिबन्ध लगाया जायगा। स्वस्थ्य की रक्षा के लिए रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र तथा पोस्टर प्रयुक्त होंगे। ऐसे परिवार जो निर्धनता के पाश में आबद्ध हैं उनके

लिए निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जायगी। ऐसी फिल्मों एवं पुस्तकों की रचना होगी जिनसे छात्रों का भविष्य उज्ज्वल हो तथा जो रुचिकर हों। पहले ऐसे बच्चे जिनकी उम्र तीन वर्ष की होती थी, रेलगाड़ियों में उनका किराया नहीं देना पड़ता था लेकिन अब अन्तर्राष्ट्रीय बाल वर्ष में जो बच्चे पाँच साल के होंगे उनका किराया नहीं लगेगा।

वस्तुतः अन्तर्राष्ट्रीय बाल कल्याण संघ ने बच्चों के हित को ध्यान में रखकर जो कार्यक्रम संचालित किये हैं वे बहुत ही प्रशंसनीय हैं। अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि जो कार्यक्रम कागजों पर ही लिखित रूप से लागू किये जाते हैं वे व्यवहार के तौर पर खरे नहीं उतरते। निर्धन बच्चों के हित के लिए सरकार द्वारा जो धन स्वीकृत किया जाता है अधिकारी लोग उन निर्धन बच्चों को न देकर स्वयं ही डकार जाते है। अतः सरकार इस ओर विशेष ध्यान दे जिससे स्वीकृत धनराशि से निर्धन एवं असहाय बच्चे लाभ उठा सकें।

लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय बाल कल्याण संघ ने जो कार्यक्रम प्रस्तुत किये हैं उनसे निर्धन बच्चे कुछ तो लाभान्वित होंगे ही। अन्तर्राष्ट्रीय बाल वर्ष के माध्यम से भविष्य के इन नन्हें मुन्ने बच्चों के लिए लाभकारी योजनाएँ क्रियान्वित करने का श्रीगणेश हुआ है। प्रत्येक कार्य को प्रारम्भ करना तो सरल है लेकिन उसे साकार रूप देना अत्यन्त दुष्कर कार्य है। यह कार्य भारत की धरती पर तो साकार रूप ग्रहण करने में अभी कुछ समय लेगा लेकिन यह बात निर्विवाद रूप में कही जा सकती है कि यह शुभ परिणाम का द्योतक है।

निर्धनता जीवन का अभिशाप है, इस अभिशाप से निर्धन बालकों को मुक्त करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय बाल कल्याण संघ ने जो प्रारूप तथा कार्यक्रम प्रस्तुत किए है वे निःसन्देह बालकों के कल्याण के द्योतक हैं। यदि ये कार्यक्रम वास्तविक रूप में साकार हो जायेंगे तब हमें दिखाई देंगे हँसते-किलकते चेहरे, सोना उगलती धारित्री तथा नृत्य करते मयूर तभी निम्न राग भारत की फुलबगिया से ध्वनित होगा—

'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा''

75
हरित-क्रान्ति

विचार-तालिका

- क्रान्ति का अर्थ
- भारतवर्ष में कृषि का कार्य
- जमींदारी प्रथा का उन्मूलन
- हरित-क्रान्ति का प्रादुर्भाव
- हरित-क्रान्ति की योजनाएँ
- कृषकों की आर्थिक दशा सुधारने हेतु उपाय

जब हम क्रान्ति के तात्पर्य पर दृष्टिपात करें तो क्रान्ति का तात्पर्य "परिवर्तन" होता है। इस संसार में परिवर्तन होते रहते हैं कभी दुःख आता है तो कभी सुख, कभी निर्धनता का साम्राज्य होता है तो कभी वैभवता एवं विलासिता का नृत्य दृष्टिगोचर होता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में परिवर्तन चाहता है। एक ही स्थिति में रहते हुए उसके लिए जीवन निर्वाह करना दुरूह हो जाता है। उसकी इच्छा यह होती है कि जितना धन मेरे पास है उससे और दूना हो जाय। जीवन-निर्वाह के लिए समुचित सुविधाओं के अभाव में वह क्रान्ति करने के लिए विवश हो जाता है। अठारहवीं तथा उन्नीसवीं शताब्दी तक प्राचीन विद्वान् क्रान्ति का तात्पर्य केवल राज्य प्राप्ति के लिए या किसी पापी तथा कुत्सित कर्म करने वाले राजा की सत्ता को समाप्त करने के लिए उठाये गये कदम से अभिव्यक्त करते थे। देश की स्वतन्त्रता के लिए, भगवान् बुद्ध, ईसामसीह, जगद्गुरु शंकराचार्य, गुरुनानक तथा कबीर इत्यादि जैसे महापुरुषों ने धार्मिक एवं सामाजिक क्षेत्र में क्रान्ति की लड़ाई लड़ी परन्तु उसे क्रान्ति की संज्ञा से अभिव्यक्त न कर सुधार की संज्ञा से सम्बोधित किया गया। यदि हम मध्यकालीन स्वर्णिम इतिहास के पृष्ठों को उलटकर अवलोकन करें तो यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उस समय राज्य-क्रान्तियों

ने अपना विकराल रूप धारण कर लिया था। भारतवासियों ने सन् 1857 ई० में जब ईस्ट इण्डिया कम्पनी का निर्माण हुआ था तब हाथ में शस्त्र धारण कर क्रान्ति कर संघर्ष किया था। परन्तु योजनाओं के असफल होने पर सन् 1942 तक अंग्रेजों के विरुद्ध निरन्तर क्रान्ति विकराल रूप धारण करती गयी। अन्ततोगत्वा सन् 1947 ई० में भारत के स्वतन्त्र हो जाने पर सशस्त्र क्रान्ति समाप्त हो गयी।

जब देश स्वतन्त्र हो गया तब देश के कर्णधारों ने देश के आर्थिक पथ को प्रशस्त करने के लिए योजना कार्यान्वित की। सन् 1951 से विभिन्न क्षेत्रों में उत्पादन वृद्धि के लिए पंचवर्षीय योजनाओं का श्रीगणेश किया गया। कुछ हद तक तो सफलता हाथ भी लगी परन्तु खाद्यान्न एवं कृषि के क्षेत्र पूर्णतः उन्नति के पथ पर अग्रसरित नहीं हो सके। जब पंचवर्षीय योजनाएँ पूर्ण हो गयीं तो देश के निवासियों के लिए उदरपूर्ति की समस्या खड़ी हो गयी परिणामतः अनाज विदेशों से मंगाया जाने लगा जब देश के कर्णधार परेशान हो गये तो उन्होंने नई क्रान्ति की जो कि हरित क्रान्ति की संज्ञा से युक्त थी, नारा लगाया। हरित क्रान्ति कृषि की उन्नति के लिए सत प्रयास का द्योतक है।

भारतवर्ष कृषि प्रधान देश है। यहाँ के कृषकों का जीवन कृषि पर ही निर्भर है। खेती से उत्पादित अन्न हम लोगों को उपलब्ध होता है जिससे हमारा जीवन-यापन होता है।

लेकिन दुर्भाग्य के बादल मँडराने के कारण सहस्रों वर्षों तक इस भूमि की उपेक्षा होती रही। परिणाम यह हुआ कि किसान के निरन्तर प्रस्वेद धारा प्रवाहित करने तथा अथक प्रयास करने के बावजूद भी पेट भरने के लाले पड़ने लगे। विदेशी लोगों ने कुछ ऐसी कुटिल चाल चली जिसका प्रभाव जन एवं पशुओं पर पड़ा तथा वह उत्तरोत्तर ह्रासोन्मुख होने लगे। ऋण के भार से दबे हुए कृषक जब सिंचाई तथा कृषि-संरक्षण की सुविधाओं से वंचित हो गये तो वे उदरपूर्ति के लिए पूर्वजों से उपलब्ध कृषि-व्यवसाय का परित्याग कर कस्बों तथा शहर की शरण लेने लगे जिनके फलस्वरूप पूँजीपति किसानों से अत्यधिक परिश्रम कराने लगे तथा बहुत ही कम पारिश्रमिक देने लगे जिससे किसानों की दशा और भी दयनीय हो गयी। पूँजीपतियों के द्वारा सताये गये किसान शिक्षा के अभाव में कृषि के नवीन साधनों को भी उपलब्ध नहीं कर

पाये। उत्तरोत्तर जनसंख्या में वृद्धि होती रही तथा पारस्परिक विद्रोह की ज्वाला और भी धधकने लगी, जिससे समस्या और भी दुरूह हो गयी। जब जनसंख्या ने अत्यधिक भयंकर रूप धारण कर लिया तो पारस्परिक भूमि आबंटित होने लगी जिससे भूमि का अल्प भाग ही कृषकों को हाथ लगा।

जनसंख्या की अत्यधिक अभिवृद्धि के कारण तीस वर्ष पूर्व जिस परिवार के पास 20 हेक्टेयर भूमि खेती करने योग्य थी, आज हम देखते हैं कि वह भूमि भाई-भतीजों में विभाजित होकर 2 हेक्टेयर भी नहीं रही है। भूमि के अल्पावशेष रहने पर सारे परिवार का भरण-पोषण भी नहीं हो सकता तथा परिवार के लोगों को समुचित कार्य से वंचित रहना पड़ता है। सन् 1947 में देश ने स्वतन्त्रता तो प्राप्त करली परन्तु देश के करोड़ों कृषक जो निर्धनता के वातावरण में जीवन-यापन कर रहे थे। उनकी समस्याओं पर ध्यान नहीं दिया गया। स्वतन्त्रता के प्रभातकालीन सूर्य के उदित होने पर ही हमें अन्धकार की बेला ही दृष्टिगोचर होने लगी परिणाम यह हुआ कि हम अपने मस्तक को ऊँचा उठाने का गौरव प्राप्त नहीं कर सके।

स्थिति दिन-प्रतिदिन बिगड़ने लगी विवश होकर सरकार का ध्यान बिगड़ती स्थिति पर केन्द्रित हुआ। स्थिति पर नियन्त्रण करने के लिए अनेकों उपाय भी साध्य किये गये। हमारे देश में जो पहले जमींदारी प्रथा का प्रचलन था सरकार ने उसका उन्मूलन कर दिया। इससे किसानों को अत्यन्त राहत मिली क्योंकि वे पूँजीपतियों के ऋण से दबे हुए थे जिन किसानों के पास भूमि का अभाव था उन्हें भूमि प्रदान की गई परन्तु कृषि उत्पादन का क्षेत्र उन्नति के पथ पर अग्रसरित नहीं हो सका। उसके दो कारण थे। प्रथम कारण तो यह था जिन खेती करने वाले खेतिहारों के पास अपनी भूमि थी उसमें से गरीब किसानों को हिस्सा मिलने से उत्पादन कम हुआ तथा दूसरा कारण यह था छोटे किसानों की दशा इतनी चिन्तनीय थी कि वे बैल, खाद, ट्रैक्टर इत्यादि व अन्य आधुनिक कृषि साधनों से वंचित होकर बहुत कम अन्न उत्पादन करने की क्षमता थी। आचार्य विनोबा भावे ने भी भूमि समस्या का निराकरण करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उन्होंने भूदान-यज्ञ चलाया।

आचार्य विनोबा भावे ने समस्त जमींदारों को भूमिविहीन कृषकों को भूमि प्रदान करने की शिक्षा दी, जिससे भेदभाव की भावना का विनाश हो तथा

शान्ति स्थापित हो इस उपदेश का प्रभाव दोनों वर्गों धनिक एवं निर्धनों पर पड़ा तथा समानता की भावना जाग्रत हुई लेकिन व्यावहारिक तौर पर कोई सन्तोषजनक उपाय नजर नहीं आया। इसके दो कारण थे, प्रथम कारण तो यह था कि दान से उपलब्ध होने वाली भूमि खेती करने योग्य नहीं थी क्योंकि कुछ जमींदार सम्मान की इच्छा से भूमि का दान कर देते थे और यह भूमि कृषि के योग्य नहीं होती थी। दूसरा कारण यह था कि दान से उपलब्ध हुई भूमि अलग-अलग क्षेत्रों में विभाजित होती थी। वह भूमि कृषि करने के योग्य नहीं समझी जाती थी। इस तरह कहने मात्र के लिए जो भूमि-विहीन खेतिहर थे वे अब भूमि के स्वामी तो बन गये परन्तु फिर भी कृषि उत्पादन अधिक मात्रा में नहीं बढ़ पाया। उपरोक्त समस्याओं पर दृष्टिपात करते हुए "हरित क्रान्ति" की लहर जन-जन में व्याप्त हो गयी तथा सरकार का ध्यान कृषि की उन्नति की ओर गया एवं इस तरह की योजनाओं का निर्माण हुआ जिससे अन्य उपजाऊ भूमि हरित हो गयी। राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त की यह निम्नलिखित उक्ति सफल सिद्ध हुई —

"नीलाम्बर परिधान हरित पट पर सुन्दर है।"

जब प्रधानमन्त्री जवाहर लाल नेहरू का शासन था उस समय से ही हरित-क्रान्ति का प्रादुर्भाव हुआ। उन्हीं की संरक्षणता में अनेक कृषि विश्व-विद्यालय, कृषि अनुसंधान क्षेत्र तथा रासायनिक खाद के कारखानों का उद्-घाटन हुआ। उन्हीं के ही शासन में विभिन्न नदी घाटी योजनाएँ-भी शुरू की गयीं। तदुपरान्त जब भारत शिरोमणि लालबहादुर शास्त्री ने शासन की बागडोर अपने हाथ में संभाली तब 'जय जवान और जय किसान' के उद्घोष ने कृषि के उत्पादन में क्रान्तिकारी परिवर्तन किया। भारत शिरोमणि श्री लाल बहादुर शास्त्री ने अपनी कोठी के विस्तृत प्रांगण में कृषि कार्य कराकर तथा अत्यन्त गेहूँ उत्पादित कर देश के वासियों के समक्ष एक अटूट उदाहरण प्रदर्शित किया है 'स्वाधीनता शास्त्रों से ही रक्षित नहीं होती बल्कि कृषि-कार्य को भी अग्रसरित किया जाना चाहिए, इसके बाद जब श्रीमती इन्दिरा गाँधी जी ने प्रधानमन्त्री पद को अलंकृत किया तो उन्होंने भी कहा कृषि में आत्म-निर्भरता अत्यन्त ही अपेक्षित है, इस कार्यक्रम के द्वारा हरित क्रान्ति के पथ को प्रशस्त किया। जब हम हरित क्रान्ति की योजना पर विचार

करते हैं तो यह बात स्पष्ट हो जाती है कि हरित क्रान्ति का कार्य केवल कागजातों तथा समाचार-पत्रों पर ही निर्भर नहीं होता। भारतवर्ष के सभी गाँव इस योजना से सम्बन्धित थे। भारतवर्ष की नदियों तथा पर्वतों ने भी हरित-क्रान्ति में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। पर्वतों की घाटियों में जो जलधारा अजस्र प्रवाहित हो रही है उस धारा को एकत्रित करने के लिए नदी-घाटी योजनाओं का निर्माण हुआ जिनमें गोविन्दसागर बाँध, अर्जुन-सागर बाँध तथा शिवसागर बाँध की प्रमुख रूप से गणना की जाती है। प्रत्येक प्रान्त तथा शहरी अंचलों एवं ग्रामीण अंचलों में, पानी को एकत्रित करने की योजनाओं पर विचार किया जा रहा है फलतः ऐसी भूमि जो वर्षा के अभाव के कारण हरी भरी नहीं हो पाती थी। अब वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण भूमि को पुष्पित फलवित होने का गौरव प्राप्त होगा। भूमि को कृषि योग्य बनाने के लिए सिंचाई के साधनों का अधिक से अधिक उपयोग किया जा रहा है, तथा ग्रामीण अंचलों में भी छोटी-छोटी नहरों के माध्यम से सिंचाई की व्यवस्था की जा रही है।

रासायनिक खाद का तैयार करना ही हरित क्रान्ति का द्वितीय पाद है। रासायनिक खाद के लिए देश में सिन्दरी इत्यादि बहुत से स्थानों पर कारखानों का उद्घाटन किया गया है। जिनके माध्यम से सामान्य खादों की अपेक्षा अत्यधिक उत्पादन शक्ति प्रदान करने वाली खादों का निर्माण किया गया है। वैज्ञानिक उपकरण भी इसी की देन है। उदाहरण के लिए ट्रैक्टर एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा अल्प समय में ही खेती की जुताई एवं बुबाई हो जाती है। कुछ समय पूर्व खेती का अत्यधिक भाग टिड्डियों या अन्य रोगों के कीटाणुओं द्वारा नष्ट किया जाता था लेकिन भारत सरकार के अथक प्रयास के कारण निरन्तर औषधियों के प्रयोग से खेती को नष्ट होने से बचाया जा रहा है। उन्नत बीज भी हरित क्रान्ति में चार चाँद लगा देते हैं। हमारे देश के विभिन्न कृषि-अनुसन्धान बीजों में कृषि विशेषज्ञों ने इस तरह के बीजों की प्रजातियाँ निर्मित की हैं जो अत्यधिक अन्न को उत्पादित कर सकें। इसके साथ ही कृषक उन बीजों को खेती में बोकर अच्छी किस्म के बीज उत्पादित कर सकें।

देश में अनेक कृषि-विश्वविद्यालयों की स्थापना भी हरित क्रान्ति की एक देन है। विश्वविद्यालयों के जो कृषि फार्म हैं वे कृषकों के लिए पावन तीर्थ

धामों के तुल्य हैं। कृषि-फार्म कृषकों की खेती कराने में जानकारी कराने एवं उत्पादन वृद्धि के लिए बड़े ही उपयोगी सिद्ध होते हैं। कृषि विश्वविद्यालयों में स्थापित कृषि-अनुसन्धान केन्द्रों में बीजों की उत्पादन शक्ति बढ़ाने, भूमि की उत्पादन शक्ति बढ़ाने व उस क्षेत्र में जहाँ उत्पादन कम मात्रा में होता है वहाँ उत्पादन में वृद्धि करने तथा कृषि को हानिकारक कीटाणुओं से सुरक्षित करने में नवीन-नवीनतम आविष्कार किए जाते हैं जिसके परिणाम स्वरूप जहाँ पहले कृषक लोग कृषि-उत्पादन के विषय में चिन्तित रहते थे आज वे कृषि को शस्य-श्यामला, हरित धान्यों से समन्वित निहार रहे हैं।

कृषकों की आर्थिक दशा को सुधारने के लिए सरकार ने विभिन्न सरकारी समितियों का निर्माण, अल्प ब्याज पर ऋण देने की योजना तथा कृषि-बीमा इत्यादि के कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निर्वाह की है। किसी युग में हिन्दी गद्य के महान् लेखक श्री प्रेमचन्द ने कृषकों की दयनीय दशा पर चिन्ता व्यक्त करते हुए 'गोदान' में इस तरह लिखा है "भारत का किसान" कर्जदार के रूप में पैदा होता है, जीवन भर ऋण चुकाता रहता है और अन्त में कर्जदार के रूप में मर जाता है। परन्तु ज्यों-ज्यों समय चक्र परिवर्तित होता गया त्यों-त्यों कृषकों की दशा में सुधार होता गया पहले उन्हें बड़े-बड़े सूदखोरों, महाजनों या मुनाफाखोरों की कृपा पर आश्रित रहना पड़ता था लेकिन अब कम ब्याज पर ही सरकारी बैंकों या सहकारी समिति से ऋण उपलब्ध हो जाता है तथा जिसे किश्तों में सुविधा-पूर्वक चुकाया जा सकता है। पहले कृषि बीमा-योजना के अभाव के कारण दैवी प्रकोप से खेती नष्ट हो जाती थी लेकिन जब से कृषि बीमा-योजना प्रारम्भ हुई है जिससे खेती में कोई हानि नहीं पहुँचती।

कृषि विषयक अनेक प्रयोगों के कारण हरित-क्रान्ति में सफलता की लहर दौड़ गई है जिसमें सहकारी खेती, सघन खेती तथा खेती भी सम्मिलित है जब हम सरकारी कृषि-फार्मों पर दृष्टिपात करते हैं तो यह स्वतः ही स्पष्ट हो जाता है कि कृषि-फार्मों की योजनाएँ बड़ी ही लाभकारी हैं। क्योंकि भूमि छोटे-छोटे भागों में विभाजित हो जाती थी जिससे कृषि करने योग्य भाग मेड़ों तथा सीमाबन्दी के कारण अनुपयोगी सिद्ध हो जाता था। श्रम के विभाजित होने से कृषक लोग लाभ प्राप्त करने से वंचित रह जाते थे अब तो विज्ञान के नवीन आविष्कारों की लहर में एक गाँव में रहने वाले या

आस-पास के बहुत से किसान पारस्परिक सहकारी खेती करने के कारण एवं खेत में सिंचाई, बुबाई तथा कटाई का कार्य सम्पन्न कराने पर समय तथा धन के व्यय से बच जाते हैं तथा उत्पादन का भी पूरा लाभ प्राप्त कर लेते हैं। जिसके परिणामस्वरूप कृषकों में सहयोग की भावना में भी अभिवृद्धि हुई है।

सरकार ने अनाज के व्यापार को हाथ में लेने को जो सक्रिय कदम उठाया है उससे हरित क्रान्ति को आशातीत सफलता हाथ लगी है। इसके साथ ही निर्णय लेने का कदम अत्यन्त ही प्रशंसनीय है। क्योंकि उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि होने पर भी कृषक श्रम के उचित मूल्य से वंचित रह जाते थे तथा उपभोक्ताओं को जब अन्न की आवश्यकता होती थी तो महाजनों का मुँह ताकना पड़ता था। कृषकों को अपनी उपज का निश्चित मूल्य उपलब्ध होने पर मुनाफाखोर व्यापारी जो कीमतें बढ़ाने के लिए अन्न एकत्रित करते थे अब एकत्रित नहीं कर पायेंगे। इसका कारण यह है कि सरकार सारा सम्पूर्ण अन्न क्रय करेगी तथा उपभोक्ताओं में वितरण करेगी।

निष्कर्षतः हरित क्रान्ति के पहलुओं पर विचार करने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारे देश में पर्याप्त परिवर्तन दिखाई देने लगा है क्योंकि देश को आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न करने के लिए हरित-क्रान्ति अत्यधिक अपेक्षित थी।

76

ओलम्पिक खेल तथा भारत

विचार-तालिका

- प्रस्तावना—शारीरिक महत्ता
- ओलम्पिक खेलों का इतिहास
- ओलम्पिक खेल अन्तर्राष्ट्रीय खेलों के रूप में
- ओलम्पिक खेलों का आयोजन
- उपसंहार

"खेल जीवन खेल,
उसमें जीत जाना चाहता हूँ,
मीत मैं तो सिंधु के
उस पार जाना चाहता हूँ।"

"शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्"

अर्थात् शरीर ही सर्वप्रथम धर्म का साधन है। विद्वानों ने शरीर का तात्पर्य स्वस्थ शरीर से लगाया है। रोग से ग्रस्त, कमजोर या तत्वहीन शरीर से तात्पर्य अभिव्यक्त नहीं किया है। प्राचीन शास्त्रों में शरीर के रक्षण तथा विकास के लिए नियम तथा संयम बतलाये गये हैं जिससे आहार एवं विहार से सम्बन्धित विभिन्न सिद्धान्तों की अभिव्यक्ति होती रही है परन्तु निष्कर्षतः सभी देशों के विचारक 'खेलकूद उत्तम स्वास्थ्य की कुञ्जिका' होते हैं इस सिद्धान्त पर पूर्णतः अपनी सहमति व्यक्त करते हैं।

जब हम ओलम्पिक खेलों के इतिहास पर दृष्टिपात करते हैं तो यह बात ज्ञात होती है कि इनका इतिहास अत्यन्त पुरातन है। कुछ विद्वानों के मतानुसार इनका प्रारम्भ ईसा से लगभग 1250 वर्ष पूर्व हरक्यूलिस ने किया था ओलम्पिया नामक नगर एक धार्मिक तीर्थस्थल था। वहाँ हिरादेवी आराध्य देवी के रूप में प्रतिष्ठित थीं। इस मन्दिर का निर्माण ईसा से एक हजार वर्ष पूर्व हुआ था। देवी के प्रति सम्मान को प्रदर्शित करने के लिए प्रत्येक पाँच वर्ष बाद खेलों का समायोजन होता था। स्त्रियाँ इन खेलों के समायोजन को देखने एवं भाग लेने से वंचित रह जाती थीं। लगभग 1650 वर्षों तक इन खेलों का समायोजन होता रहा परन्तु सन् 394 ई० में ओलम्पिक खेलों का समायोजन समाप्त हो गया। तदुपरान्त लगभग 1400 वर्ष पश्चात् सन् 1829 में पुरातत्त्ववेत्ताओं ने खुदाई करते समय ओलम्पिक नगर के अवशेषों का अनुसन्धान किया इसके परिणामस्वरूप ग्रीक के निवासियों में ओलम्पिक खेलों के आयोजन के लिए पुनः हृदय में उत्ताल तरंगें हिलोरें लेने लगीं। अतः सन् 1859 में ओलम्पिक खेल प्रारम्भ हुए परन्तु प्रारम्भ के तीन-चार ओलम्पिक खेलों में असफलता ही हाथ लगी। ओलम्पिक खेलों का इतिहास सन् 1896 से प्रारम्भ होता है तब से ये खेल अत्यधिक लोकप्रिय होते गये हैं।

ओलम्पिक खेलों में भाग लेने के लिए संसार के सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी विभिन्न देशों से आते हैं तथा अपने प्रतिद्वन्द्वी को परास्त कर संसार में 'कीर्ति' अर्जित कर अपने नाम को धन्य करते हैं। जब हम प्रतियोगिताओं पर दृष्टिपात करते हैं तो विभिन्न प्रकार की दौड़ें, तैराकी भारोत्तोलन, फुटबाल, हॉकी एवं निशाने बाजी आदि विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिताएँ होती हैं। जब विजेता प्रथम तीन स्थान उपलब्ध कर लेते हैं तो उन्हें क्रमशः स्वर्ण, रजत तथा कांस्य पदक प्रदत्त किए जाते हैं। ओलम्पिक खेलों में कीर्ति अर्जित करने के लिए खिलाड़ी को शरीर की आहुति अर्पित करनी पड़ती है। अथक परिश्रम करना पड़ता है। तभी सफलता हाथ लगती है।

जब हम ओलम्पिक खेलों पर दृष्टिपात करते हैं तो यह बात स्पष्ट हो जाती है कि अन्तर्राष्ट्रीय उत्सवों के रूप में ये खेल हमारे समक्ष उपस्थित होते हैं। ओलम्पिक खेलों की तैयारियाँ कई महीने पूर्व से ही की जाती हैं। जहाँ इन खेलों का आयोजन होना होता है वहाँ एक ओलम्पिक नगर की स्थापना की जाती है। स्थापित नगर में खिलाड़ी निवास करते हैं। इस तरह पन्द्रह दिन तक खेलों का आयोजन होता है। जहाँ प्रमुख स्टेडियम होता है वहाँ खेलों का आयोजन होने से पूर्व समस्त खिलाड़ी एकत्र होते हैं। मुख्य स्टेडियम पर तोपों की सलामी दी जाती है तथा ध्वजारोहण होता है, इसके साथ ही हजारों की संख्या में कबूतरों को उड़ाया जाता है। तत्पश्चात् ओलम्पिक ज्योति प्रदीप्त की जाती है। ओलम्पिक के खेलने वाले इस प्रदीप्त ज्योति को क्रमशः भागते हुए स्टेडियम तक ले जाते हैं। ओलम्पिक शपथ का विवरण निम्नवत् है जो खिलाड़ी ग्रहण करते हैं—

"हम शपथ ग्रहण करते हैं कि हम इन ओलम्पिक खेलों में, खेलकूद की कीर्ति और अपने देश के सम्मान के लिए खिलाड़ी की सच्ची भावना से इन खेलों के नियमों का पालन करते हुए ईमानदारी से भाग लेंगे।" तत्पश्चात् खेल प्रारम्भ हो जाते हैं। अंग्रेजी भाषा के 'सीटिअस आल्टिअस, फोर्टिअस, इनका तात्पर्य है फुर्ती, उच्चता एवं बलशीलता, ये ओलम्पिक खेलों के आदर्श वाक्य होते हैं। इन तीनों आदर्श शब्दों के माध्यम से ही योग्य खिलाड़ी को अपने खेल में विजयश्री हाथ लगती है। जैसे यदि कोई खिलाड़ी 150 मीटर या 250 मीटर के धावन में भाग लेता है तो उसकी फुर्ती की परीक्षा होती

है लेकिन 26360 मीटर के मैराथन के धावन में भाग लेता है तो इससे खिलाड़ी की बलशीलता की परीक्षा होती है।

इस वर्ष 19 जुलाई 1980 को सोवियत संघ की राजधानी में बड़े अदम्य उत्साह के साथ ओलम्पिक के खेल प्रारम्भ हुए। संसार के जो विस्तृत शहर हैं उनमें प्रत्येक चार साल के बाद खेलों का आयोजन होता है। मास्को जो सोवियत संघ की राजधानी है उसके अतिरिक्त तालिन, मिस्क, कीव व लेनिनग्राद में 203 पदक सेटों की उपलब्धि के लिए 31 ओलम्पिक प्रतियोगिताएँ सम्पन्न हुईं, जिनका विवरण आगे प्रस्तुत किया जा रहा है—

प्रतियोगिताएँ	**पदकों के सेट**		
	पुरुष	महिला	योग
1. साइकिलिंग	6	—	6
2. घुड़सवारी	6	—	6
3. भारोत्तोलन	10	—	10
4. जूडो	8	—	8
5. यार्टिंग	6	—	6
6. हैंडबाल	1	1	2
7. रोइंग	8	6	14
8. हॉकी	1	1	2
9. तैराकी	13	13	26
10. मॉडर्न पेंटाथलान	2	—	2
11. डाइविंग	2	2	4
12. वाटरपोलो	1	—	1
13. एथलेटिक्स	24	14	38
14. केनोइंग	9	2	11
15. बाक्सिंग	11	—	11
16. तीरंदाजी	1	1	2
17. वॉलीबाल	1	1	2
18. फुटबाल	1	—	1
19. बास्केट बाल	1	1	2

20. फेंसिंग	8	—	8
.21. कुश्ती-फ्रीस्टाइल	10	—	10
ग्रीको रोमन	10	—	10
22. जिमनास्टिक	8	6	14

सन् 1902 में विभिन्न कारणों के होने से ओलम्पिक खेल स्थगित हो गये लेकिन सन् 1806 ई० में पुनः इनकी शुरूआत की गयी तब से लेकर चार-चार वर्ष के उपरान्त विश्व के जो बड़े धनाढ्य शहर हैं उनमें खेल प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाता है। दौड़ प्रतियोगिता की ही प्रमुख भूमिका रहती है। इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिताओं जैसे हॉकी, कुश्ती, चक्का फेंक, ऊँची कूद, साइकिल दौड़, गोलदानी इत्यादि का आयोजन किया जाता है। खिलाड़ियों को तीन प्रकार के पुरस्कार प्रदत्त किए जाते हैं प्रथम स्वर्ण पदक, द्वितीय रजत पदक तथा तृतीय कांस्य पदक। हॉकी प्रतियोगिता में इस वर्ष भारत ने स्वर्ण पदक प्राप्त कर देश के मस्तक को ऊँचा किया है।

सन् 1928 में भारतवर्ष ने ओलम्पिक के इतिहास में मसर्टडम में हॉकी की प्रतियोगिता में स्वर्ण पदक प्राप्त कर इतिहास की महिमा में आशातीत अभिवृद्धि की तब से लेकर भारतवर्ष ने 1960 ई० तक स्वर्णपदक प्राप्त कर देश को गौरवान्वित किया। सन् 1964 ई० में उसने रजत पदक तथा सन् 1958 में मैक्सिको से एवं सन् 1972 ई० में कांस्य पदक ही उपलब्ध हुआ। सन् 1976 ई० में भारतवर्ष के दुर्भाग्य का सितारा उदित होने से 7वाँ स्थान ही हस्तगत हो पाया तथा उत्तरोत्तर हॉकी के अतिरिक्त अन्य खेलों में भी निराशा हाथ लगती गयी। तैराकी, लम्बी दौड़, निशानेबाजी, भारोत्तोलन तथा कुश्तियों के सम्बन्ध में भारत की दशा में काफी मात्रा तक सुधार हुआ है। सन् 1976 ई० में मांट्रियल ओलम्पिक में तो भारतवर्ष ने 800 मीटर दौड़ में श्री रामसिंह नामक खिलाड़ी ने फाइनल में पहुँचकर एशिया के सर्वोत्तम धावक की पदवी को अलंकृत किया लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय तौर पर सातवाँ स्थान ही उपलब्ध हो पाया। उनसे पूर्व भारतीय धावकों—हेनरी, रेबेलो, मिलखासिंह एवं गुरुवचनसिंह ने नाम को उजागर कर महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। ये सब प्रशंसा के पात्र हैं।

इस प्रकार भारतीय ओलम्पिक के खेलों पर जब हम दृष्टिपात करते हैं तो यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भारत का स्थान अत्यन्त ही निराशाजनक है क्योंकि भारत एक महान् देश है तथा अन्य देश इसकी अपेक्षा विस्तृत नहीं हैं फिर भी इतने विस्तृत देश का अन्य देशों की तुलना में यदि पतन हो जाय तो इससे बढ़कर लज्जाजनक बात और क्या हो सकती है। कुछ विद्वानों का मत है कि कुछ लोग ऐसे हैं जो खेलों में खेली जाने वाली गुटबन्दी की राजनीति में सक्रिय भाग लेते हैं जिसके कारण देश पतनोन्मुख है। कुछ विद्वान ऐसा भी कहते हैं कि खेलों को खेलने से पूर्व उनका अभ्यास नहीं किया जाता है एवं प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था नहीं हो पाती। अतः हम भारतीयों का कर्त्तव्य है कि लोगों के अन्दर खेलने की भावना जाग्रत करें।

77

लॉस एंजिल्स में ओलम्पिक खेल-कूद

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- प्रारम्भ में ओलम्पिक खेलों का स्वरूप
- ओलम्पिक का नामकरण
- लॉस एंजिल्स में खेलों का आयोजन
- आय-व्यय तथा खिलाड़ियों का विवरण
- उपसंहार

विश्व-स्तर पर ओलम्पिक-खेलों का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। ओलम्पिक खेलों ने स्वयं का कीर्तिमान स्थापित किया है। शौकिया खेल प्रतियोगिताओं में ओलम्पिक अपना शानी नहीं रखती। यदि हम इसके विगत इतिहास पर दृष्टिपात करें तो यह बात उजागर होती है कि शौकिया एवं परम्परागत रूप से इसको सबसे पहले 776 बी० सी० में ग्रीस के अन्तर्गत ओलम्पिया में प्रारम्भ किया गया था। इसके पश्चात् ये खेल समय-समय पर आयोजित होते रहे। दुर्भाग्यवश ग्रीस परतन्त्रता की जंजीरों में जकड़ गया। सम्राट थियोडोसियस ने इन खेलों को बन्द कर दिया।

प्रारम्भ में ओलम्पिक खेलों का आयोजन केवल एक दिन के लिए सम्पन्न किया जाता था। इसके अन्तर्गत यह प्राविधान था कि स्टेडियम की लम्बाई तक पग दौड़ होती थी इसके पश्चात् लम्बी कूद, भाला फेंक, मुक्केबाजी एवं कुश्ती आदि को भी इन ओलम्पिक प्रतियोगिताओं में सम्मिलित कर दिया गया।

ओलम्पिक खेलों में भाग लेने वालों में विभिन्न देशों के प्रमुख तथा सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी सम्मिलित होते हैं। खिलाड़ी अपने प्रतिद्वन्दी को परास्त करके अपना तथा राष्ट्र का नाम उजागर करते हैं। उनकी विजय राष्ट्र के गौरव में चार चाँद लगा देती है।

विजेता प्रतियोगियों में जो प्रथम तीन स्थान प्राप्त करने वालों को क्रमशः स्वर्ण, रजत तथा कांस्य के पदक प्रदत्त किए जाते हैं। ओलम्पिक खेलों में विजयश्री का वरण करना कोई हँसी खेल नहीं है। इसमें खिलाड़ी को खेल रूपी यज्ञ स्थल में अपने शरीर की आहुति अर्पित करनी पड़ती है तब कहीं जाकर यह लक्ष्य की ओर अग्रसर होता है।

ओलम्पिक खेलों की तैयारियाँ अनेक माह पूर्व की जाती हैं। जहाँ खेलों का आयोजन होता है वहाँ ओलम्पिक नगर की स्थापना प्रमुख कार्य है। स्थापित इस नगर में ही विभिन्न देशों के खिलाड़ी आकर ठहरते हैं। प्रमुख स्टेडियम में सभी खिलाड़ी एकत्र होते हैं। मुख्य स्टेडियम पर तोपों की सलामी दी जाती है एवं ध्वजा-रोहण होता है। इसके पश्चात् हजारों कबूतरों को उड़ाया जाता है। इसके पश्चात् ओलम्पिक ज्योति प्रज्वलित की जाती है। खिलाड़ी इस प्रज्वलित ज्योति को क्रमशः दौड़ते हुए स्टेडियम तक ले जाते हैं। ओलम्पिक खेलों में भाग लेने वाले खिलाड़ियों की शपथ का प्रारूप निम्न प्रकार है—

"हम शपथ ग्रहण करते हैं कि हम इन खेलों में खेल-कूद की कीर्ति और अपने देश के सम्मान के लिए खिलाड़ी की सच्ची भावना से इन खेलों के नियमों का पालन करते हुए ईमानदारी से भाग लेंगे।" इसके बाद खेल प्रारम्भ होते हैं।

खेलों के नामकरण के सम्बन्ध में दो प्रमुख तथ्य हैं। सबसे प्रथम तो यह है कि ओलम्पिक पर्वत पर धार्मिक उत्सवों के रूप में इन खेलों का

आयोजन किया जाता था। फलस्वरूप ये खेल ओलम्पिक खेलों के नाम से विख्यात हुए। दूसरा तर्क यह है कि ओलम्पिक पर्वत पर धार्मिक उत्सव चार वर्ष के बाद सम्पन्न होता था। चार वर्ष के अन्तराल को योरूप में ओलम्पिया नाम से सम्बोधित करते हैं। इस तरह चार वर्ष के बाद खेले जाने वाले इन खेलों को ओलम्पिया कहते हैं।

ओलम्पिक खेलों का प्राथमिक रूप आज की भाँति नहीं था। शुरू में इन खेलों के अन्तर्गत अश्व का दौड़ना, रथों की दौड़ तथा नृत्य-संगीत समाविष्ट था। भारत में कभी उत्सवों के अवसरों पर ऊँट, घोड़े तथा बैल-गाड़ी की दौड़ का प्रचलन था। आज भारत विकास के मार्ग पर अग्रसर हो रहा है। पुराने खेलों के प्रारूप नवीनतम के साँचे में ढलते जा रहे हैं। परिणामस्वरूप यूनान देशों में खेल नवीनता की ओर उन्मुख हैं।

बैरनपियरे ने ओलम्पिक खेलों को अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान किया। खेलों की व्यवस्थापक समिति को भी अन्तर्राष्ट्रीय रूप प्रदान करना अपेक्षित था। स्थान चयन, आय-व्यय का हिसाब रखना भी समिति का ही उत्तर-दायित्व है। इस समिति में प्रत्येक देश के एक से लेकर अधिक से अधिक तीन सदस्य हो सकते हैं। प्रतियोगी टीम के व्यय का भार उस देश की सरकार वहन करती है।

ओलम्पिक खेलों में पहली बार इन खेलों का आयोजन करने का व्यय भार व्यावसायिक संगठनों ने अपने ऊपर लिया। विगत खेलों की तुलना में लॉस एंजिल्स में व्यय को कम करने का निश्चय किया गया। इन खेलों का सम्पूर्ण व्यय 4870 लाख 5000 लाख डॉलर है। इस सम्पूर्ण व्यय को वहन करने के बावजूद 110 लाख डॉलर का लाभ होगा। अमरीकी ओलम्पिक कमेटी के अध्यक्ष विलियम, सिमोन के शब्दों में—"200 लाख डॉलर का एक कोष तैयार करने की हमारी योजना है ताकि कोलोराडो एवं न्यूयार्क के ओलम्पिक प्रशिक्षक जैसे केन्द्र अन्य स्थानों पर भी स्थापित किए जा सकें।"

लॉस एंजिल्स विश्व का प्रथम नगर है जो द्वितीय बार 28 जौलाई से 12 अगस्त तक आयोजित करने के निमित व्यापक रूप से तैयारी करने में संलग्न है। इससे पहले सन् 1932 में भी इसी नगर ने ओलम्पिक की मेजबानी करने का सौभाग्य पाया था। खेल-कूदों का अन्तर्राष्ट्रीय आयोजन

राष्ट्रीय दायित्व के परिधि में आता है। इस कार्य में भारी धन की तो अपेक्षा है साथ ही तैयारियाँ भी व्यापक रूप से की जाती हैं।

लॉस एंजिल्स ओलम्पिक खेल-कूद में 145 देशों के अनुमानतः 9 हजार खिलाड़ी और 4 हजार अधिकारियों ने भाग लिया। विश्व के कोने-कोने से करीब 90 हजार दर्शक तथा 8000 संवाददाता पधारे।

भारत में जो एशियाड सम्पन्न हुआ उसकी अपेक्षा लॉस एंजिल्स ओलम्पिक खेल-कूद आयोजन तिगुना था। इलेक्ट्रानिकी के माध्यम से विभिन्न प्रतियोगिताओं के परिणामों को अविलम्ब दुनियाँ के अन्य सुदूर स्थानों पर भेजा गया है। एक अमरीकी फर्म ने 1300 लाख डॉलर के संयंत्र ऐसे वृहद् आयोजन को सम्पन्न करने के लिए प्रदत्त किये हैं। 45000 के लगभग कर्मचारियों ने निर्धारित समय से भी अधिक कार्य करके इस खेल प्रतियोगिता को सफल बनाने का भगीरथी प्रयास किया है। यह बात उल्लेखनीय है कि सोवियत संघ सहित 14 समाजवादी देशों ने इन खेलों का पूर्णतः बहिष्कार किया है। ओलम्पिक ज्योति को स्टेडियम में लाने का श्रेय अमरीका के काले धावक जैसी ओवन्स की पौत्री को प्राप्त हुआ। विभिन्न देशों को मिलने वाले पदकों की सूचना निम्नवत् है—

देश	स्वर्ण	रजत	कांस्य
अमेरिका	63	61	30
रोमानिया	20	16	16
पश्चिम जर्मनी	17	16	23
चीन	15	8	9
इटली	14	6	12
कनाडा	10	18	16
स्वीडन	2	11	6
फिनलैण्ड	4	3	6
नीदरलैण्ड	5	2	6
आस्ट्रेलिया	4	8	12
फ्रांस	5	7	15
इंग्लैण्ड	5	10	22
दक्षिण कोरिया	6	6	7

देश	स्वर्ण	रजत	कांस्य
यूगोस्लाविया	7	4	7
जापान	10	8	14
न्यूजीलैण्ड	8	1	2
मैक्सिको	2	3	1
मोरक्को	2	0	0
ब्राजील	1	5	2
स्पेन	1	2	2
बेल्जियम	1	1	2
आस्ट्रिया	1	1	1
पाकिस्तान	1	1	1
स्विटजरलैण्ड	0	4	4
केन्या	1	0	1
डेनमार्क	0	3	3
जमैका	0	1	2
नार्वे	0	1	2
यूनान	0	1	1
नाइजीरिया	0	1	1
मिस्र	0	1	0
कोलम्बिया	0	1	0
प्यूरिटोरिको	0	1	1
आइवरी कोस्ट	0	1	0
पेरु	0	1	0
सीरिया	0	1	0
थाइलैण्ड	0	1	0
तुर्की	0	0	3
बेनेजुएला	0	0	3
अल्जीरिया	0	0	2
पुर्तगाल	0	0	2

केमरून	0	1	1
डोमीनिकरिप०	0	0	1
आइसलैण्ड	0	0	1
जाम्बिया	0	0	1
ताइवान	0	0	1

इस प्रकार विभिन्न देशों के खिलाड़ियों ने लॉस एंजिल्स की ओलम्पिक खेल-कूद प्रतियोगिता में सोत्साह भाग लिया। सभी खिलाड़ियों ने ओल-म्पिक की उदार परम्पराओं का हृदय से पालन किया। राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन ने 22 वें ओलम्पिक खेलों के प्रारम्भ की घोषणा करके विश्व की कोटि-कोटि जनता की हृदय-तन्त्री को झंकृत कर दिया। रंगारंग वस्त्रों में खिलाडियों की मार्च-पास्ट देखते ही बनती थी! इस प्रकार के खेलों का आयोजन द्वेष, जलन, घृणा तथा हिंसा की ज्वाला में जलते हुए विश्व के लिए प्रेम, सहयोग तथा भाईचारे की भावना को विकसित तथा पल्लवित करने वाला सिद्ध होगा। मानव अपने से भिन्न सभ्यता तथा संस्कृति में पले मानवों के सम्पर्क में आकर स्वयं के ज्ञान की वृद्धि करता हुआ एक विशाल दृष्टिकोण को अपनायेगा ये विश्व मंगल का सूचक है।

78

युवकों के प्रेरणा श्रोत संजय गांधी

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- युवा वर्ग को प्रेरित करने में श्री संजय गाँधी की भूमिका
- वेशभूषा
- युवकों का संगठन
- पाँच सूत्रीय कार्यक्रम
- इन्दिरा गाँधी की पराजय
- श्री संजय गाँधी को मुख्य मन्त्री बनाने का प्रस्ताव

- मृत्यु
- उपसंहार

"वे बड़े-बड़े भूचाल
धरा को जो हिलाया करते हैं,
वे बड़े-बड़े तूफान
जो सागर में आया करते हैं
पथ रोक नहीं मेरा सकते,
भयभीत न मुझको कर सकते।"

किसी कवि द्वारा वर्णित उपर्युक्त पंक्तियाँ श्री संजय गाँधी के व्यक्तित्व पर पूर्णतः घटित होती हैं। महान् माँ का महान् सपूत अपने अल्पकाल में अपनी यश चन्द्रिका को भारत की धरती पर बिखरा कर काल के अनन्त गाल में समा गया। यद्यपि संजय गाँधी को भारतीय जनता इतना दृढ़ तथा उच्च विचारों वाला पहिले नहीं समझती थी। उनके व्यक्तित्व में निखार तो राज-नीति क्षितिज पर कदम रखने पर ही प्रगट हुआ।

आज देश के युवा वर्ग में नवीन प्राण प्रतिष्ठा करने के क्षेत्र में श्री संजय गाँधी का महत्त्वपूर्ण योगदान है। प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी के बेटे एवं पंडित जवाहरलाल नेहरू के पौत्र 33 वर्षीय संजय गाँधी ने युवा काँग्रेस के क्रिया कलापों में जब से भाग लेना प्रारम्भ किया तबसे निश्चित रूप से युवक संगठन काँग्रेस को एक नवीन सम्मान तथा नवीन आयाम प्राप्त हुए। इतना नहीं श्री संजय गांधी ने संगठन के द्वारा युवकों को राष्ट्र के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन में क्राँति करने के लिए प्रेरित किया। वास्तव में सन् 1975 तक संजय को मारुति कार के निर्माता के रूप में जाना जाता था लेकिन 9 दिसम्बर 1974 में वह अखिल भारतीय युवक कांग्रेस की कार्य-कारिणी के सदस्य मनोनीत किए गए तब से वे निरन्तर जीवन के अन्तिम क्षणों तक देश के निर्माण में प्राण-पण से जुटे रहे।

ऊँचे पूर्ण कद-काठी के 33 वर्षीय संजय गाँधी सदा खादी का कुर्ता, पाजामा तथा पैरों में साधारण चप्पल पहनते थे। उनके मुख-मण्डल पर सदैव हँसी बिखरी रहती थी। उनसे औपचारिकता कोसों दूर थी। बातचीत में भी सदैव संक्षिप्तता विद्यमान रहती थी। वे बड़े तेजस्वी थे। स्पष्ट वादिता

उनके स्वभाव का प्रथम गुण था। वे कल्पना लोक में विचरण न करके धरती के ही निकट थे परिणामस्वरूप व्यावहारिकता उनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी। श्री संजय गाँधी का व्यक्तित्व बड़ा ही आकर्षक तथा मन को लुभाने वाला था। उनके व्यक्तित्व से ही प्रभावित होकर युवा पीढ़ी ने उनको अपना हृदय सम्राट बना लिया था।

युवक कांग्रेस में पदार्पण करने के पश्चात् श्री संजय गाँधी ने अपना उद्देश्य निश्चित किया। उन्होंने यह बात भली प्रकार हृदयंगम कर ली थी कि जब तक देश के युवा वर्ग को रचनात्मक कार्यों की ओर अभिमुख नहीं किया जायेगा तब तक देश का निर्माण होना अत्यन्त ही दुष्कर है। इसी लक्ष्य की सिद्धि हेतु उन्होंने युवकों को संगठित करना प्रारम्भ कर दिया। श्री संजय गाँधी ने अपने विचार स्पष्ट करते हुए कहा था कि हमारी विचार-धारा न तो दक्षिणपंथी होनी चाहिए और न वामपंथी। देश का हित, उद्धार तथा सर्वजन-कल्याण हमारा प्रमुख लक्ष्य होना चाहिए। इसी से प्रेरित होकर उन्होंने पाँच सूत्रीय कार्यक्रम देश के समक्ष प्रस्तुत किया। संजय गाँधी द्वारा निरूपित पाँच सूत्रीय कार्यक्रम निम्नानुसार है—

(1) वृक्षारोपण
(2) समृद्धि हेतु नियोजित परिवार
(3) युवकों का जातिप्रथा विरोधी अभियान
(4) दहेज प्रथा का विरोध।
(5) शिक्षित युवक-युवती कम से कम एक व्यक्ति को साक्षर बनायें।

इतिहास के पृष्ठ इस बात के साक्षी हैं कि समाज की जर्जर व्यवस्था को तोड़ने में, आर्थिक ढाँचे को नवीन रूप प्रदत्त करने में तथा भेदभाव एवं ऊँच-नीच की फौलादी दीवारों को धराशायी करने में युवा वर्ग का बहुत महत्त्व-पूर्ण योगदान रहा है। सभी पूर्वाग्रहों से मुक्त तथा नवीन चेतना से अनुप्रा-णित विचारधारा ही समाज की जर्जरित व्यवस्था को धाराशायी करने में सक्षम सिद्ध हो सकती है। भारत का सामाजिक रूप अत्यन्त ही विकृत, जर्जरित तथा रुग्ण हो चुका है। फलतः युवावर्ग का उत्तरदायित्व और भी बढ़ जाता है। यह भारत देश के लिए बड़े ही सौभाग्य का विषय था कि श्री संजय गाँधी ने भारत की सामाजिक कमजोरियों का निकट से निरीक्षण

तथा परीक्षण करने के पश्चात् उनका निराकरण करने का भगीरथी प्रयत्न किया।

जब युवक काँग्रेस ने संजय गाँधी के कार्यक्रम के अनुसार कार्य करना प्रारम्भ किया तो परिवार-नियोजन कार्यक्रम में अभूतपूर्व गति आई। सारे देश में वृक्षारोपण के माध्यम से चहुँ ओर हरियाली का वातावरण छा गया। केन्द्र तथा राज्य के द्वारा इन कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए प्रभावशाली कदम उठाये गये। केन्द्र ने परिवार-नियोजन के सन्दर्भ में राज्यों को इतनी स्वतन्त्रता प्रदान करदी कि यदि वे चाहें तो अपने यहाँ परिवार-नियोजन को अनिवार्य घोषित कर सकते हैं।

दहेज-प्रथा भी भारतीय समाज में कोढ़ की तरह व्याप्त है। इस दहेज प्रथा के कारण न जाने कितनी युवतियाँ अत्याचार की चक्की में पिस रही हैं। संजय गाँधी के नेतृत्व में युवा वर्ग ने दहेज-विरोधी अभियान प्रारम्भ किया। सौभाग्यवश इसके बड़े ही शुभ परिणाम निकले। अनेक राज्यों द्वारा दहेज न लेने विरोधी कानून बनाये गये। सहस्रों युवकों तथा युवतियों ने दहेज न लेने-देने का संकल्प दुहराया। इसका परिणाम यह निकला कि जो सुयोग्य कन्या धनाभाव के कारण अपने मन के उपयुक्त जीवन साथी का चयन करने में असमर्थ थी। अब चैन की साँस लेने लगी तथा उसके हृदय के कोने से संजय के लिए कोटि-कोटि धन्यवाद के शब्द मुखरित होने लगे।

जाति प्रथा के उन्मूलन के लिए भी संजय ने युवावर्ग में नवीन प्रेरणा भरी। आज भारत देश अनेक जाति तथा उपजाति में बँटा हुआ है और फिर जितनी जातियाँ तथा उपजातियाँ हैं उतने ही उनके हित हैं। फलतः राष्ट्र का हित पीछे तथा जातीयता का हित आगे आ जाता है। अतः इस संक्रामक रोग से भी संजय ने देश को मुक्त करने का जी तोड़ प्रयास किया।

समय परिवर्तनशील है तथा इसके चक्र से कोई कब अछूता रह सकता है। यद्यपि संजय गाँधी का पाँच सूत्रीय कार्यक्रम देश के हितार्थ प्रस्तुत किया गया था लेकिन अफसरशाही तथा चाटुकार कर्मचारियों ने कुछ अतिश्योक्ति कर दी फलतः देश के अन्दर इन कार्यक्रमों के प्रति एक विद्रोह की ज्वाला सुलगने लगी। विवश होकर 25 जून 1975 को आपात स्थिति लागू की गई। इसमें देश के अनेक प्रसिद्ध जन-नेता जेल के सींकचों में बन्द कर दिये गए। सन्

1977 में चुनाव की घोषणा की गई। इस निर्वाचन में इन्दिरा गाँधी तथा उनकी सरकार बुरी तरह पराजित हुई। श्रीमती इन्दिरा गाँधी के पराभव के पश्चात् जनता सरकार प्रबल बहुमत से विजयी हुई तथा सत्ता को सम्हाल लिया लेकिन ये विभिन्न राजनैतिक दल एक साथ नहीं रह सके पुनः चुनाव हुए तथा इन चुनावों में इन्दिरा गाँधी प्रबल बहुमत से विजयी हुई तथा संजय गाँधी भी अपने पूर्व निर्धारित क्षेत्र अमेठी से प्रबल बहुमत से लोकसभा के सदस्य चुने गए। श्री संजय गाँधी के चुनाव जीतने की सूचना जैसे ही प्रसारित हुई वैसे ही युवकों के हृदय बल्लियों प्रसन्नता से उछलने लगे।

श्रीमती इन्दिरा गाँधी भी अपने ऐसे होनहार पुत्र को प्राप्त करके स्वयं को धन्य मान रही थीं। यह कल्पना उनके मन-मानस को असीम उल्लास प्रदान कर रही थी कि अब संजय के माध्यम से सक्रिय राजनीति में उनको कुछ राहत मिलेगी। इस विश्व में किसी की मन-कामना कभी भी सफलीभूत नहीं होती है। संजय ने श्रीमती इन्दिरा की केन्द्र में सरकार बनने के पश्चात् राजनीति में सक्रिय भाग लेने के साथ ही देश के नव-निर्माण की अनेक योजनाएँ संचालन करना प्रारम्भ कर दिया।

संजय के व्यक्तित्व से प्रभावित होने के कारण ही उत्तर प्रदेश जो कि भारत देश की आबादी का सबसे बड़ा भाग है का मुख्यमन्त्री बनाने का प्रस्ताव रक्खा गया। देश का युवा वर्ग इस प्रस्ताव से गद्‌गद् हो गया। लेकिन श्रीमती इन्दिरा गाँधी यह कदापि नहीं चाहती थीं कि देशवासी कभी यह अनुभव करें कि वे अपने पुत्र को येन केन प्रकारेण सत्ता सौंपना चाहती हैं फलतः इन्दिरा गाँधी ने श्री संजय गाँधी को उत्तर प्रदेश का मुख्यमन्त्री बनाने के प्रस्ताव को अस्वीकृत कर दिया। संजय गाँधी ने भी पद लिप्सा से दूर रहकर जनता जनार्द्धन की सेवा करने के व्रत को दुहराया।

साहसी एवं दृढ़ संकल्पी मानव मृत्यु तथा जीवन के मध्य कदापि दूरी स्थापित नहीं करते हैं वे सदैव आग तथा अंगारों से खेला करते हैं। संजय गाँधी भी इसके अपवाद नहीं थे। उनको हवाई जहाज में प्राणों को संकट में डालकर कलाबाजी खेलने का अत्यधिक चाव था। एक दिन प्रातः की बेला में जब सूर्य भगवान सम्पूर्ण धरती को अपनी सुनहरी किरणों से भाषित कर रहे थे तभी अपने अनन्य मित्र श्री अनिल सक्सेना के साथ वायुयान उड़ाते

समय इनका वायुयान दुर्घटनाग्रस्त हो गया। पेड़ से टकराकर जहाज ध्वस्त होकर टुकड़ों में बिखर गया। देश के दोनों कर्णधार दिनांक 23 जून सन् 1980 को सदा-सदा के लिए मौत की गोद में सो गये। देश के कोने-कोने में यह सूचना विद्युत की तरह फैल गई फलतः लाखों युवक अश्रुपूरित नेत्रों से अपने हृदय सम्राट संजय के दर्शन करने के लिए दिल्ली की ओर प्रस्थान करने लगे। अपार विवेक, साहस तथा क्षमता की प्रतिमूर्ति इन्दिरा गाँधी का हृदय भी इस काण्ड से दहल गया लेकिन राष्ट्र के हित में वे अपने साहस को संजोए हुए अपार साहस का परिचय दे रही थीं। अतः श्री संजय के प्रति हमारी सबसे बड़ी श्रद्धांजलि यही होगी कि हम उनके आदर्शों पर चलकर उनके कार्यक्रम को पूरा करें। इसी से हमारा एवं राष्ट्र दोनों को कल्याण है।

79

एशियाड 82
अथवा
नवम् एशियाई खेल

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- खेलों के उपयुक्त स्थान
- विभिन्न प्रतियोगिताएँ
- विजित पदक
- खिलाड़ियों के अद्भुत प्रदर्शन
- विश्व में खेलों का योगदान
- उपसंहार

मानव का जीवन अत्यन्त व्यस्त है। वह प्रातः से लेकर संध्या तक किसी न किसी कार्य में व्यस्त रहता है। रोजी-रोटी की समस्या उसे प्रतिपल व्यथित किए रहती है। अतः जीवन की उलझनों तथा प्रतिपल कार्य भार से मानव

कुछ क्षण के लिए मुक्ति पाना चाहता है। मानव की आकांक्षा रहती है कि वह किसी न किसी प्रकार का मनोरंजन करे। हृदय-कलिका को कुछ क्षण के लिए विकसित तथा प्रफुल्लित कर सके। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उसने विभिन्न प्रकार के खेलों का आयोजन किया है। निश्चित रूप से खेल द्वारा मानव का सर्वोत्तम मनोरंजन सम्भव है।

हर्ष का विषय है कि 19 नवम्बर 1982 में राजधानी दिल्ली में एशियाई खेलों की व्यवस्था सम्पन्न हुई खेलों की यह व्यवस्था दिल्ली की धरती पर विस्तृत रूप से की गई। श्रमिकों तथा इंजीनियरों ने दिल्ली को नया रूप देने के निमित्त एड़ी चोटी का पसीना एक कर दिया। उन्हें इस बात का पर्याप्त ध्यान था कि विदेशों में देश की छवि धूमिल न हो। उनके घोर परिश्रम के फलस्वरूप दिल्ली नयी वधू के सदृश दृष्टिगोचर हो रही थी।

देशवासियों में एक नवीन स्फूर्ति तथा उत्साह भरा हुआ था। लोगों के चेहरों पर खेलों के देखने की उत्सुकता झलक रही थी। सड़कों को नया रूप दिया जा रहा था। सरकारी भवनों को रंग एवं स्वच्छता के माध्यम से सुन्दर तथा आकर्षक बनाया गया।

देशवासी अवसर की पलक पाँवड़े बिछाकर प्रतीक्षा कर रहे थे। हर व्यक्ति 19 नवम्बर की बाट जोह रहा था। भगवान की अनुकम्पा से इस शुभ वेला का आगमन हुआ। ये खेल 4 दिसम्बर तक धूमधाम से सम्पन्न हुए। अधिकांश एशिया देशों के पुरुष एवं महिलाएँ इस खेल में भाग लेने के लिए उपस्थित हुए। प्रत्येक देश का खिलाड़ी एक आकर्षक तथा कीमती पोशाक धारण किए हुए था। ये विभिन्न प्रकार की पोशाकें दर्शकों को लुभा रही थीं। खेल के मैदान में भीड़ का सागर हिलारें ले रहा था। ऐसी विशाल भीड़ इससे पूर्व कभी नहीं देखी गई। जो लोग इस भीड़ में प्रवेश करने में स्वयं को असमर्थ मान रहे थे उन्होंने अपने घर की चहारदीवारी के अन्दर बैठकर टेलीविजन के माध्यम से इसका आनन्द ग्रहण किया।

खेल के निमित्त दिल्ली में अनेक केन्द्र स्थापित किए गए। लेकिन प्रमुख केन्द्र (1) खेल गाँव (2) नेहरू स्टेडियम में ही प्रतिष्ठित किए गए। इसके अतिरिक्त जयपुर की धरती पर भी कुछ खेलों का आयोजन किया गया। खेल के मैदान आधुनिक साज-सज्जा से सज्जित होने के कारण आकर्षण का केन्द्र

बने हुए थे । जब तक प्रतियोगिताएँ समाप्त नहीं हुईं तब तक खेल के मैदानों में एक नवीन चहल-पहल दृष्टिगोचर होती रही । धरती विभिन्न वाद्य-यन्त्रों तथा स्वरों से गुंजित हो रही थी । लोगों के मन आशा तथा निराशा के झूले में झूलते रहे । स्पर्द्धा का तांता लगा हुआ था । हर देश दूसरे देश से बाजी मारने का प्रयास कर रहा था ।

खेल के मैदानों में अनेक प्रकार के साहित्यिक एवं रोचक खेलों का आयोजन किया गया । उदाहरणार्थ ऊँची दौड़, गोला तथा भाला फेंक, बाधा दौड़ एवं मैराथन दौड़, बालीबाल तथा बास्केटबाल, हॉकी, फुटबाल, घुड़-सवारी, टैनिस, बैडमिंटन, गोल्फ, तैराकी, भारोत्तोलन, साइकिल दौड़, मुक्केबाजी आदि की प्रतियोगिताओं में प्रत्येक देश का खिलाड़ी सोत्साह भाग ले रहा था । भारत, जापान, कोरिया एवं चीन ने लगभग सभी प्रतियोगिताओं में भाग लेकर अपने देश के गौरव में वृद्धि की । खिलाड़ी के मन में एक नया कीर्तिमान स्थापित करने का चाव था । एक नवीन स्फूर्ति तथा शक्ति उन्हें असम्भव कार्यों को भी सम्भव बनाने की प्रेरणा प्रदान कर रही थी ।

खेल के मैदान में हार तथा जीत का क्रम चलता है । इसके अतिरिक्त श्रेणियों का भी स्थान होता है । सौभाग्य से इन एशियाई खेलों में चीन को प्रथम स्थान मिला । जापान को द्वितीय स्थान प्राप्त हुआ । दक्षिण कोरिया तीसरे नम्बर पर रहा । उत्तरी कोरिया चतुर्थ तथा भारत पाँचवें स्थान पर रहा । दूसरे राष्ट्रों को उपर्युक्त देश खिलाड़ियों ने बहुत पीछे छोड़ दिया ।

प्रत्येक खेल एक भव्य आकर्षण का केन्द्र बना हुआ था । कतिपय देश के खिलाड़ियों ने तो स्वयं के खेलों के प्रदर्शन से दर्शकों को आश्चर्य सागर में निमग्न कर दिया । घुड़सवारी के क्षेत्र में भारत का कोई मुकाबिला नहीं था । देश के कुशल घुड़सवार प्राचीन काल के अश्व-मेघ यज्ञ की याद ताजी कर रहे थे । बॉलीबाल में चीन के खिलाड़ियों का प्रदर्शन अद्वितीय था । तैराकी के क्षेत्र में जापान ने 100 मीटर की तैराकी में एक नवीनतम कीर्तिमान स्थापित किया । कौरसिंह तथा जसलाल की मुक्केबाजी बड़ी रोमांचकारी तथा आकर्षक थी । फिल्म अभिनेता अमिताभ बच्चन ने कौरसिंह को स्वर्ण पदक प्रदान किया । भाला फेंके के प्रदर्शन में जापान के अद्भुत कौशल का

परिचय दिया। 100 मीटर की दौड़ में पी० टी० ऊषा तथा वन्दनाराय का नाम भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है। भारत की गीताजुत्शी ने बाधा दौड़ में एक नया कीर्तिमान स्थापित किया। इस भाँति विभिन्न देशों के खिलाड़ियों ने बड़े उत्साह से इन खेलों में भाग लिया। खिलाड़ियों का कौतूहल तथा वीरोचित प्रदर्शन देखते ही बनता था। ऐसा प्रतीत होता था कि मानो खेल ही जीवन है। किसी कवि के शब्दों में निम्न पंक्तियाँ इस सन्दर्भ में सार्थक प्रतीत होती हैं—

> "खेल जीवन खेल उसमें,
> जीत जाना चाहता हूँ।
> मीत मैं तो सिन्धु के,
> उस पार जाना चाहता हूँ।"

खेलों का जीवन में व्यापक महत्त्व है। इससे बन्धुत्व की भावना का विकास होता है। सहयोग के क्षेत्र में भी अपूर्व वृद्धि होती है। जाति, धर्म एवं सम्प्रदाय की नकली दीवारें ढह जाती हैं। साथ-साथ खेलने वाले खिलाड़ी मानवता की भावना से ओत-प्रोत हो जाते हैं। वे स्वयं को सम्पूर्ण विश्व की धरोहर मानते हैं।

आज का विश्व एक उबलते हुए कढ़ाव के सदृश बना हुआ है। उसमें अनेक राष्ट्रों के उत्थान-पतन तथा सर्वनाश के दर्दनाक दृश्य दिखाई दे रहे हैं। युद्ध के बादल विश्व-क्षितिज पर मंडरा रहे हैं। ऐसी भीषण वेला में खेलों का आयोजन एक वरदान सिद्ध होगा। इससे राष्ट्रों की दूरी कम होगी तथा वे एक-दूसरे के निकट सम्पर्क में आयेंगे। राष्ट्रों की कटुता तथा घृणा प्रेम तथा सहयोग में परिणित हो जायेगी। युद्ध के बादल विश्व से तिरोहित हो जायेंगे।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि नवम् एशियाड खेल दिल्ली की धरती तथा अन्य स्थलों पर सफलतापूर्वक सम्पन्न हुए योरुपीय राष्ट्र भी इस आयोजन तथा आशातीत सफलता को निहारकर दाँतों तले उँगली दबाने लगे। आशा है कि खेल का यह आयोजन विभिन्न राष्ट्रों के मध्य सहयोग तथा सद्भावना का विकास करेगा। साथ-साथ रहने तथा खेलने से प्रेम तथा बन्धुत्व भावना का विकास होना स्वाभाविक है। सभी देशों के खिलाड़ी यह अनुभव करने लगते हैं कि वे एक ही परम पिता की सन्तान हैं। जब विश्व

के राष्ट्र प्रेम के सूत्र में आबद्ध हो जायेंगे तो विश्व के क्षितिज पर मँडराने वाले युद्ध के विनाशकारी बादल स्वयं ही छँट जायेंगे। मानवता के विनाश की भूमिका के स्थान पर राष्ट्र के मानवों के दिल तथा मस्तिष्क में रचनात्मक भावना का विकास होगा। सभी देश यह अनुभव करेंगे कि जीवन में सुख तथा शान्ति का स्रोत प्रेम तथा सहयोग में ही है। खेल इस भावना को विकसित करने में अमोघ साधन सिद्ध होंगे। आशा है भारत की धरती पर आयोजित नवम् एशियाई खेलों का आयोजन विश्व की प्रगति तथा समृद्धि का एक नया सन्देश देगा। जन-जन के हृदय में एक नवीन स्फूर्ति तथा उत्साह का संचार करने वाला सिद्ध होगा।

80
गुट-निरपेक्ष आन्दोलन
अथवा
निर्गुट सम्मेलन

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- गुटनिरपेक्षता का उदय
- आशय
- भारत की भूमिका
- उद्देश्य
- उपसंहार

आज विश्व के प्रत्येक कोने से युद्ध के समाचार सुनाई पड़ रहे हैं। मानवता इन युद्ध की विभीषिकाओं से अत्यन्त त्रस्त तथा पीड़ित है। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र के लिए चुनौती बना हुआ है। देखना यह है कि इस युद्ध, रक्तपात तथा छीना-झपटी के युग में गुट निरपेक्ष देशों का यह सातवां सम्मेलन मानव कल्याण तथा विकास में कहाँ तक उपयोगी सिद्ध होगा? मानवता इस सम्मेलन

की ओर आशा भरी दृष्टि से निहार रही है। देखना यह है कि इस संक्रान्त काल में इस सम्मेलन की क्या भूमिका रहती है ?

गुट-निरपेक्षता का विकास 1940-50 के अन्तराल में हुआ। इसके विकास का कारण दो महान् शक्तियों का तनाव था। ये दोनों महाशक्तियाँ विश्व रंगमंच पर अमेरिका तथा रूस के नाम से जानी जाती हैं। दोनों अपनी पृथक-पृथक भूमिका का निर्वाह कर रही हैं। ये दोनों शक्तियाँ एक-दूसरे के साथ-साथ विश्व को भी एक चुनौती बनी हुई हैं। आज शीत युद्ध की लहर समस्त विश्व में व्याप्त है। द्वितीय विश्व-युद्ध दुनियाँ को न उबरने वाले आर्थिक संकट में उलझा गया है।

आज साम्राज्यवाद की फौलादी बाँहों से मुक्त होने के लिए राष्ट्र छटपटा रहे है।

सौभाग्य से भारत माता ने 15 अगस्त 1947 को स्वतन्त्र वातावरण में सांस ली। युग-युग से चले आने वाले परतन्त्रता के लौह-पाश विशृंखलित हुए। एशिया, अफ्रीका तथा कैरबिया के राष्ट्र भी उपनिवेशवाद के खूनी पंजों से मुक्त हुए। इन देशों ने मुक्त होकर सुख तथा सन्तोष की साँस ली। इस भाँति विश्व के अधिकांश राष्ट्रों ने गुट निरपेक्षता की भावना को पल्लवित तथा विकसित किया है।

गुट निरपेक्षता का आशय है कि अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भ में स्वयं की नीति तथा कार्यक्रम को क्रियान्वित करना। किसी गुट में सम्मिलित होने का आशय यह है कि किसी गुट विशेष की नीतियों का समर्थन करना। इस संदर्भ में पंडित जवाहर लाल नेहरू का निम्न कथन द्रष्टव्य है—

"गुट निरपेक्षता या निर्गुट राष्ट्र एक ऐसी राजनीति का प्रचार और प्रसार है जो सक्रिय, सुनिश्चित तथा गतिशील है।"

इस भाँति पंडित नेहरू का उपर्युक्त कथन गुट निरपेक्षता के महत्त्व का प्रतिपादन कर रहा है। इसका अवलम्बन जड़वत् न होकर गतिशील तथा जीवनप्रद है। गुट निरपेक्ष आन्दोलन के विकास तथा पल्लवन में भारत ने महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है।

भारत देश में स्वतन्त्रता तर्व मनाने से पर्व सन् 1946 में पंडित जवाहर लाल नेहरू ने इस आन्दोलन का उद्घोष किया। नेहरूजी का कहना था कि

आज विश्व के अधिकांश राष्ट्र पराधीनता की बेड़ियों में जकड़े हुए हैं। लेकिन हम सबको संगठित होकर स्वयं के हित सम्पादन का पूर्ण अधिकार है। नेहरूजी विरोधी गुटों की राजनीति से सर्वदा अलग रहने को कहते थे। इस विरोधी राजनीति के फलस्वरूप विश्व दो महायुद्धों की विभीषिका देख चुका है। नेहरूजी रूस तथा भारत के मध्य भड़कने वाली युद्धों की चिनगारी के प्रति भी उदासीन नहीं थे। नेहरूजी ने अपने जीवन में किसी सिद्धान्त विशेष का प्रतिपादन नहीं किया। सभी सिद्धान्तों के प्रति आँख तथा कान खुले रखने का सन्देश देते थे। सन् 1949 में स्वयं की नीति की घोषणा करते हुए नेहरूजी ने सह-अस्तित्व एवं राजनीतिक शान्ति पर विशेष रूप से बल दिया। ये दोनों नीतियाँ आज भी विश्व को युद्ध की विभीषिकाओं से सुरक्षित किए हुए हैं।

आज विश्व के सिर पर तृतीय विश्व युद्ध की तलवार लटक रही है। नेहरूजी ने इसी बात को दृष्टि-पथ में रखते हुए भारत को गुट निरपेक्ष रहने की अमूल्य सलाह दी। गुट निरपेक्ष देशों का प्रथम सम्मेलन सन् 1961 में छठवाँ सम्मेलन सम्पन्न हुआ। द्वितीय सम्मेलन सन् 1964 में काहिरा की धरती पर आयोजित किया गया। सन् 1976 में पाँचवाँ सम्मेलन कोलम्बो में आयोजित किया गया। हवाना में छठवाँ सम्मेलन सम्पन्न हुआ। नयी दिल्ली सात मार्च सन् 1983 में सातवाँ सम्मेलन सफलतापूर्वक आयोजित किया गया। सम्मेलन का प्रधान नियमानुसार मेजवान देश को बनाया जाता है। इसी हेतु भारत इसका अध्यक्ष बना। आने वाले भविष्य में तीन वर्ष तक भारत अध्यक्ष के पद को सुशोभित करता रहेगा।

सम्मेलन में रूस के नाम को लिए बिना अफगानिस्तान की समस्या पर विचार-विमर्श हुआ। अमेरिका का नाम लिए बिना उसके माध्यम से इजरायल को दी जाने वाली सैनिक सहायता की कटु आलोचना की गई। विदेश मंत्रियों ने कम्पूचिया की समस्या को भी उजागर किया। विकासशील देशों के हितार्थ अर्थ-व्यवस्था की पुनर्गठन की माँग को उठाया गया। विकासशील देशों की सुरक्षा के लिए अविलम्ब सक्रिय कदम उठाने की सबल संस्तुति की गई। भारत ने एक पेंतीस-सूत्रीय कार्यक्रम प्रस्तुत किया। मुद्रा तथा वित्तीय-प्रणाली को प्रगतिशील बनाने का सुझाव प्रस्तुत किया गया। समुद्र तल को अखिल मानवों को सम्पूर्ति घोषित किया गया। श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने कहा कि इस

निगुंट आन्दोलन का आशय तृतीय गुट के रूप में उभरना नहीं है। निगुंट होने का आशय यह कदापि नहीं है कि हम मित्रता स्थापित ही न करें। सोवियत संघ विपत्ति के समय भारत का साथी रहा है। उससे हमारे अभिन्न सम्बन्ध हैं तथा रहने की पूर्ण आशा है।

दो दशक के अन्तराल में यह आन्दोलन आशातीत सफलता प्राप्त कर चुका है। विश्व का कोई भी राष्ट्र इसे उपेक्षा की दृष्टि से नहीं निहार सकता। इसके सदस्यों की संख्या दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ रही है। भारत के नेतृत्त्व से इस आन्दोलन को अपूर्व बल मिला है। इस बात को भी बल मिला है कि प्रत्येक राष्ट्र को स्वयं के साधनों पर एकाधिकार है। हर राष्ट्र स्वयं की नीतियाँ निर्धारिण करने में पूर्ण-रूपेण स्वतन्त्र है। अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के संचालन में विश्व के प्रत्येक राष्ट्र की आवाज को समान स्थान प्रदत्त किया जाय। न्याय तथा समानता के धरातल पर प्रतिष्ठित एक नई अर्थ-व्यवस्था का पुनर्गठन किया जाय। विनाशकारी अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण पर प्रतिबन्ध लगाया जाय। ये विनाशकारी भयंकर अस्त्रशस्त्र मानवता को काल के गाल में धकेल रहे हैं। मानवता इनसे अत्यन्त भयभीत तथा सशंकित है। अतः इनके प्रसार तथा निर्माण को प्रतिबन्धित किया जाय।

उद्देश्य—(1) उपनिवेशवाद का विरोध (2) आपस में सहयोग (3) पूर्ण आर्थिक एवं राजनैतिक स्वतन्त्रता (4) आपसी मतभेदों को दूर करना (5) अन्तर्राष्ट्रीय तनाव में कमी लाना। (6) अन्तर्राष्ट्रीय शांति एवं सामाजिक न्याय की स्थापना करना (7) वस्तुओं के मूल्य निर्धारित करना (8) अर्न्त-क्षेत्रीय व्यापार का विकास करना।

सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि गुट निरपेक्ष देश इस सातवें सम्मेलन को सफल बनाने में कहाँ तक सहयोगी सिद्ध होंगे? इस बात में तनिक भी सन्देह नहीं है कि इस आन्दोलन का महत्त्व विश्व के राष्ट्रों ने स्वतन्त्र आन्दोलन के रूप में स्वीकारा है। अनेक राष्ट्रों ने इसकी सफलता तथा विकास के लिए स्वयं की शुभकामनायें प्रेषित की हैं। रूस, अमेरिका तथा चीन ने इसकी सफलता की आकांक्षा व्यक्त की है। ये बात तो निर्विवाद रूप से कही जा सकती है कि इस निगुंट सम्मेलन के माध्यम से विश्व में बन्धुत्व की भावना का विकास होगा। प्रेम, मानवता एवं न्याय की मन्दाकिनी प्रवाहित होगी।

तनाव तथा शीतयुद्ध की सम्भावनाओं पर प्रतिबन्ध लगेगा । अनेक जटिल समस्याओं का आपसी बातचीत के माध्यम से निराकरण सम्भव होगा ।

आशा ही नहीं अपितु पूर्ण रूपेण विश्वास है कि इस निर्गुट सम्मेलन की गूँज से युद्ध के बादल छिन्न-भिन्न होंगे । विश्व में शान्ति का सागर लहरायेगा । किसी शायर के निम्न स्वर विश्व वायु मण्डल में गुंजित होंगे ।

"करें हम दुश्मनी किससे,
काई दुश्मन भी हो अपना,
मुहब्बत ने नहीं छोड़ी,
जगह दिल में अदावट की ।"

81
भारत में ग्राम विकास

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- प्राचीन भारत में दस्तकारी का प्रारूप
- स्वतन्त्रता के पश्चात् ग्रामों की दशा
- सरकार द्वारा किए गए सराहनीय प्रयास
- उपसंहार

भारतवर्ष गाँवों का देश है । इसकी 80% जनता गाँवों में निवास करती है । अतएव भारतवर्ष की उन्नति इसके ग्रामों के समुचित विकास पर निर्भर करती है । ब्रिटिश शासन से पूर्व ग्राम आत्म-निर्भर थे । परन्तु ब्रिटिश शासन काल में, देश के आर्थिक विकास के प्रति इसकी तटस्थ नीति के कारण भारतवर्ष के आर्थिक विकास की तीव्र गति में ह्रास हुआ । एक समय था जब ग्रामीण अपनी सभी आवश्यकताओं की वस्तुएँ स्वयं उत्पन्न कर लेते थे । इस क्षेत्र में कुटीर उद्योग तथा ग्रामीण उद्योगों की अहम भूमिका थी परन्तु अंग्रेजों के स्वतन्त्र व्यापार ने इस पर कुठाराघात किया उनके द्वारा कच्चे माल का निर्यात सस्ते दामों पर किया जाने, सीमा शुल्क तथा परिवहन कर लगा दिए जाने पर, देश की अर्थव्यवस्था को दोहरी मार का सामना करना पड़ा । इस

प्रकार एक ओर तो कृषि स बन्धी तकनीकी सुधारों के अभाव ने तथा दूसरी ओर ग्रामीण उद्योग पर ब्रिटिश व्यवसायियों की त्रुटिपूर्ण अर्थ-नीति ने भारतीय ग्राम को तथा अर्थ नीति को पनपने नहीं दिया।

भारतवर्ष के गाँवों की दस्तकारी, उसके पड़ोसी देशों में तथा विदेशों में प्रसिद्ध थी। ढाका की मलमल, काँसे पीतल के विभिन्न बर्तनों पर कामदारी आदि अपने आप में अद्वितीय थीं। अंग्रेज व्यवसायियों ने इन कारीगरों को कला की मर्मज्ञ बातें बताने के लिए विवश किया तथा ब्रिटेन में मशीन द्वारा निर्मित सामानों को भारत में लोक-प्रिय बनाने के लिए प्रदर्शनियों का आयोजन किया। जिससे ये वस्तुएँ भारतीयों द्वारा निर्मित वस्तुओं को प्रतिस्थापित कर सकें। इस प्रकार एक तरफ भारतीय वस्तुओं का बाजार समाप्त होने पर आर्थिक लाभ भी प्रभावित हुआ दूसरी ओर विदेशी वस्तुओं के क्रय करने में भारतीय पूँजी का प्रयोग हुआ। इससे आर्थिक विकास अवरुद्ध हुआ साथ ही ग्रामीण विकास भी सम्भव न हुआ परिणामस्वरूप भारतीय ग्रामीण दरिद्र होते गये।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् सरकारी प्रयासों से भारतीय ग्रामों की अवस्था में सुधार हुआ है। इसके लिए पंचवर्षीय योजनाओं में समुचित प्रावधान रखा गया। 1951 से 1955 की अवधि में भूमि सुधार व सामुदायिक विकास को महत्त्व दिया गया तथा प्रौद्योगिकी एवं औद्योगिक निविष्टियों को उतना महत्व नहीं दिया गया। प्रथम पंचवर्षीय योजना से लेकर पाँचवीं पंचवर्षीय योजना तक की अवधि में कृषि योग्य बंजर एवं परती भूमि को उपज के योग्य बनाया गया, सिंचाई की सुविधाएँ पनपीं तथा कृषि सम्बन्धी तकनीकी विकास पर बल दिया गया। जिससे कृषि के क्षेत्र में आशाजनक उन्नति हुई और भारतीय ग्रामों में नव स्फूर्ति का संचार हुआ।

फिर भी ग्रामीण विकास के सन्दर्भ में उपर्युक्त प्रयास संतोषजनक नहीं थे। 1965 तक कृषि क्षेत्र में विकास के द्वारा उत्पादन की सम्भावना अत्यन्त संकुचित हो चुकी थी। जनसंख्या की वृद्धि के साथ-साथ कृषि क्षेत्र पर भरण पोषण का दबाव बढ़ता जा रहा था। अतएव कृषि क्षेत्र में व्याप्त संकट को दूर करने के लिए नवीन तकनीकी समाधान ढूँढ़ निकालने का प्रयास किया गया। उन्नत बीज एवं खाद के अलावा कीटनाशक दवाओं के उत्पादन एवं

प्रयोग पर विशेष बल दिया गया। विशेषकर संकर बीज का प्रचलन बढ़ा। जिससे कम समय में अधिक से अधिक उत्तम अनाज का उत्पादन सम्भव हुआ। इस तरह व्यापक क्षेत्र में अधिक से अधिक अनाज उगाये जाने पर, एक बार फिर भारतीय ग्राम आत्मनिर्भरता की ओर उन्मुख हुए।

एकमात्र कृषि ही ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास का आधार नहीं थी। इससे सम्बन्धित व्यवसायों को भी महत्त्व दिया जाना आवश्यक था। अतएव पंचवर्षीय योजनाओं में पशुपालन, मुर्गी-पालन, दुग्ध व्यवसाय आदि कृषि उपयोगी व्यवसायों पर भी समुचित व्यय किया गया। प्रथम पंचवर्षीय योजना में पशुपालन एवं दुग्ध व्यवसाय में जो खर्च लगभग 15 करोड़ रु० था वही व्यय पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में 438 करोड़ रु० तक पहुँच गया। वर्तमान ग्राम-विकास योजना के अन्तर्गत 1978-85 की अवधि में लगभग 488·5 करोड़ रु० व्यय किये जाने का प्राविधान है। जिसके अन्तर्गत पशुओं को संकरित करके उनकी उत्तम नस्ल तैयार करने की योजना है। संकरित गायों एवं भैंसों से अधिकतम दूध तथा भेड़ों से उत्तम किस्म की अधिक मात्रा में ऊन की उत्पादन क्षमता बढ़ेगी।

इसके अतिरिक्त मत्स्य पालन को भी प्रोत्साहित किया गया है। जिससे खाद्य पदार्थों में पोषक तत्त्वों का समावेश हो सके। मुर्गी-पालन के व्यवसाय से अण्डों का उत्पादन अधिक मात्रा में हुआ। अधिक उत्पादित अण्डों तथा मछलियों का बाजार विस्तृत बनाने के लिए निर्यात क्षमता का प्रसार हुआ। इन कच्चे मालों की क्षति रोकने तथा अधिक समय तक संग्रहीत करने के विचार से कोल्ड स्टोरेज की स्थापना सुविधाजनक स्थानों पर की गई। मुर्गियों को बीमारी से बचाने के लिए चिकित्सालयों की स्थापना की गई तथा अधिक से अधिक संख्या में मछलियाँ पकड़ने के लिए भारी संख्या में बड़ी नावों का निर्माण किया गया। इस प्रकार मत्स्य-व्यवसाय एवं मुर्गी व्यवसाय को स्वतन्त्र रूप में अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया गया।

भारतीय सरकार ने ग्रामीण विकास से सम्बन्धित आर्थिक संरचना को सुदृढ़ बनाने के लिए कृषि तथा उससे सम्बन्धित व्यवसायों को ही प्रमुखता नहीं दी। बल्कि ग्रामीण औद्योगीकरण की आवश्यकता को भी उतना ही महत्त्व दिया। फलस्वरूप छठी पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण विकास के संकल्प के अन्तर्गत ग्रामोद्योग को अत्यधिक वरीयता प्रदान की गई है। इस परिप्रेक्ष्य

में केन्द्र द्वारा 1954 में स्थापित लघु स्तरीय उद्योगों के विकास के संगठन तथा 1957 में स्थापित खादी उद्योग तथा अन्य ग्रामोद्योग आयोग सराहनीय हैं। इससे परम्परागत वस्तुओं के उत्पादन की लीक से हटकर अन्य वस्तुओं का निर्माण एवं निर्यात सम्भव हुआ।

इस प्रकार इन विभिन्न योजनाओं एवं सरकारी प्रयासों से ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था विकासशील हुई है। साथ ही उत्पादन एवं निर्यात की रूढ़िवादी परम्परा भी समाप्त हुई। अब यह विचारणीय है कि क्या सफलता के ये सारे प्रतिमान हमारी आवश्यकता के अनुपात में यथेष्ट हैं ? तो इसका उत्तर नकारात्मक ही होगा। क्योंकि इस विकास से न तो ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त गरीबी का निवारण हुआ है और न ही सामाजिक दृष्टिकोण से ग्रामीणों के साथ समुचित न्याय ही हो सका है। आज भी देश की 45% से 50% तक की ग्रामीण जनसंख्या या तो समुचित खाद्य सामग्री से वंचित है। या फिर भुख-मरी का शिकार है। समाज के निचले वर्ग के गरीब लोगों के अधिकार में सम्पत्ति के नाम पर उनका शारीरिक श्रम है तथा सिर ढँकने के लिए घास फूँस की झोंपड़ी तथा तन ढँकने के लिए चिथड़े। उच्च वर्ग उसके गाढ़े पसीने की मेहनत का प्रतिफल अपने व्यसन के लिए खर्च कर रहा है। इस तरह दो विभिन्न वर्गों के बीच एक गहरी खाई का निर्माण हुआ है। जिसके फलस्वरूप दोनों वर्गों में विरोध तथा असहयोग की भावना विकसित हुई है।

अस्तित्व के लिए संघर्ष कौन नहीं करना चाहेगा। 'Survival of the fittest' के दर्शन पर आधारित सत्य ने समाज में एक भय व्याप्त कर दिया है। पूँजी वर्ग या जमींदार, गरीब कृषकों का शोषण कर रहे हैं। इस शोषण का शिकार दो प्रकार के गरीब कृषक हैं। पहले तो वे जो एक निश्चित एवं छोटे भूभाग के स्वामी हैं। ये अपनी भूमि को जोतकर अपनी न्यूनतम जीवन स्तर की आवश्यकताओं को भी पूरा नहीं कर पाते अतएव जमींदार कृषकों के यहाँ ये बाकी समय में अपना श्रम बेचते हैं तथा दूसरे वे हैं जो जन्म से ही भूमिहीन हैं तथा श्रमिक का जीवन यापन करना इनको विरासत में मिला होता है। आज भी ग्रामों में इन दो विभिन्न वर्गों की अलग-अलग समस्याएँ हैं जिनके समाधान के लिए स्वाभाविक है, कि पृथक-पृथक प्रयास करने होंगे। सम्भवतः अग्रलिखित प्रयास सराहनीय माने जा सकते हैं।

सबसे पहले तो हम छोटे किसानों की समस्या को ही लें। उनके साथ सबसे बड़ी समस्या है, बीज, रसायन एवं उपकरण आदि खरीदने के लिए पूँजी का अभाव। जिसके अभाव में वे समय पर आवश्यक चीजें उपलब्ध नहीं कर पाते। सरकार को चाहिए कि उचित मूल्य पर, बिना किसी ब्याज या कम ब्याज पर उन किसानों को ये साधन उपलब्ध करायें। तथा, उपज के बाद अनाज को भण्डारगृहों में रखने की सुविधा दे या उचित दामों पर उसका क्रय करे एवं अविलम्ब उसका भुगतान पूरा करे।

इस तरह सारी सुविधाओं से आश्वस्त होने पर छोटे किसानों की सीमांत उत्पादिता तो बढ़ेगी परन्तु गरीबी का निराकरण फिर भी न हो सकेगा। इसके लिए उनको कृषि कार्य के अतिरिक्त उनके सहायक व्यवसाय के लिए प्रोत्साहित करना होगा। जिसके अन्तर्गत पशु-पालन, मुर्गी-पालन, मधुमक्खी पालन आदि की जानकारी प्रदान करनी होगी। लघु कुटीर-उद्योग जैसे टोकरी बुनना, कालीन बनाना, साबुन, मंजन आदि बनाना, इन कार्यों के लिए प्रोत्साहित करना होगा। जिससे इस वर्ग विशेष को अतिरिक्त आय होगी और ये अपना जीवन स्तर उठाने में समर्थ हो सकेंगे। अन्यथा ये किसान अपना व्यवसाय छोड़कर जोतभूमि बेचकर शहरों में श्रम करने चले आयेंगे तब परिणाम और भी भयंकर होंगे। क्योंकि भूमि का सीमित लोगों में केन्द्रीयकरण होने से और असमानता बढ़ेगी। उपज पर अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ेगा।

इसके पश्चात् समस्या आती है भूमिहीन किसानों, कृषि मजदूरों तथा भ्रमण करने वाले बन्धुआ मजदूरों की। यह वर्ग विशेषतया पिछड़े वर्ग के आदिम जातियों, जन जातियों तथा आदिवासियों को लेकर बना है। अज्ञानता के कारण यह वर्ग विशेष अधिक शोषित है। कारण, एक तो इनकी मजदूरी की दर अपेक्षाकृत अधिक कम है। उस पर भी उनको पर्याप्त काम नहीं मिल पाता। आश्चर्य नहीं कि ये यदि दो चार दिन फाके पर ही व्यतीत करते हों। अतएव इनकी समस्या के समाधान के लिए सबसे पहला और अति आवश्यकीय कार्य है भूमि का वितरण। सरकार भूमि सुधार नियम जोत सीमाबन्दी कानून आदि का कड़ाई से पालन करके कृषि श्रमिकों में भूमि का पुनःवितरण कराये। यह स्वाभाविक है कि इस प्रकार के वितरण से लघु एवं सीमान्त कृषकों की

संख्या बढ़ेगी जो अपने आप में एक समस्या होगी लेकिन इस समस्या का समाधान हो सकता है। इसके लिए उन्हें कृषि सहायक व्यवसायों में लगने के लिए प्रोत्साहित किया जाय तथा सहकारी खेती की योजना बनाई जाय। जिससे अनार्थिक आकार की जोत से बचकर अनुत्पादन की सम्भावना का निराकरण हो सके।

इतना सब कुछ करने पर भी, समस्याओं का अन्त ही हो जायेगा यह कहना ठीक नहीं होगा। हाँ इनका समाधान सम्भव हो सकेगा। ग्रामीण अर्थ विकास के लिए उपर्युक्त प्रयास लाभप्रद तो होंगे ही इसके अतिरिक्त व्यापक स्तर पर निर्माण कार्य प्रारम्भ करके रोजगार के अवसर बढ़ाये जाने चाहिए। ग्रामीण मजदूरों की मजदूरी की दर में वृद्धि की जानी चाहिए। भूमि संरक्षण, ग्रामीण सड़क निर्माण कार्य तथा लघु साधनों के विकास आदि कार्यक्रम न केवल ग्रामीणों को रोजगार प्रदान करेंगे बल्कि आर्थिक स्तर को ऊँचा उठाने में सहायक सिद्ध होंगे। इस प्रकार ग्रामीण मजदूर संगठित क्षेत्रों के मजदूर की तरह अपना जीवन यापन कर सकेंगे। बेरोजगारी की आशंका समाप्त हो जाएगी। श्रम-शक्ति का समुचित प्रयोग हो सकेगा, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों का विकास तीव्रगति से होगा। गाँवों में निवास करने वाला भारतवर्ष उन्नति की ओर अग्रसर होता चला जायगा। जहाँ का निवासी आल्हादित होकर गा उठेगा।

'जननी जन्म भूमिश्च, स्वर्गादपि गरीयसि'

82

मंहगाई-एक समस्या

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- मँहगाई का प्रभाव
- मँहगाई आज सम्पूर्ण विश्व की समस्या

- **सरकार के भगीरथी प्रयास**
- **उपसंहार**

भारतवर्ष आज अनेकानेक समस्याओं से घिरा हुआ है। जिनमें से बेरोजगारी की समस्या तथा मँहगाई समस्या विशेष भयंकर रूप धारण कर चुकी है। मॅहगाई की समस्या एक आर्थिक समस्या है जो कि बेरोजगारी, जनसंख्या वृद्धि, मुद्रा-स्फीति आदि समस्याओं से जुड़ी हुई है। गरीब जनता तथा मध्यम वर्ग के लोग इससे विशेषरूप से प्रभावित हैं। आम जनता का जीवन स्तर मंहगाई के कारण दिन पर दिन गिरता जा रहा है। मँहगाई की समस्या राष्ट्र के लिए एक चुनौती है तो व्यक्ति विशेष, जो गरीब या मध्यम वर्ग के हैं, के लिए जीवन मरण का प्रश्न बन चुकी हैं। इस मँहगाई के पैशाचिक चरण आठवें दशक में धरे गये तथा नवें दशक में इसने राष्ट्रीय आर्थिक बजट को रौंद दिया है। इससे मुक्ति पाने के लिए सरकार प्रयत्नशील तो है फिर भी यह नियन्त्रण के बाहर है।

मँहगाई का प्रभाव दैनिक उपयोग की वस्तुओं पर पड़ने के कारण इसकी नुभूति गरीबों को विशेषकर हुई। जिन गरीबो को तन ढकने के लिए पर्याप्त वस्त्र न मिल सकें, पेट भरने को दो जून रोटी न उपलब्ध हो वे सिर ढँकने के लिए एक छत की कल्पना कैसे कर सकते हैं? सरकारी योजनाएँ एक झूठ आश्वासन देने में लगी हुई हैं कि मँहगाई हर एक स्तर पर दूर की जा रही है। लेकिन ऐसा नहीं है। जिस तरह हाथी के दाँत दिखाने के और खाने के और होते हैं। उसी प्रकार सरकार आश्वासनों के प्रतिफल के स्वरूप जो मँहगाई कम हुई है वह हाथी के दिखाने के दाँत के बराबर है। पहले तो मँहगाई 20% बढ़ी हुई है बाद में यह 18% हो जाय और आने वाले वर्षों में फिर 25% बढ़ जाय तो इससे क्या लाभ? पिछले कई वर्षों में तेल, गुड़, चीनी, मिट्टी का तेल, पेट्रोल आदि वस्तुओं की कीमतें निरन्तर बढ़ते-बढ़ते लगभग दोगुनी हो गई हैं। सरकारी आयात व निर्यात की नीति का कुप्रभाव भी इस पर पड़ा है। अनुत्पादकता के बढ़ने के साथ-साथ जन असहयोग ने भी आग में घी का काम किया है। क्योंकि जनता में से ही कुछ व्यक्तियों ने वस्तुओं को गोदामों में बन्द कर, उनका कृत्रिम अभाव पैदा कर दिया है। फलस्वरूप माँग के आधार पर कीमतें बढ़ी हैं।

यदि गम्भीरता पूर्वक विचार किया जाय तो मँहगाई के बढ़ने के अनेक कारण हमारे सामने आते हैं। राजनीतिक उथल-पुथल एवं बदलती सरकारों की नीतियों ने इसे विशेष प्रभावित किया है। प्राकृतिक प्रकोप, सीमावर्ती प्रदेशों में राजनीतिक उथल-पुथल से मँहगाई प्रभावित हुई है। विभिन्न राष्ट्रीय मदों में धन का अनुत्पादक व्यय होने के कारण भी मँहगाई बढ़ती चली जा रही है। जनसंख्या बढ़ रही है, उत्पादन कम है, यह भी कारण है।

जिस मँहगाई को राष्ट्र के लिए अभिशाप माना जा रहा है, अन्ततः वह क्या है ? मँहगाई किसी वस्तु का आवश्यकता से अधिक बढ़ा हुआ मूल्य है। यह एक सामान्य सी बात है। परन्तु, आर्थिक नियम के अनुसार—जब वस्तुओं की माँग अधिक हो, पूर्ति कम हो, प्रत्येक उपभोक्ता अपनी आवश्यकतानुसार वस्तु को अधिक दर पर क्रय करने को तत्पर रहता है। स्वाभाविक है, जब वस्तु का कृत्रिम अभाव है तब माँग के अनुसार पूर्ति नहीं होगी। जब पूर्ति नहीं है तब काले धन वाले साहूकार अपनी आवश्यकता के लिए वस्तुओं को किसी भी बढ़ी हुई दर पर खरीदेगा। वही बढ़ी हुई दर, वस्तु की सामान्य पूर्ति होने पर भी उसका सामान्य दर बन जायेगा।

मँहगाई की समस्या केवल हमारे ही राष्ट्र की समस्या नहीं है बल्कि उन अनेक राष्ट्रों की भी है जो विकासशील हैं। विकासशील राष्ट्र विकसित राष्ट्रों के साथ आयात-निर्यात सम्बन्धी नीतियों का समझौता करते हैं। तब विवश होकर उन्हें ऐसी वस्तुओं का भी आयात-निर्यात करना पड़ता है जिसका उसकी आर्थिक नीति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। बाँगला देश के स्वतन्त्र राष्ट्र घोषित होने के बाद चीनी और सीमेन्ट का भारत की ओर से निर्यात किया गया। तब से भारत में सीमेन्ट में मूल्य वृद्धि प्रारम्भ हुई। इन नीतियों में थोड़ा सा परिवर्तन करके, उत्पादन की मात्रा तथा किस्म बढ़ा देने पर इस समस्या का समाधान हो सकता है। बाहरी देशों में भारतीय निर्मित उत्तम वस्तुओं का मूल्य अधिक मिलेगा। इसके बदले में आवश्यक वस्तुओं का आयात किया जा सकेगा।

अत्यधिक मुद्रा प्रसार के कारण रुपए की क्रय शक्ति गिरती चली जा रही है। यह घाटे की अर्थ-व्यवस्था के फलस्वरूप उत्पन्न होती है। यदि घाटे की अर्थव्यवस्था राष्ट्रीय आय की वृद्धि में सहायक हो तब तो यह स्थिति

उतनी भयानक नहीं लगती । इसके साथ मूल्य वृद्धि का भय भी समाप्त हो जाएगा ।

कम उत्पादन से भी मूल्य वृद्धि को बल मिलता है । श्रमिकों की हड़ताल, फैक्ट्रियों की तालाबन्दी, मिल मालिकों तथा श्रमिकों में अनुचित माँगों को लेकर संघर्ष आदि सम्पूर्ण बातें कम उत्पादन का कारण बनती हैं । रेल, ट्रक तथा वायुयान के किराये में वृद्धि से तथा विलम्ब से कच्चा माल पहुँचने के कारण उत्पादन लागत भी बढ़ती है तथा वस्तुओं की समय पर पूर्ति न होने के कारण किसी स्थान विशेष में उसकी अनावश्यक माँग बढ़ जाती है.तथा मूल्य वृद्धि होती है । इस प्रकार इन कारणों को नियन्त्रित कर लेने पर मँहगाई स्वतः ही नियन्त्रित हो जायेगी ।

भारतीय अर्थ-व्यवस्था के दो सुदृढ़ आधार हैं । (1) कृषि एवं (2) उद्योग । जिसमें कृषि का आधार इस अर्थ-व्यवस्था को प्रभावित करता है । प्राकृतिक प्रकोप के कारण फसल नष्ट हो जाती है अतएव अपेक्षित लक्ष्य की पूर्ति नहीं हो पाती । फलस्वरूप बड़ी मात्रा में खाद्य अनाज, तेल का आयात किया जाता है जो कि स्वाभाविक रूप से देश में उत्पन्न वस्तुओं की कीमतों से अधिक कीमत पर विक्रय के लिए बाजार में लाई जायेंगी । अतएव, प्राकृतिक प्रकोप से बचने के उपायों को ढूंढ़ लेने पर बढ़ती हुई कीमतों का निराकरण सरल हो जायेगा । क्योंकि इससे बाढ़ आदि पर किया अनुत्पादिक खर्च कम हो जायेगा । राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था सुदृढ़ रहेगी ।

राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था पर काले धन का एवं काला बाजारी का भी प्रभाव पड़ा है । काले धन के कारण उच्च वर्ग-व्यापारी वर्ग किसी भी वस्तु का ऐच्छिक मूल्य बढ़ाने में समर्थ हो जाते हैं । व्यापारी वर्ग एक तरफ कृत्रिम अभाव पैदा करने में सक्षम हो जाता है तो दूसरी ओर उच्च वर्ग उन वस्तुओं को बढ़ी हुई कीमतों कर क्रय में सक्षम होता है । फलस्वरूप मूल्य वृद्धि सुरसा के मुँह की तरह गरीबों को निगलने के लिए तैयार खड़ी रहती है । सरकार ने इस पर नियन्त्रण पाने के लिए काले धन को बटोरने के लिए एक हजार रु० के नोटों का प्रचलन बन्द कर दिया । जब इससे भी परिणाम आशाजनक न निकले तब विशेष धारक बॉण्ड योजना को प्रचलित किया ताकि काले धन का समुचित उपयोग राष्ट्रीय योजनाओं में हो सके । इसमें सरकार

को आशातीत सफलता नहीं मिली हैं। यदि सफलता मिल सकती है तो काला-बाजारी बन्द हो सकती है और वस्तुओं की मूल्य वृद्धि में भी गिरावट आ सकती है।

उपर्युक्त प्रयासों के अतिरिक्त सरकार संसद में विभिन्न बजट प्रस्तावों के आधार पर मँहगाई को कम करने के लिए प्रयत्नशील है। इसी संदर्भ में 5 फरवरी 1981 को संसद में प्रस्तुत बजट में मँहगाई कम होने की सम्भावनाएँ व्यक्त की हैं। सरकार आशा करती है कि इससे मध्यम तथा निम्न वर्ग के लोगों को अत्यधिक राहत मिलेगी। किन्तु यह बजट, घाटे का बजट होने के कारण भविष्य में मँहगाई कम होने की आशाओं पर पानी फेर देता है। परन्तु सरकार की नई औद्योगिक नीति मँहगाई कम करने का संकल्प लेती हुई प्रतीत होती है जबकि यह औद्योगिक नीति 1956 के औद्योगिक नीति अधिनियम से बहुत भिन्न नहीं है फिर भी यदि नीतियों का पालन कड़ाई के साथ किया जाय तो मँहगाई को बढ़ने से रोका जा सकता है।

सुरसा के मुख की तरह बढ़ती हुई मँहगाई का प्रभाव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पड़ रहा है। इसके कारण निर्धनता की रेखा के नीचे जीवन यापन करने वालों की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। जनसंख्या वृद्धि के साथ निर्धनों की संख्या में भी वृद्धि हो रही है। आज से लगभग पाँच वर्ष पहले जहाँ निर्धनता का प्रतिशत 44·5 था, वहीं अब बढ़कर 51·5% हो गया है। निर्धनता के इस बढ़ते हुए प्रतिशत को कम करने के प्रयास करने ही होंगे। सरकार को राजनीतिक स्वार्थ के दायरे से निकलकर आर्थिक अपराधियों से सीधे ही निपटना होगा। इसके लिए सरकार 'निवारक नजरबन्दी कानून' का कड़ाई से पालन कर सकती है। अनावश्यक वस्तुओं का आयात तुरन्त बन्द करना होगा तथा आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन को तीव्र करना होगा। ताकि अधिक मात्रा में उत्पादित वस्तुओं का निर्यात किया जा सके। उत्पादन क्षमता को बढ़ाने के लिए कच्चे माल की पूर्ति की सम्भावनाएँ बढ़ाई जायँ। साथ ही साथ बिजली, कोयला और पैट्रोलियम पदार्थों को ऊर्जा साधनों के लिए सम्पन्न बनाया जाय। इसके अतिरिक्त व्यापक मूल्य नीति बनाई जाय और उसका पालन पूरी ईमानदारी से किया जाय। तभी हम बढ़ती हुई मँहगाई पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। जिससे समाज में व्यापक असंतोष कम होगा तथा भ्रष्टा-

चार का उन्मूलन हो जाने पर जीवन स्तर उन्नत होगा और सामान्य जनता विश्वास के साथ अपना जीवन यापन कर सकने में समर्थ होगी तभी सम्पूर्ण राष्ट्र उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हो सकेगा।

83
श्रीमती इन्दिरा गाँधी की उपलब्धियाँ

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना**
- **जीवन परिचय**
- **शिक्षा दीक्षा**
- **राजनैतिक जीवन का शुभारम्भ**
- **दृढ़ संकल्प की धनी**
- **इन्दिरा गाँधी की हत्या**
- **विभिन्न क्षेत्रों में इन्दिराजी का योगदान**
- **उपसंहार**

नारी के यदि आदर्श रूप पर दृष्टिपात किया जाय तो वह देवी के समकक्ष है। नारी सुन्दरता में शची है, साहस में दुर्गा है तथा ज्ञान में सरस्वती है। भारत की जिन नारियों में दैवीय गुण विद्यमान हैं, उनमें श्रीमती इन्दिरा गाँधी का नाम सर्व प्रमुख है। इन्दिराजी का नाम भारतीय इतिहास में सदैव स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा। जवाहर की प्रियदर्शिनी इन्दिरे अखण्ड भारत को अमर शहादत देकर भारत माता के पद पर बैठकर राष्ट्र माता हो गईं।

सुविख्यात वकील तथा राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष पंडित मोतीलाल नेहरू जी की पौत्री, स्वतन्त्र भारत के प्रथम प्रधानमन्त्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू की पुत्री थीं। इनकी माता का नाम कमला नेहरू तथा पति का नाम फीरोज गाँधी है। इन्दिराजी की कोख से दो पुत्र रत्नों ने जन्म लिया इनके नाम

संजय एवं राजीव हैं। दुर्भाग्यवश कनिष्ठ पुत्र संजय हवाई दुर्घटना के शिकार होकर चिरनिद्रा में विलीन हो गये। भारत को एक नवीन दिशा देने वाले संजय के आकस्मिक निधन का समाचार सुनकर सम्पूर्ण भारत शोक सागर में निमग्न हो गया।

इन्दिरा जी की प्रारम्भिक शिक्षा का सूत्रपात प्रारम्भ में प्रयाग में ही हुआ। इसके बाद शान्ति-निकेतन में रवीन्द्रनाथ टैगोर के संरक्षण में शिक्षा प्राप्त की तथा उनके दार्शनिक विचारों से अत्यधिक प्रभावित हुई। इन्होंने लन्दन में भी शिक्षा प्राप्त की।

इन्दिरा जी को राजनैतिक शिक्षा बाल्यकाल से ही अपने पैतृक निवास आनन्द भवन से ही प्राप्त की। उस समय आनन्द भवन तत्कालीन राजनैतिक गतिविधियों का केन्द्र था। सन् 1942 में श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने तेरह मास का कठोर कारावास सहन किया। उनके तप तथा त्याग से प्रभावित होकर इन्हें काँग्रेस-पार्टी के अध्यक्ष पद पर प्रतिष्ठित किया गया। श्री लालबहादुर शास्त्री के मन्त्रिमण्डल में सूचना एवं प्रसारण मन्त्री बनीं। शास्त्री जी के मरणोपरान्त इन्दिरा जी ने प्रधानमन्त्री पद को सुशोभित किया। अपने प्रधान मन्त्रित्व काल में इन्दिराजी ने दृढ़ से दृढ़ परिस्थितियों में साहस तथा धैर्य का साथ नहीं छोड़ा। आत्म-विश्वास, निर्णय क्षमता तथा दूरदर्शिता इनके स्वभाव के अभिन्न अंग थे। कठिन परिस्थितियों में इसका विवेक तथा सूझ-बूझ देखने लायक थे। परिणाम के विषय में चिन्तित हुए बिना वे दृढ़ निश्चय के साथ कर्म पथ पर अग्रसर होने में सिद्धहस्त थीं। सन् 1969 के राष्ट्रपति चुनाव, बैंकों के राष्ट्रीयकरण, राजाओं के प्रिवीपर्स की समाप्ति, 1971 का का भारत पाक युद्ध, 1974 का परमाणु विस्फोट, 1984 में अमृतसर स्वर्ण मन्दिर में आतंकवाद की समाप्ति हेतु सेना का प्रवेश आदि कार्य उनके साहस, देश-प्रेम, महानता तथा दूरदर्शिता के परिचायक हैं। सन् 1983 में निर्गुट राष्ट्रों का शिखर सम्मेलन भारत की भूमि पर सम्पन्न करके इन्दिरा जी ने भारत की साख तथा शान में अभूतपूर्व वृद्धि की। 1982 में एशियाई खेलों का आयोजन भी उनकी प्रतिभा तथा अन्तर्राष्ट्रीय प्रेम का द्योतक है।

इन्दिरा जी के जीवन में कभी भी पराजय का स्थान नहीं था। वह सदैव संघर्ष के मार्ग को सहर्ष अंगीकार करने वाली थीं। इलाहाबाद उच्च

न्यायालय ने श्रीमती इन्दिरा गाँधी के विरुद्ध निर्णय दिया लेकिन इन्दिरा जी इस निर्णय से तनिक भी विचलित नहीं हुईं, इन्होंने तत्काल आपातकाल की घोषणा कर दी। 1977 के चुनाव में जनता ने श्रीमती इन्दिरा गाँधी के विरुद्ध निर्णय दिया। वे इससे तनिक भी विचलित हुए बिना शाह आयोग का धैर्य तथा विवेक के साथ सामना करती रहीं। इसके पश्चात् देश की जनता ने इस महान् नारी में दैवीय गुणों का आकलन कर पुनः देश की बागडोर सौंपी। दुनिया के इतिहास में यह एक अद्वितीय उदाहरण है। 1971 में बंगला देश के अभ्युदय में इन्दिरा गाँधी का अभूतपूर्व योगदान था इससे अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत के मान तथा गौरव में आशातीत वृद्धि हुई। विश्व के राष्ट्र इन्दिरा जी के इस कृत्य से दाँतों तले उँगली दबाकर रह गए। स्वर्ण मन्दिर की सैनिक कार्यवाही के माध्यम से गुरुद्वारे की परम्परागत प्रतिष्ठा को पुनः प्रतिष्ठित करने के कारण ये विश्व में एक महानतम नेत्री के रूप में उभर कर दृष्टि पटल के समक्ष प्रस्तुत हुईं। उनका यह निम्न कथन कितना देश प्रेम तथा राष्ट्रीयता की भावना से ओत-प्रोत है—

"अगर मैं देश के लिए मर भी गई तो मुझे गर्व होगा मुझे यकीन है कि मेरे खून का कतरा देश को मजबूत और प्रगतिशील बनायेगा।"

सिख जाति इन्दिरा गाँधी की इस कार्यवाही के मन्तव्य को समझने में असफल रही। खालिस्तान आन्दोलन ने स्वयंभू नेता जगजीतसिंह चौहान ने बी० बी० सी के माध्यम से श्रीमती इन्दिरा गाँधी से बदला लेने की धमकी दी। सिख जाति धार्मिक उन्माद में पड़कर इस रहस्य को समझने में असफल रही। इन्दिरा गाँधी की हत्या की घृणित कार्यवाही अप्रत्यक्ष रूप से यहीं से प्रारम्भ हो गई। इस घिनौनी योजना के कारण श्रीमती इन्दिरा गाँधी स्वयं के विश्वस्त सुरक्षा गार्डों के माध्यम से मौत की शिकार बनीं। साम्प्रदायिकता एवं धार्मिक उन्माद के वशीभूत होकर 31 अक्टूबर 1984 को उनके विश्वासपात्र सुरक्षागार्ड बेअन्तसिंह तथा सतवंत सिंह ने श्रीमती गाँधी पर छः गोलियाँ पिस्तौल से तथा 22 गोलियाँ स्टेनगन से दाग दीं। यह हत्या राज्य हत्या, ब्रह्म हत्या तथा स्त्री हत्या की कोटि में आती है। यह घटना 31 अक्टूबर 1984 की है। दानवों के इस दुष्कृत्य से सम्पूर्ण मानवता कराह उठी। इसके साथ ही वह आकाशदीप भी मंद हो गया जो कि अन्धकार में भटके हुए मानवों का पथ आलोकित करता था। वह पुष्प भी मलिन हो गया

जिसकी सुगन्ध मानव को संकीर्णता की परिधि से मुक्त रखती थी। लेकिन वह आकाशदीप मन्द नहीं हुआ, वह पुष्प मुरझाया नहीं है, स्थूल रूप से चाहे वह हमारे नेत्रों के समक्ष भले ही उपस्थित नहीं है लेकिन उसकी सुगन्ध मानवता के पथ को आज भी सुवासित कर रही है, अन्धकार में प्रकाश रश्मियाँ बिखेर रही है।

श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने अपनी प्रगतिशील नीतियों को क्रियान्वित करने का भरसक प्रयास किया। एक ओर काँग्रेस के 20 सूत्रीय कार्यक्रम को उन्होंने क्रियान्वित करने का भरसक प्रयास किया तो दूसरी ओर देश की धरती पर समाजवाद की प्रतिष्ठा के लिए सच्चे हृदय से प्रयत्न किया। इसके परिणाम-स्वरूप देश की सम्पत्ति कुछ सीमा तक निकल कर राष्ट्रीय सरकार के हाथों में आ गयी। बंगला देश को स्वतन्त्र कराना श्रीमती इन्दिरा गाँधी की अद्‌भुत राजनीतिक क्षमता का द्योतक है। उनके सफल नेतृत्व के कारण पाकिस्तान को पराजय का मुँह देखना पड़ा। युद्ध के साज-सामानों के साथ ही कृषि की उन्नति की ओर भी यथेष्ठ ध्यान दिया गया। कृषि यन्त्रों का अभूतपूर्व निर्माण प्रारम्भ हुआ। अणु शक्ति के बिजलीघरों तथा तेल शोधक कारखानों की स्थापना हुई। इंजीनियरिंग कालेज, मैडीकल कॉलेज, कृषि अनुसन्धान केन्द्र, मशीन एवं औषधि के कारखानों की स्थापना हुई। इन्दिरा गाँधी के व्यक्तित्व में सरस्वती एवं दुर्गा दोनों ही रूपों का समन्वय था। उनके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर इन्दिरा भारत और भारत इन्दिरा का उद्‌घोष किया गया। यद्यपि इस कथन में कुछ अतिशयोक्ति हो सकती है लेकिन कुछ सीमा तक ये वाक्य खरे तथा सत्य प्रतीत होते हैं। देश का हर भाषा-भाषी इन्दिराजी को हृदय से प्यार करता था। अपने निवास स्थान पर वे प्रतिपल गरीबों की पुकार को सुनती थीं तथा उनकी समस्याओं का यथासम्भव निराकरण करने का प्रयास करती थीं। यथार्थ में वे गरीबों तथा दलितों की मसीहा थीं।

श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने हरित-क्रान्ति का बिगुल बजाया। बैंकों के राष्ट्रीयकरण के साथ जीवन बीमा निगम का भी राष्ट्रीयकरण किया। अनाज के थोक व्यापार का राष्ट्रीयकरण भी उनकी प्रगतिशील नीति का ही परिचायक है। शहरी सम्पत्ति का सीमा निर्धारण एवं कोयला खानों का

राष्ट्रीयकरण अपने में कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। तस्करों के विरुद्ध अभियान भी काले धन पर अंकुश लगाने के लिए एक सफल कदम था। देश की धरती पर औद्योगिक उन्नति का श्रेय श्रीमती इन्दिरा गाँधी की प्रगतिशील नीतियों का ही परिणाम है। भारत सोवियत मैत्री स्थापित करने के साथ ही अन्य राष्ट्रों के प्रति मित्रता का हाथ बढ़ाना इन्दिरा जी की सफल वैदेशिक नीति का परिचायक है।

इन्दिरा जी के सफल निर्देशन में देश में वैज्ञानिक उन्नति भी आशातीत हुई। 18 मई 1974 को राजस्थान के अन्तर्गत पोखरन में अणु-विस्फोट का सफल भूमिगत परीक्षण किया गया। इससे भारत विश्व के रंगमंच पर छठी शक्ति के रूप में उभर कर आया। इसके पश्चात् 1 अप्रैल 1975 को आर्य भट्ट उपग्रह को प्रक्षेपित किया गया।

इन्दिरा गाँधी के निधन से देश की धरती पर न भरने वाले अभाव का अनुभव किया गया। लोग सोचने लगे कि अब देश की पतवार को कौन सम्हालेगा। लेकिन सौभाग्यवश भारत देश कभी भी नेतृत्व विहीन नहीं रहा है। जवाहर एवं श्रीमती इन्दिरा गाँधी के बाद सूखे पात हरे हुए हैं। राजीव गाँधी आज सम्पूर्ण भारत के आशा केन्द्र बने हुए हैं। श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने जिन आदर्शों के लिए सतत् संघर्ष किया उन्हीं की रक्षा के लिए उन्होंने स्वयं के प्राणों की आहुति दे दी। वे शान्ति की मसीहा थीं तथा हिंसा के समूल नाश के लिए एक दृढ़ चट्टान थीं। इन्दिरा जी की मृत्यु एक युग का समापन है। एक नये युग, नये परिवर्तन तथा नये आविर्भाव का सूचक है नई रचना तथा अपूर्व त्याग का संकेत है।

84

नया युग नयी आशायें नया नेतृत्व

प्रधानमन्त्री श्री राजीव गाँधी

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- जन्म एवं शिक्षा

- पारिवारिक परिवेश
- राजनीति में सक्रिय-प्रवेश
- उपसंहार

विश्व में हर मानव के अन्दर गुण एवं दोष विद्यमान हैं। लेकिन कुछ मानव ऐसे होते हैं जो अपने शुभ कर्मों से विश्व की छाती पर अमर लेख, अंकित कर जाते हैं। आने वाली पीढ़ी उन्हें सर्वदा एक महापुरुष के रूप में अपनी स्मृतियों में संजोए रहती है। स्वर्गीय प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दरा गाँधी के प्रिय पुत्र श्री राजीव गाँधी भी उनके अनुकूल ही योग्य, दक्ष, प्रतिभा सम्पन्न, दृढ़ चरित्र, दूरदर्शी तथा विनय सम्पन्न युवक हैं।

श्री राजीव गाँधी ने अपने शैशव काल की आँखें 20 अगस्त 1944 को बम्बई की धरती पर खोलीं। ये श्रीमती इन्दिरा गाँधी के ज्येष्ठ पुत्र हैं। पुरुषोत्तम दास टण्डन ने इनका नाम 'राजीव रत्न' रखा। इनके छोटे भाई स्व० संजय थे। जन्म से ही श्री राजीव गाँधी सरल, अनुशासन प्रिय तथा मिलनसार रहे हैं। उनके चेहरे की सरल तथा मृदु मुस्कान आगन्तुक को अपनी ओर आकृष्ट किये बिना नहीं रहती।

जब राजीव गाँधी ने दस वर्ष की आयु में प्रवेश किया तब इन्हें बोर्डिंग स्कूल प्रेषित किया गया। सन् 1960 में दून स्कूल से वांछित परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके पश्चात् ट्रिनरी कॉलेज कैम्ब्रिज से स्नातक की उपाधि ग्रहण की। इनके जीवन का शुभारम्भ एक पायलट के रूप में हुआ। जाति-पाँति तथा राष्ट्रीय परिधि में संकुचित होकर न रहने वाले श्री राजीव गाँधी का पाणि-ग्रहण संस्कार इटली की कुमारी सोनिया गाँधी के साथ हुआ। उनके पुत्र का नाम राहुल तथा पुत्री का नाम प्रियंका है। दोनों ही बेटा-बेटी स्वस्थ, सुन्दर तथा मन को हरण करने वाले हैं। सम्पूर्ण राष्ट्र इनकी ओर निहार कर स्वर्णिम भविष्य का आकलन कर रहे हैं।

जिस बालक का सम्पूर्ण परिवार राष्ट्र की बलिवेदी पर न्यौछावर हो गया हो वह भला एक 'पायलट' के जीवन तक कैसे बँध कर रह सकता है। युवा राजीव गाँधी ने भी इस नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया। अपनी माता श्रीमती इन्दिरा गाँधी के जीवन से प्रेरणा लेकर सन् 1981 में राजनीति में प्रविष्ट हुए। उत्तर-प्रदेश अमेठी संसदीय सीट से इन्दिरा कांग्रेस की टिकिट

पर भारी बहुमत से विजयी घोषित किए गए । देश का युवा वर्ग तथा सजग कार्यकर्त्ता इनकी ओर आशा-भरी दृष्टि से निहारने लगे । परिणामस्वरूप श्री राजीव गाँधी को युवक कांग्रेस की राष्ट्रीय कार्यकारिणी का सदस्य मनोनीत किया गया । सन् 1983 में इन्हें पुनः भारतीय कांग्रेस समिति के महासचिव के गौरव पूर्ण पद पर प्रतिष्ठित किया गया । देश प्रेमी तथा राष्ट्र के लिए समर्पित यह युवक निरन्तर प्राण-पण से देश सेवा में संलग्न है ।

प्रायः यह देखा गया है कि महापुरुषों को अधिकांशतः साम्प्रदायिक कटुता के फलस्वरूप गोलियों का शिकार होना पड़ा है । विश्व इतिहास साक्षी है कि अमेरिका के प्रेसीडेन्ट केनेडी तथा राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी को भी गोलियों का शिकार होना पड़ा । अक्टूबर 1984 में श्रीमती इन्दिरा गाँधी की हत्या करदी गई । देश असुरक्षित तथा मारकाट का केन्द्र स्थल बन गया । राष्ट्र निवासी निराशा के सागर में गोते लगाने लगे एक अराजकता की सी स्थिति दृष्टिगोचर होने लगी । ऐसी भीषण बेला में 31 अक्टूबर 1984 को राष्ट्रपति ने श्री राजीवजी को प्रधानमन्त्री पद की शपथ दिलाई । 12 अक्टूबर 1984 को श्री राजीव गाँधी अखिल भारतीय कांग्रेस के अध्यक्ष मनोनीत हुए । दिसम्बर 1984 में उन्होंने संसद के चुनाव सम्पन्न कराए । इन चुनावों में राजनीत के महारथी इन्दिरा कांग्रेस की तुलना में धराशायी हुए । इन्दिरा काँग्रेस प्रचण्ड बहुमत से विजयी हुई । एक तरह विरोध पक्ष का सफाया ही हो गया । राजनीति के महारथियों को यह कटु अनुभव हो गया कि जनता बात नहीं काम चाहती है । वह उसके बाग्जाल में उलझने के लिए उद्यत नहीं है । चुनाव में बहुमत के विजयी होने के पश्चात् राजीव गाँधी को दल का नेता बनाकर प्रधानमन्त्री के पद पर प्रतिष्ठित किया गया है । अपने मन्त्रि मण्डल के गठन में उन्होंने कुशलता तथा दूरदर्शिता का परिचय दिया है । चाटुकार तथा बाचाल मन्त्रीगणों तथा कर्मचारियों का निष्कासन करके श्री राजीव गाँधी ने यह प्रदर्शित कर दिया है कि वे मानव का आकलन कार्य कुशलता, दक्षता तथा परिणामों के आधार पर करने वाले हैं ।

मन्त्रिमण्डल का गठन करने के पश्चात् श्री राजीव गाँधी ने बतलाया कि उनकी सरकार देश की एकता एवं अखण्डता को स्थायी बनाए रखने के लिए कृत-संकल्प है । सम्पूर्ण समस्यायें पंजाब की समस्या सहित उनके दृष्टि पटल में अंकित है । दल को आशातीत जीत मिलने पर राजीव गाँधी ने यह

अनुभव किया है कि उनका उत्तरदायित्व पहले की अपेक्षा बढ़ गया है उन्हें तथा उनके दल को जनता को दिये गये वायदों का भली प्रकार ज्ञान है। राजीव गाँधी का कथन है कि उनकी सरकार का प्रमुख लक्ष्य गरीबी का उन्मूलन करना है निर्धनता को दूर किये बिना देश को समृद्ध तथा उन्नत नहीं बनाया जा सकता है। विदेश नीति के सन्दर्भ में श्री राजीव गाँधी यह कह चुके हैं कि वे पंडित जवाहर लाल नेहरू तथा श्रीमती इन्दिरा गाँधी की शान्ति पूर्ण नीतियों का ही अनुगमन करेंगे।

नई सरकार ने देश को स्वच्छ तथा कुशल प्रशासन देने का भी वचन दिया है। भ्रष्टाचार तथा लाल फीताशाही को भी समाप्त करने का संकेत है। राजीव गाँधी की सफलता ने विरोध पक्ष को हतोत्साह कर दिया है। यदि राजीव गाँधी की सरकार जनता को दिए गए वायदों को पूर्ण करने में सक्षम नहीं होगी तो आगामी चुनावों में उसे विजयश्री प्राप्त होने में सन्देह है।

श्री राजीव गाँधी की लोकप्रियता तो इस बात से उजागर हो जाती है कि प्रथम बार कांग्रेस आई को अस्सी प्रतिशत स्थान प्राप्त हुए। यह सफलता चुनाव से पूर्व किये गए अनुमानों से कई गुना अधिक है। भारतीय जनता पार्टी तथा दमकिपा को गहरा आघात लगा है। विभागों के नामों में परिवर्तन तथा मन्त्रीगणों को सौंपे गए विभागों से यह परिलक्षित होता है कि श्री राजीव गाँधी को व्यक्ति तथा राजनीति की गहरी परख है। लोग यह क्यों भूल जाते हैं कि महान् माता-पिता की सन्तान आगे चलकर महान् ही बनती है। राजीव गाँधी भी इसका अपवाद नहीं हैं। अपनी माँ के साथ रहकर इन्होंने राजनीति तथा देश-प्रेम का जो पाठ पढ़ा है उस पर प्रश्न चिन्ह नहीं लगाया जा सकता।

श्री राजीव गाँधी ने अराजकता के मध्य देश की बागडोर सम्भाली। एक कन्धे पर वे माँ की अर्थी लिए हुए थे तथा दूसरे कन्धे पर राष्ट्र की समस्याओं का भार झूल रहा था। इस युवा धीर-वीर और मनीषी ने दोनों ही भारों को कुशलता से वहन किया आज विपक्षियों का यह कथन है कि देश पर एक वंश का शासन लाद दिया गया है निरर्थक तथा पागलों जैसा प्रलाप प्रतीत होता है। सम्भवतः वे इस परिवार के त्याग तथा बलिदान को विस्मृत

किए बैठे हैं । आज राजीव गांधी के हाथों में देश, अपनी बागडोर सौंप कर अपनी आँखों में भविष्य के सुनहरे सपने संजोए हुए है। देश की अखण्डता तथा स्थायित्व के लिए आज राजीव सदृश व्यक्ति की ही अपेक्षा है। किसी शायर ने इस परिवार के लिए ठीक ही कहा है ।

"अपनी कुरबानियों के लिए मशहूर है नेहरू खानदान ।
बिस्मिल ये वो समां है, जो घर का घर परवाना हो गया ।"

85
भारत में दूरदर्शन

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- विज्ञान वरदान के रूप में
- विज्ञान अभिशाप के रूप में
- दूरदर्शन का आविष्कार
- राष्ट्रीय सरकार की दूरदर्शन विस्तार की योजना
- दूरदर्शन से लाभ
- उपसंहार

आज विज्ञान का युग है । विश्व में चहुँओर विज्ञान की दुन्दभी सुनाई पड़ रही है । विज्ञान के साधनों के माध्यम से आज का मानव निरन्तर प्रगति की मंजिल पर अपने चरण बढ़ा रहा है। विज्ञान ने मानव की आकाश में उड़ने वाली इच्छाओं को धरती पर साकार रूप दे दिया है। विज्ञान के माध्यम से आज का मानव सहस्रों मील बैठे हुए व्यक्ति से वार्तालाप करने में समर्थ है । वार्तालाप ही नहीं अपितु उनके क्रिया-कलापों को भी प्रत्यक्ष रूप में देख सकता है । मानव आज प्रकृति पर विजय प्राप्त करता हुआ अपने सुख तथा सुविधा की सामग्री जुटाने में प्रतिपल व्यस्त है। विज्ञान आज के मानव को अनगिनत आराम तथा विलास की सुविधाएँ जुटा रहा है ।

भारत आज स्वतन्त्र वातावरण में सांस ले रहा है। स्वाधीनता की सुनहरी ऊषा में भारत के ग्राम, नगर तथा कानून आलोकित हो रहे हैं। लेकिन आज भी देश के अधिकांश मानव अशिक्षा के अन्धकार में डूबे हुए हैं। इन अशिक्षित मानवों को दूरदर्शन के माध्यम से शिक्षित बनाया जा सकता है। दूरदर्शन पर प्रदर्शित बाल कार्यक्रम का अवलोकन करके हमारे देश के बालक अनुशासन-प्रिय तथा देश भक्त बनेंगे। साहस एवं शौर्य के नाटकों एवं कहानियों को देखकर निर्भयता एवं वीरता का पाठ पढ़ेंगे। कृषक वर्ग कृषि से सम्बन्धित उन्नत किस्म के बीज तथा खाद का ज्ञान प्राप्त करेंगे। फसलों को नष्ट करने वाले विषैले कीड़ों को नष्ट करने के साधनों तथा औषधियों की जानकारी हासिल करेंगे कृषि विषयक नवीन तकनीक को जानेंगे। इससे कृषि को उन्नत करने में भरपूर सहयोग मिलेगा। यूनिवर्सिटी 'ग्राण्ट कमीशन' द्वारा प्रसारित कार्यक्रम उच्च शिक्षा को एक नई गति तथा दिशा प्रदान करेगा। दूरदर्शन के द्वारा प्रसारित समाचार देश के लोगों को राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय ज्ञान की प्रचुर सामग्री प्रदत्त करेंगे। मनोरंजन के कार्यक्रम जनता को स्वस्थ तथा उन्नत कार्यक्रम प्रदत्त करने के साथ ही उनकी मनोवृत्ति का भी परिष्कार करेंगे।

दूरदर्शन पर 'स्पोर्ट्स वर्ड' एवं 'स्पोटलाइट' आदि कार्यक्रम प्रस्तुत किये जाते हैं। इन कार्यक्रमों में हमें दुनियाँ के कुशल तथा होनहार खिलाड़ियों से भेंट कराई जाती है। हॉकी, क्रिकेट, वाक्सिंग एवं घुड़सवारी आदि के कार्यक्रम प्रस्तुत किये जाते हैं। एशियाड एवं ओलम्पिक खेलों का आनन्द जनसाधारण ने दूरदर्शन के माध्यम से ही ग्रहण किया। साधारण जनता न तो इन स्थानों पर कार्यक्रमों को देखने जा सकती थी तथा न इतना व्यय भार वहन कर सकती थी। दूरदर्शन से घर बैठे ही सम्पूर्ण कार्यक्रम का लाभ उठाया जा सकता है।

दूरदर्शन के माध्यम से हम अन्य देशों की सभ्यता एवं संस्कृति का ज्ञान भी प्राप्त करते हैं। अन्य देश के मानवों का रहन-सहन किस प्रकार का है, उनकी सामाजिक एवं सांस्कृतिक अवधारणायें क्या हैं, कौन सी भाषा का प्रयोग करते हैं, धर्म एवं ईश्वर के सम्बन्ध में वे क्या सोचते तथा विचारते आदि बातों का ज्ञान दूरदर्शन के द्वारा सुगमता से प्राप्त हो जाता है। अन्य देशों की प्राचीन इमारतों, सिक्कों, मूर्तियों तथा अभिलेखों के द्वारा इतिहास की प्रचुर मात्रा में जानकारी मिलती है।

दूरदर्शन पर प्रसारित अखिल भारतीय संगीत एवं नृत्य के कार्यक्रम संगीत तथा नृत्य के क्षेत्र में एक नवीन दिशा का बोध कराने वाले हैं। फिल्मी संगीत एवं लोकगीतों का दूरदर्शन पर प्रतिदिन प्रसारण होता है। शास्त्रीय संगीत में भारतीय संगीत की प्राचीन एवं नवीन गीतशैली की छटा मिलती है। शहनाई, सितार एवं सरोद वादन के कार्यक्रम संगीत प्रेमियों को संगीत का भरपूर आनन्द प्रदत्त करते हैं।

दूरदर्शन विज्ञान के सन्दर्भ में भी अभूतपूर्व सामग्री प्रदान करता है। नये-नये आविष्कार दर्शकों को विज्ञान के नये तथ्यों से परिचित कराते हैं। चिकित्सा विज्ञान विषयक प्रसारण नवीन चिकित्सा प्रणाली का बोध कराता है। मौसम की जानकारी प्रकृति के परिवर्तित रूपों का ज्ञान देती है। इस जानकारी के द्वारा प्रकृति के कोप से सुरक्षा की जा सकती है। इसके साथ दूरदर्शन पर राजनीति एवं धार्मिक विषयों पर गोष्ठियों का आयोजन होता है। इससे लोगों की राजनीति एवं धर्म विषयक जानकारी का विस्तार होता है। देश-विदेश के चोटी के राजनीतिज्ञों द्वारा समय-समय पर जो वक्तव्य दूरदर्शन पर प्रसारित किये जाते हैं उनसे साधारण मानवों का मनःक्षितिज राजनीति के सन्दर्भ में विस्तृत एवं विशाल होता है।

आज हमारे देश में जनसंख्या का दिन-दूना रात-चौगुना विस्तार हो रहा है। दूरदर्शन पर दिन प्रतिदिन परिवार नियोजन कार्यक्रम प्रसारित किये जाते हैं। इन कार्यक्रमों के द्वारा मानव सीमित परिवार में उन्नति तथा सुख के सपने संजोता है। परिवार-नियोजन के कार्यक्रम दूरदर्शन के माध्यम से दूरस्थ स्थलों पर प्रसारित होकर जनसंख्या की वृद्धि पर रोक लगाने में सक्षम हैं। इसके साथ ही समय-समय पर प्रसारित होने वाली स्वास्थ्य विषयक जानकारी स्वस्थ रहने में योग प्रदान करती हैं। रक्तचाप क्यों होता है, कैंसर का विस्तार क्यों हो रहा है, दाँतों में क्षय रोग कैसे लगता है, टी० वी० की बीमारी क्यों फैल रही है आदि बातों की जानकारी हमें दूरदर्शन पर प्रसारित कार्यक्रमों पर भली प्रकार मिल जाती है। व्यायाम से होने वाले लाभों को बताया जाता है। जनसाधारण इन व्यायामों के लाभों से परिचित होकर तदनुकूल जीवन यापन करने का प्रयास करता है। अगस्त 1985 को अमेरिका के सहयोग से दूरदर्शन के माध्यम से जनसाधारण को शिक्षित करने की

योजना का शुभारम्भ किया गया था। जिसका जन मानस पटल पर उचित प्रभाव पड़ा।

लेकिन एक प्रश्न विचारणीय है कि दूरदर्शन केवल उन्हीं लोगों का मनोरंजन कर रहा है जिनके पास पहले से ही मनोरंजन के साधन विद्यमान हैं। अभी निर्धन एवं अशिक्षित मानवों के जीवन में दूरदर्शन आनन्द का प्रकाश नहीं बिखेर रहा है। कार्यदल के इस सन्दर्भ में निम्न विचार अवलोकनीय हैं।

"दूरदर्शन केन्द्रों ने समय के बँटवारे की सम्भावना का पूरा उपयोग कर लिया हो, ऐसी बात नहीं है, प्रत्येक केन्द्र के कुल प्रसारण समय पर नजर डालने से यह पता चलता है कि प्राप्त सुविधाओं का भी पूरा उपयोग नहीं हो पा रहा है, अभी जितना प्रसारण समय उपलब्ध है, उसे भरने के लिए भी दूरदर्शन केन्द्र भारतीय व विदेशी फीचर फिल्मों; भारतीय फिल्मों से लिए गये नृत्य-गीत प्रसंगों और सामाजिक कामेडी वाले विदेशी कार्यक्रमों पर दयनीय रूप से निर्भर है।"

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि दूरदर्शन मानवों के लिए वरदान है। इससे सामाजिक कुरीतियों का अन्त होगा। जनसाधारण का दृष्टिकोण विस्तृत होगा। देश का चारित्रिक एवं नैतिक विकास होगा ज्ञान का नवीन प्रकाश विकीर्ण होगा। विश्व के अन्य राष्ट्रों में भारत का गौरवपूर्ण स्थान होगा।

86

राष्ट्रीय एकता

विचार-तालिका

- **प्रस्तावना**
- **देश में विविधिताओं का समावेश**
- **आक्रमण के समय एकता का प्रादुर्भाव**

- **प्राचीन काल में एकता में व्यवधान**
- **देश में जाग्रति**
- **एकता में साहित्य एवं कला का योग**
- **उपसंहार**

भारत देश विविधिता के कारण उपमहाद्वीप की संज्ञा से विभूषित किया जाता है। हमारे देश में अनेक सम्प्रदाय तथा धर्मों के लोग हजारों वर्षों से प्रेम तथा सौहार्द्रपूर्वक निवास कर रहे हैं। हिन्दू, सिक्ख, ईसाई, मुसलमान, बौद्ध, पारसी एवं जैन एक दूसरे की भावना का समादर करते हुए भारत राष्ट्र को अपनी मातृभूमि स्वीकार करते हैं श्रद्धाभाव भी रखते हैं। किसी कवि ने इस सन्दर्भ में ठीक ही कहा है—

"भारत माता का मन्दिर ये,
समता का सम्वाद यहाँ है।
हिन्दू, मुसलिम, सिक्ख, ईसाई,
पावें सभी प्रसाद यहाँ हैं॥"

जहाँ तक भाषा का प्रश्न है हमारे देश में संविधान में पन्द्रह भाषाएँ स्वीकृत हैं। इसके पश्चात् अनेक उपभाषाएँ एवं क्षेत्रीय बोलियों का प्रचलन है। यदि हम इन भाषाओं, उपभाषाओं एवं क्षेत्रीय बोलियों का गहराई से चिन्तन एवं मनन करें तो प्रायः सभी भाषाओं में भारतीय साहित्य की विशेषताओं का समावेश है।

रीति-रिवाज, आस्था, विश्वास के सन्दर्भ में भी सम्पूर्ण देश एक है। चार प्रमुख मठ चारों दिशाओं के सुरक्षा के प्रतीक हैं। होली, दीवाली, रक्षाबन्धन तथा दशहरा का पर्व सम्पूर्ण राष्ट्र में धूमधाम तथा हर्ष के साथ सम्पन्न होते हैं। दक्षिण भारत में जन्मे शंकराचार्य एवं रामानुजाचार्य के प्रति सम्पूर्ण उत्तरी भारत में श्रद्धा एवं आदर की भावना पाई जाती है। पराधीन राष्ट्र कभी भी राष्ट्र के पद को सुशोभित नहीं कर सकता है। स्वाधीन देश ही राष्ट्र कहलाने का अधिकारी है। एकता की भावना सम्पूर्ण राष्ट्र को एक सूत्र में आबद्ध कर देती है। विशाल राष्ट्र भारत में विभिन्नताओं के होते हुए भी एकता की भावना पाई जाती है। विशाल भारत में निवास करने वाले सभी आपस में भाई हैं। हर राज्य भाषा तथा रीति-रिवाज

की दृष्टि से भिन्न हो सकता है लेकिन सबके मध्य मैत्री की भावना उपस्थित है।

हमारे देश पर जब भी बाहरी शक्तियों ने आक्रमण किया तब भारत देश की एकता अवलोकनीय रही। चीन तथा पाकिस्तान के आक्रमण के समय सम्पूर्ण धर्म, सम्प्रदाय तथा जाति के लोग एकमत होकर शत्रु से लोहा लेने में जुट गए। सबने अपने क्षुद्र स्वार्थों को तिलांजलि देकर राष्ट्र की सुरक्षा को महत्त्व प्रदान किया। हम स्वयं को थोड़ी देर के लिए पंजाबी, मद्रासी, बंगाली, गुजराती एवं मराठी के नाम से भले ही सम्बोधित करें लेकिन आखिर में हम सब भारतीय हैं। हमारा धर्म तथा जाति कुछ भी हो सकती है लेकिन हम सब एक राष्ट्र-भारतवर्ष के निवासी हैं। हम सब इसी देश के नागरिक हैं। इसका भविष्य हमारे ही कन्धों पर आधारित है। सम्मिलन की भावना ही राष्ट्रीय एकता का प्रतीक है।

प्राचीन काल में आवागमन की सुविधा का नितान्त अभाव था। सम्पूर्ण भारत अनेक सम्प्रदाय तथा धर्मों में विभक्त था। उच्च जाति के लोग निम्न जाति (शूद्रों) को घृणा की दृष्टि से देखते थे। राजपूत राजा परस्पर घृणा तथा शत्रुता रखते थे। विवाह जैसे पवित्र अवसर पर कन्याओं का बलात् अपहरण किया जाता था। ये सम्पूर्ण बातें हमारी पराधीनता का कारण बना। हमने यवनों तथा विधर्मियों को सम्मान दिया तथा अपने भाइयों को दुतकारा परिणामस्वरूप निम्नजाति के लोग दूसरे धर्मों को अपनाने के लिए अग्रसर हुए जब हमें अपनी भूल प्रतीत हुई तब तक सत्यानाश के बीज पनप चुके थे। तिलक, गाँधी, मालवीय जी ने लोगों को एकता का संदेश दिया ब्राह्मण तथा निम्नवर्ग की जातियों को एक साथ जीवन-यापन का उपदेश दिया।

देश जाग्रत हुआ। हमने अपने अधिकारों तथा अस्तित्व को पहिचाना देश की धरती पर स्वतन्त्रता का बिगुल बजा। विदेशी भारत को स्वतन्त्र करने के लिए विवश हुए। पन्द्रह अगस्त 1947 को देश आजाद हुआ। भारत माता लौह पाशों से मुक्त हुई। राष्ट्रीय सरकार ने एकता के लिए घृणित प्रथाओं का अन्त करना प्रारम्भ किया। अस्पृश्यता निवारण कानून पास हुआ। इससे ऊँच-नीच तथा जाति-पाँति की भावना को आघात लगा। देव मन्दिरों

में हर मानव को प्रवेश की आज्ञा प्रदान की गई। इसमे अपने को उच्च समझने वाली जातियों के एकाधिकार पर कुठाराघात हुआ।

साहित्य एवं कला भी देश की एकता में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। साहित्य जाति तथा रंग के भेद से ऊपर उठा हुआ होता है। उसके द्वारा लिखित साहित्य देश तथा काल की परिधि को लांघकर सम्पूर्ण विश्व तथा कालों के लिए उपयोगी होता है। इसी भाँति कला कृतियाँ भी किसी देश अथवा जाति की बपौती नहीं होती हैं। चन्द्रमा तथा भास्कर के प्रकाश की भाँति प्रत्येक मानव उनसे शिक्षा तथा सौन्दर्य बोध का अनुभव कर सकता है। हमारे सन्तों ने भी देश की एकता के लिए भगीरथी प्रयास किया है। महात्मा कबीर ने जहाँ कुरीतियों एवं पाखण्डों का पर्दाफाश किया है वहीं राष्ट्रीय एकता का भी महान् सन्देश दिया है। परस्पर की फूट कितनी विनाशकारी होती है इस सन्दर्भ में उनकी निम्न साखी प्रस्तुत है—

"हिन्दु कहे मोहिं राम प्यारा, तुरक कहे रहिमाना।
आपस में दोउ लड़ि-लड़ि मुए भेद न काहू जाना॥"

हमारे देश में संविधान में उपासना स्वातन्त्र्य का सबको समान अधिकार है। लेकिन इसका अनुचित लाभ उठाकर तथा धर्म को राजनीति से प्रभावित होकर जाति, पंथ, भाषा तथा धर्म का उन्माद पैदा करना वर्जित है। विगत वर्ष से भारत-माता के अभिन्न अंग सिक्ख समुदाय धार्मिक उन्माद का शिकार बना हुआ है। एक ही माता के दो सुपुत्र एक दूसरे को मारने के लिए उद्यत हैं। राष्ट्रीय एकता के लिए हमारे देश की प्रधान मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी को मृत्यु के घाट उतारा गया लेकिन वे अपने रक्त की अन्तिम बूंद तक देश की एकता तथा अखण्डता के लिए कार्य करती रहीं। श्रीमती गाँधी के पश्चात् श्री राजीव गाँधी ने देश के प्रधानमन्त्री का पद सम्हाला है। इन्दिरा गाँधी की हत्या के पश्चात् देश की अखण्डता तथा एकता के लिए कुछ शक्तियाँ चुनौतियाँ बनीं लेकिन श्री राजीव गाँधी के दृढ़ नेतृत्व तथा अद्भुत सूझ-बूझ ने समस्या पर विजय प्राप्त करली। लोग पुनः एकता तथा भाई-चारे में बँधने का स्वप्न संजो रहे हैं।

भारत देश में भावात्मक एकता प्रारम्भ से विद्यमान है। इस राष्ट्रीय एकता में समय-समय पर व्यवधान उपस्थित होते रहे हैं लेकिन यहाँ के निवासियों की एकता तथा दृढ़-मनोबल के कारण सब निष्फल ठहरे हैं। एकता के पादप की जड़ें भारत भूमि में गहरी जमी हुई हैं। संतों तथा महान् पुरुषों ने अपने प्रयत्न रूपी जल से सींचकर इस एकता पादप को हरा-भरा तथा लहलहाता हुआ बनाया है। देश की धरती पर धर्म, भाषा तथा जाति के नाम पर घृणा तथा विद्वेष के बीजों को बोया जा रहा है, परिमल पराग की बगिया में रक्त के बीज बोने की तैयारी है लेकिन नापाक लोगों के घृणित मंसूबे धराशायी होंगे। हम सब समवेत स्वर में पुकार उठेंगे—

"यूनान मिश्र रोमां सब मिट गये जहाँ से।
क्या बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी ॥"

87
साहित्य और समाज

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- साहित्य का उद्देश्य
- साहित्य में अक्षय शक्ति निहित है
- साहित्य एवं समाज का अभिन्न सम्बन्ध
- समाज का साहित्यकार पर प्रभाव
- साहित्य के संदर्भ में जैनेन्द्र जी का मत
- साहित्य के प्रकार
- उपसंहार।

साहित्य एवं समाज का अटूट सम्बन्ध है। साहित्य समाज का दर्पण है, जिस तरह का वातावरण समाज का होता है, उसकी झलक हमें उस समय के साहित्य में परिलक्षित हो जाती है, क्योंकि साहित्यकार भी एक सामाजिक

प्राणी है, वह समाज में ही जन्म लेता है, उसमें ही बड़ा होता है तथा उसी में उसका पालन होता है। इसलिए वह अपने समाज से स्वाभाविक रूप से प्रभावित होता है। इसलिए उसके साहित्य में उस समय के समाज का चित्र प्रतिबिम्बित होता है।

साहित्य का उद्देश्य 'सर्वजनहिताय' होना चाहिए। जिस तरह माँ गंगा सबका हित करती है उसी तरह साहित्य को करना चाहिए।

'शब्द' एवं 'अर्थ' की तरह ही साहित्य एवं समाज एक दूसरे पर आश्रित हैं। इन्हें हम एक दूसरे से विलग नहीं कर सकते तभी तो कहा गया है कि—

"अन्धकार है वहाँ, जहाँ आदित्य नहीं है, मुर्दा है वह देश, जहाँ साहित्य नहीं है।"

साहित्य की शक्ति के समक्ष तलवार, तोप एवं बम इत्यादि की शक्ति भी नगण्य है।

साहित्य मानव की अनुभूतियों की खान है। इसमें भूत, भविष्य एवं वर्तमान तीनों निहित रहते हैं। यह वर्तमान को उजागर करता है, बीते समय की याद दिलाता है एवं भविष्य के लिए प्रेरणा प्रदान करता है। साहित्य में सत्यं शिवं सुन्दरं की भावना होनी चाहिए। साहित्य द्वारा मानव संस्कार निर्मित होते हैं, अतः यह संस्कृति है। राष्ट्र की उन्नति—साहित्य की उन्नति पर निर्भर करती है। इसलिए हम कह सकते हैं कि जिस देश का साहित्य जितना उन्नत होगा, उतना ही वह राष्ट्र उन्नत एवं समृद्ध होगा।

मनुष्य को यदि समाज से अलग कर दिया जाए, तो उसकी उन्नति असम्भव है, चाहे वह कितना ही शक्ति सम्पन्न एवं बुद्धिमान क्यों न हो? मनुष्य में उत्तम गुणों का विकास समाज ही करता है एवं उसके चरित्र का भी गठन करता है। समाज ही उसे कर्त्तव्यों एवं अधिकारों का बोध कराता है।

अच्छा साहित्य समाज में क्रान्ति ला देता है, वह समाज में व्याप्त निराशा, दुखों इत्यादि को दूर करने में समर्थ होता है। साहित्य वह संजीवनी बूटी है जो मरे हुए में भी प्राण फूँक दे। वाल्टेयर के साहित्य ने रूस और फ्रांस में क्रान्ति फैला दी। जनता में भक्ति भाव का संचार सूर एवं तुलसी के काव्य ने किया। राणा प्रताप की जीवन दशा, पृथ्वीराज के पत्र ने परिवर्तित कर दी।

समाज से परे साहित्य की कल्पना मात्र ही व्यर्थ है। समाज के बदलने के साथ-साथ साहित्य में परिवर्तन होता रहता है।

साहित्य में वह शक्ति होनी है, जिसके द्वारा मानव में एक नई चेतना जाग्रत हो जाती है, इसी चेतना से गुलामी की जंजीरों में जकड़े देशों ने स्वतन्त्रता प्राप्त की। आज भी सभी राष्ट्रों पर साहित्य का प्रभाव परिलक्षित होता है। भारतीयों में राष्ट्रीयता की भावना को तीव्रतर करने में बंकिमचन्द्र के राष्ट्रगीत को सर्वाधिक श्रेय जाता है। एक अच्छे समाज का निर्माण साहित्यकार करता है तथा मानव का सर्वाङ्गीण विकास करता है। साहित्य मृत्यु से अमृत की तरफ तथा अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाता है। उन्नत समाज में ही उत्तम साहित्य का सृजन हो सकता है और गिरे समाज का साहित्य भी निम्नकोटि का होता है। हमारा भारत प्राचीन समय से ही आध्यात्मिक दृष्टि से उन्नत रहा है तभी हमारे यहाँ ऋषि-मुनियों ने वेद, पुराण इत्यादि लिखे जो कि ब्रह्म वाक्य (वेद के वचन) कहे जाते हैं। यूरोप विज्ञान की दृष्टि से उन्नत है, इसलिए वहाँ का वैज्ञानिक साहित्य बहुत विकसित है।

साहित्य एवं समाज की आधारशिला एक ही है, दोनों ही एक दूसरे के बिना अधूरे हैं। समाज में घटनायें होती हैं जो साहित्य में लिखी जाती हैं। साहित्य एक प्रकाशपुंज है जो जीवन को प्रकाशमय कर देता है एवं नवीन चेतना जागृत कर देता है। साहित्यकार साहित्य में अपना दृष्टिकोण नगण्य तथा समाज में व्याप्त मान्यताओं एवं परिस्थितियों को अधिकाधिक उजागर करता है। साहित्य को शक्ति का पुंज माना गया है जो मानव समाज को परिवर्तित करने में पूर्णरूपेण सफल होता है। क्रान्ति एवं आन्दोलन में मूल-रूप से साहित्य ने ही मुख्य भूमिका निभायी है। मनुष्य के उदास मन में आशा का दीप जलाने एवं अन्धकारमय जीवन में प्रकाश की किरण प्रज्वलित कर उसका गिरा हुआ मन उठाकर फिर से कार्य में जुटने की प्रेरणा प्रदान की है। साहित्य एवं समाज एक दूसरे पर उपकार करते रहते हैं अर्थात् एक दूसरे पर पूरी तरह से आश्रित हैं। दोनों ही मानव का हित करते हैं। साहित्य समाज को शक्ति प्रदान करता है और समाज साहित्य को बनाता है।

प्रत्येक साहित्यकार अपने समाज से इस सीमा तक प्रभावित होता है इसका उदाहरण हम अरब के कवियों द्वारा लिखित उपमाओं से कर सकते हैं जैसे यहाँ का कवि गर्दन की उपमा शंख से देता है तथा अरब का कवि गर्दन की उपमा सुराही से देता है एवं चाल की उपमा ऊँट की चाल से देता है तथा भारतीय कवि चाल की उपमा हँस तथा गज की चाल से देते हैं।

अब साहित्य में जीर्ण-शीर्ण रीति-रिवाज एवं मान्यताओं पर कठोर प्रहार किये जाते हैं तथा समाज के प्रति विद्रोह की आवाज उठायी जाती है जैसे— किसी कवि के शब्दों में—"श्वानों को मिलता दूध दही, भूखे बालक चिल्लाते हैं। माँ की छाती से चिपक-चिपक, जाड़े की रात बिताते हैं।"

जैनेन्द्र जी ने साहित्य एवं समाज पर अपने विचार इस तरह प्रकट किये हैं कि कोई भी व्यक्ति चाहे कितना भी समाजद्रोही हो चाहे कितना ही दुश्चरित्र तो भी वह साहित्य रचना कर सकता है। ऐसे साहित्यकार भी अपने अच्छी साहित्य रचना के कारण आने वाले समय में पूजे जाते हैं। बहुत से लोग ऐसे होते हैं जिनका समाज अनादर करता है तथा उनको बुरा भला कहता है फिर भी वे अपने द्वारा वांछित राह पर निरन्तर चलते रहते हैं। ऐसे करने पर लोग उनका मजाक बनाते हैं किन्तु अन्त में वे ही समाज के द्वारा सम्माननीय हो जाते हैं।

साहित्य एवं समाज का सम्बन्ध दो तरह से होता है। (1) स्वीकृत जड़ साहित्य (2) अस्वीकृत गतिशील साहित्य। स्वीकृत जड़ साहित्य उसे कहते हैं जो सबको आनन्द प्रदान करता है तथा सभी ओर सब लोग उसकी प्रशंसा करते हैं। इसमें भौतिकता अधिक एवं आध्यात्मिकता न के बराबर होती है। अस्वीकृत गतिशील साहित्य वह होता है जिसमें समाज की रीति-रिवाजों पर ध्यान न रखकर भविष्य के मंगल के लिए ध्यान रखा जाता है। इसमें समाज की कुप्रथाओं पर प्रहार किया जाता है, तथा इन समस्याओं के निदान हेतु नवीन सुझाव दिये जाते हैं। पहले प्रकार का साहित्य समाज को स्थायी रूप देता है जबकि दूसरे प्रकार का साहित्य समाज में व्याप्त जड़ता को समाप्त करके उसमें निरन्तरता बनाये रहता है।

साहित्य समाज में विपत्तियाँ पड़ने पर एक नई चेतना जाग्रत करता है। वातावरण की माँग के अनुरूप मानव मन में आशा के भाव जगाकर "अन्धे

की लकड़ी का सहारा" वाला काम करता है। आज के समाज में पाश्चात्य प्रभाव के कारण लज्जा नामक गुण तो जैसे—प्रायः लुप्त सा हो गया है। भौतिकता में अधिक आस्था होने के कारण आज मनुष्य अशान्ति महसूस कर रहा है। आज हमें ऐसे साहित्य की आवश्यकता है, जो समाज में व्याप्त बुराइयों को दूर करके एक स्वच्छ समाज का निर्माण करने में सक्षम हो।

88
नई शिक्षा नीति

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- नई शिक्षा प्रणाली का शुभारम्भ
- प्राचीन काल की शिक्षा व्यवस्था
- प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी का योगदान
- नई शिक्षा नीति की विशेषता
- मुख्य-मुख्य उद्देश्य
- उपसंहार।

शिक्षा ही किसी राष्ट्र की उन्नति तथा समृद्धि की आधार-शिला है। इसी के द्वारा राष्ट्र के भावी नागरिकों का निर्माण होता है। कवि मैथिलीशरण गुप्त के शब्दों में—"सबसे प्रथम कर्त्तव्य है शिक्षा बढ़ाना देश में। शिक्षा बिना ही पड़ रहे हैं आज हम सब क्लेश में।"

लेकिन प्रश्न उपस्थित है कि किस प्रकार की शिक्षा का भारत की धरती पर प्रसार हो। भारत में अब तक वही शिक्षा पद्धति प्रारम्भ है जिसकी नींव अंग्रेजों के शासन काल में लार्ड मैकाले ने डाली थी। मैकाले का मुख्य लक्ष्य ऐसे बाबू तैयार करना था जो देखने में तो भारतवासी लगें लेकिन उनके दिल तथा दिमाग अंग्रेजियत में पूरी तरह रंगे हों। उसकी यह नीति पूरी तरह से सफल रही।

आजादी प्राप्त करने के पश्चात् भारत की शिक्षा पद्धति में सुधार लाने के प्रयास किये गये। सन् 1949 में राधाकृष्णनन आयोग तथा 1968 में कोठारी आयोग इसी सन्दर्भ में किये गये असफल प्रयास हैं। लेकिन हर्ष का विषय यह है कि हमारे युवा प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी शिक्षा में आधार-भूत परिवर्तन लाने के लिए दृढ़ संकल्प कर चुके हैं। सन् 1968 की शिक्षा नीति की पुनरावृत्ति न करने का भी संकल्प किया गया है। इस नीति के सम्बन्ध में संसद में भी विचार-विमर्श किया जा चुका है।

इस सन्दर्भ में जब हम विचार करते हैं तो यह प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में भी नालन्दा तथा तक्षशिला जैसे—महाविद्यालय थे। जहाँ विभिन्न विषयों की शिक्षा के साथ तकनीकी तथा प्रोद्योगिकी शिक्षा का प्रयत्न था। प्रवेश भी नई शिक्षा-प्रणाली की नीति के अनुसार सीमित थे। साक्षात्कार तथा परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद ही प्रवेश पाना सम्भव हो सकता था। मुसलमान आक्रमणकारियों ने पुस्तकालयों को जलाया तथा महाविद्यालयों के भवनों को धराशायी किया।

आज अंग्रेजों द्वारा नींव रखी गई शिक्षा नीति के कारण भारत देश की धरती पर कान्वेन्ट स्कूल तथा पब्लिक स्कूलों की भरमार है। साधारण स्थिति का संरक्षक अपने छात्रों को इन विद्यालयों में पढ़ने के लिए नहीं भेज सकता फलस्वरूप असमानता तथा हीनता की भावना का विस्तार हो रहा है।

सौभाग्य का विषय है कि आज देश की धरती पर नई शिक्षा प्रणाली पल्लवित होने जा रही है। काफी विचार-विमर्श के पश्चात् ही इसे स्वीकृति प्रदान की गई है। श्री पी० वी० नरसिंहाराव मानव संसाधन एवं विकास मन्त्री ने इस नीति की घोषणा सदन में की। घोषणा में वचन दिया कि शीघ्रातिशीघ्र सरकार नई शिक्षा नीति को प्रभावी ढंग से लागू करने की योजना तैयार करेगी।

प्रधान मन्त्री श्री राजीव गांधी की अध्यक्षता में 16 जून 86 को एक सभा का आयोजन किया गया। इसमें 70 शिक्षा-शास्त्री तथा युनेस्को, युनीसेफ तथा इंग्लैंड, फ्रांस इत्यादि देशों के विद्वानों के भाग लिया इससे पूर्व श्री कृष्ण चन्द्र पन्त, तत्कालीन शिक्षा मन्त्री तथा अन्य शिक्षा शास्त्रियों और विद्वानों ने अनेक सभायें करके इसकी रूप-रेखा तैयार की। एक परिषद का निर्माण

किया गया है। जिसका नाम शिक्षा विकास परिषद है। इसका प्रारूप तैयार करने में विभिन्न राज्यों के मुख्य मन्त्रियों और शिक्षा मन्त्रियों का परामर्श लिया गया है।

प्रधान मन्त्री श्री राजीव गांधी का विचार है कि कोई भी नियम या नीति अधिक समय तक प्रचलित नहीं रह सकती अतः प्राचीन का स्थान नवीन ग्रहण का है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली के सन्दर्भ में परिवर्तन आवश्यक है।

नई शिक्षा नीति के निर्धारण में श्री राजीव गांधी की सरकार ने महत्त्व-पूर्ण कदम उठाये हैं। उसमें प्रत्येक स्तर पर शिक्षा के आधारभूत ढाँचे में परिवर्तन का विचार समाहित है। इस नीति के उद्देश्यों में मुख्य है––व्यक्ति का सर्वांगीण विकास जिससे शिक्षित युवक जागृत और चरित्रवान हैं। इसके साथ-साथ सहिष्णुता, श्रमप्रतिष्ठा, समानता की भावना सम्मिलित हैं। नैतिकता एवं विवेक का विकास होना अत्यावश्यक है। प्राचीन संस्कृति की रक्षा करते हुए नवीननम प्रोद्योगिकी का प्रयोग समाहित है।

इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये पाठयक्रम में परिवर्तन आवश्यक हो गया है। नई शिक्षा नीति का मूल्यांकन भी इन्हीं आधारों पर होगा। श्री राजीव गाँधी ने उस के संदर्भ में कहा है "शिक्षा का उद्देश्य एक ऐसे मानव का निर्माण जो शिक्षित, जाग्रत और चरित्रवान हो।"

इस नीति में प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च शिक्षा तीनों में गुणात्मक सुधार पर विशेष बल है। उच्च शिक्षा सुधार हेतु प्रवेश सीमित किया जायेगा। इसलिए उपाधि की अनिवार्यता समाप्त कर दी गई है।

अन्य प्रमुख प्रक्रिया निम्न प्रकार रही है—

1. नई शिक्षानीति नवीन पहलुओं पर कार्य करेगी। नवोदय विद्यालय देश के प्रत्येक जिले में खोले जायेंगे। प्रतिभाशाली विद्यार्थियों को निशुल्क शिक्षा दी जायगी। नई-नीति संविधान के सिद्धान्तों के अनुकूल है इसमे सभी वर्गों को बिना भेदभाव के शिक्षा का प्राविधान है।

2. सरकार का विचार है कि 10+2+3 की शिक्षा नीति को अधिक प्रभावी एवं व्यावहारिक बनाने का प्रयास किया जाय। इसमें तकनीकी और

प्रोद्योगिक पाठ्यक्रमों को शामिल किया जाय जो कि भावी जीवन का आधार है सर्वप्रथम नई शिक्षा नीति परीक्षण के रूप में चलाई जाय और कुछ समय बाद इसका विस्तार इस प्रकार किया जाय कि अधिकांश लोग इससे लाभान्वित हों।

3. हरिजन, दलित तथा कमजोर वर्ग के अलावा गिरिजनों तथा बनवासियों के लिये भी शिक्षा प्रचार-प्रसार की व्यवस्था है। उन्हें दिन के समय नि:शुल्क भोजन तथा अन्य सुविधायें दी जायेंगी।

4. एक राष्ट्रीय पाठ्यक्रम सभी राज्यों के लिये तैयार किया जायेगा जिससे राजनैतिक एवं सांस्कृतिक भेद-भाव न होने पावे। इससे देश में एकता बढ़ेगी तथा भ्रातृ भावना जाग्रत होगी।

5. इस नीति से विद्यार्थियों को रोजगार में सहायता मिलेगी क्योंकि इस नीति में रोजगार पूरक, विज्ञान व तकनीकी सम्मिलित हैं।

6. इस नीति को लचीला बनाने के भी कदम उठाये जायेंगे ताकि आवश्यकतानुसार समुचित परिवर्द्धन व परिवर्तन हो सकें। राष्ट्रीय एकता बढ़ाने वाले प्रकरणों का समावेश किया जायेगा ताकि प्रारम्भ से ही बालकों में एकता के संस्कारों का बीजारोपण हो।

हम उस स्वर्ण दिवस की प्रतीक्षा में हैं जब नई-नीति सर्व सुलभ होगी। उसके परिणाम गाँव से लेकर बड़े-बडे शहरों में विश्व विद्यालयों तक जन-जन के जीवन में नवीन विचारों का संचार करेंगे उस दिशा में नई शिक्षा पद्धति देश के लिए वरदान सिद्ध होगी। छात्रों का दृष्टिकोण व्यापक बनेगा। रोजी रोटी की समस्या उन्हें आक्रान्त नहीं करेगी। आदर्श छात्र देश के लिए नव निर्माण का कार्य करने में सफल होंगे। इस नीति को कक्षा में सपुस्तक परीक्षा प्रणाली के रूप में प्रारम्भ किया जा चुका है। सफलता एवं असफलता तो भविष्य के गर्भ में समाहित है। प्रयास तथा निष्ठा अपेक्षित है।

यद्यपि इस नई शिक्षा नीति के संदर्भ में आने के आलोचना तथा प्रत्यालोचना के स्वर मुखरित हैं। हर नए परिवर्तन के होने पर ऐसा होना स्वाभाविक है। हमें धैर्य तथा संतोष के साथ प्रतीक्षा करनी चाहिए ताकि उपाधियों के बोझ के तले दबे छात्र राहत पा सकें। ग्रामीण खुले विश्व विद्यालय ग्राम जीवन में शिक्षा का प्रसार कर सकें। नवोदय विद्यालय साधारण छात्र छात्राओं के लिए प्रगति का मार्ग प्रशस्त कर सकें।

पर्यावरण–प्रदूषण एक समस्या

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- मानव का प्रकृति के प्रति उदासीन होना
- वायुमण्डल को दूषित होना
- खेती पर प्रभाव—उद्योग धन्धों से हानिकारक वातावरण
- प्रदूषण से मानव को हानियाँ
- पर्यावरण प्रदूषण को शुद्ध करने के उपाय
- उपसंहार ।

मानव तथा प्रकृति का चिरकाल से सम्बन्ध रहा है। मानव प्रकृति की गोद में पलकर बड़ा हुआ है। प्रकृति तथा मानव का प्रगाढ़ सम्बन्ध है। प्रकृति के आँगन में असीम हरियाली, रंग-बिरंगे प्रसूत मानव की हृदय कलिका को असीम आनन्द तथा उल्लास से भर देती हैं। भारत के कवियों तथा मुनियों को प्रकृति से अपूर्व तथा प्रगाढ़ सम्बन्ध रहा है। प्रकृति के आँगन में बैठकर तथा तपस्या करके ऋषियों ने परम सिद्धि को प्राप्त किया है। जीवन तथा जगत की अनेक गुत्थियों को सुलझाया है तथा उसे जन जीवन का अंग बनाया है।

दुर्भाग्य का विषय तो यह है कि आज मानव प्रकृति के प्रति पूर्णरूपेण उदासीन है। सांसारिक सुखोपभोग तथा विलासिता के सागर में आकण्ठ डूबा मानव प्रकृति से दिन-प्रतिदिन कोसों दूर होता चला जा रहा है। प्राकृतिक सम्पदाओं का दुरुपयोग किया जा रहा है। परिणामस्वरूप आज प्राकृतिक सौन्दर्य गुडहल का फूल हो गया है। इसके जो दुष्परिणाम सामने आए हैं उनमें प्रदूषण सबसे ज्वलन्त समस्या है। ये समस्या आज इतनी जटिल हो गई है कि मानव इससे बचने का प्रयास करने पर भी स्वयं को असमर्थ पा रहा है।

यह बात कल्पनातीत है कि न जाने कितना कोबाल्ट, आर्सेनिक एवं एण्टीमनी वायुमण्डल में समा चुका है। करीब 24 लाख टन ऑक्सीजन प्रायः नष्ट हो चुकी है। कार्बन डाइ ऑक्साइड उसके स्थान को ग्रहण कर चुकी है।

आज कृषकों की खेती में विभिन्न प्रकार के कीटाणु पनप रहे हैं। इन कीटाणुओं को नाश करने के लिए जो कीटनाशक दवाएँ प्रयोग में लाई जा रही हैं, उनसे कीटाणु तो समाप्त हो जाते हैं, लेकिन वे अपना विषैला प्रभाव छोड़कर वायुमण्डल को विषाक्त ही नहीं भयावह भी बना रही हैं।

आज भारत तथा अन्य देशों में उद्योग धन्धों की बाढ़ सी आ गयी है। उद्योग धन्धों की स्थापना बुरी बात नहीं है। इससे बेरोजगारों की रोजी-रोटी की समस्या का निराकरण होता है, देश सुख तथा समृद्धि की ओर अग्रसर होता है। लेकिन इनका जो विषैला प्रभाव वातावरण को घुटन तथा कष्ट-दायक बना देता है। वह दिन-प्रतिदिन अनुभव किया जा रहा है।

इसने मानव को काल के कराल-गाल में झोंक दिया है। आज जब हम 2 दिसम्बर 1984 को भोपाल में घटित गैस काण्ड का स्मरण करते हैं तो सिहर उठते हैं। गहरी नींद में समाये हुए वृद्ध-बालक, युवा एवं महिला मौत की गोद में सदा-सदा के लिए सो गईं। इसी प्रकार 4 दिसम्बर 1985 को राजधानी दिल्ली में जो गैस रिसाव के परिणामस्वरूप दुर्घटनायें हुई वे किसी भी दृष्टि पथ से ओझल नहीं हैं। ये विनाशकारी घटनायें कोई नई बात नहीं है। विश्व के किसी न किसी भाग में ये घटित होती ही रहती हैं।

विषैली गैस तथा कीटनाशक दवाइयाँ लाखों व्यक्तियों को मौत की गोद में सुला देती हैं।

आज तीव्रगामी वाहनों की होड़ सी लगी हुई है। इनसे निकलने वाला धुँआ वातावरण में घुटन तथा परेशानी का वातावरण निर्मित कर रहा है। ये एग्जास्ट गैसें सूर्य की रोशनी में प्रकाश-रासायनिक धुँआ को विकसित करती हैं। इनसे बचकर जीवन जीने की कल्पना तक नहीं की जा सकती है।

आज अनेक देश जो बम परीक्षण कर रहे हैं वह भी कम भयावह नहीं हैं। ये परीक्षण सम्पूर्ण वायुमण्डल को दूषित कर रहे हैं। जाने-अनजाने में मनु-पुत्र अनेक भयंकर बीमारियों का शिकार हो रहा है। विश्व की महाशक्तियाँ सम्भवतः पचास हजार आणविक अस्त्र-शस्त्रों से भरपूर हैं। इनसे निकलने

वाला धुँआ सूर्य को भी आच्छादित करने की क्षमता रखता है। सूर्य के ढ़कने पर जो विनाशलीला उपस्थित होगी उसके सन्दर्भ में सोचने विचारने पर रोमांच हो जाता है। मानव इन वैज्ञानिक विनाशकारी आयुधों के समक्ष विवश तथा असहाय हो गया है।

प्रदूषण का प्रभाव सर्वत्र व्याप्त है। ऐतिहासिक इमारतों को इनसे कितनी क्षति पहुँची है। यह बताने की बात नहीं है अपितु हम अपने नेत्रों के समक्ष साकार रूप में देख रहे हैं। आगरा का गौरव ताजमहल आज कारखानों के धुँए का शिकार हो रहा है। कृष्ण जन्म भूमि मथुरा में स्थापित तेल शोधक कारखानों से इतिहास की धरोहर मन्दिरों का सौन्दर्य धूमिल होता जा रहा है।

प्रदूषण से मानव अनेक रोगों का शिकार हो रहा है। महानगरों में रहने वाले मानव आज इसकी चपेट में बुरी तरह फँसे हुए हैं। कारखानों में काम करने वाले मजदूर तथा दुकान पर प्रातः से शाम तक कार्य में जुटा हुआ व्यापारी तथा विद्यालय में शिक्षा देता हुआ अध्यापक आज क्षयरोग, बुखार तथा खाँसी से बुरी तरह पीड़ित हैं। इधर उपचार किया जाता है दूसरी ओर दरवाजे पर खड़ी मौत दस्तक देती रहती है। किसी शायर ने ठीक ही कहा

"मर्ज बढ़ता गया,
ज्यों-ज्यों दवा की।"

प्रदूषण से वनस्पतियाँ भी अछूती नहीं बची हैं। धुँए से उनका विकास अवरुद्ध हो जाता है। उत्पादन क्षमता भी प्रभावित होती है। तभी तो असमय वर्षा तथा पतझड़ का दृश्य दिखाई देता है। प्रदूषण प्रकृति के क्षेत्र में भी बाधा उपस्थित कर रहा है।

प्रदूषण से जलवायु भी बुरी तरह प्रभावित है। यदि ताप 3·6°C और बढ़ गया तो असर्कटिका एवं आर्कटिक के वृहद बर्फ के टुकड़े द्रवीभूत हो जायेंगे तथा धरती अपनी सतह से 100 मीटर उन्नत हो जायेगी। ऐसी स्थिति में जो बाढ़ों की विभीषिका उत्पन्न होगी उससे तो रक्षा करने वाला भगवान ही है। मानव उसके विषय में नाम-मात्र को भी चिन्तन नहीं कर सकता है।

प्रदूषण जल को भी विषाक्त किये डाल रहा है। कीटनाशी दवाइयाँ, घर से बहाया गया मल उद्योगों के गन्दे तेल आदि से जल-प्रदूषण में वृद्धि होती जा रही है। पवित्र गंगा में हर साल 105280 लाख क्यूबेक मीटर दूषित जल तथा दामोदर में 40 लाख गैलन बेकार आकर गिरता रहता है। इनसे गंगा आग का भी शिकार हो चुकी है। अमेरिका की इरी झील प्रायः मृतक पड़ी हुई है।

जीव भी प्रभावित हैं। आज सागरों में 20 या 25 वर्ष पूर्व के समान विशालकाय मछलियाँ दृष्टव्य नहीं हैं। मछली तथा पादप को विकसित करने के सन्दर्भ में सागरों की क्षमता में 30-50%प्रतिशत की न्यूनता आई है।

स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। देश भारत में 50% लोग प्रदूषण के कारण रोगग्रस्त हैं। वाहनों, टाइपराइटरों तथा टेलीफोन के शोर से भी मनु-पुत्र व्यथित है। लाउडस्पीकरों के भयंकर ध्वनि से छात्र स्वयं भी परिचित हैं।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि प्रदूषण की रोकथाम के लिए वृक्षों की वृद्धि करनी होगी। जल स्रोतों को शुद्ध करना पड़ेगा। हवन तथा होम के माध्यम से वातावरण को शुद्ध बनाना होगा। संयुक्त राष्ट्र भी इस दिशा में प्रयासरत है। परमाणु अस्त्र-शस्त्रों की वृद्धि तथा परीक्षण पर रोक अपेक्षित है। प्रदूषण को मात्र सरकार तथा वैज्ञानिक ही शुद्ध नहीं बना सकते देश के हर व्यक्ति का इसे शुद्ध तथा परिमार्जन करने का नैतिक दायित्व है।

90

भारत में कम्प्यूटर क्रान्ति

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- कम्प्यूटर का भारत में प्रथम प्रवेश
- भारत में विभिन्न क्षेत्रों में कम्प्यूटर का शुभारम्भ

- कम्प्यूटर की शाखाएँ
- भारत के सन्दर्भ में कम्प्यूटर
- उपसंहार ।

आज विज्ञान का युग है । जीवन का हर पहलू आज विज्ञान से प्रभावित है । मानव विज्ञान की वस्तुओं के अभाव में सुखी तथा सम्पन्न जीवन की कल्पना तक नहीं कर सकता है । आज से सम्भवतः 142 वर्ष पूर्व गणित महारथी श्री चार्ल्स बावेज ने कम्प्यूटर विज्ञान की नींव डाली थी । ये बात उस समय सोची भी नहीं जा सकती थी कि कम्प्यूटर विज्ञान विकास की इस सीढ़ी तक पहुँच जायेगा । जिस पर कि आज वह विराजमान है । जब हम योरुपीय देशों पर दृष्टिपात करते हैं तो यह बात स्पष्ट होती है कि उन देशों में कम्प्यूटर विज्ञान उन्नति के चरम शिखर पर विराजमान है । वहाँ कम्प्यूटर के अभाव में अनेक कार्यों का संचालन भी अवरुद्ध हो जाता है। पाश्चात्य विज्ञान तथा टैक्नालॉजी में गहरी रुचि रखने वाले हमारे युवा प्रधानमन्त्री श्री राजीव गाँधी ने कम्प्यूटर के प्रति गहरी रुचि प्रदर्शित की है । इसके पीछे उनका उद्देश्य देश की कार्य क्षमता में विकास करना है ।

हमारे देश भारत में सबसे पहले कम्प्यूटर का इतिहास बम्बई से प्रारम्भ होता है । सन् 1966 में सबसे प्रथम 'टाटा' शोध संस्थान ने कम्प्यूटर बनाया । 'भाभा अनुसन्धान' केन्द्र ने इस कार्य को विकास की ओर अग्रसर किया । "हैदराबाद इलेक्टॉनिक कार्पोरेशन ऑफ इण्डिया" ने कम्प्यूटर को प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है ।

भारतवर्ष में अब इसके प्रयोग की अधिकाधिक सम्भावना बढ़ती जा रही है । आवागमन को सुगम तथा उत्तम बनाने के लिए कम्प्यूटर काम में लाया जा रहा है । महानगर बम्बई में आरक्षण विषयक व्यवस्था को सुगम तथा शीघ्रगामी बनाने के लिए इसका प्रयोग सफलता के साथ किया जा रहा है । सन् 1966 में दिल्ली रेलवे स्टेशन पर आरक्षण का कार्य कम्प्यूटर के माध्यम से संचालित है ।

बैंकों में कम्प्यूटर का प्रयोग अत्यावश्यक है । बैंक की विस्तृत फैली हुई शाखाओं पर कम्प्यूटर से ही सफल नियंत्रण किया जा सकता है । राष्ट्रीयकृत

बैंकों में सबसे प्रथम कम्प्यूटर लगाने की योजना पर गहराई से विचार-विमर्श हो रहा है।

कार्यालयों में काम के बोझ को कम करने के लिए कम्प्यूटरों की स्थापना की जा रही है।

पुलिस तथा न्याय व्यवस्था में भी इसका प्रयोग किया जा सकता है। सभी राज्यों के मुख्यालयों को दिल्ली स्थिति राष्ट्रीय कम्प्यूटर केन्द्र से सम्बन्धित करने के सन्दर्भ में गहराई से विचार-विमर्श किया जा रहा है। यातायात नियन्त्रण में भी कम्प्यूटर सहभागी हो सकता है।

चिकित्सा के क्षेत्र में भी कम्प्यूटर का योगदान कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। फ्रांस में 'कम्प्यूटर-रोबेट' के माध्यम से मस्तिष्क की शल्य चिकित्सा सम्पन्न की जा रही है। आशा है हमारे प्रधानमन्त्री श्री राजीव गाँधी इस प्रक्रिया को भारत देश में अवश्य ही क्रियान्वित करेंगे।

डाक तथा तार सेवा को उत्तम तथा बेहतर बनाने के लिए कम्प्यूटर का प्रयोग हो चुका है। सबसे प्रथम बैंगलौर में.इसकी स्थापना की जा चुकी है।

विद्यालयों में भी कम्प्यूटर के माध्यम से शिक्षा प्रदान करने का प्राविधान विचाराधीन है। स्नातकों के निमित्त 'डिप्लोमा इन कम्प्यूटर प्रोग्राम' प्रारम्भ किया जा चुका है। वाणिज्य के क्षेत्र में भी कम्प्यूटर का प्रोग्राम क्रियान्वित किया जा रहा है। इससे उत्पादन क्षमता में वृद्धि के संकेत दृष्टव्य हैं।

अमेरिका के अनुसार भारतवर्ष ने भी सेना के क्षेत्र में कम्प्यूटर से कार्य लेना प्रारम्भ कर दिया है।

मानव से त्रुटि हो सकती है लेकिन कम्प्यूटर के परिणाम अधिकांशतः शत-प्रतिशत सही निकलते हैं। कम्प्यूटर एक ऐसा चौबीस घण्टे का नौकर है जो बिना भोजन वस्त्र अथवा शयन किए आपकी सेवा में हर समय प्रस्तुत रहता है। विद्यालयों में इसके प्रयोग से शिक्षक का भार हल्का होगा।

कम्प्यूटर की अनेक शाखायें हैं, उदाहरणस्वरूप गणितीय कम्प्यूटर भाग तथा जोड़ चन्द क्षणों में कर देता है। कविता विषयक कम्प्यूटर शब्द तथा विचारों को कविता के रूप में बदलकर आपके समक्ष प्रस्तुत कर देता है।

हवाई यात्रा हो अथवा रेलवे का सफर इससे आरक्षण आनन-फानन में हल हो जाता है ।

प्रश्न विचारणीय यह है कि क्या भारत की भूमि पर कम्प्यूटर का प्रयोग सफल सिद्ध हो सकेगा । तत्कालीन कम्प्यूटर सलाहकार के शब्दों में—"कूड़ा अन्दर डालोगे तो कूड़ा ही बाहर आयेगा" इसके निष्कर्ष भरने वाले के विवेक पर आश्रित है ।

इसमें नाम-मात्र को भी संदेह नहीं है कि कम्प्यूटर ने एक नवीन युग की सूचना दी है । पहले कृषि युग तत्पश्चात् औद्योगिक युग अब कम्प्यूटर युग का श्रीगणेश हो चुका है । अगर गहराई से देखा जाय तो यह बात स्पष्ट हो जायेगी कि कम्प्यूटर द्वितीय मानव मस्तिष्क के सदृश है । लेकिन बुद्धि उपलब्धि के क्षेत्र में यह शून्य के बराबर है । ये तो गणना करने की मशीन मात्र है ।

अब निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि इसके प्रयोग से प्रथम भली प्रकार इसके परिणाम एवं दुष्परिणाम के सम्बन्ध में विचार तथा चिन्तन कर लेना चाहिए । लोगों को इस बात की आशंका है कि कहीं इसका प्रयोग कुछ व्यक्तियों को बेरोजगार नहीं बनादे । जब इस कम्प्यूटर का प्रयोग अत्यधिक रूप में होने लगेगा तब एक प्रकार से मशीन मानव का स्थान ग्रहण कर लेगी ।

वैसे इस भौतिकवादी युग में जो कुछ हो जाय वह थोड़ा ही है । आज मानव से मशीन का मूल्य अधिक है । लेकिन वस्तु में अच्छाई अथवा बुराई नहीं होती है । ये तो प्रयोग की विधि पर आश्रित है । आशंका इस बात की है कि मशीनों की चपेट में आकर मानव कहीं दिग्भ्रमित नहीं हो जाय लेकिन मानव के अन्तर में जो मानवीय मूल्य तथा देवत्व जीवित है वह उसे सदैव सत्पथ की ओर ही अग्रसर करेगा । आशा है कि देश के कर्णधार तथा वैज्ञानिक इस कम्प्यूटर को भारत की समृद्धि तथा उन्नति का सोपान बनायेंगे ।

91

भारतवर्ष में आतंकवाद

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- भारत में आतंकवाद का प्रारम्भ
- अन्य राष्ट्रों का आतंकवाद में लिप्त होना
- प्राचीन काल में इसका जटिल रूप नहीं था
- स्वर्ण मन्दिर में ब्लू स्टार
- राजनैतिक स्वार्थ
- आतंकवाद का विनाश दुष्कर
- उपसंहार

अति की सर्वत्र भर्त्सना की गई है। प्राचीन ऋषियों एवं समाज सुधारकों ने भी अति की तीव्र शब्दों में निन्दा की थी। महाकवि सुमित्रानन्दन पन्त ने भी अति का मार्ग परित्याग करने की निम्न शब्दों में पुष्टि की है। द्रष्टव्य है—

"जग पीड़ित है अति दुःख से,
जग पीड़ित है अति सुख से ।।
मानव जग के बँट जायें,
सुख दुःख से और दुःख सुख से ।।"

यथार्थ में आज आतंकवाद का घिनौना पिशाच न जाने कितने निर्दोष लोगों को मौत का शिकार बना रहा है। राजनीतिक मंसूबे अथवा अपने स्वार्थ को पूरा करने के लिए जब व्यक्ति ओछे तथा घृणित उपायों का आश्रय ग्रहण करता है, तब हम इसे आतंकवाद के नाम से पुकारते हैं।

भारत में आतंकवाद रूपी कुहराम तथा उथल-पुथल उत्पन्न करने वाली घृणित क्रिया को प्राचीन कहना असंगत होगा। भारत को स्वतन्त्रता दिलाने में हिन्दू, मुसलमान एवं सिक्ख इत्यादि सभी जातियों का श्रेय है। सरदार भगत

सिंह के साथ-साथ असफाक उल्लाह् खाँ का नाम भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। किन्तु जब अपने निहित स्वार्थ की पूर्ति के लिए और अपनी राजसत्ता की पिपासा को पूरा करने हेतु जब लोग घृणित कार्य करने के लिए दृढ़संकल्प हों तब इस प्रकार के साधन प्रयोग करने लगते हैं जिससे जनता के हृदय में भय उत्पन्न हो जाता है। कंस ने अपनी मान मर्यादा के लिए लोगों को आतंकित किया। इस प्रकार जर्मनी के हिटलर, फ्रांस के नेपोलियन का नाम भी अमर रहेगा जिनके नाम से लोग थर-थर कांपते हैं।

वर्तमान में एक ही देश के निवासी अपनों का ही खून कर रहे हैं। यह सब केवल राजनीतिक सत्ता प्राप्त करने की दृष्टिकोण से किया जा रहा है। यह सब कार्य दूसरे के इशारे पर कठपुतली बनकर किया जा रहा है। उसकी तुलना 1857 के आन्दोलन से कदापि नहीं कर सकते क्योंकि उस समय हमारे देशभक्त क्रान्तिकारियों ने अंग्रेजों को धराशायी किया। किन्तु साथ-साथ सबके सामने हँसते-हँसते फाँसी के झूले पर झूम-झूम कर अपने प्राणों की आहुति दे डाली। इस विद्रोह में हिन्दू मुसलमान दोनों ने समान रूप से बलिदान किया।

प्राचीन काल में यह समस्या इतनी जटिल नहीं थी जितनी कि आज है पंजाब में अकाली सरकार की स्थापना के बाद कोई भी दिन अछूता नहीं जाता जब कि बैंक लूट हत्या इत्यादि की समस्या घटित न होती हो। श्रीमती इन्दिरा गाँधी के काल से ही इस समस्या को हल करने के प्रयास जारी हैं किन्तु सब निरर्थक सिद्ध हो रहा है।

अमृतसर स्वर्णमन्दिर में आतंकवादियों का अड्डा बन गया था जिस के लिए आपरेशन ब्लू स्टार किया गया जिसमें अनेक जवान तथा अन्य लोगों की जानें गई श्रीमती इन्दिरा गाँधी, लोंगोवाल व सांसद ललित माकन एवं अर्जुनदास की मृत्यु का कारण भी उसी का दुष्परिणाम है। 1984 में अरविन्द महोत्रा को बर्मिघम में मारना, भारतीय वायुसेना का जहाज गिरा कर 329 यात्रियों की हत्या और 10 अगस्त 1986 को जनरल श्री अरुण श्रीधर की हत्या। पंजाब पुलिस महानिरीक्षक भी आतंकवादियों के प्राण-घातक आक्रमण से बाल-बाल बचे।

भारत में चल रहे आतंकवाद का राजनैतिक स्वरूप इसमें सत्ता के विरुद्ध हिंसात्मक कार्यक्रम अपनाया जाता है एवं एक प्रकार के अवांछनीय समूह द्वारा अपनी राजनीतिक माँगों को मनमाने के हेतु ऐसी कार्यवाही अपनाते हैं जिससे देश में भय व असुरक्षा की भावना जन-जन में व्याप्त हो जाय । इनमें बम विस्फोट, व्यक्ति विशेष या अन्य किसी मानव की छुपकर या अनजाने में हत्या विमान अपहरण, बैंक की लूट अथवा जनसाधारण को लूट-पाट की घटनायें घटित होती हैं ।

आतंकवाद के बादल केवल भारत में ही नहीं वरन् अन्य देश भी इसके शिकार बने हुए हैं जैसे लंका में तमिल, ईरान, ईराक, इजरायल, लीबिया इत्यादि । इनको अमेरिका में विधिवत प्रशिक्षण दिया जाता है । पाकिस्तान में भी उसी प्रकार का प्रशिक्षण देने के समाचार मिलते हैं । आतंकवादी गतिविधियाँ खालिस्तान की माँग के कारण अपनाई जा रही हैं जो कि असम्भव एवं निराधार है । भारत की जनता पंजाब के विभाजन को किसी प्रकार सहन नहीं करेगी क्योंकि एक विभाजन के परिणाम उसके सामने स्पष्ट हैं ।

आतंकवाद को समूल नष्ट करना लोहे के चने चबाना है तथा असाध्य रोग के उपचार के समान है । इसका दमन करने के लिए अत्यन्त कठोर कदम उठाना वांछित है । किन्तु प्रजातन्त्र में ऐसा करना जनता की भावना के विरुद्ध है । श्री मोरारजी देसाई ने आतंकवादियों को गोली से मारने का सुझाव भी दिया किन्तु अन्य देश एवं भारतवासी ही उस सम्बन्ध में कहाँ तक सहमत होंगे एक विचारणीय विषय हो जाता है ।

आतंकवाद की नींव को उच्छेदन करने के लिए हमको धैर्य के साथ-साथ लम्बी अवधि से विवेक व सावधानी से निरन्तर प्रयत्नशील रहना होगा । सभी राजनैतिक दलों को समवेत रूप से संगठित होकर इसको कुचलने का प्रयास करना चाहिए और अपने हित में इसका कदापि प्रयोग नहीं करना चाहिए खुले हृदय से उसकी जितनी हो सके बुराई की जाय । लोकतन्त्र में सत्ता प्राप्ति के लिये चुनाव की प्रक्रिया अपनाना तो वैधानिक है तथा इसमें विजय हेतु प्रयास करना भी आवश्यक है किन्तु किसी भी स्तर पर आतंकवाद को उसका साधन बनाना अज्ञान एवं अन्याय पूर्ण है ।

भारत सदैव से ही शान्ति तथा अहिंसा का आराधक रहा है। बातचीत तथा विवेक से समस्याओं के निराकरण का पक्षधर रहा है । ऐसी स्थिति में आतंकवाद का वह कभी भी समर्थन नहीं कर सकता तथा न आतंकवाद के समक्ष घुटने टेक सकता है । भगवान आतंकवादियों (अवांछित सिक्ख समुदाय) को सद्‌बुद्धि दें तभी इस समस्या का निराकरण सम्भव है ।

92

दसवें एशियाई खेल

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- खेलों का विभिन्न स्तरों पर आयोजन
- सियोल में खेलों का आयोजन
- विभिन्न देशों द्वारा जीते हुए पदकों का विवरण
- भारत का प्रदर्शन निराशा जनक
- गतवर्ष के खेलों में भारत की उपलब्धि
- उपसंहार

यह कहना असंगत न होगा कि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का निवास होता है । स्वास्थ्य की उन्नति के लिए खेलों का विशेष महत्त्व है । अतः खेल अत्यन्त आवश्यक हैं । छात्रों के लिए जितना अध्ययन आवश्यक है उतना ही खेल । इनसे शारीरिक शक्ति में वृद्धि के साथ-साथ मानसिक शक्ति का विकास होता है । खेलों से छात्रों में कार्य संचालन कर्म निष्ठा, स्वाभिमान एवं अनुशासन पालन की भावना का प्रादुर्भाव होता है ।

इसी भावना को साकार रूप देने के लिए विश्वस्तर से लेकर गाँव के निचले स्तर तक विभिन्न खेलों का आयोजन किया जाता है। यही कारण है कि इनका महत्त्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है । इनमें भाग लेने वाले खिलाड़ी खेलों की संख्या, धन तथा दर्शकों की संख्या इत्यादि में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जा रही है। अतः हम यह कह सकते हैं कि खेल विद्यार्थी जीवन का अभिन्न अंग है।

विभिन्न प्रकार के एशियाई खेलों का विवरण इस प्रकार है—

ओलम्पिक स्टेडियम 20 सितम्बर से 5 अक्टूबर 1986 तक दक्षिण कोरिया की राजधानी सियोल में इन खेलों का आयोजन किया गया। इसमें 27 देशों से आये लगभग 50000 खिलाड़ियों ने भाग लिया। इन खेलों के आयोजन के लिए सियोल एक विशेष महत्त्व रखता है। इसी कारण 1988 में ये खेल सियोल में ही खेले जायेंगे।

जहाँ तक खिलाड़ी दलों का प्रश्न है इस सम्बन्ध में सबसे अधिक खिलाड़ी जापान द्वारा भेजे गये थे। दूसरा स्थान चीन का है। जिसने कि उत्कृष्ट खेल खेलकर अपनी श्रेष्ठता का प्रदर्शन कर प्रथम स्थान पाया। उसके द्वारा 222 पदक जीते गये। जिनमें 94 स्वर्ण पदक थे।

दक्षिण कोरिया ने खेलों के आयोजन के लिए उच्चस्तरीय तैयारी की किन्तु इससे भी अधिक बात यह रही कि उसने सर्वाधिक पदक जीते जिनकी संख्या 224 थी, जिनमें 93 स्वर्ण पदक थे। इससे स्पष्ट हो जाता है, कि वहाँ के खिलाड़ियों के प्रशिक्षण की तैयारी अच्छी प्रकार से की गयी। छोटे से देश कोरिया ने सिद्ध कर दिया कि उसकी शान के समक्ष कोई अन्य देश टिक नहीं सकता। पुरुष तथा महिलाओं ने हाकी जैसे खेलों में स्वर्णपदक प्राप्त कर कीर्तिमान स्थापित किया।

खेल के अन्त में चीन, दक्षिण कोरिया तथा जापान ने कुल पदकों में से 76·5% प्रतिशत पदकों को जीत लिया।

जहाँ तक भारत का प्रश्न है भारत की उपलब्धि अत्यन्त ही शोचनीय रही, क्योंकि वह केवल 5 पदक ही प्राप्त करने में सफल रहा, जो घोर चिन्ता का विषय है।

क्योंकि इसमें भारत द्वारा अब तक का सबसे बड़ा दल भेजा गया था। भारत में खेलों का पृथक प्राधिकरण है और करोड़ों रुपये उनके प्रशिक्षण में प्रतिवर्ष व्यय किए जाते हैं। 1982 में भी भारत ने पाँचवाँ स्थान प्राप्त किया था। क्रमानुसार पाँच देशों द्वारा प्राप्त पदकों की सूची निम्न प्रकार है—

देश	स्वर्ण	रजत	कांस्य	कुल
1. चीन	94	82	46	222
2. द० कोरिया	93	55	76	224
3. जापान	58	76	77	211

4. ईरान	6	6	10	22
5. भारत	5	9	23	37

मेजबान दक्षिणी कोरिया ने दसवें एशियाड में सर्वाधिक पदक पाकर दूसरा स्थान पाया। संसार के खेल जगत में अपना विशेष स्थान बनाया।

भारत के खेल और खिलाड़ियों के प्रति लोगों के मन में अत्यन्त निराशा रही। निम्न तालिका से यह स्पष्ट हो जायेगा कि भारत गत एशियाड की तुलना में न्यूनता की ओर अग्रसर है, देखिए विवरण—

वर्ष	स्वर्ण	रजत	कांस्य	कुल
1982	13	19	25	57
1986	5	9	23	37

भारत का गौरव रखने का श्रेय भारतीय एथीलेट पी० टी० ऊषा को है, जिन्होंने चार स्वर्णपदक और एक रजत पदक प्राप्त किया। उसने चार पदक 200 मीटर, 400 मीटर, 400 मीटर बाधा दौड़ और 4 × 400 रिले दौड़ में प्राप्त किये।

गत एशियाड में भारत ने खेलों में एथलेटिक्स में 4, घुड़सवारी में 3, गोल्फ 2 तथा 1, 1 स्वर्ण पदक हाकी, कुश्ती, पालनौकायन और मुक्केबाजी में जीतकर 13 स्वर्णपदक प्राप्त किए। इस वर्ष केवल एथलिटिक्स में चार और कुश्ती में एक स्वर्ण पदक प्राप्त किया। यद्यपि अधिकतर खेलों में भारतीय स्थीलेट चौथे और पाँचवें स्थानों पर रहे किन्तु देश की विशालता के अनुपात में ये नगण्य है। आगामी वर्षों में यदि हमें भारत का भाल ऊँचा करना है, तो खिलाड़ियों को विशेष प्रशिक्षण, उत्तम अभ्यास, धैर्य तथा सुविधा देनी होगी।

खेलों की उपयोगिता आपसी मेल स्थापित करने और मित्रता वढ़ाने में विशेष महत्त्व की है। इनसे मानसिक शान्ति मिलती है। कटुता समाप्त होती है। जीवन में प्रसन्नता तथा उल्लास का प्रादुर्भाव होता है।

खेल के मैदान में पहुँचकर खिलाड़ी 'मैं' तथा 'पर' की भावना से मुक्त हो जाते हैं। वे उन्मुक्त गगन के विहगों की भाँति हैं रंगी-बिरंगी पोशाकों में साहस तथा बुद्धिमत्ता से अपने देश का प्रतिनिधित्व करते हैं।

उनकी भावना अपने देश को विजय दिलाने की होती है। उनके मन-मानस से निम्न-ध्वनि फूटती रहती है—

"खेल जीवन खेल उसमें,
जीत जाना चाहता हूँ।
मीत मैं तो सिन्धु के उस पार
जाना चाहता हूँ।"

93
सातवीं पंचवर्षीय योजना

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- 1985-86 से सातवीं पंचवर्षीय योजना का शुभारम्भ
- योजना की अवधि 1985-90 तक
- विभिन्न मदों पर व्यय होने वाली धनराशि
- साधनों के संपादन का स्रोत
- योजना की सफलता का आकलन परिणाम पर आश्रित
- उपसंहार।

किसी भी देश के विकास के लिए विभिन्न प्रकार की योजनायें बनायी जाती हैं। भारतवर्ष में भी स्वतन्त्रता के पश्चात् पंचवर्षीय योजनाओं का श्रीगणेश किया गया। देश के आर्थिक, सामाजिक तथा अन्य विकासों के लिए पाँच वर्ष का कार्यक्रम तैयार किया जाता है। इसमें विभिन्न कार्यक्रमों को विभाजित कर वार्षिक लक्ष्य निर्धारित किए जाते हैं और तदानुसार उनके अनुरूप बजट में धन का प्राविधान किया जाता है। योजना प्रगति का वार्षिक मूल्यांकन किया जाता है तथा पाँच वर्ष बाद सम्पूर्ण योजना के लक्ष्यों एवं उनकी पूर्तिनुसार आगामी वर्षों में कार्यक्रमों में परिवर्तन करके पुनः उन्हें देश की आवश्यकतानुसार रखा जाता है। हमारे देश में पंचवर्षीय योजनायें देश की आर्थिक व्यवस्था का आधार हैं। अब तक छः पंचवर्षीय

योजनायें प्रारम्भ की जा चुकी हैं और 1985-86 से सातवीं पंचवर्षीय योजना शुरू हो गयी है।

1985-86 से सातवीं पंचवर्षीय योजना लागू हो गयी है। इसका आधार है भोजन, कार्य एवं उत्पादन का आन्तरिक सम्बन्ध। इसके विभिन्न उद्देश्य हैं यथा असमानता दूर करना, स्वावलम्बी बनाना, उन्नति, सामाजिक न्याय एवं उत्पादकता की शक्ति में वृद्धि करना इत्यादि।

इस योजना का समय 1985—90 है तथा 3,20,000 करोड़ रुपये व्यय करना निश्चित हुआ है। इसमें से 1,80,000 करोड़ रुपये सार्वजनिक क्षेत्रों के लिए बचे हुए 1,40,000 करोड़ रु० निजी (अपने ही) क्षेत्र में व्यय किया जायेगा। सार्वजनिक क्षेत्र के लिए निश्चित् धन छठवीं योजना 1,11,000 करोड़ रुपये की तुलना में 60 प्रतिशत अधिक है एवं सब मिलाकर व्यय का लगभग 55 प्रतिशत है।

इस योजना में वार्षिक विकास के लिए 5 प्रतिशत निश्चित किया गया है तथा उद्योग के विकास हेतु 7% तथा कृषि विकास के लिए 4 प्रतिशत। इस योजना के समाप्त होने तक तेल की उत्पादकता में 35·28 मिलियन तक वृद्धि करने का निश्चय किया है। इस योजना के अन्त तक गरीबी की सीमा के नीचे रहने वाले 30 करोड़ लोगों की संख्या घटाकर 10 करोड़ तक करने का लक्ष्य है।

इस योजना में अर्थव्यवस्था को अत्यधिक सीमा तक प्रभावित किया है। इस योजना के निम्नलिखित लक्ष्य निर्धारित किए गये हैं—

(1) उत्पादन करने वाले रोजगार खोलना
(2) आयात में कमी तथा निर्यात् में अधिकता द्वारा आत्मनिर्भर बनाना।
(3) गरीबी का उन्मूलन
(4) अनाज में आत्मनिर्भर बनाना।
(5) परिवार नियोजन।
(6) विकास योजना में प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान का समन्वय।
(7) आधुनिकता को बढ़ावा देना तथा उद्योगों में स्पर्धा
(8) उत्पादन की शक्ति बढ़ाना
(9) स्वास्थ्य सफाई एवं मकानों की सुविधा का एवं शिक्षा का विकास।
(10) वृक्षारोपण।

इसका मुख्य लक्ष्य गरीबी दूर करना है। इस योजना के समाप्त होने तक गरीबों की संख्या घटाकर 5·5 प्रतिशत तक करने का उद्देश्य है। 1984-85 में यह संख्या 27 करोड़ 30 लाख थी।

इस सातवीं योजना में 4 करोड़ लोगों के लिए रोजगार खोले जायेंगे। तथा तारतम्य में सालाना 4 प्रतिशत की बढ़त की जायेगी।

सातवीं योजना में 1990 तक 18 करोड़ टन अनाज की पैदावार करने का निश्चय किया गया है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु सिंचाई के साधनों को अधिक क्रियाशील बनाने की योजना रखी गयी है। सर्वप्रथम सिंचाई की जो योजना अधूरी पड़ी है उन्हें पूरा करने पर पहले ध्यान दिया जायेगा। बाढ़ नियन्त्रण और सिंचाई योजनाओं पर 17 अरब रुपये व्यय करना निश्चित हुआ है।

इसमें सबसे पहला स्थान सार्वजनिक क्षेत्र का है। इस योजना की कुल धनराशि 34 खरब 71 अरब रुपये में से सार्वजनिक क्षेत्र के लिए 18 खरब रुपये निश्चित किये गये हैं। यह धन छठवीं योजना की धनराशि से दुगुना है। 9 खरब 55 अरब रुपये सार्वजनिक क्षेत्र के लिए निश्चित धनराशि में से केन्द्रीय क्षेत्र की योजनाओं के लिए और केन्द्रशासित और राज्यों द्वारा शासित प्रदेशों के लिए 8 खरब 45 अरब रुपये निर्धारित किये गये हैं। खनिज और उद्योगों के लिए 2 खरब 24 अरब रुपये निश्चित किये गये हैं। नई योजना के लिए तीन हजार किलोवाट बिजली और तीन करोड़ 45 लाख टन पैट्रोलियम की उत्पादकता का निर्णय लिया गया है।

इस योजना में जन-सुविधा के विकास का भी आयोजन है। इस मद के लिए 1 खरब 50 अरब रुपये निर्धारित किये गये हैं। इस राशि का भार राज्यों पर होगा।

विज्ञान एवं टेक्नोलॉजी के हेतु 24 अरब रुपये और सामाजिक सेवाओं के लिए 2 खरब 93 अरब 50 करोड़ रुपये तथा परिवहन हेतु 2 खरब 30 अरब रुपये और सूचना और प्रसारण के हेतु 64 अरब रुपये निर्धारित हैं। इस योजना के अन्तर्गत निर्यात में वृद्धि द्वारा उसकी आमदनी में अधिकता लाने का लक्ष्य है। आयात की सालाना बढ़त (वृद्धि) 5·8 प्रतिशत निश्चित की गयी है।

इस योजना में प्रमुख कार्य निश्चित व्यय के लिए साधन एकत्रित करना है। इन साधनों को संपादन करने का सबसे बड़ा साधन है घरेलू बचत। इस साधन द्वारा 30 खरब रुपये की धनराशि की बचत की आशा है। 2 खरब 30 अरब रुपये राज्यों द्वारा एकत्रित किये जायेंगे। 4 खरब 47 अरब रुपये बाहरी स्रोतों से मिलने की सम्भावना है। केन्द्र राज्यों की योजनाओं के सहायतार्थ 3 खरब रुपयों की धनराशि देगा। जो घाटा आयेगा उसकी पूर्ति घाटे की वित्तीय व्यवस्था करेगी।

योजना का सफल तथा असफल होना उसके परिणाम पर निर्भर है। इस योजना द्वारा गरीबी दूर करने तथा आर्थिक समृद्धि के सापेक्ष में सामाजिक न्याय दिलवाकर देश को उन्नत बनाने में कितनी सीमा तक सफलता मिलगी यह तो आने वाला भविष्य ही बता सकता है। किन्तु हम इतना अवश्य कह सकते हैं कि इससे देश की स्थिति में भविष्य में अवश्य परिवर्तन होगा। अगर सभी लोग योजना में निश्चित किए हुए उद्देश्यों की प्राप्ति की ओर ध्यान देंगे तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि जो समाजवादी समाज का सपना हम देख रहे हैं, वह अवश्य पूरा होगा। यह तभी पूरा हो सकता है जब सब लोग इसके सुचारु एवं सफल रूप से क्रियान्वित होने पर ध्यान देंगे। साथ ही जन साधारण जिसके लिए यह योजना बनायी गयी है कभी इसमें समान रूप से भागीदार बनायेंगे। इससे हम देखेंगे कि देश के सभी लोगों की अवस्था में परिवर्तन सम्भव हो सकेगा इससे देश की सरकार की उन्नत तथा जनोपयोगी भावना परिलक्षित होती है। लेकिन कागज पर तैयार होने वाली योजनायें जब तक धरती पर साकार रूप से क्रियान्वि नहीं होतीं तब तक उनके संदर्भ में कपोल कल्पित भविष्यवाणियाँ करना निरर्थक हैं पर ये अवश्य है कि इनके सफल होने पर देश खुशहाली तथा समृद्धि की ओर अग्रसर होगा।

94
गोर्बाच्योव की भारत यात्रा

विचार-तालिका

- प्रस्तावना
- रूस तथा भारत विपत्ति में परस्पर सहयोगी
- दोनों देशों के मध्य विभिन्न विषयों पर समझौता सम्पन्न
- गोर्बाच्योव की इस ऐतिहासिक यात्रा का विवरण
- रूस के द्वारा भारत को विभिन्न परियोजनाओं में आर्थिक तथा तकनीकी सहयोग
- उपसंहार

विश्व में अनेक देश हैं जो कि अलग-अलग समूह बनाये हुए हैं। ऐसी स्थिति में स्वाभाविक ही है युद्ध का भय होना। इसलिए प्रत्येक देश अपने को सुरक्षित रखने के लिए दूसरे राष्ट्र पर अवलम्बित है स्वतन्त्रता के पश्चात् से ही भारत की रूस से अटूट मित्रता हो गयी। चाहे संयुक्त राष्ट्र संघ का मंच हो या भारत पाकिस्तान का विवाद अथवा काश्मीर का प्रश्न हो, रूस ने सदैव ही भारत का साथ दिया है। रूस ने भारत का सदा ही मनोबल बढ़ाया है। कहावत है कि विपत्ति में ही सच्चे मित्र की परख होती है। महाकवि श्री तुलसी दासजी ने भी कहा है कि—

"धीरज धर्म मित्र और नारी"
आपत्ति काल परखिये चारी ॥"

रूस एवं भारत की मित्रता दिन प्रतिदिन प्रगाढ़ होती गयी तथा उसके द्वारा दी गयी सहायता से दोनों देशों की भिन्नता एकता में परिणत हो गयी है। भारत के मन-मानस में रूस के प्रति प्रेम एवं मित्रता की भावना दिन-प्रतिदिन प्रगाढ़ होती जा रही है

भारतीयों के हृदयासन पर रूस विराजमान है। रूस का भारत के प्रति

जो अनन्य प्रेम एवं अटूट श्रद्धा है वह इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा।

दोनों देशों में आर्थिक, तकनीकी तथा व्यापारिक समझौते होते आये हैं परिणामस्वरूप दोनों देश एक दूसरे के निकट आते गये। सर्वप्रथम व्यापारिक समझौता 26 दिसम्बर 1970 को सम्पन्न हुआ तत्पश्चात् भूतपूर्व प्रधानमन्त्री मोरारजी देसाई की रूस यात्रा से दोनों देशों की मौलिक भावना को और भी प्रगाढ़ रूप दिया। सन् 1980 में सोवियत राष्ट्रपति ब्रेझनेव की भारत यात्रा भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुई। सन् 1982 में स्वर्गीय प्रधान मन्त्री इन्दिरा गाँधीजी की मास्को यात्रा ने दोनों देशों के सम्बन्धों को और अधिक घनिष्ठ रूप दिया। इसके फलस्वरूप रूस से आज तक मधुर सम्बन्ध चल रहे हैं।

गोर्बाच्योव की वर्तमान ऐतिहासिक यात्रा का विवरण निम्नवत् है—

सोवियत संघ की पार्टी के महासचिव एवं नेता श्री गोर्बाच्योव ने सन् 1986 में 25 से 28 नवम्बर तक भारत की यात्रा की। उनके साथ एक उच्चस्तरीय दल भी था। दिल्ली आगमन पर उनका भव्य स्वागत किया गया। लाखों की संख्या में जन समूह ने उनका हार्दिक स्वागत किया। उनके दिल्ली आवास की अवधि में अत्यन्त व्यस्त कार्यक्रम रहा। श्री राजीव गाँधी के साथ उनकी वार्ता लाभप्रद रही। इसमें राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर विचार विमर्श हुआ। वार्ता की समाप्ति पर दोनों नेताओं ने संयुक्त घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर किए। इसे दिल्ली घोषणा पत्र का नाम दिया गया है।

दिल्ली घोषणा पत्र में निम्न बातों पर सहमति की गयी—

1. अहिंसा को सामाजिक एवं व्यक्तिगत जीवन का मूल-मन्त्र माना जाय और भय तथा आशंका के स्थान पर सहृदयता एवं बुद्धि का प्रयोग नितान्त आवश्यक है—

2. जन जीवन को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की जाय यह मानव जाति का रचनात्मक आभूषण है। इससे ही शान्ति मिलती है तथा देश में सभ्यता एवं संस्कृति का विकास होता है। इसके साथ ही विनाशकारी अस्त्र-शस्त्रों पर होने वाले संसाधनों का प्रयोग जनजीवन के विकास एवं हित के लिए करना सदैव उचित होगा।

3. प्रत्येक राज्य की भिन्न-भिन्न मान्यताएँ होती हैं और आर्थिक समस्याएँ भी पृथक्-पृथक् होती हैं। अतः इनको आदर एवं मान्यता देना अनिवार्य है। इसके इस हेतु मानव के हृदय में सद्भावना जाग्रत करने के लिए उचित परिस्थितियों का सृजन आवश्यक है।

4. सुख शान्तिमय सहयोगी जीवन यापन के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सार्वभौमिक मूल आधार बनाना चाहिए।

5. विनाशकारी कृत्यों तथा अन्य समस्याओं के विश्व स्तर पर समाधान के लिए बौद्धिक एवं भौतिक साधनों का अनिवार्य रूप से प्रयोग किया जाय।

6. विश्व में नाभिकीय शस्त्रों का अन्त करना और अहिंसा के लिए निरस्त्रीकरण करने हेतु तत्कालिक विशिष्ट कदम उठाया जाय।

इसके लिए निम्न कार्यक्रम अपनाया जाय—

(i) वर्तमान शताब्दी के अन्त तक नाभिकीय शस्त्रागारों का पूर्णतः नष्ट करना तथा सभी प्रकार के नाभिकीय शस्त्रों पर प्रतिबन्ध लगाना।

(ii) सामूहिक विनाशकारी शस्त्रों की नई किस्मों के विकास पर पूर्ण रोक और उनके भण्डार को नष्ट करना।

(iii) आपस में अस्त्र-शस्त्र के बलों में कमी लाना और अन्तरिक्ष में सभी प्रकार के हथियारों पर पूर्ण प्रतिबन्ध।

नाभिकीय अस्त्रों को समाप्त किये जाने तक दोनों देशों का प्रस्ताव था कि उनके प्रयोग की धमकी पर निषेध के लिए अन्तर्राष्ट्रीय अभियोग की स्थापना की जाय। इस युद्ध का अन्त करने में विभिन्न देशों के दृष्टिकोण में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाना तथा एक दूसरे के प्रति आदर एवं सहनशीलता के प्रति सचेत करना।

युद्ध, हिंसा व घृणा के प्रचार पर कड़ी रोक तथा शत्रुतापूर्ण भावना को तिलांजलि दी जाय।

श्री गोर्वाच्योव के साथ उपरक्षामन्त्री सेंगई आर्खोमोव तथा भारत के रक्षामन्त्री ने रक्षा सम्बन्धी विषयों पर वार्तालाप किया तथा पाकिस्तान को अमरीका से मिलने वाली सहायता तथा उत्पन्न स्थिति पर विचार किया। इसके फलस्वरूप गत दिसम्बर से भारत को रूस से मिग-29 विमान मिलने लगे हैं। इसके अतिरिक्त 'किलो' वर्ग पनडुब्बियाँ भी मिल रही हैं।

तकनीकी एवं आर्थिक समझौते के अन्तर्गत रूस, से भारत को 150 करोड़ रूबल (2,000 करोड़) का ऋण भी मिलेगा। इसमें 120 करोड़ रूबल बोकारों स्पात कारखाने तथा नई परियोजना पर व्यय होगा। इसकी ब्याज दर 2·5 प्रतिशत होगी। 30 करोड़ रूबल टेहरी परियोजना पर जिसमें 2400 मेगा वाट की क्षमता का बिजली संयन्त्र स्थापित किया जायेगा। इस पर ब्याज 1·5% प्रतिशत है।

अन्य परियोजनायें—

(i) झोरिया में 80 लाख मी० टन कोकिंग कोयला उत्पादन वाली चार खानों की व्यवस्था।

(ii) पश्चिमी क्षेत्र में तेल की खोज

(iii) बोकारो स्पात कारखाने का आधुनिकीकरण।

विशेष प्रस्ताव—

भारत में अन्तर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष केन्द्र खोलना तथा हिन्द महासागर को शान्ति क्षेत्र बनाने के लिए 1988 तक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाना निश्चित हुआ है। इण्डो सोवियत कल्चरल सोसाइटी में गोर्बाच्योव ने स्पष्ट रूप से कहा कि रूस तथा अन्य कोई देश ऐसा कार्य न करेगा जिससे भारत की अखण्डता और प्रभुता को भय उत्पन्न हो।

अन्त में यह कहा जा सकता है कि गोर्वाच्योव की इस यात्रा ने भारत और रूस के मैत्री सम्बन्धों को अधिक सुदृढ़ बनाया है।

विश्व के अनेक राष्ट्रों ने इस यात्रा को शान्ति की दिशा में एक नया कदम बताया है। इससे विश्व रंगमंच पर भारत की प्रतिष्ठा का विस्तार हुआ है। आशा है कि निकट भविष्य में भारत तथा रूस की यह मैत्री उत्तरोत्तर विकास को प्राप्त होगी। दोनों महान राष्ट्र समवेत होकर संतृप्त तथा युद्ध की विभीषिका में जले विश्व के लिए शीतल बौछार सिद्ध होंगे, तभी धरती का कण-कण निम्न तराना गा उठेगा—

"सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा।"

विचार-तालिकाएँ

(1) होली

(1) **प्रस्तावना**—हिन्दुओं के प्रमुख चार त्योहार—रक्षाबन्धन, दशहरा दीपावली तथा होली। रक्षाबन्धन ब्राह्मणों द्वारा प्रमुख रूप से मनाया जाता है। दशहरा क्षत्रियों द्वारा, दीपावली वैश्यों द्वारा तथा होली विशेषकर शूद्रों का त्योहार कहलाता है

(2) **मनाने का समय**—फाल्गुन शुक्ल 15 को होली का त्योहार बड़े धूमधाम के साथ मनाया जाता है।

(3) **मनाने का कारण**—प्रह्लाद की बुआ होलिका का अग्नि में जलना।

(4) **तैयारी**—अनेक प्रकार की मिठाइयों का घरों में बनाया जाना, लकड़ियों के ढेर को एक स्थान पर जलाने के लिए एकत्र करना तथा रास-रंग, नाच-कूद का आयोजन करना।

(5) **उत्सव का वर्णन**—पिचकारी भरकर एक-दूसरे के ऊपर रंग डालना, गुलाल फेंकना, खाना तथा फगुआ देना, एक-दूसरे से गले मिलना, प्राय: बहुत से बैर-विरोध तथा मन की गन्दी भावनायें मनुष्य होली के अवसर पर यह कहकर कि 'होली सो होली' अब तो प्रेम से रहो, ऐसा विचार करके समाप्त कर देते हैं।

(6) **इस त्योहार के दोष**—कीचड़, मिट्टी तथा दुषित चीजों का उस अवसर पर प्रयोग परिणामस्वरूप बहुत से मनुष्य बीमारी के शिकार हो जाते हैं जिनका बहुत ही भयंकर परिणाम निकलता है।

(7) **उपसंहार**—अतः हम सबका यह प्रमुख कर्त्तव्य है कि हम होली के अवसर पर गन्दी चीजों का प्रयोग करना छोड़ दें, गन्दे गानों पर रोक लगा

दें। मादक वस्तुओं का प्रयोग न करें जिससे इस त्यौहार का कलङ्क मिट जाय। हमारा यह प्रयास होना चाहिए कि अपने त्यौहारों को दोषमुक्त करें तथा उन्हें अपने कल्याण का साधन बनायें।

(2) भूमिधर

(1) **प्रस्तावना**—जमींदार प्रथा के होने से गरीब किसानों पर मनमाना अत्याचार, चाहे जब बेगार कराना, चाहे जब धमकाना आदि तथा खेतों पर उनका वास्तविक अधिकार न होना।

(2) स्वतन्त्र भारत में हमारी राष्ट्रीय सरकार का सबसे प्रथम कार्य ग्रामों की उन्नति के विषय में चिन्तन, फलस्वरूप जमींदारी प्रथा का नष्ट होना। इससे किसानों की आर्थिक दशा में सुधार।

(3) भूमिधर योजना का स्वरूप तथा उनके द्वारा कृषकों का हित—

(अ) किसानों का अपने खेतों पर पूर्ण स्वामित्व,

(ब) लगान में भारी कमी,

(स) चरागाह, ऊसर भूमि पर सबका समान अधिकार।

(4) भूमिधर योजना से कृषकों का जीवन सुखी एवं सन्तोषप्रद हो गया क्योंकि उन्हें यह निश्चित हो गया कि अब भविष्य में उनके खेतों पर कोई अपना अधिकार नहीं जमा सकता।

(5) **सारांश**—भूमिधर योजना से किसानों का सामाजिक स्तर पहले से पर्याप्त उन्नत हो गया है। अब कृषकों को ग्रामों में सम्मान तथा प्रतिष्ठा प्राप्त हो गई है जिससे वे आज तक वंचित थे। यह योजना भोले किसानों हेतु भगवान् के वरदान के समान है। इसके कारण गरीब किसानों को आर्थिक दशा में इतना सुधार हो गया है कि अब उनके मासूम बच्चों को भूख की ज्वाला से तड़पना नहीं पड़ता। भूमिधर् योजना ने कृषकों को जमींदार के अत्याचारों से मुक्त किया है। उन्हें उनके परिश्रम का उचित मूल्य प्रदान किया है। अब यह निकट भविष्य में आशा की जाती है कि भूमिधर योजना

से हमारा देश धनधान्य से परिपूर्ण होगा तथा हमें अन्न की समस्या परेशान नहीं करेगी ।

(3) वर्तमान खाद्य-समस्या

(1) **प्रस्तावना**—प्राचीन काल में अन्न की प्रचुरता के कारण हमारे देश में घी, दूध की नदियाँ बहा करती थीं, कारण कृषक-वर्ग परिश्रम और जी-जान से कार्य करके संतोषपूर्वक जीवन व्यतीत करता था, खेती विधिपूर्वक की जाती थी जिसमे पशुओं का एक महत्त्वपूर्ण स्थान था । भारतीय किसान जानता था कि पशु ही हमारा धन है । इनकी सेवा-शुश्रूषा में ही हमारा कल्याण है । यही कारण था कि हमारे देश में धान्य की इतनी अधिकता थी कि स्वयं खाकर भी हम दूसरे देशों को अन्न देने में समर्थ थे ।

(2) कमी के कारण—

(अ) द्वितीय महायुद्ध की विकरालता, जिससे देश में अपार धन, जन और अन्न की हानि हो गई ।

(ब) लोभी और कंजूस व्यापारी वर्ग की संकीर्ण और पापमय भावना जिससे अपने बन्धुओं के गले काटने हेतु एवं धन-लोलुपता के कारण गल्ला इकट्ठा कर लेते हैं और मनमाने भाव पर कमी पड़ने पर बेचते हैं ।

(स) वर्तमान चोर बाजारी और भ्रष्टाचार, जिसमें अधिकारी-वर्ग रिश्वत लेकर नियमों का उल्लंघन करते हैं ।

(द) बर्मा और पाकिस्तान का भारत से अलग हो जाना क्योंकि देश की बहुत कुछ-समस्या इन क्षेत्रों से हल हो जाती थी ।

(य) शरणार्थियों का आगमन, शरणार्थियों के आने से अन्न की कमी हो गई क्योंकि आबादी बढ़ गई और उत्पादन कम हो गया ।

(र) वर्तमान समय में देश की जनसंख्या बढ़ जाना और उत्पादन में वृद्धि न होना ।

(ल) वर्तमान समय में खेती की शोचनीय दशा तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण से खेती न करना ।

(व) साग-भाजी और फलों के उत्पादन में कमी ।

(श) देश की भूमि का बुरी तरह कट जाना जिससे लाखों एकड़ भूमि, भूमि कटाव से कट गई खेती के योग्य न रही ।

(3) **कमी दूर करने के उपाय**—1. खेती को वैज्ञानिक रूप देना ।

2. साग भाजी और फलों की खेती में वृद्धि करना ताकि ये अन्न के स्थान पर प्रयोग किए जा सकें ।

3. उन्नतिशील यन्त्र, बीज, खाद, पशु आदि को अपनाकर कृषि उत्पादन में वृद्धि करना ।

4. भयंकर भूमि कटाव को वृक्ष लगाकर रोकना ।

5. किसानों एवं उनके बच्चों को कृषि की उत्तम शिक्षा देना ताकि वे खेती की दयनीय अवस्था में परिवर्तन ला सकें ।

6. बेकार और ऊसर भूमि में खेती की जाय ।

7. चोर-बाजारी और भ्रष्टाचार को रोकने लिए कड़े कानून बनाये जाएँ ।

8. व्यापारी-वर्ग पर नियन्त्रण रखा जाय और उन्हें मनमाने भाव पर गल्ला बेचने से रोका जाय ।

9. भिन्न-भिन्न अवसरों पर दावत, पार्टी, प्रीतिभोज आदि कुरीतियों को जिनमें अन्न नष्ट होता है, रोका जाय ।

10. अधिक जनसंख्या को रोका जाय ।

(4) **उपसंहार**—जब तक मनुष्य के समक्ष अन्न की समस्या नाचती रहेगी तब तक न तो वह स्वयं उन्नति कर सकता है तथा न राष्ट्र की उन्नति में सहयोग प्रदान कर सकता है, अतः व्यक्ति तथा राष्ट्र की उन्नति के लिए परमावश्यक है कि खाद्य-समस्या को हल किया जाय क्योंकि इसके बिना जीवन कठिन एवं विपद्-ग्रस्त हो गया है ।

(4) सैनिक शिक्षा

(1) **प्रस्तावना**—सैनिक शिक्षा की हमारे देश के लिए आवश्यकता एवं

उनका महत्त्व—हर देश के लिए आवश्यक है कि वह अपने देश-वासियों की रक्षा करने के लिए अपने नागरिकों को सैनिक शिक्षा दे क्योंकि हम बिना उचित सैनिक शिक्षा के अपने देश की रक्षा नहीं कर सकते अतः इस सैनिक शिक्षा को महत्त्व प्रदान करना आवश्यक है।

(2) **सैनिक शिक्षा का स्वरूप**—प्रारम्भिक कक्षाओं में शारीरिक विकास के रूप में और उच्च कक्षाओं में इसका रूप सैनिक शिक्षा कर दिया जाय। जहाँ अच्छी सुविधा हो, वहाँ इसे अनिवार्य कर दिया जाय।

(3) **प्रान्तीय रक्षादल और सैनिक शिक्षा का सम्बन्ध**

(4) **सैनिक शिक्षा से लाभ**

(अ) मानसिक उन्नति, (ब) शारीरिक उन्नति, (स) आध्यात्मिक उन्नति, (द) अनुशासन की ओर, (य) आज्ञापालन की शिक्षा (र) कार्य करने की क्षमता में वृद्धि, (ल) देश-प्रेम की भावना का उदय, (व) श्रम के प्रति श्रद्धा उत्पन्न होना, (श) जीवन को सफल और पूर्ण बनाने का विचार उत्पन्न होना।

(5) **सारांश**—सैनिक शिक्षा द्वारा ही देश का कल्याण हो सकता है, देश की रक्षा का भार सैनिकों पर ही है, ये शान्ति बनाये रख सकते हैं। देश में शान्ति रहने पर देश की पूर्ण उन्नति हो सकती है।

(5) आदर्श जीवन

(1) **प्रस्तावना**—आदर्श जीवन से हमारा तात्पर्य यह है कि मनुष्य शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति करता हुआ शुभ कार्यों में लगा रहे जिससे उसका जीवन सभी प्रकार से आनन्दमय हो तथा अन्त में उसे अपने कार्यों में सफलता मिले—

(2) **आदर्श जीवन के लिए आवश्यक बातें**—

1. सत्य और अहिंसा आदर्श जीवन की कुंजी हैं।
2. सादा जीवन उच्च विचार।
3. भगवान के प्रति अगाध प्रेम।

4. कर्त्तव्यपरायणता की भावना ।
5. समय का सदुपयोग ।
6. सच्चाई और ईमानदारी ।
7. श्रम और उसका महत्त्व समझना ।
8. दृढ़ प्रतिज्ञ होना ।
9. समाज और देश के प्रति अगाध प्रेम ।
10. संसार के सभी प्राणियों और मनुष्य को एक ही पिता की सन्तान समझना ।
11. लाभ, हानि, सुख तथा दुख में समान रहना ।
12. सांसारिक माया से न अधिक प्रेम और न अधिक विराग ।
13. प्रसन्नचित्त और हँसमुख रहना ।
14. प्राणियों से सहानुभूति एवं प्रेम ।

(3) **सारांश**—आदर्श जीवन का बड़ा महत्त्व है ।

इसके द्वारा मनुष्य का जीवन सफल और सुखमय हो सकता है । अतः आदर्श जीवन हेतु जो बातें बताई गई हैं, उनका अनुकरण नितांत आवश्यक है ।

(6) प्रातःकाल घूमने के आनन्द

(1) **प्रस्तावना**—चन्द्रदेव अपना सारा सौन्दर्य ऊषा पर न्यौछावर कर पश्चिम दिशा को चले गये । ऊषा ने अरुण साड़ी पहन ली । कमल खिल गए । भ्रमरों ने कमलों पर मँडराना प्रारम्भ कर दिया । अहा ! शीतल पवन ने शरीर को ठण्डा कर दिया । पक्षियों के कलगान ने सारे पवन में धूम मचा दी । कमल ने प्रसन्न मुख से सूर्यदेव का स्वागत किया । पुष्प मत्त होकर फूल उठे । हरी-हरी घास मखमल के हरे फर्श के समान दिखाई देने लगी ।

(2) स्वास्थ्यप्रद, शीतल, मन्द, सुगन्ध समीर ।

(3) वाटिका के आनन्द ।

(4) पशु-पक्षियों की मनोवृत्तियाँ जानना—प्रातःकाल उठते समय दो भाँति की प्रवृत्तियों से युक्त होता है। एक, साहसिक मनोवृत्तियाँ जो बार-बार उठने को बाध्य करती हैं दूसरी प्रमादिक मनोवृत्तियाँ जो बार-बार थोड़ी देर और शयन करने को प्रेरित करती हैं। महा साहसिक मनोवृत्ति का कहना मानना चाहिए।

(5) **उपसंहार**—स्वस्थ मनुष्य को चाहिए कि वह अपने जीवन की रक्षा के लिए ब्रह्म-मुहूर्त में उठ जाय और दुख नाश के लिए भगवान् का भजन करे। प्रातःकाल के घूमने से शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक सभी प्रकार के स्वास्थ्य को लाभ होता है। अतः मनुष्यों को चाहिए कि वह अपने घर के अन्य लोगों को भी टहलने की प्रेरणा दे। टहलने का उचित समय जाड़ों में 6 बजे से 7 बजे तक है और ग्रीष्म में 4 से 5 बजे तक है। टहलने में अपनी मानसिक विचारधारा पवित्र रखो। कितने गौरव की बात है कि हम प्रातः काल भ्रमण करते समय प्रकृति के अतुल भण्डार के दर्शन करते हैं।

(7) आलस्य से हानियाँ

(1) **प्रस्तावना**—मनुष्य की रचना कर्त्तव्य के लिए ही हुई है, मस्तिष्क और मानवीय अवयव काम न लेने पर कुंठित हो जाते हैं। अविवेक और अशिक्षा समाज और राष्ट्र में आलस्य होने के ही कारण प्रवेश करते हैं। आलस्य भयंकर रोग है।

(2) **आलस्य से हानियाँ**—

1. शारीरिक शक्ति का ह्रास।
2. मानसिक शक्तियों का ह्रास।
3. पराधीनता, विलासिता सब आलस्य के ही रूपान्तर हैं।
4. आलसी भाग्यवाद के भरोसे अपने जीवन को नष्ट करता है।
5. रोग, विनाश, दरिद्रता और पराधीनता आलस्य के संगी-साथी हैं।
6. अकर्मण्य मनुष्य की इच्छा शक्ति का नाश हो जाता है।
7. आलसी के पास साहस और धैर्य नहीं रहते हैं।

8. आलसी उद्योग तथा पुरुषार्थ को भूल जाता है ।

9. आलस्य अवनति के गर्त में गिराकर जीवन को भ्रष्ट बनाता है ।

10. आलसी दुराचार की ओर प्रवृत्त होता है ।

(3) **उपसंहार**—अमरीका का प्रेसीडेन्ट अपने कमरे में अपने आप झाड़ू लगा सकता है, महात्मा गाँधी अपना कुर्त्ता अपने आप धो सकते हैं परन्तु शोक का विषय है कि फिर भी भारतीय अपना काम करने में लजाते हैं । कर्मवीर बनो । आलस्य को पास न आने दो । स्वावलम्बन और सहिष्णुता से जीवन पवित्रतम बनता है । आलस्य को पास न आने दो । देखिए निम्न पंक्तियाँ—

'श्रम ही सों सब मिलत है,
बिनु श्रम मिलै न काहि ।''

(8) संतोषी सदा सुखी

(1) **प्रस्तावना**—घोर परिश्रम तथा प्रयास के पश्चात् जो कुछ मिले उसी में प्रसन्न रहने का नाम संतोष है । ईर्ष्या, द्वेष, मिथ्याचार, कपटाचार, संतोष के निकट अपना अभिनय नहीं कर पाते । संतोषी मनुष्य को किसी की व्यर्थ चाटुकारिता नहीं भाती । संतोष कुबेर के घर पर भी अपनी नीयत नहीं डिगाता संसार में निर्धन वही है जिसकी अभिलाषायें और तृष्णायें अधिक हैं अन्यथा विश्व में कौन बड़ा कौन छोटा ?

(2) **असंतोषी कभी सुखी नहीं होता ।**

(3) **संतोषी सदैव सुखी रहता है ।**

(4) **संतोष प्राप्त करने के उपाय**—

(अ) वासना उत्पन्न करने वाले पदार्थों का त्याग

(ब) आवश्यकताओं को कम करना ।

(स) सुन्दर तथा अनित्य वस्तुओं में कभी अनुराग न रखना ।

(द) जिन-जिन वस्तुओं पर मन अधिक जाये, वहाँ से उसे हटाया जाना ।

(य) अपनी मनोभिलाषा को अपनी इच्छानुवर्तिनी बनाया जाना ।

(5) **अन्य-विचार-उपसंहार**—संतोष से मानसिक शान्ति मिलती है । संसार में दुःखों का मूल केवल मन है, मन को संयमी बनाकर संतोष के पथ

पर अग्रसर किया जाय तो विश्व का समस्त ऐश्वर्य अपने काबू में कर लिया जाता है। सन्तोष का अर्थ यह नहीं कि मनुष्य लँगोटी लगाये बैठा रहे। मनुष्य अपनी चित्तवृत्तियों को शान्त रखता हुआ, सुख से उद्योग करता हुआ जीवनयापन करे। अतः यही कहना पड़ता है कि "सन्तोष परम् सुखम्" कबीर ने सन्तोष का कैसा उदाहरण दिया है—

"साईं इतना दीजिये, जामें कुटुम समाय।
मैं भी भूखा ना रहूँ, साधु न भूखा जाय।"

(9) वर्षा ऋतु

(1) **प्रस्तावना**—सूर्य की प्रखर किरणों ने पृथ्वी के शरीर को झुलसा दिया। निदाघ के प्रबल झोकों से पृथ्वी त्राहि-त्राहि कर उठी। दयालु मेघ को दया आई। उसकी दया दृष्टि ने उसकी आभा को लौटा दिया, पृथ्वी का चेहरा हरा-भरा हो गया। सर सरितायें उमंगित हो तरंगें मारने लगीं। वृक्षों ने धानी साड़ी पहन ली। मतवाले मयूर मस्तानी चाल से इधर-उधर फिरने लगे। दादुर ने राग अलापा, झींगुर ने अपनी मधुर झंकार से वन, उपवन को झंकृत कर दिया। जंगल मंगलमय हो गया। कोयल की 'कुहू-कुहू' और पपीहा की 'पीउ-पीउ' ने हृदय में एक मधुर वेदना उत्पन्न कर दी।

(2) **वर्षा ऋतु का वर्णन**—

1. प्रारम्भ में गर्मी का प्रकोप और न्यूनतम, प्राणियों का त्राहि-त्राहि करना।
2. वर्षा का आगमन और प्राणियों को संतोष।
3. वर्षाकाल में प्राकृतिक दृश्यों की सुन्दरता जैसे रंग-बिरंगे बादलों का भ्रमण, पशु-पक्षियों की सुन्दर बोली, पानी का कलरव, भौंरों का गुंजन, इन्द्रधनुष की निराली छटा आदि।
4. भयानक रातें।
5. वर्षा होते समय शोर और साँय-साँय की आवाज।
6. वर्षा में यात्रीगणों को असुविधा और पानी में गिरने का दृश्य।
7. वर्षाकाल में नदी, नाले और पोखरों का दृश्य।

8. हरियाली और उनकी सुन्दरता।

9. पशु और मनुष्यों की प्रसन्नता।

(3) **उपसंहार**—वर्षा का आगमन हमें अपार प्रसन्नता प्रदान करता है। किसान मस्ती में काम करने लगता है, उसकी खेती हरी-भरी दिखाई देने लगती है। गर्मी शान्त हो जाती है। सभी प्रकार से हमें आनन्द प्राप्त होता है। गर्मी का दुःख, सुख में बदल जाता है और मनुष्य का हृदय आनन्द की गंगा में डुबकियाँ लगाने लगता है। पत्थर तुल्य हृदय भी इस निराली आभा को देख गद्-गद् हो जाता है। वर्षा का आगमन अपने साथ अनेक कठिनाइयाँ भी लाता है, जैसे विभिन्न प्रकार के साँप, मच्छर, बिच्छू तथा अन्य हानिकारक जीव-जन्तु परन्तु इसके बिना हम सुखी और सम्पन्न नहीं हो सकते, संसार में जिस वस्तु से हमें हानि होती है, उससे लाभ भी होता है, और हानि लाभ का जीवन से जोड़ा है। एक के बिना दूसरे का जोड़ा नहीं परन्तु वर्षा से हमको इतने लाभ हैं कि उसके सम्मुख उससे होने वाली हानियाँ साधारण-सी होती हैं।

(10) धन का सदुपयोग

(1) **प्रस्तावना**—धन का सदुपयोग दान है। जिस प्रकार समय का सदुपयोग मानव जीवन को सुखद और लाभकारी है, वैसे ही धन का उचित कामों में व्यय करना भी धन का सदुपयोग है। विद्या का सदुपयोग ज्ञान प्राप्त करने में है, शक्ति का ठीक प्रयोग अनाथों को शरण देने में है और धन का सदुपयोग उसके दान करने में है।

(2) **दान घर से प्रारम्भ होता है**—दान पहले घर से ही आरम्भ होना चाहिए। यदि परिवार से बचे तो उसे सबके हित के कामों में व्यय करें जिससे अधिकांश व्यक्ति लाभ उठा सकें

(3) **राष्ट्र के उपयोग में धन का व्यय उत्तम है।**

(4) **अपने लिए धन व्यय करना सदुपयोग है।**

(5) **धन सम्बन्धी अन्य विचार**—हाँ, इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हमारा धन विलासिता और दुर्व्यसनों में न व्यय हो रहा हो। विलासिता

की प्रवृत्ति पर व्यय किया हुआ धन अपने ऊपर विष का काम करता है। अच्छा खाना, अच्छा पहनना, बच्चों को अच्छी शिक्षा दिलाना आदि धन-व्यय के उत्तम साधन हैं। हमारे धन के उपयोग में हमारी मनोवृत्तियाँ बहुत कार्य करती हैं। तमोगुणी और रजोगुणी वृत्ति का दिया हुआ दान अहंकार उत्पन्न करता है जो सर्वथा निषेध है।

(6) **उपसंहार**—धन संग्रह संकट-काल हेतु अत्यन्त उत्तम है। परन्तु धन-संग्रह की धुन में अपने को दुःखी बना लेना अथवा पापवृत्तियों से धन संग्रह करना एक महापाप है जिससे व्यक्ति और समाज किसी का भी हित नहीं हो सकता। अतएव यह नितान्त आवश्यक है कि धन का सदुपयोग ही किया जाय। धन व्यक्ति तथा राष्ट्र के नाश का कारण बन सकता है।

(11) दीर्घजीवी बनने के साधन

(1) **प्रस्तावना**—दीर्घ जीवन का अभिप्रायः और उसका उद्देश्य।

(2) **दीर्घ जीवन का महत्त्व**

(3) **दीर्घ जीवन हेतु आवश्यक बातें**

(अ) नियमित और प्राकृतिक जीवन व्यतीत करना।

(ब) स्वच्छता का जीवन में महत्त्व।

(स) व्यायाम और उसकी उपयोगिता।

(द) सादा और पौष्टिक भोजन का महत्त्व।

(य) गहरी निद्रा।

(र) मितव्ययता।

(ल) मधुरभाषी।

(व) चरित्र और उसका महत्त्व।

(त) सदाचारी और शिष्टाचारी।

(थ) ब्रह्मचर्य व्रत का महत्त्व और उससे लाभ।

(द) देश और समय के अनुसार व्यापार।

(ध) शान्ति और अहिंसा का अपनाना।

(न) संतोष का महत्त्व।

(प) सत्यवादी और ईश्वर के प्रति अगाध प्रेम ।

(4) **दीर्घ जीवन की बाधाएँ—**

1. सांसारिक भोगविलास, माया एवं लोभ ।
2. नियम पालन में विद्यमान कठिनाइयों का दृढ़ता के साथ निवारण करना ।

(5) **उपसंहार**—दीर्घ जीवन से मनुष्य अपना और अपने राष्ट्र का कल्याण कर सकता है । वह देश की उन्नति कर देश और समाज में क्रान्तिकारी परिवर्तन कर सकता है । अतः दीर्घजीवी बनने के सभी नियमों का पालन करना चाहिए ।

(12) राष्ट्र-निर्माता अध्यापक

(1) **प्रस्तावना—**

1. अध्यापक और उसका महत्त्व ।
2. देश-सेवा में अध्यापक का योगदान ।
3. उसका उत्तरदायित्व और सेवा-कार्य ।
4. समाज में उसका स्थान और उसकी दशा ।
5. अध्यापक सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक उन्नति में अपना पूर्ण योग दे सकता है ।

(2) **आदर्श अध्यापक के गुण—**

1. सहनशीलता ।
2. वांछित ज्ञान ।
3. देश एवं अपनी संस्कृति के प्रति प्रेम ।
4. साधारण जीवन और उच्च विचार ।
5. आदर्शप्रिय तथा मधुरभाषी ।
6. छात्रानुरागी (छात्रों के प्रति अगाध सहानुभूति रखने वाला) ।
7. कर्त्तव्यपरायण, परिश्रमी और संयमी ।
8. चरित्रवान तथा सत्यप्रिय ।
9. गम्भीर ।

10. समय के अनुसार चलने वाला ।
11. मधुरभाषी और समय का पाबंद ।

(3) **प्राचीन और नवीन अध्यापकों की तुलना—**
1. प्राचीन अध्यापकों के विचार, कार्य, वेश-भूषा और कर्त्तव्यपरायणता ।
2. वर्तमान अध्यापकों के विचार, कार्य, वेश-भूषा और कर्त्तव्यपरायणता ।
3. अध्यापक की शोचनीय दशा और उसमें सुधार की आवश्यकता ।
4. देशोन्नति में अध्यापक का हाथ ।
5. अध्यापक का प्राचीन गौरव ।

(4) **उपसंहार**—अध्यापक ही अपने देश को बना व बिगाड़ सकता है । देश की उन्नति उसी के हाथ में है । वही सच्चा सेवक है ।

(13) श्रमदान

(1) **प्रस्तावना—**
(अ) श्रमदान क्या है ? इसका उद्देश्य और महत्त्व क्या है ?
(ब) श्रमदान और देश का कल्याण ।
(स) श्रमदान से लाभ—
1. देशोन्नति में योग तथा देश का कल्याण ।
2. शारीरिक और मानसिक उन्नति ।
3. देश-प्रेम और समाज कल्याण की भावना का उदय ।
4. स्वावलम्बन की शिक्षा, अपने आप काम करके अपनी प्रगति होती है ।
5. करके सीखने (Learning by doing) की भावना जागृत होती है ।
6. श्रमदान से बड़े-बड़े कार्य सम्पन्न हो गए हैं जो देश की प्रगति में सहायक हैं । मनुष्य स्वावलम्बी बनता है ।
7. दान करने की प्रवृत्ति बढ़ती है और मनुष्य का विचार शुद्ध होता है ।
8. देश का धन बचता है और कल्याण की नींव पड़ती है ।
9. जब हम मिलकर कार्य करते हैं तो मातृभाव, संगठन-शक्ति तथा परस्पर प्रेम बढ़ता है तथा आपसी द्वेष दूर होता है ।
10. श्रम के महत्त्व को समझने लगते हैं ।

11. रंचमात्र सहयोग से बड़े-बड़े कार्य हो जाते हैं जो देश की उन्नति के लिए बहुत ही आवश्यक हैं, 'सात-पाँच की लाकड़ी एक जने का बोझ' वाली कहावत चरितार्थ होती है ।
12. श्रमदान से और भी अनेक कल्याण होते हैं । पढ़े-लिखे लोगों ने भी इसके महत्त्व को समझा है । देश-कल्याण और शारीरिक-सुधार हेतु यह बहुत उपयोगी है ।

(2) उपसंहार—श्रमदान ही एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा देश की सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक दशा सुधर सकती है । यह देश में एक नई जागृति ला सकता है । इससे कम समय में अधिक कार्य हो सकता है । आर्थिक बचत होती है, जो देश के लिए बहुत जरूरी है । हम अपना कल्याण स्वयं करने की क्षमता प्राप्त करते हैं । अतः इस प्रकार हम स्वावलम्बी बनते हैं ।

(14) ग्राम-जीवन तथा नगर-जीवन

(1) प्रस्तावना—

(अ) ग्राम-जीवन के आनन्द—स्वच्छ हवा, शान्त वातावरण और सादा जीवन ।

(ब) ग्राम-जीवन के अभिशाप—अशिक्षा, चिकित्सा, विषयक परेशानी आने-जाने की असुविधा आदि ।

(स) नगर-जीवन के सुख—

1. विद्या की सुविधा
2. आने-जाने के सुगम साधन
3. चिकित्सा की सुविधा
4. व्यापार आदि की सुविधायें
6. अन्य सभी सुविधायें

(द) नगर-जीवन के अभिशाप

1. कोलाहलपूर्ण वातावरण ।
2. द्वेष से पूर्ण एवं कष्टमय जीवन ।
3. बनावटी जीवन (कृत्रिमता और पाखण्ड) ।

4. अधिक खर्चीला जीवन ।
5. प्राकृतिक सुविधाओं का अभाव ।
6. गन्दगी और अशुद्ध वातावरण ।
7. शुद्ध चीजों का अभाव ।
8. शुद्ध वायु का अभाव ।

नगर और ग्राम जीवन का तुलनात्मक अध्ययन और ग्राम-जीवन की श्रेष्ठता ।

(2) **उपसंहार** ग्राम जीवन में दोष होते हुए भी वह नगर के जीवन से श्रेष्ठ है । ग्राम का जीवन सरल और सादा होता है । ग्रामीणों की भाषा में मिठास और हृदय में अनुराग होता है । उनका आपसी प्रेम तथा अतिथि-सत्कार प्रशंसनीय और अनुकरणीय है । उनका जीवन प्रकृति के अनुरूप चलता है । वे सीधे-सादे और सरल हृदय होते हैं । पाखण्ड, द्वेष आदि उनके पास तक नहीं फटकते हैं । यदि ग्राम-जीवन में विद्या का प्रसार हो जाय तो वह सर्वश्रेष्ठ बन जाय । ग्राम ही हमारे देश की उन्नति के एक मात्र उपाय हैं । गाँव की उन्नति ही देश की उन्नति है ।

(15) भारत की उन्नति कैसे हो ?

(1) **प्रस्तावना**—

1. भारत का प्राचीन गौरव ।
2. भारत ने प्राचीनकाल में कैसे उन्नति की ?
3. भारत की वर्तमान शोचनीय दशा और उनके कारण ।
4. सुधारों की आवश्यकता ।

(2) **सुधार हेतु कुछ उपाय**—

1. विद्या का प्रचार एवं प्रसार ।
2. सामाजिक सुधार और कुरीतियों का निवारण ।
3. राजनीतिक स्वतन्त्रता में विस्तार ।
4. आर्थिक समानता देशोन्नति का एकमात्र उपाय है ।
5. कृषि को वैज्ञानिक रूप देना एवं उसका सुधार ।

6. घरेलू उद्योग-धन्धों का पुनरुद्धार ।
7. स्वदेशी वस्तुओं का प्रचार ।
8. व्यापार क्षेत्र में आवश्यक सुधार ।
9. देश प्रेम की भावना को जाग्रत करना ।
10. फूट का त्यागना, बुरे विचारों का त्यागना तथा द्वेष और बैर का परित्याग ।
11. संगठन, समानता, भ्रातृभाव, स्वतन्त्रता एवं राष्ट्रीय विचारधारा का प्रचलन ।
12. समस्त क्षेत्रों में हिन्दी का प्रचलन ।
13. बेकारी का निवारण और कलात्मक शिक्षा का प्रचार ।

(3) **उपसंहार**—देश की उन्नति सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक उन्नति पर ही निर्भर है । अतः इस क्षेत्र में आवश्यक सुधार किया जाय । फिर सामाजिक कुरीतियाँ दूर की जायँ । आर्थिक समानता की जाय । बेकारी को दूर किया जाय, व्यापार की वृद्धि हो । घरेलू उद्योग धन्धों की उन्नति की जाय तभी हमारा देश उन्नति कर सकता है ।